GL SANS 891.21 BAN

> 125555 LBSNAA

ो राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी .cademy of Administration

मसूरी MUSSOORIE

> पुस्तकालय LIBRARY

अवाप्ति संख्या Accession No. 125555

वर्ग संख्याद्वा Soms

891.2

पुस्तक संख्या Book No. BAN

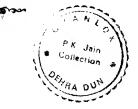


महाकविश्रीबागाभट्टविरचितम्।

# \* श्रीहर्षचरितम् \*

**\* आद्यमुच्छ्**वासचतुर्थकम् \*

करनाल मण्डलान्तर्गत समीक (सींख) प्राम वास्तव्येन पं० रामस्वरूपशास्त्रिया "विरचितया" श्राशुतोषिण्या-व्यास्त्र्यया समलंकृतम् ।



प्रथम संस्करणे सहस्रं ] सन् १६३६ [ मूल्यं रुप्यकद्वयम्

पुनर्भुद्रणाद्यधिकारः प्रकाराकायत्तः

प्रकाशक---

पं० नारायणद्त्त शर्मा श्रध्यत्त श्राशुतोष पुस्तकालय सींख (करनाल ) ब्रांच—लाहोर ।



गुदक— सरदारीलाल शारदा मैनेजर दी सनातन धर्म ऐजुकेशनल प्रिंटिंग प्रेस, लिमिटिड, लाहौर ।

#### **\* नम्रनिवेदनम्** \*

श्रीमाननीयाः ?-विद्वान्सः---

श्रीहर्षचरित "श्राशुतोषिण्यायाः" प्रथमेस्मिन्संस्करणे श्रज्ञर-संयोजकानां प्रकाशकानांचानवधानतया, कार्यान्तर संलग्ने च मिय जातानां यन्त्राद्यशुद्धीनां छतं खेदो महान् मनिस मे, तद्ये सानुरोधं-प्रार्थ्यन्ते मया विद्वान्सः— यत् कृपया तत्र तत्र तच्छंशोधनं विध।यपठन्त-पाठयन्तश्चमीय महान्तमनुप्रहंविधास्यन्तीति, किं बहुना— मनुष्य जन-सुलभप्रमाद हेतोर्यत्र कुत्रापि काचिबुटिरुपलभ्येत, तन्मांप्रति लेख हारा सूचयेयु:-बुधाः, येनाग्रिमेसंस्करणेतिन्नराकरणां करिष्येत । किं वा स्वयमपि तत्र तत्र तत्पूर्ति करणेन मत्साहाय्यमाचरन्तो मयाशतशो-धन्यवार्देर्भुज्येरिननित बद्धाञ्जलिः प्रार्थयते ।

कर्मेण्यस्मिन् मत्साहाय्यकराणां पं० जगन्नाथशास्त्रिणां (प्रो० चीफकालिज़), म० म० पं० माधव भाग्डारी शास्त्रिणां (प्रो० च्रोरि-यण्टल कालिज़), पं० रामचन्द्र "कुशल" शास्त्रिणां (प्रो० च्रोरि-यण्टल कालिज़), पं० सूर्यनारायणशास्त्रिणां (प्रो० शीतला महा-विद्यालय) पं० ज्ञानचन्द्र वेदान्तशास्त्रिणां (लवपुरम्) पं० च्रमर-नाथशास्त्रिणां (वामनोली) च कृते शतशःधन्यवादाः । यैर्मत्साहाय्यं मनसा वाचा कर्मणा चाकारि।

श्रीविश्वेश्वरानन्द वैदिक श्रनुसंधानात्तय डी० ए० वी० कालिज साहोर आवर्णी —सं० १६६६

विदुषामनुचरः— रामस्वरूपः

## **अ** प्राक्तथन

१—वाण का जीवन संस्कृत के किवयों में वाण कुछ भाग्य-वान हैं। इनकी जीवन कहानी श्रोर तिथि के बारे में हमें निश्चय पूर्वक जितना मालूम है उतना कदाचित् किसी श्रन्य किव के विषय में नहीं। श्रपने हर्षचरित् के पहिले दो उच्छ्वासों एवं कांद्बरी के श्रारम्भ में श्रपनी कथा स्वयं लिखी है।

सरस्वती के पुत्र सारस्वत थे। इनके चचेरे भाई वत्स के कुल में कुंबेर उत्पन्न हुए। कुंबेर के पड़पोते (चित्रभानु) ही बागा के पिता थे। इनकी माता का नाम राजदेवी था। बागा अभी चौदह वर्ष के ही थे, कि इनके माता पिता स्वर्ग सिधारे। उदास होकर ये देशाटन करने लगे। इससे इन्हें बहुत अनुभव प्राप्त हुआ। कुछ समय पश्चात् ये अपने घर (प्रीतिकूट) लौट आए। एक दिन एक राजदूत इन्हें लेने आया। पहले तो बागा डरे, फिर साहस करके हर्ष के द्वार में उपस्थित हुए। महाराज ने इनकी कविता से प्रसन्न हो बड़ा सम्मान किया, ये अब राज किंव कहलाने लगे, तथा इनकी कीर्ति चारों और फैलने लगी।

कदाचित् उसी वर्ष पतभढ़ के त्र्याने पर ये त्र्यवकाश लेकर त्र्यपने देश को त्र्याए । भाई बन्धुत्र्यों के कौतुक से हर्ष के विषय में पूछे जाने पर इन्होंने जो कहा— वही हर्षचिरित् हैं ।

श्रागे इन्होंने श्राने विषय में कुछ न कह कर श्रपने राजा की ही महत्त्व पूर्ण जीवनी के दर्शन कराये हैं। इन्हें श्रपने दोनों प्रन्थ समाप्त करने का श्रवसर नहीं मिला। "कादंबरी" इनके पुत्र (पुलिन्द) ने इनके बाद पूर्ण की हर्षचरित् श्रभूरा ही रहा। ये शाह्बाद (श्रारा) प्रान्तवर्ति प्रीतिकूट प्राम के निवासी तथा थानेश्वर श्रोर कन्नोंज के महाराज हर्षवर्धन के प्रधान समा परिखत थे। २—बाया का बंटा श्रोर बाया—कादंबरी को पूर्ण करने का सेहरा किव के सुयोग्य पुत्र पुलिन्द के सिर पर है। पुलिन्द ने यह कार्य कर संस्कृत प्रिमियों पर विशेष श्रमुकम्पा की है। डाक्टर बुह्लर के कथनानुसार बाया के पुत्र का नाम भूषयाबाया श्रथवा भूषयाभट्ट है, यह बात श्रव श्रमत्य सिद्ध की जा चुकी है, क्योंकि—

(क) कादंबरों के पुराने लेख मिने हैं जिन पर पुलिन्द नाम लिखित है।

(ख) कवि धनपाल ने भी ऋपनी सुिक्तमुकावली में लिखा है— केवलोऽपि स्मृतो वाग्एः करोतिविमदान् कवीन्। किम्पुनः क्रमसंधानपुिलन्दकृतसंनिधिः॥

३—बाग स्रोर मयूर—बाग स्रोर मयूर दोनों हर्ष के दर्बार की शोभा थे। कहते हैं, मयूर बागा के श्वसुर थे। मयूर का लिखा सूर्यशतक स्त्रब भी पढ़ा जाता है। स्नेय है कि उन्हों ने स्रोर भी लिखा होगा। पर समय के चक्र में वह नष्ट हो गया हो।

४—बागा की तिथि—इस बिषय में हमें दो जगह से सहायता मिलती है। एक तो काव्य-प्रन्थों से। दूसरे ह्यूनश्याँग के यात्रा- वृत्तान्त से, बागा ने हर्षचिरत् के प्रारम्भिक श्लोकों में कुछ किवयों की स्तुति की है। कुछ श्रन्य किवयों की सूचि के निरीच्चण ने जहाँ बागा की तिथि नियत करने में सहायता दी है, वहाँ साहित्य के श्रनेक ऐतिहासिक पहलुओं पर भी प्रकाश-प्रचेपन किया है।

चीनी यात्री ह्यूनश्याङ्ग सातवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में भारत में त्र्याया। उसने भी हर्ष का बर्धन किया है। त्र्यतएव बागा की तिथि सातवीं शताब्दी ईस्वी के पूर्वार्ध में ही मानी जाती है।

५--- त्राख्यायिका ऋौर कथा-संस्कृत काव्य के तीन मुख्य भाग

हैं—गद्य, पद्य, ऋौर मिश्र । गद्य के ऋागे दो भाग हैं—ऋाख्यायिका ऋौर कथा ।

- (१) त्र्याख्यायिका में किव के कुल इत्यादि का संज्ञेप से गद्यरूप में विस्तार से वर्णन होता है। कथामें पद्यरूप में ऐसा किया जाता है।
- (२) त्राख्यायिका में नारी-हरणा, युद्ध, नेता का वियोग-त्र्यादि का वर्णन होता है, कथा में नहीं।
- (३) त्राख्यायिका में नेता त्रपने किए कार्य्यों का वर्णन करता है कथा में दूसरे व्यक्ति करते हैं।
- (४) त्र्याख्यायिका को उच्छ्वासों में बाँटा जाता है। कथा में साधारणतः कोई भाग नहीं होते। यदि हों तो उन्हें लंबक कहते हैं। बस्तुतः इन दोनों में कोई विशेष भेद नहीं होता। हर्षचिरत एक आख्यायिका है और कादम्बरी, एक कथा।

#### ६--टीका टिप्पणी

संस्कृत साहित्य में बागा एक चमकता हुन्ना तारा है। गद्य काज्य में इसका स्थान बहुत ऊँचा है।

अनेक वातों में इसका हर्षचिरत् निराला है। यही आख्या-यिका है जो आजकल मिलती है। मुख्य वातों पर यह ह्यूनश्याङ्ग के विवरण से मिलता जुलता है। आगे चलकर हम देखेंगे कि सामयिक भारत के विषय में बाण हमें क्या २ बतलाता है। पहले हम इसकी शैली को लेते हैं।

बागा पाख्राली तथा गोड़ी शैली में लिखिता है। पहली बात जो साफ़ तौर पर नज़र आ जाती हैं, वह है इसकी श्लेष प्रयोग करने के लिए उत्सुकता। प्रायः वे पौरािग्यक विषय पर होती है। पढ़नेवाला थक जाता है किन्तु अर्थ फिर भी गृढ़ रखने का यक्न करते प्रतीत होता है। दृसरे, यह लम्बे समासों का प्रयोग करके भाषा को जटिल बना देना है। वास्तव में यह इसका श्रपराध नहीं। उस समय इन बानों को ही गद्य का श्रोजस श्रथवा प्राग्ण समक्ता जाता था। यदि यह ऐसा न करता तो पिएडत मण्डली इसे सराहती—इसमें सन्देह है। परन्तु कहीं २ इसकी लेखनी से जो सीधे-सादं श्रोर सुन्दर पद निकले हैं, वे श्रमर हो गए हैं। इसके पात्र नेसिंगक श्रतः प्रभाव-पूर्ण भाषा बोलते हैं। किन्तु जब यह किव उड़ने लगता है तो इसकी कल्पना-कल्पना नहीं मालूम होती वह एक जीती जागती वस्तु दीखती है।

बागा का शब्द-परिचय भी बहुत है। श्रमेक शब्दों का श्रर्थ श्रपनी बुद्धि से घड़ना पड़ता है।

यह ऐसे शब्द लाना चाहता है जिनकी त्रावाज में जीभ को खूब मोड़ना पड़े—इसे त्रानुप्रास कहते हैं। यह खूबी समभी जाती थी। उत्प्रेत्ता, विरोध, निदर्शन, व्यतिरेक, विषम, उपमा रूपक स्रौर

व्याघात । बाण् ने प्रायः इन—श्रलङ्करो का प्रयोग किया है—

बाग् शब्द ऋथवा समानार्थ भाव को दुहरात रहता है जो प्रायः भला मालूम होता है, किन्तु कहीं २ पाठक उबने लगता है।

इसका प्रकृति-वर्णन सिद्ध करता है—कि यह प्राकृतिक सोंदर्य्य को समभने श्रीर प्यार करने वाला था।

सारांश यह है कि इसके काव्य का, चाहे किसी रस में वह लिख रहा हो, पढ़ने वाले पर प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता। इसका चित्रण सजीव ऋौर ऋपूर्व है। भाषा में लचक पैदा करना इसे खूब झाता है, ऋौर क़ाबू करना भी, ताकि जिथर चाहे मोड़ सके। महाराज हर्ष ने इसे "वश्यवाणी कविचक्रवर्ती" के नाम से ऋलंकृत किया, इसकी शैली में छिद्र भी है, पर जैसा हम कह आए हैं, वे समय के प्रभाव के कारण थे, इसकी धवल कीर्ति के चन्द्र मण्डल पर वे केवल धब्वं कहे जा सकते हैं। अब हम उस समय के ''बाग् द्वारा'' इंगित रीति-रिवाज पर कुछ प्रकाश डालते हैं।

मुख्य मत दो थं—हिन्दू और बौद्ध । कभी कोई सांप्रदायिक भगड़ा न होता था । राजगृह ही में ऋलग २ मातानुयायी थे । हर्ष के पिता सूर्य भक्त थे । उनके बड़े भाई, राज्यवर्द्धन, पक्के बौद्ध, ऋौर हर्ग स्वयं ऋपने ऋापको परमेश्वर कहते थे । राजा किसी विशेष धर्म की प्रशंसा न करता था । सव श्रेष्ठ लोग एक सा ही मान पाते थे ।

त्राजकल की भांति पुरागों की कथाएँ प्रायः होती थीं। इससे पुरागों की प्राचीनता सिद्ध होती हैं, बागा ने रामायगा ऋौर महा-भारत का भी उल्लेख किया है।

मूर्ति-पूजा ख्रोर देवालय होते थे। कादंबरी से पता चलता है, कि उन दिनों ब्रह्मा ख्रोर कार्तिकेय की पूजा का भी रिवाज था। तथा सती प्रथा भी थी। हर्पचरित् में रानी यशोवनी ख्रपने पति की मृत्यु के पूर्व ही चिता में जलकर प्राया त्याग करती है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि जनता इस बान को वहुत पसन्द न करती थी।

ब्राह्मग् वेद शास्त्रों का ऋध्यन किया करते थे। उत्सव के अवसर पर उँचे घरों के स्त्री पुरुषों में नृत्य का भी रिवाज था।

#### ७---बाण की कृतियाँ

निम्नलिखित प्रन्थ बागा के कहे जाते हैं:—

(१) हर्षचिरत्। (२) कादंबरी। (३) चँडीशतक। (४) पार्वतीपरिगाय। चौथा प्रनथ नाटक है यह किन की असफल कृति कही जा सकती है। कोई पंडित लोग तो इसे बागा का लिखा नहीं मानते। दो तीन और प्रनथ भी बागा ने लिखे, परन्तु वे अब नहीं मिलते। रामस्वस्रपः



## श्रीहर्षचरितम्

आशुतोषिण्यासमेतम् प्रथम उछ्वासः

चतुर्मुख मुखाम्भोज वनहंसवधूर्मम ।
 मानसे रमतां नित्यं सर्वशुक्ला सरस्वती ॥१॥

\* आशुनोषिणी \*

ृ वृन्दारकैर्वन्दितपादपीठो गौर्येकदन्तामिभवेक्ष्पेतः । सदाश्चतोषः करूगापयोधिरिशवंप्रतन्याद्गिरिजापतिर्नः ॥

१ — अथ श्रीमन्महा कविर्वाणभट्टः चिकीर्षितस्य स्व निवंधस्य निविध-परिसमाप्त्यर्थ वाग्देवता स्मरणा रूपं मङ्गलं श्रन्थादें। शिष्यशिजार्यं निव-धनित । चतुर्मुग्वेति चतुर्मुखस्य, ब्रह्मणः, चत्वारि, आननान्येव. ( अम्भो-जानां, कमलानां ), वनानि, तत्र या हंसवधूः, मरासस्त्री, ( श्रजापतः मुखकमल वनविद्यारस्तवहंसवधूस्वरूपेत्यर्थः ) सर्वशुक्का, सर्वतःशरोग

- अप्यमिदं हलायुथ वृत्तिकारेण महाकविद्गिडना स्वसंदर्भकाव्या-द्शे श्रलेग्वि, केषुचिद्-हर्षचरित पुस्तकेषु लभ्यतं, नसर्वत्र ।
- श्रोंकारश्चाथ शब्दश्च द्वावेती श्रह्मणः पुरा । कएठंभित्वा विनिर्यातौ तस्मान्माङ्गलिकावुभौ ॥

### नमस्तुंगशिरञ्जुम्वि चन्द्रचामरचारवे । त्रैलोक्यनगरारम्भ मृलस्तम्भाय शम्भवे ॥२॥

वसनादिना, (पत्ते) च्युतसंस्कारादिदाषरिहता, शुक्का, श्वेतवर्णा, (पत्ते) परिशुद्धा, सरस्वता, वाग्देवो, (पत्ते) संस्कृतभारती च, मम मानसे, वित्ते, (पत्ते) मानसाख्यं सरिस यथा हंसो मानसंविद्दायस्वर्गसुखमप्यनुभवितुं नेच्छिति, तस्यव सरसःशाभामितिनरांप्रकाशयिति, तथैव विदुषां मानसकलहंसो भगवती भारती मन्मानसं प्रविश्यसदर्थजातं प्रकाशयतु, इति श्लेषताप्तर्यार्थः) नित्यं, सर्वदा, रमतां, विहरतु । कमलकानने मानसाख्ये सरिस हंसोव या प्रजापतेः मुखकमलवने नित्यंश्वृति रूपेण विहरति, साऽतिविशुद्धस्वरूपा सरस्वती मम मानसे नित्यं निवसतु, इति भावार्थः । हंस वधूरूपेण भगवत्या वर्णनत्वादूरूपकमलंकारः, श्रनुष्टुब्वृत्तम् ॥१॥

अथेदानो जन्मान्तर्रामेंहिकंबा विघ्न निचयमाशङ्कय स्वादिष्टदंबं शिवं स्तोति ।

नमस्तुङ्गेति तृहं, समुन्नतं, शिरः, उत्तमाहं, तं चुम्बित, स्पृशित, (तत्र संलग्न इत्यर्थः) यश्वदः, शशीः, स एव, चामरं, व्यजनं, (चमर्थाः गोः पुच्छतं मृतःव्यजनियोगः) तेन, चारुः, मनोहरः, त्रेंलोक्यं, त्रिभुवनं, (भृःभुव-स्वः) एवं नगरं, पुरं, तस्य य श्रारम्भः, निर्माणोपक्रमः, तस्य, मृलस्तम्भः शुम्रशिलामय स्थूणाविशेषः, तस्में, शम्भवे, शंकराय, नमः, प्रणितरस्तु ।

यथा महानगरी निर्माणे पुरतो गोपुरं विरचरय महतीस्थूणां च निवेश्य श्वेतपताकां निवधाति जनः, तथैव त्रैलोक्य नगरारम्भे पताकारूपेणाशुत्रं

श्र्यस्तियद्यपि सर्वत्र नीरं नीरज मण्डितम् ।
 रमते न मरालस्य मानसं मानसं विना ।।

#### हरकण्ठ ग्रहानन्द मीलिताक्षीं नमाम्युमाम् । कालकूट विष स्पर्श जात मूर्छा गमामिव ॥३॥

चंद्रमसं नियुज्य स्थ्गाारूपेगा स्वयं भगवान शंकरः ऋतितरां शोभते तस्में शम्भवे नमः इतिताप्तर्यार्थः । भरम्परित रूपकमत्रालंकारः । ऋनुष्टुपृ ॥२॥

त्रथ श्रीभूतभावनंसंस्तुत्य तदद्धीङ्गनी श्रीपार्वती स्ताति— हर कराठप्रहेति हरस्य, शंकरस्य, कराठप्रहे, कराठाश्लेषे, यः न्त्रानन्दः, सुरू विशेषः, तेन मीलिते, संकुचिते, त्राचिर्णा, नेत्रे, यस्यास्ताम् (त्राश्लेषसुरू शिथिलगात्रीमित्यर्थः) त्रात एव <sup>2</sup>काल कृटस्य, हलाहलस्य, (त्रात्र काल कृट शब्दनैव विषत्व सिद्धेः पुनर्विषशब्दप्रयोगः पौनरूक्त्यमावहति परं गो वलीवई न्यायेन कविसम्मतत्वाच नाशङ्कनीयोऽयंदोषः) स्पर्शेन, सम्पर्केण, जातः, सम्भूतः, मृर्ङ्कागमः, मोह्यवेशः; यस्याः पार्वत्याः (तथाभृतामिव) उमां, पार्वती नमामि, वन्दे ।

यथैव विष संसर्गे हि श्वासप्रश्वास योगेनपार्श्ववर्तिनःमूच्छागमः सम्भाव्यते. तथैंव विषसंयुतेमहादेवकराठे वाहोस्संसर्गे-त्र्यानन्देन निर्मालिताच्याः पार्वत्याः विषोपहतामिव नेत्र निमीलनमितशय प्रग्णय दर्शनाय पितकराठ प्रहानन्द इते विष सम्पर्क जनित मूच्छागम इत्युत्प्रेचितम् । उत्प्रेचालंकारः—श्रमुण्डपृ वाश्वा

त्र्रथ कविकुल शिरोमिंग भगवंतं श्रीकृष्णद्वैपायनं प्रथमं स्ताति— नमः, इति—सर्वविदे, सर्ववेदादिकं वेत्तीति सर्ववित्, (सर्वज्ञायेत्यर्थः)।

१. यत्र कस्य चिदारोपः परारोपण कारणम् ।
 तत्परंपरिताश्लिष्टाश्लिष्ट शब्द निबंधनम् ।। इति साहित्यदर्पणे ।।
 २. काकोल काल कृटहलाः हलाः विषभेदा श्रमीनव—इति कोषः ।

श्लोकेषष्ठं गुरूक्षेयं सर्वत्र लघुपंचमम् ।
 द्विचतुष्पादयोर्द्धस्वं सप्तमं दीर्घ मन्ययोः ॥ अतबोधे ॥

#### नमः सर्वविदे तस्मै व्यासाय कविवेधसे । चक्रेपुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम् ॥४॥

¹कविवेधसे, कवीनां. काब्यकर्तृणां, वेधाः, विधाता, (कविभ्यः-श्रांभनव काब्य रचनामार्ग प्रदर्शनेन शिक्तयितारमित्यर्थः) (ब्यस्यिति, विभजति, वेदा-दीनिति व्यासः) तस्में व्यासाय, नमः, प्रणातिः, योऽसी कवि वेधाः व्यासः तदाख्य महाकाव्यं, भारतवर्षमिव, भरतराज्ञः, स्थानभिव (ग्राव-भारतं इत्येकस्यंव पदस्य श्लेषनिवन्धेनोभयार्थे वर्षोमेव इत्यनेनान्वयंज्ञेयम् । सर-म्वत्या वार्गाधकाव्यादेव्याः, (पत्ने) तदाख्यया नद्या, पुर्ग्यंचके, पवित्रं कृतवान ।

प्रथमं वेदशास्त्रमांत्रमक्षमासीत् तं पराशरसृतोच्यासः (द्वेपायनः) ऋग्यजुन्मामाथर्वहमं मन्त्रब्राह्मणात्मकमेदद्वयं विभज्य पद्यमंदेदभृतं महाभारतं पुराणा-दीना च विभागं चके तदास्य नाम व्यासेति प्रसिद्धिमगात् । भावः—प्रजापितः स्वकर्म कीशनं सर्वतु मनोहरं रत्ननिचयमेकत्रप्रदर्शियतुं भारतवर्ष-श्राखल दुवितनाशाय यथा पवित्र प्रवाहिण्या सरस्वत्या नद्या पवित्रीचकार, तथेव व्यासोऽपि विद्याप्रकाश रूपंकीशलं योगवलेन श्रान्तर्निगृहभावं लोकाति शायिनं महाभारतं वाग्वेव्याः कला विलासेन पवित्रतामनयदिति—श्रत्रत्र महाभारतस्य भारतवर्षेण सह श्रवेधम्यत्वादुपमालंकारः तादात्म्य संबंधेन च व्यज्यते व्यासोऽयं विधाता—श्रतः-उपमालंकारेण रूपकालंकारःवनिरिति² श्रेयम् ॥४॥

कवानां स्वभावं-पर्यालोचयन्नाहश्लोकषट्केन । प्राय-इति—इह लोके रागः, ग्रमदिभिनेवेशः, तेन, श्रिविष्ठिता, श्राकान्ता, दृष्टिर्ज्ञानं, येषां ते, तथाभृताः, श्रतःएव कुकवयः, कुल्सिताः. ष्ट्रणास्पदाः, कवयः, (श्रमत्संदर्भ-निर्मातार इति यावत् ) प्रायः, वाहुल्यन, लाके, जगति, दश्यन्ते इति शेषः।

श्रपारे काव्य संसारे कविरेवप्रजापितः।
 यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्तते।।

२. रूपकं रूपिताद्रोपाद्विषये निरपन्हवे । साहित्य दर्पणे ॥

#### प्रायः कुकवयो लोके रागाधिष्ठित दृष्टयः। कोकिला इव जायन्ते वाचालाः कामचारिणः॥५॥

( श्रज्ञानान्धतयात्र कुकवीनां यानि हि भृयांसि काव्यानि दृश्यन्ते नोकं तानि श्रालंकारिकमार्ग रहितानि केवलमसारतरिवषयकानि काव्या- श्र्येतृणामनिष्ट कारकाणि सर्वेधा त्याज्यानि—इति भावः । तथंव ते तु केवलं कोकिलाइव, परभृत इव, वाचालाः, श्रुतिमधुरयावाचा, मूर्खाणां चित्ता- कर्पकाः ( श्रमंबद्ध प्रलापिन इतियावत् ) कामचरिणः, शास्त्राननुशीलाः, यथेच्छया विचरन्तः, (श्रमभिज्ञाहिते-इत्यर्थः) कुकवयः, जायन्ते, उत्पद्यन्ते, कुकविनिन्दात्र—

यथैव कोकिलाः स्व कुहुरवेश प्राकृतानां जनानां मनांसि वशीकुर्वन्ति, तथैव पूर्व कवीनांमार्ग मनतुसरन्तः स्वेच्छ्या काव्यकान्तार पर्यटनशीलाः, ये केवलं वाङ्याधुर्येश हि जनानां चेतांसि प्रीशायितुं यतन्ते, परमध्येतृशां श्रेष्ठ काव्येषु प्रवृत्तिं व्यसत् काव्येषु निवृत्तिं च कर्तु मत्तमास्तेषां काव्यालाप वर्जनीय एवेतिमावः।

कोकिल पच्चे-त्वेवं — रागः, लोहित्यं, तेन, श्रिधिष्टता, व्याप्ता, दृष्टः, चन्तुः, येषां तथा विधाः, वाचालाः, प्रलपनशीलाः, वाचा, वाएया, (स्वकीय कुहुरवेऐोत्यर्थः) श्रालाः, श्रासमन्तात्, लान्ति, श्रावर्जयन्ति, वशी कुर्वन्ति (मानसमितिभावः) येते तादशाः कामचारिएः, कामोत्तेजनकराः, जायन्ते । (काममुई।पयन्तीत्यर्थः) ।

"वाचाला इत्यत्र त्रवाचालाः 'इति पठान्तरे" केचित् कवयः कोकिला इव त्रवाचालाः मधुरमाषिषाः कामचारिषाः, स्वप्रतिभानुसारमिनव संदर्भ कुर्वाणाः, सुकवि प्रशंसात्रज्ञेया । श्रात्रकविषु कोकिलानामवैधर्म्यत्वात् श्रिष्ट विशेषण प्रतिपादितः । श्रेषानुप्राणितोऽपमाऽलंकारः ॥४॥ सन्ति श्वान इवासंख्या जातिभाजो गृहे गृहे । उत्पादका न वहवः कवयः श्वरभा इव ॥६॥ अन्यवर्ण परावृत्या वन्धचिह्ननिगृहनैः । अनाख्यातः सतां मध्ये, कविश्चौरो विभाव्यते ॥७॥

सन्तीति—गृहेगृहे, प्रतिगृहम्, श्रसंख्याः, संख्यातीताः, (गणियतु मशक्या इति यावत्) जातिः जन्म, तन्मात्रं भजन्ते, इत्येवंभृताः, सामान्यसामर्थ्यकाः । ( निह श्रिभिनव रचनया किमिप जगतः-उपकर्तुं समर्था इति भावः) श्वानइव, कुक्कुरा इत्र, सिन्त, विद्यन्ते, ते हि यथा भुक्तोद्रीर्ण भोजनिप्रयाः, श्रमेध्य भोजनेप्सया यथाकामं विचरन्तः, श्रगणानीयाः, कुक-वयः, श्रसत् काव्यरचनया कालंनयन्तः, एवं भृताः, निंदास्पदाः, (सततं-निन्दनीयाः-एवेतिभावः) (उक्तकवयः निन्दाः परं के श्रीनन्दा इत्यपेचान्यामाह । उत्पादकाः, इति—किन्तु वहवः, भ्यांसः, कवयः, कवित्वख्याति मिच्छया काव्यकता प्रणयनोत्सुकाः, शरभाइत्, श्रष्टापदमृगविशेषा इत्य, न उत्पादकाः, नाभिनवकाव्यरचना निपुणा इत्यर्थः । सन्तीति पूर्वेणसंबंधः । श्रत्यत्वाः, त्राभिनवकाव्यरचना निपुणा इत्यर्थः । सन्तीति पूर्वेणसंबंधः । श्रत्यत्वाः एव विद्यन्ते इति तात्पर्यम् ।

यथेंव ¹शरभाणांकुत्रचिदेवावस्थानं निह सर्वत्रलभ्यन्ते तथेंब सत्काव्य निर्मातारः सुकवयः ऋष्पसंख्याका एव विद्यन्ते संसारे इतिभावः । ऋत्र कुकविषु शुनां सुकविषु च शरभाणां ऋवैंधर्म्यसाम्यप्रतिपादनात् उपमाद्वयं— ऋन्योऽन्यनैरपेद्वय तथा स्थितेश्वानयोः संस्रष्टिः ॥६॥

श्चन्येति—ग्रन्यस्य श्रपरस्य, कवेः, काञ्यकर्तुः, वर्णानां, श्रज्ञ-राणां, (रचितानां संदर्भाणामितिभावः) परावृत्तिः, विपर्यासेन, परिवर्त-

१. गंधर्वः शरभो रामः स्वमरो गवयो शशः—इत्यमरः।

२. जाति सामान्य जन्मनोः ..... "

#### श्लेषप्रायमुदीच्येषु, प्रतीच्येष्वर्थमात्रकम् । उत्त्रे क्षा दाक्षिणात्येषु, गौडेष्वक्षरडम्बरः ॥८॥

नेनेत्यर्थः । प्रथनं (पत्ते) अन्येवर्णाः कृष्णा गौरादयः तेषां परावृत्तिः, वर्णा न्तरेणगृहनं निरोधानं तथा वंधानां गौड़ी पाञ्चालां वेदभ्योदीनां, चिह्नानां, श्रीप्रमृति लिङ्गादीनां च, गृहनेः, गोपनेः (पत्ते) वन्धचिह्नस्य शृंखलादेः, निगृहनेः । अनाख्यातः, अप्रकटितः, अथ च नना अनाः, अपुरुषः, (का पुरुषः इतिभावः) एवं ख्यातः, प्रसिद्धः, कविः, काव्यनिर्माता सतां, सहृदयानां, सज्जनानां मध्ये (सज्जन संसदीत्यर्थः) चौरः, तस्करः, विभाव्यते, ज्ञायते, योहि अपर कवीनां संदर्भादाकृष्यरचयति रचनां तस्करहपेणासोहि सहृदय समाजे चौरां गएयते ॥॥॥

इदानी दशमेदन रचना शैली दर्शयति—रलेषे ति — उदीच्येषु उत्तर पथ वासिषु, श्रदेशेषु, तत्रत्यानां कर्तानां रचनायामितिभावः । रलेषप्रायं, बहर्भवाचकत्वं, रलेष प्रयोगः, श्राधिक्येन दश्यते, उदीच्याः हि कवयः रलेषा- लंकाराश्रयेण काव्यं रचयन्तीतिभावः । प्रतीच्येषु, पाश्चात्येषु, पश्चिम देशे- व्यव्यर्थः । अर्थमात्रकं, अर्थस्येव प्राधान्यं, नच शहालंकारादीनामित्यर्थः । तथाच प्रतीच्यांदिशि अर्थस्येव विशेषादरः नोदीच्यादीनामिव तेषां शब्दा- लंकारादिषु मात्रशहेनायं व्यज्यते । दाचिणात्येषु तदेशोद्धवेषु-उत्येचायाः संशय मूलकप्रकृतस्यालंकारस्येवविशेषादरः गोडेषु वङ्ग देशादारभ्य उत्कल देश पर्यन्तेषु, जनपदेषु, प्राच्येषु श्रद्धराणां, वर्णानां, डंवरः, श्रोजगुणवतांस- मासभृथिष्टानांपदानामेव रचना सौकर्यमित्यर्थः ।

सर्वत्रैव देशोषु कविभिरेकेकोहि गुणः समादितः परंनहि-सहृदयानां-संतोषकरः, श्रतःगुणनिचय मेव हि श्रेयानितभावः ॥=॥

साम्प्रतं सहदय प्रीति जनकं रचना प्रकारं वर्णयति—नव इति नवः,नृतनः,

नवोऽर्थो जाति रग्राम्या श्लेषोऽक्किष्टः स्फुटो रसः । विकटाक्षरबंधश्च कृत्स्नमेकत्र दुष्करम् ॥९॥ किं कवेस्तस्य काव्येन सर्ववृत्तान्तगामिनी । कथेव भारती यस्य न व्याप्नोति दिगन्तरम् ॥१०॥

अन्यैः, किविभिरित्वदः, अर्थः, अभिधेयः, (अविधा प्रतिपाद्योवान्यार्थःइतियावत् ) अप्राम्या, नीच जनोचारितवाग्जालः प्राम्यः सचदोषिवशेषः
तद्रहिता, जाितः, रचनाशेली, यत्रश्लेषः शद्वार्थोभयन्नित्तरलं कारः, अक्रिष्टः,
सहदयवेद्यः (अदुवीध इति यावत्) रसः श्रृंगारादि स्फुटः, मुख्यकः,
विकटः, (विकटलंपदानां न्यासविशेषः) तद्गुण युक्तः, बन्धः, प्रबन्धः,
ओज गुण प्रकाशकं राडम्बर विशेषः गोडी रीत्यनुसारेगोतिभावः। आम्यादि
दोषरहितं सुवोध्य श्लेषादिकं स्फुटं रसं गोडीरीति वंधनं रचनयागुम्फनामत्यर्थः।
एतत्सर्व कृत्सं कािटन्येनहि एकत्र, एकिमनस्वितरीति शेषः। दुष्करं
(दुर्लभिमिति यावत्) एतेहि गुणाः एकिस्मन्सन्दर्भे न दस्यन्ते, एतच सर्व गुणा
सौष्टवत्वं सहद्य प्रीति करिमत्यर्थः। अथ च नतन-अर्थः प्राम्यत्वादि दोष
रिहतः, श्लेषादिऽलंकारैः शोभितः, अकिटनः, स्फुटः, अत्तर विन्यासादिभिरलंकृतोहि संदर्भः सहद्यानांशीतिमुद्भावयित॥६॥

ये हि कवयः पूर्वोक्त गुणायुक्तां रचनां कर्तु मसमर्थास्तेषां काव्यकरणं निर्धिकत्वमित्याशयेनाह । किमिति यस्य कवेः, कवित्वस्यातिप्राप्तुमिच्छो, कथा, संदर्भविशेषः, तस्यवाक्, सर्ववृत्तान्तगामिनी, सर्वविषयप्रकाशिनी, प्रागुक्त नवार्थादिगुणोद्धासिनीत्यर्थः । अथवा सर्वाणि यानि वृत्तानि मात्रिक वार्षिकादीनि छंदांसि तेषामध्ययन परायण सहृदयानन्दकारीणीत्यर्थः । (पत्ते ) भारतीव, महाभारतिमव ( भगवतो व्यासस्यमहाकाव्यंसर्वेः कवि-भिराद्रीयते ) दिगन्तरं, दिग्भागपर्यंतं ( सर्वत्रेति भावः, ) नप्राप्नोति, 'कथा

उच्चासान्तेऽप्यखिन्नास्ते येषां वक्रे सरस्वती । कथमाख्यायिकाकारा न ते वंद्याः कवीक्वराः? ॥११॥ कवीनामगलद्दर्षो नूनं वासवदत्तया । शक्तयेव पाण्डुपुत्राणां गतया कर्णगोचरम् ॥१२॥

नगच्छिति, स्वकीयया प्रतिभया भिटिति जनानां हृदयानि न व्याप्नोति, तस्य-कवे:, काव्येन, संदर्भेण किं-न किमिप प्रयोजनं जनानामित्यर्थः, (वेंफल्य मेव तस्य जगतीतिभावः) पूर्व निर्दिष्ठरचनाशैंलीमनुस्तत्य महाभारत कथामिव यस्य संदर्भः दिगन्तरं न प्राप्तस्तस्य काव्येन किं प्रयोजनिमिति भावः ॥१०॥

साम्प्रतं नमस्करोति कवीन् । उछ्न्वासेति — येषां कवीनां वके, मुखे, सरस्वती वागिविष्ठातृदेवी, विलसतीतिरोषः, उछ्नागस्येव, श्वासप्रश्वास मारूत-त्यागेनेव, यद्वा वाग्विश्रान्तिस्थानस्य प्रकरणसमाप्तेरिति भावः । श्रान्ते, श्रवसानेऽपि, श्राखिन्नाः, कवित्व शक्तेःप्रभावाद्रचनायामनिवृत्ताः, श्राख्यायिका-काराः, श्राख्यायिका इतिवृत्तं तं कुर्वन्ति तथोक्ताः, संदर्भरचियतारः, ते प्रसिद्धाः, लब्धख्यातिकाः, कवीश्वराः, कविश्रेष्ठाः, कथं न वंद्याः, श्रापितु वंदनार्हाः, एविति भावः, श्राख्यायिकाकारान् सर्वानेव कवीन् थंदे इतितात्पर्यार्थः । थेषां कवीनां वदने विहरति सर्वदेव सरस्वती ते श्राख्यायिकाकाराः कविवराः पूजनीया इति भावः ॥१९॥

श्रधुना तद्रचित संदर्भ प्रशंसया महाकविं सुबधुंस्तौति । कवीनामिति कर्णास्य, स्तपुत्रस्य, दुर्योधनसुहृदः, स्वनामविख्यातस्य वीरस्येतियावत् । एव गोचरः स्थानं (पत्ते) कर्णाः, कवीनां स्वीयं २ गोः, इन्द्रियं, श्रवणं, तस्य चरं, विषयं, कवीनांश्रवणपथवर्तिनीमत्यर्थः (कर्णसमीपेएकपुरूषाघातिनी

नारदोऽश्रावयद्देवानसितो देवलः पितृन् । गंधर्वयत्तरत्तांसि श्राव-यामास वेशुकः

#### पदवन्धोज्वलो हारी ज्ञतवर्णक्रमस्थितिः। भद्यारहरिचन्द्रस्य गद्यवन्धो नृपायते॥१३॥

शक्तिरस्तीि पागद्दपुत्राणां श्रवणकालिमितियावत ) गतया, प्राप्तया, ( पत्ते ) श्रुतिवियर्णनीता, वासवः, इन्द्रः, तेन दत्ता तया ( पत्ते ) वासवानुष्रहेण प्राप्ता स्त्री वासवदत्ता, तदिविवृत्तान्यः, तया शक्त्या, तदाख्य अश्रविशेषेणेत्यर्थः । पागद्रपुत्राणां, यृधिदिरादीनामित्र, वासवदत्तया, तदाख्य गद्यकान्येन, कवीनां दर्पः, अर्धकारः, नृनं निश्चयेन, अगलत् ननाशः । इन्द्रप्रदत्तांणकपुरुषा- घातिन शिक्तिनिशम्य पागडवाः यथा विजयाशा रिक्षताः हतदर्भश्चालन्, तथेव वासवदत्ताया संदर्भ सौद्धवत्वमञ्चलंक्य लवें कवयः अतः परस्रधिकपुरुष्णज्ञक्कात्यं कर्नु मज्ञानः अर्हकारण्युत्त्याः—अभविक्तर्यथः । उपमादलंकारः ॥१२॥

महाकतेः हरिचन्द्रस्य गद्यकान्यस्य प्राधान्यं दर्शयति—पदेति— पदानां, मृतिङ्ग्तानां, वंधः, रचनाचातुर्थः (पत्ने) स्वस्थानपरायणश्च, तेन उज्ज्ञवतः, ग्रंप्यमानः, हारा, मनाहरः, (पत्ने) हारालंकारशोभीच । अथवा (''श्रहारा'' इति पार्थे) न हरित कस्यापि धनादिकमित्याहारी । कृता, स्थापिता, वर्णानां, श्रत्तराणां (पत्ने) ब्राह्मणादानां च क्रमेण मर्थादानुमारेण च स्थितः येन यस्मिन्वा, एवंभूतः भद्यरः, प्रभुः, हरिचन्द्रः तन्नाभकश्चिन्त्रवेः, तस्यगद्यवंधः, गद्यश्रन्थः, नृपः, राजा, स इवाचरताति नृपायते, नृपत्रत् शोभते इत्यर्थः । हरिचन्द्रक्षयः काव्यं सर्वातिशायिनमिति व्यञ्यते । यस्मिन्गद्यक्षव्ये पदानां वर्णानां च स्थितिकमः, श्रतीव शोभनः-श्चर्सौ हरिचन्द्रस्य गद्यश्चेथः नृप इव विराजते—इति ताप्तर्यार्थः ॥१३॥

त्रपर कविं सातवाहनं, स्तिति । श्रविनाशिनमिति सातवाहनः, तदाख्यःकवि विशुद्धाः, निर्दोषा, जातिः, श्रतंकारादिर्येषु, तथाभृतैः, सुभा-पितैः, शोभना-भाः-कान्तिः, येषांतैः, शोभनैर्वाक्यैः, स्तैरिव, श्रविनाशिनं अविनाशितमग्राम्यमकरोत् सातवाहनः । विशुद्धजातिभिः कोषं रत्नैरिव सुभाषितैः ॥१४॥ कीर्तिः प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्वला । सागरस्य परं पारं किपसेनेव सेतुना ॥१५॥

अनश्चर, अभिरमणीयं, स्थायिनं चेत्यर्थः, अभाम्यं, आम्यत्वादिदोषरहितं, कोषं, काव्यनिधि अकरोत्।

यथा च शोभनेः रस्तैः स्वकीयनिधिः पूर्वते जनेन तथैव सातवाहनेन कविचा काव्यनिधिः विशुद्धैश्शब्दरत्नैः-श्रापुरी । उपमालंकारः । "साम्यं वाच्य मर्वेधम्यं वाक्यैक्य उपमाद्वयोः" ॥१४॥ ॰

प्रवरसेननामानं कविं प्रशंसयति । कीर्तिरिति—प्रवरसेनस्य, तदाख्य-कवेः (पत्ने ) प्रत्ने, प्रवते, (कूर्दने-इत्यर्थः ) रसः, रागा, थेपां ते प्रवरसाः, वानराः, तेपां, इनः, स्वामा, "इनः पत्र्यो न्यप्रक्रयोः" सुधीवः, तस्य वानर राजस्य, कवेल, कीर्तिः, काव्यरचना समुद्धवं यशः, "यशः कीर्तिः समला च — इत्यमरः" कुमुद वत, उज्वला, प्रदीप्ता व्यथवा कुः, पृथिवी, तस्या-मुद व्यानन्दः, तया उज्वलः, यह। कुमुदेन, तदाख्येन वानरसेनापतिना, उज्वला, प्रशस्ता, सेतुना, तदाख्य-काव्यश्रयेन, (पत्ते ) तन्नाम मार्गेषा नल्नाल निर्मितन, किपिनेजेव, वानरवाहिनीव, सागरस्य समुद्रस्य परंपारं प्रयाता, गता, यथेव वानर सेना लेतुवं बेन सागरं समुनोर्य सागरमारिसमुनीर्य देशान्तरं गतमितिनिक्वपीर्थः ॥१५॥

दश्यकाव्यप्रणेतारंभासकविं प्रशंसित । सूत्रेति—भासः, तदाख्यकविः, स्त्रं, वृत्तं धारयतीति स्त्रधारः, नाटकमुख्यपुरुषः, ''नाट्योपकरणादीनि स्त्रभिर्मायते, स्त्रंधारयतित्यथें स्त्रधारो निगदाते।"

सृत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्वहुभूमिकैः । सपताकैर्यशो लेभे भासो देवकुलैरिव ॥१६॥ निर्गतासु न वा कस्य, कालिदासस्य सूक्तिषु । प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते ? ॥१७॥

(पन्ने) स्थपितश्च, तेन कृतः, श्चारम्भोयेषांतैः वह्नीभूमिका श्चनुकरणा-वस्था, वेशपिरवर्तनादिकं (पन्ने) कच्या च । येषु तथोक्कंः, सपताकैः पताका-स्थानिवशेषैः, "यत्रार्थेचिन्तितेऽन्यिस्मिस्तिक्कित्रोऽन्यःप्रयुज्यते, श्चागन्तुकेन भावेन पताकास्थानकं तु तत्" । देवकुर्लरिव, देवमिन्दरंशिव, नाटकैः रूपकभदं "नाटकं ख्यातवृत्तंस्यात् पंचसंधिसमिन्वतम्" । यशो लेभे, कोर्तिमवाप । नाट्य-रचनाकुशलः भासो नाम कविः स्वकीय नाटकप्रन्थेः देवकुर्लरिव यशो लेभे ।

यथा मन्दिरनिर्माता देवमंदिरं निर्माय्य पताकां च स्थाप्य यशभाग्भवति तथैव भासोऽपियशमवाप ॥१६॥

महाकविं कालिदासं स्तोति—निर्गतािष्विति—निर्गतासु उच्चिरितासु, नवार्णप्रतिपादिकासुच, मधुराः, मनोहािरिएयः, सान्द्राः, धनाः, निविडाः (सुरसा इतियावत् ) (पच्चं ) मधु विद्यते यासु ताः मधुराः, मकरन्दवाहिन्यः, सान्द्राः, धनाः, पूर्णावस्थां प्राप्ता इत्यर्थः । तथाविधासु मंजरीिष्वव, कुसुम-वज्ञरीिष्वव, कालिदासस्य कवेः स्िक्षेषु, मनोहरेषुवाक्येषु, कस्य जनस्य वा प्रोतिः प्रेम न जायते, नोत्पद्यते, त्र्रिषतु सर्वस्यैव सहृदयस्य जनस्यप्रीतिर्भवत्ये-वेत्यर्थः, निहं कश्चिदपि जनःयस्य कालिदासकाब्येषु नास्ति प्रीतिरितिभावः—उपमाऽलंकारः ॥१०॥

समुद्दीपितेति—समुद्दीपितः, उत्तेजितः, कंदर्पः, कामो यया बहूनां कामिजनानां कथाश्रवणोनन तदुत्पत्तेरित्यर्थः, उपवनगमनविहारैः श्टंगाररसः समुद्भवतीति । तथोक्का (पद्मे) समुद्दीपितः नेत्रानलेनः दग्धः, कंदर्पः, कममः

### समुद्दीपितकंदर्पा कृतगौरीप्रसाधना । हरलीलेव नो कस्य विस्मयाय वृहत्कथा? ॥१८॥ आढचराजकृतोत्साहैईदयस्थैः स्मृतैरपि । जिहुवान्तः कृष्यमाणेव न कवित्वे प्रवर्तते ॥१९॥

यस्यां तथाक्का, अथवा कृतं, विहितं, गौर्ग्याः ईश्वर्याः, प्रसाधनं, पूजनं, नायेकन, नरवाहनदतेनेतिभावः । यस्यां तथाभृता (यद्वा) कृतं गौर्ग्याः पार्वत्याः, प्रसाधनं, अराधनं, हरस्येतियावत्-यद्वा, गौर्ग्याः,(कर्मभृतायाः,) प्रसाधनं अलंकरणंहरेण (कर्त्रेति भावः) यस्यां तथा भृता, वृहत्कथा, तदाख्यइतिहास काव्यं, हरलीलेव शम्भोः कौतुक्रमिव, कस्य जनस्य आश्वर्याय विस्मयाय न, अपितु सर्वस्येव सहृदय जनस्य विस्मयायेतिभावः । उपमाऽलंकारः ॥१०॥

श्राट्यराजनामानं कविं प्रस्तेति । श्राट्यराजेति श्राट्यराजः, तन्नाम कविः तेन कृताः, रचिताः, ये उत्साहाः, ग्रंथविषेशाः, तैः, हृदयस्ंः, चित्तःनिर्हितः, श्रालोचितेरितिभावः । श्रापि किं वा स्मृतः, स्मरणतांनीतः, विद्वद्धिः, जिह्ना, रसना (मम बाणभट्टस्येति भावः ) श्रान्तः कृष्यमाणेव, श्राकृष्टा इव (वृथा तव प्रवर्तनमेतेषामुत्साहानां पुरस्तादित्याशयेनेत्यर्थः,) कवित्वे, कवित्व-शिक्तं प्रकटियतुं न प्रवर्तते नोत्सहते । सुमनोरमा श्राट्यराजकृताः-उत्साहाः तेषां पुरस्तान्नहि कस्यापि कवित्वशिक्तः प्रशरित एतदेव हि उत्साहाना-मुत्साहत्विमितिभावः । उत्प्रेत्नाऽलंकारः । भवत्संभावनोत्प्रेत्ना प्रकृतस्य परात्मनः "दर्पणे" ॥१६॥

एवंबहूनां कवीनां सन्ति काव्यानि परं नृपतेर्भक्त्या किमपि जिह्वा चापल्यंकरोम्येवेत्याशयेनाह । तथापीति—तथापि जिह्वायां श्रन्तःकृष्य-माणोऽपि नृपतेः, राज्ञः,श्रोहर्षस्य ममवंशोद्भवस्येति यावत् । भक्त्या,श्रनुरा-गेण, निर्वहणे, परिसमाप्ती, श्राकुलः, संदर्भसमाप्तिर्भवंका वा-इत्येवंशंक्य- तथाऽपि नृपतेर्भक्त्या भीतो निर्वहणाकुलः । करोम्याख्यायिकाम्भोधौ जिह्वाष्ठवनचाप्रुम् ॥२०॥ सुखब्रवोधलिता सुवर्णघटनोज्वलैः । शब्देराख्यायिकाऽऽभाति शय्येव प्रतिपादकैः ॥२१॥

मानः । अतं एवं भोतः, बस्तः, सहृद्यसंसदि-अप्रतिभशंकय।इत्यर्धः आख्या-यिका, इतिवृत्तं । "आख्यायिका कथावत् स्यात् कवेर्यशानुकोर्तनम् । अस्या-मन्यकवीनां च यृतंपद्यं कवचित् क्वचित् ॥

तदेव यम्मोधिः, समुद्रः, तस्मिन् जिह्नया, रसनया, प्रवनं, संस्तरगां, तदेवचापलं चाल्रत्यं, कोभि । उद्वयेन समुद्रतरणोत्माहवता जनेनेव किंचित-मार्थेण जिह्नासंस्तरणोन व्याख्यायिकाम्भोधि संतरितृभिच्छामीति भावः । स्यकमलंकारः ॥२०॥

दर्शकानमध्येतृणां च त्राख्यायिकायां प्रवृति जनियतुं संकर्यदर्शयति । सुग्वेति—सुप्तस्य, त्र्यलोचनाजनितस्य, प्रवोधः ज्ञानं, यद्वा सुप्तेन बोधः, "काव्यं यशसेऽर्ध कृते व्यवहार विदे शिवेतरज्ञतथे । सद्यपरिनर्वतथे, कान्ता सिम्मतत्योपदेशयुत्रं"भम्मटः । तेन लिलता, सुभगा, मनोहारिणीत्यर्थः (पत्ते ) सुखात्, सुखस्वापात्, प्रवोधः, जागरणं, तवलिता, मनोरमा, त्र्याख्यायिका, इतिहासकाव्यम, सुवर्णानां, सुप्रयुक्तानां,, "एकःशब्दः सुप्रयुक्तः सम्यग्जातःस्वर्गेलोके कामधुग्भवितं"।

वर्गानां, अत्तरागां, (पत्ते ) मुवर्गानां, हेम्नां, घटनया, योजनया, (पत्ते ) कारुकर्मनेपुग्पेन, उज्वलेः, प्रदीप्तेः, प्रतिपादकेः, विवित्तितार्थबोध-केः शब्देः, (पत्ते ) प्रतिपादकेः, सोपान विशेषेः, चरणन्यासपीठैर्वा, शब्देव, पर्यकद्व, आभाति, विराजते । ष्लेषानुप्राणितोऽपमाऽलंकारः ॥२५॥

साम्प्रतं प्रनथनायकं श्रीहर्षमाशिषा संवर्धयति । जयतीति-ज्वलत्,

#### जयति ज्वलत्प्रतापज्वलनप्राकारकृतजगद्रक्षः । सकलप्रणयिमनोरथसिद्धिश्रीपर्वतो हर्षः ॥२२॥

एवमनुश्र्यते—१ पुरा किल भगवान्स्वलोकमधितिष्ठन्परमेष्ठी विकासिनिपद्मविष्टरे समुपविष्टः सुनासीरप्रमुखैर्गोर्वाग्येः परिवृतो ब्रह्मोद्याः कथाः कुर्वत्रन्याश्च निरवद्या विद्यागोष्टीर्भावयन्कदाचिदासाङ्यके ।

दीप्यमानः, प्रताप एव ज्वलन्, प्रतापानलः, स एव प्राकारः त्यावरगाः "प्राकारा वरगाः सालः—इत्यमरः" (केष्ट्रविशेषः) तेन कृता जगतारन्ना येन तथाभृतः (केष्ट्रविशेषा हि पुरी शक्यते-यनायासेन रन्नियनुमितिभावः,) सकलानां, ख्राधिनां, प्रपाधिनां, ख्राधिनां, मनोरथस्य, ईप्सितस्य, गिद्धिं, ख्राधिजातंनृरियतुं, पुरगों, श्रियां, सस्पदां, विभ्तीनां, पर्यतः, गिरिः, (हर्ष-यति ख्रानन्द्यति जनानिति हर्षः) तदाख्यः चपतिः, जयति, सर्वोक्तपेण वर्तते-इत्यर्थः । ख्राधिकधतायेन विराजमानः श्रोहर्षः चपतिः जगद्रजकः सम्पूष्णानोरथिनिद्धिदः जयित सर्वदेव जयतु इति भावः । निरङ्गस्पकमलंकारः । ख्रार्थ्यावृत्तम् ॥२२॥

एविमिति—एवं, अनेनप्रकारेण, अनुश्र्यते, परम्परया आकर्ण्यते । पुरा किल भगवान स्वलंके विद्यागोण्ठी कुर्वन् आसासके-इत्यनेन संवन्धः । पुरा-इति—पुराकिल भगवान पूर्व समये भगवान, भगं, कल्याणं, विद्यते यस्यस भगवान, कल्याणंकरः, स्वस्य, आत्मनः, लोकं, ब्रद्यलोकं, अधितिष्टन, स्थितंकुर्वन, परमे, सर्वोत्कृष्टे, स्थाने निष्ठतीति परमेष्टी, पितामहः, ब्रह्मा, विकासिनि, विकसिते, पद्ममेव, कमलमेव, विष्ठरं, आसनं, तस्मिन्पद्मविष्टरे, सुनासीरप्रमुखेः, "वृद्धश्रवाः सुनासीरः पुरुहृतः पुरंदरः—इत्यमरः" इन्द्रादिभिः गीर्वाणः, "गीर्वेणाः दानवारयः " इत्यमरः" देवैः, परिवृतः, चतुर्तः परिवृतिः, ब्रह्मोद्याः, "वेदस्तत्वं तपो ब्रह्मा—इत्यमरः" ब्रह्म वेदः, ईथरो वा "ब्रह्मोद्या सा कथा यस्यामुच्यते ब्रह्मशाश्वतम् ।" उद्यते कथ्यते कीति विषयं

तथाऽऽसीनं च तं त्रिभुवनप्रनीच्यं मनुद्वचा तुषपभृतयः प्रजा-पतयः सर्वे च सप्तर्षिपुरः सरा महर्षयः सिषेविरे । केचिटचः स्तुति-चतुराः समुदाचरन् । केचिदपचितिभाञ्जि यजूंष्यपठन् । केचि-त्प्रशंसा सामानि जगुः ।

श्रपरे विवृतकतुक्रियातन्त्रान्मन्त्रान्व्याचचित्तरे । विद्याविसं-वादकृताश्च तत्र तेषामन्योन्यस्य विद्याविवादाः प्रादुरभवन् । श्राथाति

नीयते इतियावत् । याभिः, तथाभृताः, कथाः, कुर्वन् , अन्याश्च वेदवाह्या इतिहास पुराणादीनामित्यर्थः । निरवयाः, अनिन्याः, प्रशंशाहां इतियावत् । विद्यागोष्टीः, ज्ञानसमालोचिती, विद्वत्परिषदित्यर्थः "यागार्धा सर्व विद्विष्टा या च स्वर विसर्पिणी । पर हिंसात्मिका या च न तामवतरेद्वुधः ल क चित्तानुवर्तिन्या कीडा मात्रेक कार्यया । गोष्ट्या सह चरन् विद्वान् लोक सिद्धिं निथच्छति ॥ भावयन्, सम्पादयन्, आसांचके, स्रवतस्थे ।

तथाऽऽसीनमिति—तथा पूर्वोक्तप्रकारेण, श्रासीनम्, उपविष्टं, विभुवनप्रतीच्यं, "प्रतीच्यः प्र्यः-इत्यमरः।" (त्रयाणां भुवनानां समाहारः त्रिभुवनम् ) तेन प्रतीच्यं, पूर्यं, लोकत्रय पूर्जनीयमितिभावः। मनुदच्च चानुषप्रभृतयः, श्रादयः, प्रजापतयः सर्वे च सप्तिष्ठरःसरा-सप्तिषे सिहेता इतिभावः। महर्षयः, तं ब्रह्माणं सिवेविर्, सेवित्वन्तः। केचित्स्तुति चतुराः स्तुतिषु स्तोत्र पाठेषु चतुराः, दचाः, ऋचः, ऋग्वेदान्, सुमुदाचर्न्, उक्तवन्तः। उदात्तादि स्वरमेदेन सम्यक् उच्चारितवंत, इत्यर्थः। "केचिदपिच-तिभाज्ञि,"पूजानमस्यापचितिः-इत्यमरःः। श्रापचिति, पूजा, तां भजन्तीति, श्रापचितिभाज्ञि पूजा सन्वन्धोनीतिभावः। यज्ञ्षि, यज्ञुवेद गतान्मंत्रभागान्, श्रापठन्, पेठः, केचित्प्रशंसा सामानि, स्तुतिगर्भितानि, सामानि, सङ्गीत मयानि वेद भागानि। जगुः, गीतवंतः, सामगायनमञ्जवित्तत्र्थः।

श्रपरे-इति---ग्रपरे, श्रन्ये, विवृतानि, प्रकटितानि, कतुिकयाणां,

रोषगाः प्रकृत्या महातपा मुनिरत्रेस्तनयस्तारापतेश्राता नाम्ना दुर्वासा द्वितीयेन मन्दपालनाम्ना मुनिना सह कलहायमानः साम गायन क्रोधान्धो विस्वरमकरोत् ।

सर्वेषु च शापभयप्रतिपन्नमौनेषु मुनिषु, श्रन्यालापलीलया-श्रवधीरयति कमलसम्भवे च कुमारी किश्चिदुन्मुक्तवालभावे भूषितन-

यज्ञादिकर्मणां, तन्त्राणि, प्रकरणानि, यैं:, येषु वा, तान् मंत्रान् व्याचचित्तरे, कथयामासः । विद्या विसंवादकृताः, विद्यानां वेदशास्त्रादीनां, यः, विसंवादः, मतभेदः, तेनकृताः, जिनताः, ( गतुरागमात्सर्यादिनेत्यर्थः ) तत्र, तिस्मिन्स्थाने तेषां, ऋषाणां, श्रन्योन्यस्य, परस्परस्य, विद्याविवादाः, प्रश्लोत्तररूपाः, प्रादुर्भवन्, उत्पन्नाः । श्रथ सामगायन् कोधान्धोदुर्वासा विस्वरमकरोदित्यनेनसं-वंधः । श्रथेति—श्रथ प्रादुर्भृतविवादे, श्रितरोषणः, श्रितकोपनः, प्रकृत्या स्वभावनेव ( श्रन्यशात्रद्वसंसदि कोषोऽयमयुक्तः ) महातपाः, श्रिततपस्वी, मुनिः, श्रात्रेस्तनयः, पुत्रः, तारापतेः, चन्द्रमसः, श्राता, नान्ना दुर्वासाः, द्वितीर्षन, श्रपरेण, मन्दपालनान्ना, मन्दपालाभिधयेन, मुनिना सह, कलहायमानः, कलहं-कुर्वन्, सामगायन्, सामवेदं, सङ्गीतस्वरेण पठन् कोधान्यः, कोधेन, मात्सर्यणा, श्रन्थः, विवेकश्र्त्यः, विस्वरम्, विकृताः, स्वराः, उदात्तादयः यस्मिन् तथाः भूतं-श्रकरोत् ।

शापेति शापभय प्रतिपन्नमौनेषु, शापादभयंशापभयं तेन त्रस्ताः, त्रत-एवं प्रतिपन्नं, स्वीकृतं, मौनं, यैस्तथाभृतेषु-सर्वेषु मुनिषु, त्र्यन्यालापलीलया, (त्र्यपर कथाव्याजेनेतिभावः) त्र्यवधीरयति, तिरस्कुर्वति, दुर्वाससमितिभावः। कमल सम्भवं, कमलात् सम्भवोजन्मयस्य स कमलसम्भवः, तिस्मन्कमलसम्भवं, (पद्मयोनावित्यर्थः) कुमारी, कामार व्रतं विद्यते यस्या सा कुमारी, त्र्यनुद्धावाला, (सामान्यवयस्का इत्यर्थः) किम्बदुन्मुक्कबालभावं, ईषदुज्भितर्शेशवं, भूषितनव-यौवने, नवयौवनेनालंकृता-इत्यर्थः, नवं वयसि वर्तमानानूतनामवस्थां-प्राप्ता, वयौवने नवे वयसि वर्त्तमाना गृहीतचामरप्रचलद्भुजलता पितामह्मुप-वीजयन्ती ।

निर्भर्त्सनताड्नजातरागाभ्यामिव स्वभावारुणाभ्यां पादपक्ष-वाभ्यां समुद्रासमाना शिष्यद्वयेनेव पद्क्रममुखरेण नूपुरयुगलेन वाचा-लितचरणा, मदननगरतोरणस्तम्भविश्रमं विश्राणा जङ्घाद्वितयं, सलीलम्-उत्कलकलहंसकुलकलालापिनि मेखलादाग्नि विन्यस्तवाम गृहीतचामरप्रचलद्भुजलता, गृहीतेन, धारितेन, चामरेण, चमरीगोपुच्छनि-मितेनब्यजनविशेषेण, प्रचला, चलन्ती भुज-एव लता यस्या एवंभृता, पितामहं, ब्रह्माणं, उपवीजयन्ती, ब्यजनं स्पन्दयन्ती।

निर्भर्त्सनेति—निर्भर्त्सनाय, विस्वरपाठतयातिरस्करणाय, यत्ताइनं, प्रहरणं, रोषोद्भृतहननमितिभावः । तेन जातः, उत्पन्नः, रागः, लें।हित्यं, ययोः, एवंभृताभ्यां स्वभावारुणाभ्यां, सहजरक्वाभ्यां पादपक्षवाग्यां समुद्धासमाना, सम्यक् देदीप्यमाना, पदकममुखरेण, पादयोः यकमः, पादविन्यासः, तेन मुखरं सशब्दं, रणदितिभावः । तेन वाचालितचरणा. वाचालितो नदन्तो, चरणों, यरयास्तशेका । मदनेति—मदननगरतोरणस्तम्भ विश्रमं, मदनस्य, कामस्य, यन्नगरं, पुरं, निवासस्थानं, तस्ययत्तोरणं विह्वर्षरं, तस्य स्तम्भों, स्थूणा, तयोविश्रम इवविश्रमः, विलासः, यस्यास्तथा विधं, जङ्घाद्वितयं, उरुयुगलंविश्राणा, धारयन्तो । (मदन नगरे तस्याः जङ्घाद्वित्यं स्तम्भरूपेणवर्तते-इत्यर्थः ) उत्केति—उत्कानां, उत्सुकानां कलहंसानां, कुलस्य, समृहस्य, यः कलः, मधुररवः, गुं एव त्रालापः, भाषणविशेषः, तद्व-प्रलापिनि, सान्द्रशब्दकर्वात्यर्थः । मेखलादाम्नि, काश्विस्रजि, मालारूपधारिणीत्यर्थः । विन्यस्तः, स्थापितः, किसलयः, नवपक्षवः, तद्वत्वाम हस्तो यया—विद्वन्मानसेति—विद्वन्मानस निवासत्वमन, विदुषां, शास्त्राध्ययनकृत परिश्रमाणां, मानसं, चित्तं, तत्र यो निवासः, श्रवस्थानं, तेन लगं, संसक्तं,

हस्तिकसलया, विद्वन्मानसिनवासलग्नेन गुणकलापेनेवांसावलिन्बना ब्रह्मस्त्रेण पिनत्रीकृतकाया, भास्वन्मध्यनायकम्-श्रनेकमुक्तानुयातम् श्रपवर्गमार्गमिव हारमुरसा समुद्रहन्ती, वदनप्रविष्टसर्वविद्यावधूचरणा-लक्तकरसपाटलेन इव स्फुरतादशनच्छदेन विराजमाना, संक्रान्तकम-लासन कृष्णाजिन प्रतिमां मधुरगीताकर्णनावतीर्ण् शशिहरिणाम्-इव कपोलस्थलीं द्याना, तिर्यक्सावज्ञम् उन्नमितेकभ्रूलता श्रोत्रमेकम्,

गुराकलापेनेव, चातुर्यादिगुरा समृहेनेव, श्रंसावलम्बिना, स्कंघे विलम्बमानेन, ब्रह्मसूत्रेण, यज्ञोपवीतेन "श्रमोक्तमसीवर्ण, ब्राह्मणानां विभृष्णम् । पितृगाां च भागो येन प्रदीयते ॥" पवित्रीकृतकाया, पवित्रीकृता, शुर्द्धिनीताः काया, शरीरं यस्याः, भास्वनिति-भास्वन्मध्यनायकं, भास्वन्, भाः, कान्तिः विद्यतेयस्य स भास्वन, देदीप्यमानः, उज्वलः मध्यनायको, मध्यमणिर्यस्य (पत्तं) भास्वतः, सूर्यस्य, श्रानेकमुक्रानुयातं, श्रानेकैः, मुक्राफलैः, श्रानुयातं, प्रथितम् ( पच्चे ) त्र्यनेकैं:, मुक्कैं:, ''मोच्चमार्गगामिभिः," त्रनुयातं, सेवितं त्र्रपवर्गमार्ग-मिव, मुक्ति पथमिव, ( त्र्यपवर्गमार्गस्य-मुक्ताजालस्य च विशुद्धत्वादुःप्रेच्चितम् ) हारं, मुक्ताकलापं, उरसा, वद्यःस्थलेन, समुद्रहन्ती, धारयन्ती, वदनेति— वदने, त्र्यानने, प्रविष्टानां, सर्वासां, विद्यानामेव, वधूनां, स्त्रीणां, चरणोषु पादेषु, यः श्रलक्षकरसः, लाचाद्रवः, तेनेव पाटलः, ईषद्रक्षः, तेनस्फुरता, विलसता, दशनच्छदेन, श्रथरेण, विराजमाना, शोभमाना ( सर्वाविद्याएवनार्यस्तासां मुखप्रवेशेनालक्कक रसेन श्रोष्टयोःस्वभावारुणयोरुत्येचितम् ) संक्रान्तेति— संकान्ता, संलग्ना, कमलासनस्य, ब्रह्मणः, कृष्णाजिनस्य, कृष्णामृगचर्मणः, प्रतिमा, कान्तिः, यस्यास्तथाविधा । अत एव, मधुरस्य, मनोहरस्य, गीतस्य, गानस्य, त्राकर्णनाय, श्रवणाय, त्रवतीर्णः, उपस्थितः, शशिनः, चन्द्रस्य, हरिगाकलंकरूपो मृगो यत्र तादशीं, कपोलस्थलीं, गंडप्रदेशं, दधाना, धार-तिर्यगिति—तिर्यक्, कुटिलं, यथास्यात्तथा सावज्ञं, श्रवज्ञया,

विस्वर अवस्य कलुषितं प्रचालयन्तीव श्रपाङ्गनिर्गतेन लोचनांशु जल-प्रवाहेस् इतरश्रवसेन च विकसित सिन्धुवार मञ्जरीजुषा हसतेव प्रक-टिनविद्यामदा, श्रुतिप्रस्यिभिः प्रस्यवैरिव कर्सावितंसकुसुम मधुकरकुलै-रुपास्यमाना, सूच्मविमलेन प्रज्ञाप्रतानेनेवांशुकेनाच्छादितशरीरा, वाङ्मयभिव निर्मलं दिच्च दशनज्योत्स्नालोकं विकिरन्ती देवी सरस्वती श्रुत्वा जहास ।

निरस्कृतभावेन, विस्वरपाठकं, दुर्वाससमित्यर्थः । उन्नामितंकभृलता, उन्न-मिता, ऊर्श्वभागंनीता, एका श्रलता इव, वल्लरीरूपा, श्रूलता थया, एवं-भूत्या, श्रोत्रमेकं, कर्णमेकं, विस्वर श्रवणेन, अगुद्धस्वराकर्णनेन, यत्— कन्नुषितं, दृषितं, (कालुष्यतां नीतमिति यावत् ) अपाङ्गनिर्गतेन, नेत्र प्रान्त च्युतेन, लोचनस्य, नेत्रस्य, अंशवः, किरणा एव जलानि तेषां यः प्रवाहः, स्रोतः, तेन, इतर श्रवणेन, कर्णेन, प्रज्ञालयन्तीव, शुद्धतांनयन्तीव । विकसि-तेति—विकसिता, प्रकुक्षिता, या सिन्धुवारस्य सम्भलतरोः, मक्षरो, वल्लरी, तद्जुषा, तद्वद्कान्त्या, इसतेव, हास्यं कुर्वाणा-इव, अत्रएव प्रकटितविद्यामदा-प्रकटितः प्रकाशनीतः, विद्यामदः, विद्याजनितः, अहंकारः । यया एवंभृता ।

श्रुतिप्रण्यिभिरिति — श्रुतिप्रण्यिभिः, श्रुतिर्वेदशास्त्रं, तत्र प्रण्यिभिः, प्रेमकर्तृभिः, प्रण्वैरिव, उां कारैरिव, कर्णंषु, श्रोत्रेषु, यानि, श्रवतंसानि, कर्ण्-भूषणानि, तान्येव क्रुसुमानि, पुष्पाणि, मधुकरकुलैः, श्रमरैः, उपास्यमाना, (मधुर ध्वनिना श्रुतिसुखंजनयद्भिरित्यर्थः ) स्द्मेन, हस्वेन, श्र्यतण्व, श्रितिने विमलेन, परिशुद्धेन, प्रज्ञाप्रतानेनेव-प्रज्ञाप्रतानः, बुद्धिवैचिन्त्यं, स एव प्रतानः, प्रसरः, तनेव-श्रंशुकेन, वसनेन, पटेनेत्यर्थः (श्रध्यत् बुद्धिवैचिन्त्यमेव वस्त्रंयस्था-ण्यंभृता ) तन-श्राच्छादितशरीरा, श्रच्छादितं, श्रावर्णितं, शरीरं यस्या, वाङ्मयेति—वाङ्मयमिव-विद्यामिव (शास्त्रं ) निर्मलं, श्रितिशुद्धं, दशनानां, या ज्योत्स्ना, कान्तिः, तस्याः, यद्-श्रालोकं, द्योतं, तं-इतस्ततः, दिज्ञु, दिग्मागेषु, विकिरन्ती, प्रसारयन्ती, देवी सरस्वती, श्रुत्वा, श्राकर्पं, जहास ।

दृष्ट्वा च तां तथाहसन्तों स ग्रुनिः-श्राः पापे १ दुर्गृहीतविद्यालवा-वलेपदुर्विद्ग्ये १ मामपि-उपहसिस । इत्युक्त्वा शिरः कम्पविशीर्यमाण्-बन्धविशरैः उन्मिषत्तिदृत्तन्तुपिङ्गिलिन्नो जटासञ्चयस्य रोचिषा सिज्ज-न्निव रोषद्हनद्रवेण दश दिशः कृतकालसन्नियानामिवान्धकारितललाट-पट्टाष्टापदाम्, श्रन्तकान्तः पुरमण्डनपत्रभङ्गमकरिकां श्रुकुटिमावन्नन्,

हृष्ट्रा-इति-स मुनिः तां हमन्तीं वीच्य शापजलं जयाह इत्यनेनान्वयः। तथेति—पादताइनभुकृटिसंचरणपूर्वकमित्यर्थः । स सुनिः, दुर्वासाः, त्र्याः इति कोधाभिव्यञ्जकमव्ययम्। पापे,? पापकारिणि, श्रानिष्टकत्रांत्यर्थः। दुर्गृहीतेति । दुर्ग् हीतः, दुष्टभावनाभ्यस्तः, यः, विद्यालेशः, ( श्रत्यल्पविद्येति-भावः ) तेन यः, अवजेपः, ऋहंकारः, तेन दुर्विदग्धा, दुर्विनीता तत्सम्बुद्धौ, दुविदग्धे ? मामपि, लेकित्रय प्रसिद्धं दुर्वाससमपीति भावः । उपहससि, हास्यास्पदं विद्धासि । इत्युत्तवा, एवमाभाष्य । शिरःकम्पेति— शिरसः, कम्पेन, विभूननेन, विशीर्थमाणाः, विकीर्थमाणाः, ये बन्धविशराः, बन्धनिचयाः, तैः । उन्मिषदिति--उन्मिषन्, उद्यन्, तिङत्तन्त्नां, विद्य-त्स्रजां, पिङ्गलित्रा, पिङ्गत्वं, पिङ्गलवर्णतंत्रयस्य, तथाभृतस्य, जटासंचयस्य, जटानिचस्य, रोचिषा, कान्त्या ''रोचि शोचि रुभे क्वीवे, इत्यमरः।" सिश्च-न्निव, वर्षन्निव, दशदिशः रोषदहनद्रवेरा, ऋधामिप्रसतस्वेदेन । कृतेति—कृतं, विहितं, कालस्य, यमस्य, कृष्णवर्णस्य वा, सुनिधानम्, उपस्थितिर्यस्यांतथा भृताम्, इव । **त्र्यन्धकारितेति**—त्र्यन्धकारितं, त्र्याकुळ्वनेनदुष्प्रं<del>च्यं,</del> ललाटप-हमेव, मस्तकप्रदेशमेव, ऋष्टापदं, सुवर्ण, यया ताहशीं ( ऋनेनश्रू विच्नेपेणाप्रका-शित स्वरूपेणास्यादर्शनीयत्वंस्पष्टं ) श्रान्तकेति-श्रान्तकस्य, यमस्य, श्रान्तः-पुरं, श्रवरोधगृहम्, तस्य मग्डनाय, श्रलङ्करगाय, पत्रभङ्गस्य मकरिकां, पत्रस्य यःभङ्गः, तुटनं, तद्वत् मकराकारधारिएां किसलयमितिभावः। ताम् अुकृटि, श्रुविच्चेपं, त्राबध्नन् । धारयन् त्र्यतिलांहितेन, त्र्यतिरक्कोन, चत्नुषा, नेत्रेण, त्रमर्ष-

श्रितेलोहितेन चच्चुषामर्षदेवताये रूधिरोपहारिमव प्रयच्छन् , निर्दयदृष्ट्र दशनच्छदोदंतांशुच्छलेनभयपलायमानांवाचिमव रून्धन् , श्रंसावस्रंसिनः शापशासनपट्टस्येव प्रंथन् प्रन्थिम श्रन्यथाकृप्याजिनस्य, स्वेदकगाप्रति विम्बतेः शापभयात्-शरगागतेरिव सुरासुरसुनिभिः प्रतिन्नपसर्वावयवः कोपकम्पतरिताङ्गुलिनाकरेगा प्रसादनलग्नामत्तरमालामिवान्तमाला-मान्तिप्य कामण्डलवेन वारिगा ससुपस्पृश्य शापजलं जमाह् ।

देवतायें,त्र्यमर्षः, क्रोधः, तस्याधिष्ठात्री या देवता तस्यें । रूधिरोपहारमिव, रक्तपूजासाधनमित, प्रयच्छन, ऋर्पयन् । निर्देयेति । निर्देयं, दयारिहतं, थास्यात्तथा दष्टः, दंशितः, दशनच्छदः, स्रोध्टः, ( दन्तानिदृशदग्रति, श्रावृगोति,-इति दशनच्छदः ) येन तथाभूतः, दन्तांशुच्छलेन, दन्तिकरगान्या-जेन भयपलायमानां, भयात् ( शाप ) देशान्तरंगम्यमानां, इव, वाचं, रूध्नन्. श्रवरोधयन् । श्रंसेति—श्रंसस्रंसिनः, स्त्रंधावलम्बिनः, कृष्णाजिनस्य, मृग-चर्मणः, शापस्य, यःशायनपद्रः, फलकं, तमिव, तस्य द्रन्थि, बंधनं, ऋन्यथा, वैपरीत्येन, प्रन्थन , बन्धन् । (शापशासनं हि स्वभाव शुक्कंलिपि कृष्णं च भवति श्रत्रापि श्वेतकृष्णवर्णस्य कृष्णाजिनस्यसाम्यत्वात् , (उत्प्रेज्ञालंकारः) स्वेदेति—स्वेद कराणु, कोधोद्भवेपुघर्मबिन्दुपु, प्रतिविम्बिनः, प्रतीयमानः, प्रति पन्नसर्वावयवः, प्रतिपन्नानि, स्फुटिभ्तानि, सर्वाणि, समग्राणि, त्रवयवानि, देह भागानि, येषां तैः शापभयात्, शरणागतैः शरणांप्राप्तैः, सुरासुर सुनिभिः ( स्वेदविन्दुपुदश्यन्तेहिसर्वे मुनिप्रमृतयः, तत्रेत्प्रोक्तितं कविना यदेते शापभया-दस्य शररामागता-इति ) कोपकम्पतरिलताङ्गुलिना, कोपेन, कोधेन, यःकम्पः, तेन तर्रालताः, प्रचलिताः, श्रङ्गलयो यस्य एवं विधेन करेगा, हस्तेन । प्रसा-दनलमां, प्रमन्नतार्ये, लमां, श्रागतां ताम् । श्रज्ञरमालामिन, वर्णावलीमिन ( भारतीसंबंधेनैतदुक्कम् ) श्रज्ञमालां, रूद्राज्ञपमालां, श्राज्ञिप्य, परित्यज्य, कामगडलवेन, कमगडलौभवः कामगडलवः तेन स्वकरस्थितेनजलपात्रेण,

श्रत्रान्तरे स्वयम्भुवोऽभ्यासं समुपविष्टा देवी मूर्तिमती पीयूष-फेनपटलपार्ग्डरं कल्पद्रु मदुकूलवल्कलं वसाना । विसतन्तुमयेनां-शुकेनोन्नतस्तनमध्यबद्धगात्रिकाप्रन्थिः, तपोवलनिर्जितत्रिभुवनजयप-ताकाभिरिव तिस्त्रभिर्भस्मपुर्ण्ड्रकराजिभिर्विराजितललाटाजिरा, स्क-न्धावलम्बिना सुधाफेनधवलेन तपःप्रभावकुर्ण्डलीकृतेन गङ्गास्रोत-सेव योगपट्टकेन विरचितवैकच्यका, सव्येन ब्रह्मोत्पत्तिपुर्ण्डरीकमुकुल-

वारिगा, जलेन, समुपस्पृश्य, त्राचम्य शापजलं, जप्राह, गृहीतवान् ।

त्र स्रान्तरे-इति—स्रतान्तरे मृतेश्वतुभिवेदःसह सावित्रीसमुत्तस्थो, इत्य-नेनान्वयः । स्वयम्भुवोऽभ्याशे, प्रजापतरन्तिके, समुपविष्टा, स्थिता, देवी, भगवतो, मूर्तिमतो, ( निश्वला इतिभावः ) पीयूपेति—पीयूपं, त्रमृतं, तस्य यत् फेनपटलं, फेनिनचयं, तद्वत्, पाराडरं, शुश्रम् । कल्पद्रुमेति—कल्पद्व-मस्य, सुरतरो:, दुकूलं, वसनं, इव, तरुवल्कलं, छालं, वसाना, वस्ररूपेगाधार-यन्तीत्यर्थः । विसतन्तुमयेन, कमलतन्तुनिर्मितेन, श्रंशुकेन, सुविमलवस्त्रेण । उन्नतेति—उन्नतयोः, प्रवृद्धयोः स्तनयोः, कुचयोः, मध्ये बद्धा, गाविकाप्रन्थिः, बन्धनविशोषः, यया (सच स्वस्तिकाकारःस्तनोद्देशोभवतिर्म्वाणां) तपोवलेति-तपसां, चान्द्रायगादित्रतानां, वलन, निर्जितस्य, नितरांवशीकृतस्य, त्रिभुवनस्य, जयपताकाभिरिव, जयभ्वजैरिव, तिस्रभिः, भस्म पुराड्क राजिभिः, भस्मतिलर्कः, विराजितललाटाजिरा, विराजितं, शंभितं, ललाटाजिरं, ललाटाङ्गरां, यस्याः तथाभूता । स्कन्धेति —स्कन्धें।, श्रंसों, तदवलिम्बना, तत्संलग्नेन, सुधाफेनधवलुन, श्रमृतफेन पागडरेगा, तपः प्रभावकुगडलीकृतेन, तपसां प्रभावन, बलेन, कुराडलोक्टर्तेन, कुराडलवत् वर्तु लाकारेरा । योगपक्टकेन, तदाख्य उपवीता-कारेण, वसनेन, विरचित वैंकच्यका,''तिर्यग्वच्चसि विचिप्तं वैकच्यकमुदाहृतम्"। विरचितं, निर्मितं, वैऋद्यकं, कुत्तांनिहित तिर्थग्हारिवशेषः, यया, सब्यन, वामेन, ब्रह्मोत्पत्तिपुराडरीकमुकुलामिव, ब्रह्मणः उत्पत्तिःयसमात् तत्पुराडरीकं, श्वेतपद्मं.

मिव स्फटिककमण्डलुं करेगा कलयन्ती, दिच्यामच्चमालाकृतपरि चेपम्, कम्बुनिर्मितोर्मिकादन्तुरितं तर्जनतरिलतनर्जनीकम्, उत्चि-पन्तीकरम्, श्राः पाप ? क्रोधोपह्त ? दुरात्मन् ? श्रज्ञ ? श्रनात्मज्ञ ? ब्रह्मबन्धो ? मुनिग्वेटकापमद्गनिराकृत ? त्र्यात्मस्खलितविलत्त ? कथं सकल सुरासुरमुनिमनुजवृन्द्वन्द्नीयांत्रिभुवनमातरं भगवतीं सरस्वतीं शतुमभिलपसि ? इत्यभिर्याना, रोपविमुकवेत्रासनैरोङ्कारमुखरितमुखैः तस्य मुकुलमिव, कुड्मलमिव, स्फटिकं शुत्रं कमग्डलुं, जलपात्रं, करेगा, हस्तेन, कलयन्ती, धारयन्ती । दिज्ञणमञ्जमालाकृतपरिज्ञेपम् , दिज्ञ्णेन, दिच्छा करेणा. अज्ञालया, रुदाज्ञपमालया, कृत: परिच्चेप:, वेष्टनं, यस्य-च तम् । कम्बुनिर्भितोमिक्षदंनुरितं, कम्बुः, शंखः, तेन निर्मिता, या उमिका, अङ्गुर्लायकं, तेन दंतुरितः, दशनवदकृतः, ( युक्त इतियावत् ) तम् तर्जने, भर्त्यने, तरिलता, प्रचिता, तर्जना, तर्जनाप्तुलीयकं, करं हस्तं, उत्चिपन्ती, अर्ध्वायोनयन्ती । त्याः पाप ! त्यानात्मज्ञ ! त्र्यात्मानं न विजानाति, इति, त्रानात्मज्ञ:, तत्मम्बुद्धां । ब्रद्मबन्धां ! निकृष्टब्राह्मण् !, मुनिवेटक !, मुनिषु ये खेटकाः, त्रावमाः, तेषु त्रापसदाः, नीचाः, तेः निराकृतः धिक्कृतः, तत्सम्बुद्धौ (नीचकृत निरादर इतिभावः) स्त्रात्मस्खिलितेति—स्रात्मनः, स्वस्य, स्खलितं, दोषः (विस्वरपाठजनितमित्यर्थः) तेन विलत्तः, र्लाजनः, तत्सम्बुद्धौ । सकलेनि—सकलैः, संवैः, सुराहरमुनिमनुज-वृन्दैः, समृहैः, वन्दनीयां, पूज्यां, त्रिभुवनमातरं, जननीं, भगवतीं, कल्याण-कारिगीं, सरस्वतीं, वाग्देवीं, कथं शानुमभित्तपसि, इच्छसि । इत्यभि-दधाना, कथयन्ती। रोपेति-रोषेण, कोधेन, विमुक्तानि, त्यक्तानि, वेत्रासनानि, वेतसनिर्मितानि त्रासनानि, यें: तथाभृतें: । त्र्योङ्कारेण, प्रणवेन, मुखरितं, ध्वनितं मुखं, धेषां तैः ( सततं, उां उां, इत्येवमुचरद्भिरित्यर्थः ) ऊरुद्तेपेति-उत्वेपेण-उत्थानेन, दोलायमानैः, प्रकम्पमानैः, (चलद्भिरित्यर्थः)

उत्तेपदोलायमान जटाभारभरिनशिरोभिः परिकरबन्धश्रमितकृष्णा-जिनच्छायाश्यामायमानदिवसेः, त्र्यमर्थनिश्वासदोलाप्रेङ्घोलितब्रह्मलोकेः सोमरसमिव स्वेद्विसरव्याजनस्वद्भिः-श्राग्नहोत्रपवित्रभस्मस्मेरलला-टैः कुशतनतुचारूचामरचीरचीवरिभिः-श्राषाढिभिः प्रहरगीकृत-द्रण्डकमण्डलुमण्डलेः मूर्तेश्चतुर्भिर्वेदेः सह वृषीमपहाय सावित्री समु-त्तस्थो। ततो मर्थय भगवन १ त्राभूमिरेषा शापस्य इत्यनुनाथ्यमानोऽपि-

जटाभारें:, जटासमूहं:, भरितानि, पूरितानि, शिरांसि, थेषां तैं: ।

परिकरेति- परिकरबन्धः, कटिबन्धः, तेन, भ्रमिनं, आवर्तितं, यत्, कृष्णाजिनं, मृगचर्म, तस्य छ।थया, प्रभया, श्यामायमानाः, वृष्णत्वमापद्यमानाः, दिवसाः, त्र्यहानि, यैः, तथाम्तैः । श्रमपैति-श्रमपैण, कोपेन, यः निश्वासः, श्वसनम्, तदेव दोला, दोलनयंत्रं (पूरकरेचने भयरूपत्वानिश्वासस्येत्यर्थः ) तेन प्रद्धोलितः, प्रकम्पितः, ब्रह्मलोकः, यैः तथाभूतेः सोमरसमिव, संमल-तारममिव, स्वदिवसरव्याजेन, धर्मप्रसरच्छलेन, स्रविद्धः, स्ररिद्धः,। श्चिरितहोत्रेति-श्चित्रहोत्रस्य, होमस्य, पवित्रं, शुद्धं यद् भस्म, तेन स्मेराः, विकसिताः, ललाटाः, मस्तकानि, थेषां तैः। कुशोति-कुशानां, दर्भानां, तन्तवः, स्वाणि, एव चारूणि, मनोहराणि, चामराणि, व्यजनविशेषाणि, तथा, चीरािंग, वस्त्रािंग, चोवरािंग, कौपीनानि, येषां तथोक्ताः, तैः श्राषादि्भः, पालाशदराङधारिभि: "त्राषाढ संज्ञो दराङस्तु पालाशो व्रतचारिसाम्" ब्रह्मचारिभिः । प्रहरणीकृताः, प्रहरणाय उत्थापिताः (क्रोधादित्यर्थः) दराडाः, पालाशाः, कमराडलुमराडलानि, कमराडलुसमूहाः यैः । मृतैः देह धारिभिः, चतुर्भिवदैः, सह वृषीम्, श्रासनं, "व्रतीनामासनंवृषी, इत्यमरः श्रप-हाय, त्यत्तवा, सावित्री समुत्तस्थो, उत्थिता । ततो मर्थय इत्यतः तच्छापोदकं विससर्जे इत्यनेनान्वयः । ततः, तस्मादनंतरं, मर्षय, चमस्व, एषा सरस्वती, शापस्य, त्रभृमिः, त्र्रस्थानं ( त्र्रयोग्येतिभावः ) एवं, विबुधैः, विद्वद्भिः, त्र्रानु

विबुर्यः-उपाध्याय ? स्विलितमेकं ज्ञमस्वेतिबद्धाञ्जलिपुटेः प्रसाद्यमानोऽपिस्वशिष्येः, पुत्र ? माकृथास्तपसः प्रत्यूह्मितिनिवार्यमाणोऽप्यत्रिणा, रोषावेशविवशो दुर्वासा दुर्विनीते ? व्यपनयामि ते विद्यालवावलेप विशेषज्ञनिताम् त्रतिमामम्, श्रधस्ताद्गच्छमर्त्यलोकम्, इत्युक्त्वा
नच्छ।पोदकं विससर्ज । ततः प्रतिशापदानोद्यतां सावित्रीं सिख ? संहर
रोषम्, श्रसंस्तुतमतयोऽपि जात्येव द्विजन्मानोमाननीयाः इत्यभिद्धाना सरस्वती एव न्यवारयत् । श्रथतां तथा शप्तां सरस्वतीं दृष्ट्वा
पितामहोभगवान् कमलोत्पत्तिलग्नमृणालसृत्रामिव धवलयक्कोपवीतिनीं-

नाथ्यमानः, प्रसाद्यमानः । उपाध्याय ? श्राचार्य ?, स्विलिनं, श्रपराद्धम्, एकम् । बद्धाङ्गलिपुटैः, बद्धानि, श्रङ्गलिपुटानि, यैः एवंभृतैः स्वशिष्यैः, प्रसाद्यमानोऽपि, प्रसन्नतांनीयमानोऽपि । पुत्र ? तपसः, प्रत्यूहं, विष्नं, माकृथाः, माकुरू,(शापदानेन तपसः नाशसंभवादित्यर्थः) एवं श्रित्रणा स्विपत्रा, महातपसा, निवार्यमाणोऽपि र्वार्जतोऽपि । रोषस्य, कोपस्य, यः, श्रावेशः तेन विवशः, पराधीनः, दुर्वासाः, दुर्वि-नीते? दुष्टे ! ते, तव, विद्यालवः, विद्यालेशः, (स्वल्पमात्र विद्याधारिगीत्पर्थः,) तेन यः, श्रवलेपः, गर्वः, तज्जनितां, तदुत्पन्नाम् , उन्नितिमिमाम् , व्यपनयामि, द्रीक-रोमि । श्रथस्ताद्, नीचै: मर्त्यलोकं, गच्छ, बज, । इत्युक्तवा, एवमुक्तवा, तत्-शापो-दकं, पूर्वगृहीतशापजलं विससर्ज, त्यत्याज । ततः, शापदानानन्तरं, प्रतिशापदानो-द्यतां, शापप्रतिकारकरणायोत्थितां, सावित्रीं, स्वसखीं, सखि ? संहर रोषम्, कोपं माकुरू । श्रसंस्तुतेति-न संस्तुता, श्रसंस्तुता, श्रविशुद्धा, मितः बुद्धिः, येषां ते, असंस्कृतमतयः, इतिभावः (अपि) जात्यैव, द्विजन्मानः, बाह्मणाः, माननीयाः, पूजार्हा: । इत्यभिद्धाना, कथयन्तो, सरस्वती एव न्यवारयत् न्यषेधयत् । अथेत्या दित:पितामहः, सुधीरसुवाच इत्यनेनान्वयः । तथेति-तेन प्रकारेरा, (निर्दोषां सर-स्वतीमित्यभिप्रायः) शप्तां सरस्वतीं, स्वपुत्रीं, दृष्ट्वा, श्रवलीक्य, पितामहः, ब्रह्मा, कमलोत्पत्तिः, कमलात्, नारायणनाभिपद्मात्, यद्, उत्पत्तिः, जन्म, तथा

तनुमुद्रहन्, उद्गच्छद्च्छांगुलीयकमरकतमयूखलताकलापेन त्रिभुव-नोपसवप्रशमकुशापीड्धारियोव द्वियोन करेया निवार्य शापकल-कलम्, श्रुतिविमलदीर्धेर्भाविकृतयुगारम्भसूत्रपातमिव दि्चुपातयन् दशन किरयोः सरस्वतीप्रस्थानमङ्गलपटहेनेवपूरयन्नाशाः स्वरेगासुधीर-मुबाच-ब्रह्मन् १ न खलु साधु सेवितोऽयं पन्थाः येनासिप्रवृत्तः, निह-न्त्येषपुरस्तात् । उद्दामप्रसृतेन्द्रियवाजि समुत्थापितं हि रजः कलुषयति

कारणाभूतया, लग्नं, संसक्तं, मृर्णालस्त्रं, कमलतन्तुं, इव यज्ञोपवीतिनीं, ब्रह्म-स्वयुक्तं, ततुं, शरीरं, उद्वहन् , धारयन् । उद्गच्छिदिति—उद्गच्छत्, उदय-मानः, श्रच्छस्य, शुभ्रस्य, श्रह्गलीयकमरकतस्य ( मरकतमशिनिर्मिताहुली-यकस्येत्यर्थः ) मयूखलताकलापः, किरणनिचयः, यस्मात् , तथाभूतेन । त्रिभुवनस्य, त्रिलेकस्य, यः उपम्रवः, संज्ञयः तस्य प्रशमाय, शान्तिकरणाय, कुशापीडं, दर्भतन्तुसमूहं, धारयतीति, तथोक्नेनेव ( माङ्गलिकत्वं हि कुशानामम-क्वनाशायेत्यर्थः ) दिच्चणकरेण, हस्तेन, शापकलकर्लं, शापजनितकेला-हलं, निवार्य, दूरोकृत्य । त्र्यातिविमलें: त्र्यतिशुक्रें:, भाविन:, भविष्यत:, कृत युगारम्भस्य, सत्ययुगस्य, त्रारम्भे, पूर्वरूपे, यः, सूत्रपातः, विन्यासः, तिमव, दित्तु, दिरभागेषु, दशनिकरर्णः, दन्तमयूर्वः, पातयन्, निच्नेपयन्, सरस्वतीति - सरस्वत्याः, वाग्देव्याः, ( शप्तायाः-इतियावत् ) यत् प्रस्थानं, ब्रह्मलोकात् मर्त्यलोकगमनं, तस्य यः मङ्गलपटहः, माङ्गलिकवाद्यविशेषः। तेनेव, ऋाशाः, दिशाः, पूर्यन् , स्वरेण, शब्देन, सुधीरं, गम्भीरं यथा-स्यात्तथा, उवाच, उक्तवान् । ब्रह्मनिति-ब्रह्मन्, न खलु साधुसे वितोऽयं पंथाः, साधुभिः, सजनैः, निह मार्गमिदं सेव्येत, येनासिप्रवृत्तः, येनपथाभवान् प्रच-लितुमुद्यतः । निहन्त्येषः, एषःपन्थाः, मार्गं, पुरस्तात् , श्राप्रतः, निहन्ति ( गच्छन्तिमितिभावः ) उहामेति—उद्दामं, उद्धतं, यथा तथा, प्रस्तानि प्रवृ-त्तानि, इन्द्रियार्येव, वाजिनः, श्रश्वाः, तैः समुत्थापितं, समुष्टतं, रागः,

दृष्टिमनत् जिताम्। कियद्दृरं वा चतुरीत्तते। विशुद्धया हि धिया पश्य-न्ति कृतबुद्धयः, सर्वानर्थानसतः सतो वा। निसर्गविरोधिनी चेयं पयः पाव-कयोरिव धर्मकोधयोरेकत्रवृत्तिः। त्रालोकमपहाय कथं तुमसि निम-जसि। चमा हि मूलं सर्वतपसाम्। परदोषदर्शनःचा दृष्टिरिव कुपिता बुद्धिनं ते त्रात्मरागदोषं पश्यति। क महातपोभारवैवधिकता। क पुरोभागित्वम्। त्रातिरोषगाश्चत्तुप्मानन्थ एव जनः। नहि कोपकलुषिता विमृशानि मनिः कर्तव्यमकर्तव्यं वा। कुपनिस्य हि प्रथम मन्धका-

''धूलिखं'' श्रनज्ञिताम् , श्रज्ञाणि, इन्द्रियाणि, जयन्तीति श्रज्ञितः ते न सन्तीति त्र्यनच्चिताः, तेयां, त्राजितेन्द्रियाणाम्, दृष्टिं, नेत्रं ''ज्ञानंच'' कलुष-यति, मलिनयति । कियद्दरं वा चनुरीच्ते, कियद्दरं हि दश्यते चन्नुषा । ( श्रलंपमेवेतिभावः ) कृतवुद्धयः, संस्कृतमतयः, विशुद्धया हि थिया, परिशुद्धम-तिना, सर्वान्, श्रमर्थान्, उत्पातान्, श्रमतः मतो वा, शुभान्यशुभानि वा, पश्यन्ति, त्र्यवलोक्यन्ति । निसर्गेति--निसर्गविरोधिनी, स्वभाववैरिगी, पयः पावकयो:, जलाग्न्यो:, इव, धर्मकोधयो:, पुगयपापयो:, एकत्रवृत्तिः, एकत्रा-वस्थानम् । त्र्यालोकमपहाय, त्र्यालोकं, प्रकाशं, त्र्यपहाय, त्यत्तवा, कथं तमिन, श्चन्धकारे, निमज्जिसे, पतिम । परेति-परस्य, श्चन्यस्य, दोषदर्शने, दोषाव लोकने, दत्ता, चतुरा, दष्टिरिव, कुपिता, कंपंप्राप्ता, वुद्धिः, मितः, ते, तव, त्रात्मरागदोषं, स्वर्कायदोषं ( त्रात्मस्वलनमित्यर्थः ) न पश्यति । महातपो भारवैवधिकता, महतां, तपसां भारस्य, वैवधिकः, वाही, धर्ता, तस्यभाव नत्ता वव । पुरोभागित्वं, दोर्पंकदर्शित्वं, क्व श्रतिरोषणः, श्रतिकोपरः, चतु-ष्मान् , नेत्रसहितः ( श्रपीतिशेषः ) जनः, श्रम्ध एव ( ज्ञानशूस्यत्वादित्यर्थः) कुपितस्य, क्राधितस्य, हि, निश्चयेन, ( हीतिनिश्चयबोधकमव्ययम् ) प्रथमत् विद्यां, ज्ञानं, श्रान्धकारिगों, श्रान्धकारान्छना भवति, (ज्ञानश्रान्या इत्यर्थः) ततः, तदनन्तरं, भुकृष्टिः, भूभङ्गः ( भवतीतिशेषः ) आदीं, पूर्वं, इन्द्रियाणि, रिग्णी भवित विद्या, ततो अकृटिः। आदौ इन्द्रियाग्णि रागः समास्कंदति चरमं चत्तुः। आरम्भे तपो गलित पश्चात्स्वेदसिललम्, पूर्वमयशःस्फुरित अनन्तरमधरः। कथं लोकविनाशायते विषपादपस्येव बल्कलानि जानानि । अनुचिता खलु-अस्य मुनिवेशस्य हारयष्टिरिव वृत्तमुक्ताचित्त-वृत्तिः। शेलूप इव वृथा वहसि कृत्रिममुपशमशून्येन चेतसा तापसाकल्पम् अल्पमपि न ते पश्यामि कुशलजातम्। अनेनातिलिधिम्ना-अद्याप्युपर्येव सबसे ज्ञानोदन्वतः। न रवलु अनेड्मूकाः एडा जड़ा वा सर्वे एते महर्ष्यः। रोपदोपनिपदो स्व हृद्ये निप्नाह्ये किमर्थमिस निगृहीतवाननागस्र

रागः, समासिकः, लांक्टियंच, समास्कंदित, आश्रयति, चरमं, पश्चात् चतुः, नेत्रं, (समास्कन्दतीत्यर्थः) आरम्भे (केपस्येति भावः) तपोगलिति, नश्यिति, पश्चात् स्वेदसिलितम्, स्वेदजलम् (कृपितस्यिहि स्वेदप्रस्ववर्णस्वभावः) पूर्वं, प्राक्, आश्रयः, अश्रीतिः, अनन्तरं, पश्चात्, आधरः, ओप्टः, स्फुरिति, कम्पते । कथिमिति—लोकविनाशायः, विपयादपस्येव, विषयुत्तस्येव, ते, तव, वल्कलानि, मुनिवस्त्रािण, (त्वकृष्ठपाणीतिभावः) जातानि, उत्पन्नानि ।

श्रनुचितंति—श्रस्य, पुरोदृश्यमानस्य, मुनिवेशस्य, हारयष्टिरिव, मुक्ताहारमिव, वृत्तमुक्ता, सुचरितच्युता, "परिवर्तु ल मुक्ताफला च"। श्रनुचिता, श्रयुक्ता, चित्तवृत्तिः, मनसङ्कल्पः। श्रोत्तृपेति—शेल्प इव, नट इव, उपशमग्रन्येन, शान्तिरहितेन, चेतसा, तापसाकल्पं, मुनिवेशं, कृतिमं (नतु-यथार्थेनेतिभावः) वृथंव, वहसि, धारयसि, श्रल्पमिप, किंचिदिप, ते, कुशल्जातं, मङ्गलं, न पश्यामि। श्रतेन श्रतिलिधिन्ना, श्रतिलाघवेन, श्रद्यापि, श्रधुनापि, ज्ञानोद्दवतः, ज्ञानसमुद्रस्य, उपरि एव, श्रवते, संतरिस (नतु मध्ये प्रविश्वसीतिभावः) न खतु, श्रानेद्दमुकाः श्रेतंवक्तं चासर्थाः। "कथिता श्रनेड मूकाः श्रेतंवक्तं च खलु न ये शक्ताः। एडास्तुश्रुतिहीनाः जङ्गस्तुमूर्काः बुधैः प्रोक्ताः। एडाः, श्रुतिहीनाः, जङ्गः, मूर्काः, सर्वे-एते महर्षयः, (पुरः स्थिताः-इतिभावः)

सरस्वतीम् । एतानि तानि त्रात्मस्खलितवैलच्याणि यैर्याप्यतां याति त्रविदग्धो जनः, इत्युक्त्वा पुनराह्-वत्से सरस्वति ? विषादं मागाः ।

एषा त्वामनुयास्यति सावित्री । विनोद्यिष्यति चास्मिद्विरहि-ताम् । श्रात्मजमुखकमलावलोकनाविध्धतेशापोऽयंभविष्यतीति । एता-वद्भिधाय विसर्जितसुरासुरमुनिमनुज मण्डलः ससम्भ्रमोपगतना-रदस्कन्धविन्यस्तहस्तः समुचितान्हिक करणाय-उदतिष्ठत् सरस्वत्यपि

रोपेति—रोपः, क्रोधः, एव दाषः, तस्य, निषीदित-श्रस्थामिति निषधा, श्रापण ग्रहं, तत्सम्बुद्धं, (श्रथवा) रोष, एव दोषः, तस्य निषधा, श्रावासः, यत्रताहशे स्वहृदये, चित्ते, निम्नाह्ये, (निम्नहीतुं योग्य-इत्यर्थः) श्रनागसां, निरपराधाम्, सरस्वतीं, क्रिमर्थनिग्रहीतवानिस, शप्तवानिस । एतानीति—एतानि, श्रात्मनः, स्वस्य, स्विलितानि प्रमादाः, तः, वैलद्याणि, लज्जास्पदानि, (साधु-संसिद मुखावनितिविधायकानीतिभावः) यः, याप्यतां, गर्हणीयतां, याति, प्राप्नोति, श्रविदग्धः, श्रजः, जनः, इत्युक्त्वा, पुनराह, पुनः कथयामास, वत्से ? पुत्रि ? सरस्वित ? विषादं मा गाः, मा दुःखमनुभव, ।

एवा त्वां सावित्रं। अनुयास्यांत, अनुगमनं करिष्यात (त्वयासार्धगिमिष्य-तीत्यर्थः) अस्मिद्विरहितां, वियोगितां, च त्वां, विनादियेण्यांत, सुखियिष्यति । (पुत्र मुखदर्शनपर्यंतं हि ते शापः) एतावदिभिधाय, एवमुत्तवा, विसिजितः, प्रेषितः, सुराः, देवाः, असुराः, राज्ञसाः, तेषां, मुनिमनुजादोनां च, मएडलः, समूहो येन, तथाभृतः । ससंश्रमं, सहसंव, उपगतः, प्राप्तः, नारदः, नारदिधः, स्कंथे, अंशप्रदेशो, विन्यस्तः, स्थापितः, हस्तः, करो येन, समुचितान्हिक करणाय, समुचितं, युक्तं, यत्, आनिहकं, दिवसकार्यं (संध्यावंदनादिकमिति-भावः) तस्य यत्, करणं, कार्यकृपेण परिणयनं, तस्मे उदितिष्ठत्, उत्थितः । सरस्वत्यपीत्यादितः सावित्र्यासमंग्रहमगादित्यनेनान्वयः । शप्ताकिचिद्वनत-मुखी, धवलेति—धवल कृष्णशारां, धवलः, शुन्नः, कृष्णः, नीलः, ताभ्यां, शप्ता किंचिद्धोमुखी धवलकृष्णाशारां कृष्णाजिनलेखामिव तपसेदृष्टि मुरिस पातयन्ती, सुरिभिनिःश्वास परिमललग्नेर्मूतें शापात्तरेरित्र षट्चरणचकेराकृष्यमाणाशोकशिथिलितहस्ताधोमुखीभूतेनोपदिश्यमा-नमर्त्यलोकावतरणमार्गेव नखमय्यवजालकेन नृपुररवव्याहार हतें भवनकलहंसकुले ब्रह्मलोकिनवासिहृद्येरिवानगम्यमाना समं सावित्र्यागृह-मगात्। श्रश्रान्तरे सरस्वत्यवतरण वार्गिमिव कथियतुं मध्यमंलोकमव ततार श्रंशुमाली। क्रमेण च मन्दायमाने मुकुलित विसिनी विरह

शारा, शवला, ताम्, शारशवलां (धवलकृष्णामित्यर्थः) (शारप्रह्रणेन वर्णद्वयप्रतीतिरितिभावः) कृष्णाजिनलेखामिन, कृष्णामृगचर्म श्रेणीमिन, तपने, तप-कर्तुः उरिस, हृदये, दृष्टिं पातयन्ती, श्रवलोकयन्ती।

सुरभितं, सुगन्धितं, यत्-निश्वासं, तस्य परिमलेन, गंधेन, मृतें:, देर-विद्धः, लग्नेः, संलग्नेः, शापाचरैरिव, शापवर्णैरिव, षट्चरणचकः, भ्रमरेः, श्राकृष्यमाणा, श्राकिषिता, । शोकेति शोकेन, शापाद्धवेन दुःखेन, शिधिलितो, तेजरिहतो, हस्तो, करो, यस्याः सा । श्रधोमुखीभूतेन, श्रधोमुखतांगतेन, उपदिश्यमानं, उपदेशंदीयमानं, मर्त्यलोकावतरणमार्गा इव, मर्त्यलोके, भूलोके, यद्, श्रवतरणं, गमनं, तत्रदिशतमार्गा, इव । नखमयुरवा नां, नखिरुणाः तेषां, रवाः, निस्वनाः, एव व्याहाराः वचनानि, तैः हताः, श्राकृष्टाः, भवन कलहंस कुलः, ब्रह्मसद्धाहंससमूहैः, ब्रह्मलोकनिवासोहदयैः, ब्रह्मलोके, निवासः, स्थितः, येषां, तेषांहदयैं चित्तेः, इव, श्रनुगम्यमाना, श्रनुकरणं कियमाणा (सदैव कृतगमना इत्यर्थः ) सावित्र्यासमं, सार्धं, गृहमगात्, सद्धिन गता । श्रत्रान्तरे, श्रतः परं, सरस्वत्यवतरण वार्तो कथियतुं, सरस्वत्या यत् श्रवतरणं, मुःगमनं, तस्य या वार्ता तां, कथियतुं वक्तुं, मर्त्यलोकं, भूलोकं, श्रंशुमाली, सूर्यः, श्रवततार, उदयं लेमे । (पूर्वमागमनात् दूता गमनं संभा-

घ्यसनविषरण्णसरसि वासरे, मधुमद्मुद्तिकामिनीकोपकुटिलकटाच-चिष्यमाण् इव चेपीयः चितिधरशिखरमवतरति तक्ष्णतरकपिलपन लोहिते लोकेकचचुपि भगवित सवितरि प्रस्नुतमहिष्युधः च्ररत्चीरधारा धवितितेषु, श्रामन्नचन्द्रोदयोद्दामचीरोदचालितेषु-इव दिव्याश्रमोप-शल्यकेषु-श्रपराह्णप्रचारप्रचलिते चामरिणि चामीकरतटताडन-

व्यमेवेति भावः ) क्रमेरोत्यादितः सावित्री सरस्वतीम्बादात्, इत्यनेनान्वयः। क्रमेगा, क्रमश:, मन्दायमाने, मन्दतांगते, ( स्र्यें इतियावत् ) मुकुलितानां, संकुचितानां, विसिनीनां, पश्चिनीनां, विरहः, वियोगः, ( कान्तस्य सूर्यस्य-विच्छेदादितिभावः ) तदव व्यसनं दुःखं, तेन, विषरणां, दुःखितं, ( निजकन्य-कानामिवपद्मिनीनां दर्शनादितिभावः ) सरः, सरोवरं, यस्मिन्, तथाभृतं, वासरे, दिवसे, मधुमदेति—मधुमदेन, मद्यपानसमुद्भवनोत्साहेन, मुदिताः, सन्नातकामाः (संभोगाभिलापिग्य इतियावत् ) याः कांमिन्यः, स्त्रियः, तामां कोपेन, ( कथमथमधुनापि नास्तमेति अन्तराय भूतः, इति क्रोधेन ) कुटिल:, वक:, य: कटाच:, तिर्यगीचर्ण, तेन, चिष्यमाण इव, प्रचिप्त इव, चेपीयः, त्र्यतिचित्रं, त्र्यतिसत्वरं, चितिधरशिखरं, त्र्यस्ताचलप्रदेशं, त्र्यवतरित, त्रवर्तार्यमार्ग<mark>े, तरूरोति--तरूर</mark>ातरः, त्र्वतियुवा, यः कपिः, वानरः, तस्य यत् , लपनं, मुखं, तद्वत् लोहितः, रक्तवर्णः, तस्मिन्, लोकैकचन्त्रिष, लोकानां, जगतां, एकं, त्राहितीयं चतुः, नेत्रं, तस्मिन्, भगवित, कल्याराकरे, सवितरि, स्र्ये । प्रस्तुतेति-प्रस्तुतात् , प्रस्रविणात् , महिष्याः, उधसः, स्तनात् , चरन्ति, यानि चीराणि, दुम्धानि, तेषां, धारावत् , स्रोत इव, धवलितानि, शुत्रवर्णानि, तेषु । त्र्यासन्नेति—त्र्यासन्नः, पार्श्ववर्ता, यश्चन्द्रोदयः, तेन, उद्दामः, उच्छलितः, यः, चीरोदः, समुद्रः, तेन चालितानि, घौतानि, तेषु, इव | दिन्याश्रमोपशल्यकेषु, दिन्याः, भन्याः, ये त्राश्रमाः, तेषां उपशल्य-कानि, प्रान्तभागानि, तेषु । ऋपराइ गो, द्वितीय प्रहरे, यः प्रचारः, प्रकर्षेण

रिणतरदने रदित, सुरस्रवन्तीरोधांसि स्वेरमेरावते, प्रसृतानेकविद्याधरा-भिसारिकासहस्रचरणालक्तकरसानुलिप्त इव प्रकटयित च तारापथे पाटलताम, तारापथप्रस्थितसिद्धदत्तदिनकरास्त्रमयार्घ्यार्वाजेते रिञ्जतक-कुभि, कुसुम्भभासि स्रवित पिनाकिप्रणित मुदितसंन्ध्यास्वेदसिलल इव

चरएं ( प्रर्यटनमितियावत् ) तस्मै प्रचलितः, प्रवृत्तः, तस्मिन्, चामरिणि, चामर्युक्ते । चार्माकरस्य, सुवर्णपर्वतस्य (सुमेरोरित्यर्थः) तटेषु, प्रान्त-भागेषु, यत्, ताइनं, वप्रकीडाकरणं, तेन, रिणताः, शिद्वताः, रदनाः, दन्ताः, यस्य तथाभृते, रदित, शद्वायमाने, सुरेति—सुराणां, देवानां, या स्रवन्ती, मन्दाकिनी, गंगा, तस्याः रोधांसि, तटानि, तत्र, स्वैरं, यथेच्छम्, ऐरावतं, (स्वेच्छया विचरणशीले इत्यर्थः) इन्द्रवारणे । प्रसृतेति—प्रसतानां, प्रचलितानां, (कान्तं प्रति र्त्राभसरणायेतिभावः ) स्रने-कासां, वह्नीनां, विद्याधराभिसारिकाणां, विद्याधरसुन्दरीणां, "या दूर्तिका गमन काल मपाहरन्ती सोदुं स्मर ज्वर भरातिंपिपासितेव, निर्याति वल्लभ जना-धर पानलोभात् , साकथ्यतं कविवरंरभिसारिकेति ।" सहस्रस्य, चरणालक्कक-रसैं:, चरणलाचादवैं:, अर्जुलिप्त इव, इतलेप इव, प्रकटयिन ! प्रकाशयित, तारापथे, नक्तत्रमार्गे ( त्राकाशे-इति यावत् ) पाटलतां, ईषदक्कतां, ताराप-**थेति**—तारापथेषु, गगनमार्गेषु, प्रस्थितैः, प्रचलितैः, सिर्दैः, देविवशेषैः, दत्तानि, ऋषितानि, दिनकराय, सूर्याय, यानि, ऋरतमयार्थािश, ऋस्तसमया पितानि, ऋर्धात्म, तेभ्यः, श्रावजितः, युक्तः, तरिमन् , रञ्जितककुभि, रक्तीकृत दिशि । कुसुम्भांसि, कुसुम्भपुष्पाणि, तद्वत् , भाः, कान्तिः, यस्य ताहरो, ( रक्तवर्णे इत्यर्थ: ) स्रवति, चरति, सति, पिनाकिने, पिनाकं, धनुः विद्यते ऽस्य इति पिनाकी, तस्मै शंकराय या प्रणतिः, प्रणामः, तत्र मुदिता, उल्लासिता, या, संभ्या तस्याः, स्वेदसलिल इव, धर्मोद्भवजल इव. रक्तचन्दनदवे, चन्दनरसे, वन्दारु-इति--व-दारुभिः, वन्दनशीलैं:.

रक्तचन्दनद्रवे, वन्दारुमुनिवृन्दारकवृन्दबध्यमानसन्ध्याञ्जलिवने, ब्रह्मो त्पत्तिकमलसेवासमागतसकलकमलाकर इव राजति ब्रह्मलोके, समुचा-रितृतीयसवनब्रह्मिण्ब्रह्मिण्, ज्वलिनवैतान ज्वलन ज्वाला जटाला-जिरेषु, त्यारब्धधर्ममाधनशिविरनीराजनेष्विव सप्तर्षिमन्दिरेषु, त्यधम-र्षगामुपितकिल्विपगदोल्लाघलघुपु यतिषु मन्ध्योपासनामीनतपम्विपंक्ति पृतपुलिने सवमानपद् मयोनियानहंसहासदन्तुरोमिंगि मन्दाकिनी जले, ( पूजनीयैरित्यर्थः ) मुनिवृन्दारकाणां, मुनियेष्ठानां, बृन्देः, समृहैः, बश्यमानं, संयम्यमानं, संध्यायां, संध्यासमये, ऋर्जालवनं, ऋर्जालसम्हः, यम्मनं, तथा-भृते (सन्त्रा समये सुनिभिः किथमाणाजनिषुटे-इत्यर्थः) व्रद्मेति - व्रद्मणः, प्रजापतः, उत्पत्तः, जन्म यरमाद् तत् कमलं ( नारायगानाभिकमलमित्वर्थः ) तस्य तेवायै, समागताः, प्राप्ताः, सकलाः, सर्वे, कमलाकराः, पद्मनिचयाः, यस्मिन्। राजित, शोभमाने, समुचारितेति---समुचारितं, प्रति पादितं, तृतीयसवनं, सार्यकालितहरनानं, तत्र, ब्रह्म, वेरो थेन तथाभृते बह्मणि. भृदेवे, ज्वलितस्य, प्रदीप्तस्य, <u>वैतानज्वलन</u>स्य, यज<u>्ञान्</u>रेः, ज्वालाभिः, शिखाभिः, जटालानि, व्याप्तानि, त्राजिरागि, त्राङ्गरानि येपां ताहरोषु । श्रार-ड्येति—त्रारब्यं, कृतारम्भं, धर्मसाधनाय, धर्मसंचयाय, शिविरस्य, स्कंधा-वारस्य ( मेनानिवासस्थानस्यत्यर्थः ) <u>नीराजनं, शांतिकर्म</u>, येपु, तथोक्रेपु, ( विव्रशंकयाकृतशान्तिकर्मिष्वत्यर्थः ) सप्तर्षिमन्दिरेषु, सप्तर्षिसद्मम् । ऋष-े मर्पगोति-अवानि, पापानि, मर्धवति, परिमार्जवति, इति अवमर्पणः वैदिक मंत्रः, तेन मुषितानि, हतानि, किल्विवासि, पापानि, गदाः, रोगाश्र, तै: , उल्लाघा:, स्वस्था:, ( नीरोगा: इति यावत् ) श्रतएव लगवः, सुदेहा:, शोभनो देहो, शर्रारं, येषां ते सुदेहाः, तेषु यतिषु, ब्रह्मचारिषु । सन्ध्येति— सन्ध्योपासनाय, श्रासीनानां, उपविष्टानां, तपस्विनां पंक्तिभिः, तापसावलिभिः, पृतानि, पविवितानि, पुलिनानि, सैंकतानि, यस्य तादशे । सवमानेति — सव

जलदेवतातपत्रे पत्ररथकुलकलत्रान्तः पुरसीधे, निजमधुमधुरामोदिनि क्र-तमधुपमुदि मुमुद्पिमार्गो कुमुद्वने, दिवसावसाननाम्यत्तामरसमधुरमधु-सपीतित्रते सुपुष्सित मृदुमृगालकण्डकाण्डूयनकुण्डलितकन्थरे, धुतप-चराजिवीजितराजीवरजसि, राजहंसयूर्ये, तटलताकुसुमधूलिधूसरितस-मानः, संतरन्, यः पद्मयोनः, प्रजापतः, यानदंसः, वाहनः, तस्ययद्हासः हास्यं तेन दन्तुराः, उत्पन्नदशनाः, इव, उम्मीयः, तरङ्गाः, यस्य, तथोक्तं। जलदेवतेनि-जलदेवनायाः, जलाधिष्ठत्र्यादेव्याः, यत्, त्र्यातपत्रं, छत्रं, र्तास्मन् , पत्रस्थानां, पत्रं, पत्नं, एव, रथं, वाहकं, थेषां ते पत्रस्थाः तेषां पुत्र-रथानां, पुचिर्णां, कुलं, समूदः, तस्य कलत्राणि, कलेन मधुरशद्देन त्रायते रद्यंत याभिस्ता, कलत्राणि स्त्रियः तेषामन्तः पुरस्य सौधं, सद्म, तरिमन्, निजेति-निजेन, स्वकायन, मधुरसन, मकरन्देन, श्रामीदंत, उल्लसति। मध्विति—मधुना कृतः, मधुपानां, पट्पदानां, मुद्, आनन्दो यत्र तथाभूते, श्रथवा, निजमधुना, मकरन्द्रन, मद्येन वा, मधुरः, मनोहरः, श्रामोदः, उत्साहः, यस्यतथोक्के, कृता मधुपानां भ्रमराणां, मद्यपानां वा, मुद् यत्र मुमुदिषमाणे, विकाशंप्राप्यमार्गो, ( पर्ज ) मोदितुमिच्छति, इच्छितगानवाद्यादि गोप्ठिगते, कुमुदवनं, कमलवने । दिवसेति--दिवसस्य, दिनस्य, श्रवसानेन, श्रन्तेन, ताम्यन्ति दु:खमनुभवन्ति, यानि, तामरसानि, रक्तकमलानि, तेषां, मधुरसस्य, सौरभस्य, पातिः, पानं, तेन, व्रतं, नियमः, यस्य तथाभूते । सुषुप्सिति-निद्रामि-च्छति, मृद्विति-मृदुना, कोमलेन, मृगालकागडस्य, पद्मनालदगडस्य, कगट-केन (तृरोंनेत्यर्थ) यत् कर्इयनं, रवर्जनं, तेन कुराडलिता, समीकृता, कन्धरा, श्रीवा येन तादृशे । धुतेति-धुताभिः कम्पिताभिः, पत्तराजिभिः, पच्चपंक्तिभिः, वीजितं, व्यजनितं, राजीवानां,श्वेतकमलानां, रजः, धूलिः येन तादशे, राजहंसयूथे, तदाख्यहंससमृहे। तटेति—तटेषु, प्रान्तभागेषु, याः, लताः, वक्कर्यः, तासां, कुसुमानि, पुष्पाणि, तेषां, धृलिभिः, रजोभिः, धूस-

सिद्धपुरपुरन्त्रियम्मञ्जमिल्लकागन्धप्राहिणि सायन्तने तनी-नभस्वति , सङ्कोचोद्ऋदुचकेसरको-यसि निशानि:श्वासनिभे टिसङ्कटकुरोशयकोशकुटीकुटिलशायिनि पट्चरणचके, नृत्योद्धृत-धूर्जटिजटाटवीकुटजकुड्मलनिभे नभस्तलं स्तवकयति तारागगो, सन्ध्यानुबन्धताम्रे परिगामत्तालफलत्विषि कालमेघमेदुरे, निमीलयति नववयसि तमसि तस्यातरतिमिरपटलपाटनपटीयसि रिताः, धूसरवर्णतांनीताः, सरितः नद्यः येन तथा पूते । सिद्धेति —सिद्धानां, देवयोनिविशेषाणां, पुरे, नगरे, याः पुरन्ध्यः, स्त्रियः, तासां, धन्मिक्नेषु, संयन तकेरोषु, याः, मिक्ककाः, मिक्किशपुष्पास्मि, तेषां गंध्रप्राही, गंधं, सीरभं, गृह्णाति स्वोकरीति-इति प्रंथप्राही, तिसमन् , सायन्तने, सायंकालभवे । तनीय-सीति—तनीयसि, मुद्दे (मंदसंचारिणीत्यर्थः ) निशा निः श्वामनिमे, निशा, रात्रिः ( नायिकेतिभावः ) तस्याः नियामं, श्वमनं तन्निमे, तत्मदरो, नभस्त्रति, श्राकारो । प्रावेणात्र उत्पेत्ताऽलंकारः । सङ्कोचेति—सङ्कोचे, निमीलने, उदश्रताम् उद्गच्छताम् , उचकेसराणां, किजल्कानां, कोटिभिः, श्रप्रभागैः, सङ्क-टानि, न्याप्तानि, यानि कुरोशयानि, पद्मानि, तेषां कोशाः, त्राभ्यन्तरभागाः, एव कुखः, कुटीराणि ( जुदसद्मानीत्यर्थः ) तेषु कुटिलं, यथा तथा शायिनि, शयनशीले, षट्चरणचके, भ्रमरसमूहे,। नृत्येति—हत्येषु, नर्तनेषु, उद्ध-तानि, उत्पन्नानि, धूर्जटे:, शंङ्करस्य, जटाऽटव्याः, जटा एव श्रयटवी, श्ररएयं, तस्मोत् जटाजुटात् , कुटजानां, गिरिमल्लिकापुष्पाणां, कुझ्बलानि, कोरकाणि, तिन्नभे, तत्सदृशे । नभस्तत्तं, त्राकाशं, स्तत्रकयित, ( पुष्पगुच्छमिवाचरती-त्यर्थः ) तारागणे, नज्ञत्र मण्डले । सन्ध्येति—संध्यायाः श्रनुबंधेन, श्रनु-गमनेन, ताम्नं, रक्तवर्णं, तरिमन् , श्रत एव, परिणमत्, पक्क्वावस्थां प्राप्तं यत् तालफलं, तस्य, त्विट्, इव, त्विषः, प्रभाः यस्य, तादशे, कालमेघमेदुरे,

कालमेघः, कृष्णवर्णमेघः, तद्वत् मेदुरः, चिक्कणः, तस्मिन् , मेदिनीं, पृथ्वीं,

समुन्मिशति, यामिनीकामिनीकर्गापूरचम्पककलिकाकदम्बके प्रदीपप्र-करे, प्रतनुतुहिनकिरगाकिरगालावण्यालोकपाण्डुन्याश्याननीलनीर-मुक्तकालिन्दीकूलबालगुलिनायमाने शातक्रतवे छशयति तिमिरमाशा-मुखे, खमुचि मेचकितविकचितकुवलयसरसि, शशयरकरनिकरकचप्रहा-

निमोत्तयति, त्राच्छादयति, नववयसि, (सद्योत्पन्ने-इत्यर्थः ) तमसि, त्रम्य-कारे, तरुगोति—तरुगतरागां, पक्ववयसां, तिमिरपटलानां, श्रन्थकार-चयानां, पाटने, द्रीकरणे, पटीयान्, चतुरः, तस्मिन्, समुन्मिपति, ज्वलति (ईपत्प्रकटनां गते-इत्यर्थः ) यामिनीति—याभिनी, रात्री कामिनी, स्त्रीः, तस्याः, कर्रापृरः, श्रवतंयः, एव चम्पकस्य, चम्पकास्य पुष्पस्य, कितकायाः, डोडिकायाः, कदम्यकं, गुच्छं, तस्मिन् , ( तत्सदृशेति-भावः ) प्रदीपप्रकरे, प्रदीपसम्हे, प्रतन्त्रित-प्रतनुभिः, त्राखल्पैः, तुहिनकि-रणस्य, चन्द्रस्य, किरणानां, रश्मीनां, यत् , लावग्यं, चारूत्वं, तस्य, त्रालेकं:, प्रकाशें:, तें:, पारादुनि ईवद्पीते, तस्मिन, त्राश्यानम् , ईवत्शुप्कम् , नीलनीरैं:, कृष्णजले:, मुक्तं, त्यक्तं, कालिन्दीकृलस्य, यमुनातटस्य, बालपुलिनं, सद्योत्थि-तसैंकतं, ( तद्वदाचरतीनि तादशे ) शतानि कतवः, यज्ञाः, यस्य सः, शतकतुः, इन्द्रः, तस्यद्दं, ( श्रथवा ) स ऋधिष्ठाता, यस्य तत् शातकतवं, ऐन्द्रं, तिस्मन्, कृशयित, कृश्यतांनयित, ( खएडयतीतिभावः ) तिमिरं, ऋंधकारं, त्राशामुरवे, विग्भागे, खमुचि, रवं, त्राकाशं, मुखति त्यजित तथाभूते (त्राकाशं-परित्यज्यभूमएडलमाच्छादयतीतिभावः ) मेचिकितेति-मेचिकितं, स्नि-ग्धतांनीतं, विकचितानां, विकशितानां, कुवलयानां, नीलोत्पलानां, सरः, सरो-वरं, वेन तथाभूते, शशधरेति-शशधरस्य, चन्द्रस्य, करनिकरै:, किरणस-मूहै:, ( हस्तंरित्यर्थ: ) यः कचप्रहः, केशप्रहणं, तेन श्राविलं मालिन्यं, म्ला-नतां, नीतं, प्राप्तं, तस्मिन् , ऋत एव विलीयमाने, निलयंप्राप्यमार्गो, ( ऋन्योऽ पिकेशाकर्षणेनावनतमुखोलजया श्रदर्शनं गच्छतीत्यर्थः) मानिनीनां, मानवतीनां,

विले विलीयमाने मानिनीमनसीव शर्वरीशवरीचिकुरचये चापपत्तिविषि तमस्युदितेभगवत्युद्यगिरिशिखरकुह्र्रह्रिखरनखरनिवह्रहेनिनिह्ननिज-हरिगागलगलितक्षथिरनिचयनिचित मिव लोहितं वपुरुद्यरागधरम-धरमिव विभावगीवध्वा धारयति श्वेतभानो, श्रचलच्युतचन्द्रकान्तजल-धाराधीत इव ध्वस्ते ध्वान्ते, गोलोकगलितदुग्धविमरवाहिनि दन्तमयम-करमुखमद्राप्रणाल इवापूरियतुं प्रवृत्ते पयोधिमिन्दुमण्डले, स्पष्टे प्रदोष

(कान्तं प्रतिकृषितानामित्यर्थः) नार्शगां, स्त्रीगां, सनसीव, चित्तइव, शर्वर्यां, रात्रों, शवर्रागां, शवरस्त्रीगां, चिकुरचेष, केशसमृद्दे, चाषपत्त्विषि, चाषोनाम पित्तिविशोषः, तस्य पत्त्वतः, व्विषः, कान्त्यः, यस्य तादशे, तमिन, अंधकारे, उदिते, प्रादुर्भ्तः, **उद्यगिरीति**—उदयगिरेः, उदयाचलस्य, शिखरेषु, प्रान्तभागेषु, यानिबृहरागि, गह्नरागि, तेषु ये हरयः सिद्धाः, तेषां, खराः, तीच्छाः, ये नखाः, तेषां ये नखरनिवद्यः, तीच्रानस्वसमुद्राः, एव हेतयः, अस्त्राग्रा, तैः निहतः, मारितः, यो निजहरिगाः, स्वोत्मङ्गागतसृगः, तस्यगलात्, कगठ-देशात् , र्गाल्वैः, च्युतैः, रुधिरनिचर्यैः, रक्कसमृहैः, तैः, निचितमिव, व्याप्त-मिव, त्रात एवं लाहितं, रक्तम् , वपुः, शरीरं, उदयरागधरं, उदयसमये योरागः, लांहित्यं तं धरतीतिधरं, श्रधरं, श्रोष्टं, इव, विभावरीवध्वा, विभा-वरी, रात्रिः, एव, वधृः, वधृर्टी, तस्याः, श्वेनमानो, चन्द्रमिस धारयति । **ऋचलेति**—अचलात् , पर्वतात् , च्युतानां, पतितानां, चन्द्रकान्तानां, चन्द्र-कान्तमर्णानां, जलवारामि:, जलस्रोतें:, धौतमिव, प्रज्ञालितमिव, ध्वान्ते, अन्वकारे, गोलोकेति-गोलोकात्, गोस्थानात् , (गोष्टादित्यर्थः) मयूखसमृहाद्वा, गलितान, निःसृतान्, दुग्धविसरान्, दुग्धप्रस्रवान्, बहति, धारयति, तथा-भूते । दन्तमयं, गजदंतिनिर्मितं यत् मकरमुखं, मकराननं, (मकर:जल-जलजन्तु विशेषः ) तदेव महान् प्रणाल, जलानिष्कासन वर्त्म, तस्मिन्नव, पूरियत्, भरितुं, प्रवृत्ते, सन्नद्धे, पयोधि, समुद्रं, पर्वभृते, इन्दुमग्डले, चन्द्र-

समये सावित्री शृन्यहद्यामिव किमपि ध्यायन्तीं साधां सरस्वतीम-वादीत् सिव् त्रिमुवनोपदेशदानद्वायाम्नव पुरो जिह्ना जिहेति मे जलपन्ती । जानासि एव यादुर्वश्याः विसंद्ठुलाःगुगगवत्यपि जने दुर्जन-वित्रदीचिण्याः च्रामिङ्गन्यो दुरितकमगीया न रमगीया देवस्य वामा वृत्तयः निष्कारगा च निकारकणिकापि कलुप्यति मनिस्वनोऽपि मानसमसदृश जनादापतन्ती । अनवरतनयनजलिसच्यमानश्च तरुरिव विपल्लवोऽपि सहस्रधा प्ररोहित ।

मगडले, स्पष्टे प्रदोप समये, जातेप्रदोपकाले, सावित्रीं शूर्यहृदयामिव, रिक्तिज्ञाभिव, किमपि भ्यायन्ति, विचारयन्ते, साम्बां, ब्र्युमुखी सरस्वती, अवादीत , ब्रक्थयत् ।

सिंख ? त्रिभुवनोपदेशदानदत्तायाः, भुवनवय उपदेशदाने, दत्तायाः, चतुरायाः, तवपुरः, अप्रे, जल्पन्ती, कथयन्ती, मे, मम, जिह्ना, रमना, जिह्नोति,
लजते । दुर्वश्याः, परवश्यतां त्रापादिवतुमशवयाः, विसंप्दुलाः, मर्यादा
रिहताः, गुरावत्यिपजने, दुर्जनवत , निर्दात्तिण्याः, निर्द्धरः, त्रणमंगिन्यः,
नण्यायाः, दुरितकमणीयाः, दुःवेनातिकमित्तृशवयाः, न रमणीयाः, त्र्यमनोज्ञाः,
देवस्य, भाग्यस्य, ( अद्यप्रस्थेतियावत्) वामाः, वृदिलाः, ( विहृद्धाः )
वृत्तयः व्यवहाराः, "दुर्जनवद्गुण्यत्यिपजने पतंन्त्यवं, जानास्येव, इतिपूर्वेणा
न्वयः", निष्कारणा, कारण्रिहता निकारकणिका, निकारः, तिरस्कारः,
( विकारहत्यर्थः ) तस्य कणिका त्राप, लेशमात्रमपि (त्रपीति संभावनायाम् )
असदश्यानात्, अयोग्यजनात्, त्रापतन्ती, मनिस्वनः, श्रेष्टजनस्य, मानसं,
चित्तं, कलुष्यित, व्यथयित । अनवरतेति—अनवरतं, निरंतरं, नयनजलेन,
अश्रुजलेन, सिच्यमानः, तरुरित, वृत्तमिव, विपत्, आपत्, तस्य लवः, लेशः,
( पत्ते ) पत्रश्रत्यश्च, सहस्रथा, सहस्रक्षेण, प्ररोहित, वर्धतः ।

संतापपरमारावः, दुःखलेशाः, सम्यक् तापःसंतापः, उष्णात्वं, च,

त्रतिसुकुमारं च जनं संतापपरमाण्वो मालतीकुसुमिव म्लानिमानयन्ति । महतां चोपि निपतन्नणुरिप सृणिरिव करिणां क्रोशः कद्र्यनायालम् । सहजस्नेहपाशप्रन्थियन्धनाश्च बान्धवभूता दुस्त्यजा जन्मभूमयः । दारयित दारुणः क्रकचपात इव हृद्यं संस्तुत-जनविरहः । सा नार्हस्येवं भिवतुम् । त्रभूमिः खल्वसि दुःखच्वे-डांकुरप्रसवानाम् । त्रापि च पुराकृतेकर्मणि बलवित सुभेऽसुमे वा फलकृति तिप्रत्यिध्यातिर प्रष्ठे पृष्ठतश्च कोऽवसरो विदुषि सुचाम् । इदं च ते त्रिभुवनमङ्गलेककमलममङ्गलभूताः कथिमव मुखमपवि-

मालतीकुमुममिव, मालतीपुष्पमिव, श्रतिमुकुमारं जनं, क्रोमलं जनं, म्लानि-मानयन्ति, दुःखयन्ति, । त्राणुरिष, त्राणुमात्रमिष, क्लेशः, दुःखं, स्रीणिरिव, त्र्यंकुश इव, करिणां हस्तिनां, कदर्थनाय, पीड़नाय, महतां सज्जनानां, च, उपरि, निपतन् , त्र्यलम् । सहजेति — सहजं, स्वाभाविकं, यत् स्नेह, प्रेम, एव पाशः, रज्जुस्तेन, ग्रन्थिबंन्धनं यासां, तादशाः, वान्धवभूताः, कुटुम्बतांगताः जन्म-भूमयः, दुस्त्यजाः, त्यक्तुमशक्याः । संस्तुतजनविरहः, संस्तुताः, प्ररायिनः, तेपां विरह: वियोग:, दारुण:, कठोर:, क्रकच:, करपत्रं, ( दारूविदारण लोहिनिर्मितं करपत्रं ) तस्यपातः, ऋङ्गेपुपातनं, तद्वदिव, दारयति ( शकलतां विभजतीत्यर्थ: ) नार्हसि, त्रयोग्या । दुःसमेव च्वेड:, विषं, तस्य त्रयंकुराः, प्ररोहा:, तेषां, प्रसवानां, उत्पन्नानाम्, (फलानामितिभावः ) ऋभूमिः, श्रस्थानं, खलु श्रसि । श्रपिच, पुराकृते, पूर्वजन्मनि, कृते, कर्मणि, बलवित, फलकृति, शुभाशुभफलदातरि, अधिष्ठातरि, ईश्वरे, प्रष्टे, सर्वश्रेष्टे, तिष्ठति, स्थिते, विदुषि, विद्वज्जने, शुचाम्, शोकानाम्, कोऽवसरः, कःसमयः, ( न कोऽपीतिभावः ) ( शुभाशुभ कर्माणि, ईश्वरेच्छया संवैदेवानुभूयन्ते, न ह्यत्र विद्वांसः शोचन्तीतितात्पर्यम् )।

इदमिति-इदं त्रिभुवनमङ्गलंकक्मलं भुवनत्रय मङ्गलभूतं, ते मुखं,

त्रयन्त्यश्रुविन्द्वः । तदलम् । त्राधुना कथय कतमं भुवोभागमलङ्कर्तु-मिच्छिमि । कस्मिन्नवितिषिति ते पुण्यभाजि प्रदेशे हृद्यम् । कानि वा तीर्थान्यनुष्रहीतुमभिलपिन केषु वा धन्येषु तपोवनधामसु तपस्यन्ती-स्थातुमिच्छिमि । सज्जोऽयमुपचरणचतुरः सहपांशुक्रीडापरिचयपेशलः प्रयानसम्बीजनः, ज्ञितिनलावनरणाय ।

त्र्यतन्यशरणा चार्येवप्रभृति प्रतिपद्मस्य मनसा वाचा क्रियया च सर्वविद्याविधानारं धातारं च स्वश्रेयसाय स्वचरणारजः पविज्ञितज्ञिदशा-

य्याननं, यमज्ञलभृताः, यमाज्ञलिकाः. यशुविन्दवः, यशुक्रिणकाः. वश्मिवः यपविवयन्ति । कथयः, यशुनाः, साम्प्रतं, कतमं, कं, भुवोभागं पृथ्वीतलं, य्यलंकन्तिमच्छिमः, सृशोभियतुमीहवे । किस्मन्, पृण्यभिजप्रदेशे, पृण्यभज्ञतीति पुण्यचेत्रमः ते, हृदयं, चित्तं, य्यवितिपिति, य्यवतित् प्राम्चिति । कानि वा, तार्थानि, पुण्यस्थानानि, अनुप्रहीत्, य्यनुप्रहक्तें, व्यक्तित् । केषु वाः धन्येषु, धन्यवादाहेषु, तपोवनधामम्, स्थानेषु, तपस्यन्ती, तपःक्वेन्तं, स्थानुमिच्छिमः । उपचरणचतुरः, उपचरणं, सेवा, तवन्तरः. निषुणः, सहः सार्धः, पांशुक्षांडायां, धूलिकांडने, यः परिचयः प्रणयः, तेन पेशलः, परवशः ( बाल्यकाले बालाः, कांडन्ति धूलिभिः, सहज स्वभावमेतत् बालानां, तवमेवित्वमधिगच्छिन्तं च तेनेवमेविप्रम्णा परवशः इत्यर्थः ) प्रेयान् सखाजनः, ( प्रियसग्वी साविज्ञीतिभावः ) सजः, प्रस्तुतः, जितिनलावतरणायः, पृथ्वीतलमवतरितं ।

त्रानस्यशरणा, नास्ति त्रान्यंशरणं यस्याः, एवंभूता, त्रायेंव प्रभृति, साम्प्रतमेव, मनसा वाचा कर्मणा च, सर्विवद्याविधातारं, सर्वीसां विद्यानां, जन-यितारं, भातारं, रिज्ञतारं, स्वश्रेयसाय, कल्याणाय, (स्वस्य) चरणरजसा, पदरेगुना, पविविताः, पृताः, विदशानां, देवानां, त्रासुराणां, राज्ञसानां च, मौलयः, किरीटाः, येन, एवभूतं । सुधेति—सुधा, त्रामृतं, स्ते, उत्पद्यते, सुरमौलिं सुधासूतिकलिकाकित्पतकर्णावनंसकं देवदेवं त्रिभुवनगुरूः त्र्य-म्बकम् । त्राल्पीयसैव कालेन स ते शापशोकविरनिंवितरिष्यति, इति ।

एवमुका-मुक्तमुकाफलधवललोचनजललवा सरस्वती प्रत्यवादीत्, प्रियसिख ? त्वया सह विचरन्त्या न मे कांचिदिप पीड़ामुत्पादियष्यित ब्रह्मलोकविरहः शापशोको वा। केवलं कमलासनसेवासुखमाईयित मे हृद्यम्। श्रपि च त्वमेव वेत्सि मे भुवि धर्मसाधनानि सर्वयोगयोग्यानि च स्थानानि स्थातुम्, इत्येवमभिधाय विरराम। रण्रण्कोपनीत प्रजागरा च उन्मीलितलोचनेव तां निशामनयन्।

श्रास्मात्, इति मुधास्तिः, चन्द्रः, तस्य कला एव, किलका, कुद्धालका, तया किल्पतः, कृतः, श्रवतंमकः, कर्णभूषणं, धेन, तं, देवदेवं (देवानामिषदेविमिति यावत्) त्रिभुवनगुरुं, भुवनत्रयाचार्यं, त्र्यम्बकं, महादेवं, प्रतिपद्यस्त्र, भजस्त्र, (इत्यन्नान्वयः) स, एव, भगवान्, (इत्याध्याद्यर्यम्) श्रव्यत्यसंत्र, कालेन श्रत्यसम्येनेव, ते शापशोकविर्ति, शापजनितं, यत्, शोकं, तस्य विर्ति, नाशं, वितरिष्यति, करिष्यिति ।

मुक्तेति—मुक्ताः, त्यक्ताः, (पातिता इतियावत्) मुक्ताफलवत्, धवलाः, शुश्रवर्षाः, लोचनजललवाः, श्रश्रुविन्दवः, यया, एवंभ्ता, सरस्वती, वाग्देवी, प्रत्यवादीत्, प्रत्युत्तरमदात् । प्रियमित् ? त्वयासहिवचरन्त्या, विहरस्या (निवसन्त्या, इति यावत्) कांचिदिपिपीडां, किमपिदुःखं, ब्रह्मलोक विरहः, वियोगः, शाप शोको वा, दुर्वासादत्तरापोद्भवःशोको वा, नोत्पादियच्यति, न जनियच्यति । केवलं, (एतदेवेति भावः) कमलासनस्य, ब्रह्मणः, सेवाध्यतं, सेवयालभ्यमानन्दं, चित्तं, श्रादंयित, स्तेहयति, (प्रेमभावं प्रकटयतीत्यर्थः) श्रापि च त्वमेव वेत्सि, जानासि, मे, मम, (मदर्थमितिभावः) स्थातं, स्थिति-करणाय, भुवि, प्रथिव्यां, धर्मसाधनानि, धर्मचेत्राणि, सर्व योगयोग्यानि, "योगिक्षत्त वृत्तिनिरोधः," तद्योग्यानि, उचितानि । रण्तरणकेति–रण्ररणकेन

त्रपरेद्युरुदिते भगवित त्रिभुवनशेखरे तुरङ्गमुख खणखणायितखर ग्वलीनकर्पगाचतच्चरत्चतज्ञेनेवपाटिलतवपुष्युदयाचलचूड़ामणो जर-त्कृकवाकुचृड़ारुणारुणपुरः सरे विरोचने रोचमाने नातिदृरवर्ती पिता-मह विमानहंसकुलपालः पर्यटन्नपरवक्त्वमुच्चैरगायत्—

''नरत्तयसि दृशं किमुत्सुकामकलुषमानसवासलालिते'' ? ऋवतर कलहंसि ? वापिकां, पुनरपि यास्यसि पङ्कजालयम् ॥२२॥

उत्कण्ठया, उपनीतः, जातः, प्रजागरः, जागरणं, यस्याः तथाभृता, उन्मीलितं, इपिट्रिकिमितं, लोचनं, नेत्रे, यस्याः, एवंभृता, एवं, तां, निशां, रात्रं, व्यन्यत् । व्यपनेयुगित्यादितः विमानदं सकुलपालः-उचेः, व्यगायत-इत्यनेनान्वयः । व्यपनेयुः, व्यपरिदेनं, त्रिभुवनशेखरे, त्रिभुवनिलके, भगवित, कल्यार्थाकरे, तुरगाणां, व्यथानां (सप्तानामितियावत्) मुखेषु, व्याननेषु, खणाकरणायिताः, खणाकरणाश्वदंकुर्वन्तः, खराः, तीचरणाः, खलीनाः, कविकाः, तेषां कर्पणेन, व्याकर्पणेन, यः चतः, त्राघातः, (वर्णोतियावत्) तेन चरत्, निःसरत्, (घोटकानां मुखेभ्य इतिभावः) चतजं, रक्षं, तेनेव, पाटिलतवपुषि, ईषद्रक्त कतेवरं, उदयाचलच्डामणों, उदयगिरिमरतके, जरत्, वृद्धो यः कृकवातः, ताप्रचृदः, तस्य च्डा, मस्तकं, तद्वत्, व्रह्मणः, रक्षवर्णः, यः व्यरुणः, तन्नाम सारिथः, यस्य तथाभूते, विरोचने, स्यं, रोचमाने, शोभमाने, नातिद्रवतां, व्यनितरम्थः (पार्श्वस्थिन एवेतिभावः) पितामहस्य, ब्रह्मणः, विमानहंसस्य, वाहनभृतमरालस्य, पालः, रच्चकः, पर्यटन, श्रमन्, व्यपरवकं, तदाख्यं वृत्तं, (व्याख्यायिकाषुप्रयोज्यंक्वन्द इतिभावः) उचेः, तारस्वरेण, व्यगायत्।

तरलयसीति अकलुषं, श्रम्लानं, मानसं, तन्नामसरः, यद्वा, श्रकलुषं निर्मलं, मानसं चित्तं, यस्य सः, ब्रह्मा, तिसमन् श्रथवा, श्रकलुषं मानसं, येषां ते श्रकलुषमानसाः, विद्वांसः, तेषु वासेन, निवसनेन, लालिता, विनोदिता, तत्सम्बुद्धां, हे श्रकलुषमानसवासलालिते ? किं, कथम्, उत्सुकां, उत्कराटा

तच्छ्रसत्वा सरस्वती पुनरचिन्नयन् - श्रद्दमिद्यानेन पर्यनुयुका । भवतु । मानयामि मुनेर्वचनम् , इत्युक्त्वोत्थाय कृतमहीनलावनरगा सङ्कल्पा परित्यज्य वियोगविक्तवं स्वपरिजनं झातिवर्गमवगगण्य विः प्रदक्तिगोकृत्य चतुर्मुखं कथमण्यनुनयन्ती निवर्तिनाऽनुयायिव्रतिव्राता व्रद्धलोकनः सावित्री द्वितीया निर्जगाम ।

व्यक्तिग्नं, (कातरामितिभावः ) दशं, दष्टिं, तरन्तर्यास, चन्नन्यसि, हे कन्त-हेसि ! वापिकां, दाविकाम् (पन्ने ) उप्यन्ते कर्माणि, अस्यां इति वापिका, कर्म-भूमिः, तां (मर्स्यनं किमितियावत् ) अवतर, यादि ।

यत्र हि न तवित्रस्थितिंग्न्याशं नाह । पुनरिष, पङ्कानां, (लज-गया) हेमकमलानां, यालयः, स्थानं, तं मानसं, सरः (पत्नें) पङ्कालयं, पद्मयोनिं, (ब्रद्धाणांमते यावत्) यास्यित्, प्राप्त्यांस । यत्र हि श्विष्ट विशेषणेः कन्त्रस्या वापिकावतरगारपात्, अप्रस्तुतात्, सरस्वत्याः मर्थलंकावतरगास्य प्रस्तुतस्य वर्णनातः, अप्रस्तुतात्, सरस्वत्याः मर्थलंकावतरगास्य प्रस्तुतस्य वर्णनातः, अप्रस्तुतप्रशंसा, अलङ्कारः, अपरवकं वृत्तं । तत्त्व्व्रस्त्वा, तद्वयवकंनिशस्य, पुनः, व्याचन्त्रयत् । स्वहमिवेति—अनेन, यानहंसपालंन, अहं, (सरस्वता ) पर्यनुयुक्तेव, व्यङ्गयेन प्रतिबंधितेव । भवतु, अस्तु । मुनेर्वचनं, (शापवाक्यमितियावत् ) मानयामि, स्वाकरोमि । इत्युक्त्वा, कृत महातलावतरगासङ्करा, कृतं, विहितं, महातलावतरगाय, मर्त्यलंकगमनाय, सङ्कर्त्यः, तन्त्रस्वाजनं, परित्यज्य, त्यक्त्वा ज्ञातिवर्ण, बात्थवसमूहं च, अवगण्यय, अगगायक्त्वा, प्रदिज्ञणोकृत्य, वारव्यं प्रदक्तिणाविधाय, चतुर्भुखं, ब्रह्माणं कथमीप, अनुनयन्तां, सान्त्वयन्तां । निवितितेति—निषद्धाः, (मयासहनागन्तव्यमिति यावत् ) अनुयायिनः, अनुगमन शीलाः, वर्तानां, वाताः, समूहाः यया, एवंभृता ब्रह्मलेकाः, स्वर्थेतः ।

ततः क्रमेण, इत्यतः त्रारभ्यमन्दाकिनीमनुसरन्ती मर्त्यनोकमवततार इत्य-

ततः क्रमंगा ध्रुवपदप्रवृत्तां धर्मधेनुमिवाधोधावमानधवलपयो-धराम्, उद्धुरध्विनमन्धकमधनमौलिमालतीमालिकाम्, श्रालीयमान बालखिल्यरुद्धरोधसमरून्धतीधौततारवत्वचम् त्वङ्गत्तुङ्गतरङ्गतरत्तरत्त-तरतारतारकाम्, तापसवितीर्गातरलित्तिवेदकपुलिकतपुलिनाम्, श्रास-वनपूत पितामहपानितपिनृपिण्डपाण्डुरितपाराम्, पर्यन्तसुप्रसप्तर्षिकुश-

ननान्वयः । क्रमेगा, क्रमशः, <mark>ध्रुवेति-</mark>-ध्रुवस्य, नित्यस्य, वस्तुनः ( विष्गोरिति-यावत) पदान, चरगाान्, त्रथवा, पदान्, नृतीयपदस्थापनस्थानान्, (त्राकाशा-दितिभावः ) प्रवृत्तां, निःसतां, धर्मधेतुमिव, धर्मायधेतुः, धर्मधेतुः, ( होमधेतुः रितिभावः ) तामिव, त्र्राशोशावमानं, नीचैः, निः सरत्, धवलं, शुश्रं, पयः, जलं, दुग्धन, यस्यास्ताम्, ( पत्ते ) त्र्ययोधावमानाः, त्र्ययोमुखाः, धवलाः, शुभ्रवर्गाः, पर्योधराः, स्तनाः, यस्यास्ताम् । उद्धरध्वनिं, उद्धराः, उत्कटाः, खनयः, शब्दाः यँस्यास्ताम्, **श्रन्थकेति**—श्रन्थको नाम कश्चि दसुरः, तंमथयति नाशयति, (शिव, इतियावत्) तस्य मौलिः, जटाजूटं, तस्य या मालती-मालिका, मालती पुष्पमाला, ताम् । **त्रालीयमानेति**—त्रालीयमानैः, (त्रिति-नुद्रत्वाद नश्यद्भिरित्यर्थः ) वालखिल्यैः, मुनिविशेषैः रुद्धं, संश्विष्ट रोधः, तरं यस्यास्ताम् । ग्रहन्धर्ताति—ग्रहन्धत्या, विषष्टपतन्या, घौता प्रचालिता, तरारियं, तारदी, (वृत्तसंबन्धिनीत्यर्थः) त्वक् यस्यां तथाभूताम् । त्वङ्गेति-त्वङ्गत्सु, प्रचलत्मु, त्वङ्गेषु, उन्नतेषु, तरङ्गेषु, लहरिकासु, तरन्त्यः, तरगा-शीलाः, तरलतराः, अतिचपलाः, ताराः, महत्यः, तारकाः, नच्चत्राणि, यस्यां ताम् । तापसंति—तापसंः, तपस्विभिः, वितीर्शानि, दत्तानि, तरलानि (तरङ्ग सम्पर्कात्) चन्नलानि, तिलोदकानि, तिलामिश्रिततर्पराजलानि, तैः, पुलकितानि, उक्कसितानि, पुलिनानि, सैंकतानि, यस्यास्ताम् । **त्र्यासवनेति**— त्राप्नवनेन, स्नानेन, पूत:, पवित्रः, यः, पितामहः, ब्रह्मा, तेन पतितैः, पितृ पिराडें:, पितृस्य:, ( ऋप्रिप्वातादिस्यः ) ऋपितैः, पिराडेः, ( तिलोदकमिश्रि

शयनसूचितसृर्यप्रह्णासृतकोपवासाम् , श्राचमनशुचिशचीपतिमुच्यमा-नार्चनकुसुमनिकरशाराम्, शिवपुरपतितनिर्माल्यमन्दरदामकानादर-दारितमन्द्रद्रीदृषद्म् , अनेकनाकनायककामिनी कुचकलशिवलु-लितवित्रहाम् , प्राह्मावप्रामम्बलनमुखरितबहु स्रोतसम् , सुपुम्नास्त्र-तशशिसुधाशीकरस्तवकतारिकततीराम्, धिषणामिकार्यध्मधूसरित तैर्यवात्रनिर्मितै: पिएडैं: ) पागडुरित:, पागडुवर्णतांनीत:, पार:, तटप्रदेश:, यस्यास्ताम् । पर्यन्तेति--पर्यन्तेषु, प्रान्तभागेषु, सुवेन, सुप्तानां, शयन सुव मनुभवतां. सप्तानां ऋषीणां, मरीच्यादीनां, कुशा एव शयनानि, पर्यङ्कास्तैं:, स्चितः, प्रकटितः, स्र्येप्रहरास्य, स्तकेन, त्राशोचन, ( गहुकेतुप्रसितस्य-भानोरित्यर्थः ) उपवासः, श्रनशनम्, यस्यास्ताम् । श्राचमनेति--श्राच-मनेन, शुचिः, पवित्र:, यःशचीपतिः, इन्द्रः तेन मुच्यमानैः, त्यक्तेः ( दीय-मानेरितियावत् ) त्र्यचेनकुसुमनिकरः:, पूजापुष्पनिचर्यः, शारां, (चित्रविचित्र वर्णातां प्राप्तेत्यर्थः ) शिवेति—शिवपुरात् , ( कैलाशादितियावत् ) मन्दा-रदामकं, मन्दारपुष्पस्नजं, यस्यां तथाभृतां । श्रमादरेति--श्रनादरेसा श्रप-मानेन, दारिताः, खरिडताः, (श्रातिवेगेनेतिभावः) मन्दरदःयः, मन्द-राचल गुहायाः, दृषदः, पाषासाः, यया, ताम् । श्रमनेकेति श्रनेकेषां, बहुनां, नाकनायकानां, सुरागाां, या:कामिन्य:, स्त्रिय:, तासां, कुचकलशें:, स्तनकुम्भैः, विलुलितः, प्रकम्पितः, ( त्र्यालोड़ित इत्यर्थः ) विष्टहं, शरीरं (जलम्पकमितियावत् ) यस्यास्तथोक्कां । प्राहेति—ग्राहाणां, जलजन्तु-विशेषाणां, प्रावप्रामाणां, पाषाणसमृहनाञ्च, स्वलितेन, इतस्ततःनिपतनेन, मुखराणि, सशब्दानि. बहुनि, स्रोतांसि, जलनिःसरणमार्गाणि यस्यास्ताम् । सुपुमनेति—मुपुम्नास्यसूर्यरश्मेः, ख़ुतः, निसृतः, यःशशिः, चन्द्रः, तस्य, मुधानां, पीयृषानां, ( श्रमृतमयिकरणानामितिभावः ) शीकरस्तवकैः, विन्दु-च्छुँगुः, तारिकतं, नच्ववर्षिक्तमिव, तीरं, तटं, यस्यास्ताम् । धिषशोति-धिष

सैकताम् , सिद्धविरचितबालुकालिङ्गलङ्घनत्रासविद्रुतविद्याधराम् , निर्मो-कमुक्तिमिव गगनोरगस्य, लीलाललाटिकामिव त्रिविष्टपस्य विकय-वीथिमिव पुरुषपरुषस्य, दत्तार्गलामिव नरकनगरद्वारस्य, श्रंशुको-ष्णीषपट्टिकामित्र सुमेरूनृपस्य, दुकूलकदलिकामित्र कॅलासकुञ्जरस्य, पद्धतिमिवापवर्गस्य, नेमिमिवऋत युगस्य, सप्तसागरराजमहिषीं मन्दा-गास्य, वृहस्पते:, यत्, त्रामिकार्यं, त्रामिहोत्रकर्म, तस्य धूमेन, धूसारितानि, धुमरवर्णतां प्राप्तानि (म्नानानि, इत्यर्थः) सैकतानि, पार्श्वभागानि, यस्यास्ताम् । सिध्देति—सिध्दैः, देवयोनिविशेषैः, विरचितानि, पूजार्थनिर्मितानि, यानि वालुका लिङ्गानि, बालुका मर्याशव ।लङ्गानि (चिन्हानि) तेषां लंघनात् , उक्कं-वनान्, त्रातेन, भयेन ( सिन्दाः साशापं दद्युरितिभयेन ) विद्वताः, पत्तायिताः, विद्याधराः, देवयोनिमेदाः, यस्यां नाम्। निर्मोकेति-निर्मोकमुक्तिमिव, निर्मोकस्य, कञ्चुकस्य, मुक्तिः, उज्कानं, तामिव, गगनं, त्राकाशं, एव, उरगः, ( उरसा गच्छतीत उरगः, ) मर्पः, तस्य ( कृष्णवर्णत्वादाकाशस्य शुक्क वर्णस्वाच निर्मोकस्य, इत्युत्प्रेज्ञितम् ) लीलेति—त्रिविष्टपस्य, स्वर्गस्य, लीला तुलाटिकामिव, विनादार्थमस्तक भृषणामिव । विकयवीथिमिव, विकयस्थानमिव, पूग्य परायस्य, व्यवहारार्थ पुराय सञ्चयः एव विकायद्रव्यं, तस्य परायं विकाय-स्थानं, तमित्र । दलार्गलामित, दला, स्थापिता, श्रर्गला, द्वारावरोधकाः दराडाः, तामिव, नरकनगरस्य,नरकमेवनगरं, पुरं, तस्य, द्वारं, मुखं, तस्य। श्रंशुकेति-सुमेरुतृपस्य, राज्ञः, स्रंशुकं, सूच्मवसनं, तेन, निर्मिता रचिता, उष्णीष-पिट्टका, शिरोवेद्धनपटी, तामिव । कैलासकुजरस्य, कैलासाद्रिवारणस्य, दुकूल कदितकामिव, बस्तरिचत वैजयन्तीमिव (स्रिगिवेतिभावः) श्रपवर्गस्य, स्वर्गस्य, पद्धतिमिन, मार्गिमिन कृतयुगस्य, सत्ययुगस्य, नेमिमन, चक्राधारमिन । सप्तसा गर राजमहिषीं, सप्तानांसागाराएगं समाहारः, तस्य, यद्वा, सप्त च ते सागराः, सतसागराः, तेषां, ''श्रथवा'' सप्तसागरराजः, ज्ञीरसमुद्रः तस्य, महिषीं,

किनीमनुसरन्ती मर्त्यलोकमवततार । ऋपश्यच्चाम्बरतलस्थितेवहार-मिव वरूणस्य, ऋमृतनिर्भिमिव चन्द्राचलम्य, शशिमणिनिष्यन्दमिव विन्ध्यस्य, कर्पूरद्रुमद्रवपवाहमिव द्रुडकारण्यस्य, लावण्य रस प्रम्न-वर्ण मिव दिशाम्, स्फटिकशिला पृष्टशयनिमवाम्बरिश्यः, स्वच्छ शिशिरसुरसवारिपूर्ण भगवतः पिनामहस्यापत्यं हिर्ण्यवाह नामानं महानद्म् यं जनाःशोण इति कथयन्ति । द्रष्ट्रा च तं रामणीयकंहत-हृद्या तस्येव तीरं वासमरचयत् । उवाच च माविवीम् स्यित,

पत्नीं, मंदाकिनी, गंगा, चानुसरन्ती, चानुसरगांकृर्वन्ती, मर्त्यलेखं, भुलीकं, खवततार, खवतीर्गा, ( प्रायेगात्र, उत्येद्धालंकार: ) खम्बरतलस्थितेव, खाका-शस्थितेव, वरूणस्य, जलाथिपतेः, हार्मिव, मुक्कास्त्रगिव । स्त्रमृतनिर्फरमित्र. सुधास्रोतमिव, चन्द्राचलस्य, चद्राख्य पर्वतस्य । राशिमणि निप्यन्दिमव. चन्द्रकान्त मिएसवित्रव, विन्ध्यस्य, विन्ध्यपर्वतस्य । कर्पूरेति -कर्प्रहुमस्य. कर्प् रवृत्तस्य, य दवः, स्वेदः, तस्य प्रवाहः, स्रोतः, तमित्र, दगडकारगयस्य, दगडकवनस्य । लावगयस्य, मौदर्यस्य, य रसः, तस्य यत्, प्रस्रवर्णा, वहनं, तिमव, दिशाम् । स्फटिकशिला, स्फटिकमणाः, तस्याः पृष्टमेवशयनं, पर्यङ्कं, तदिव, अम्बरिथयाः, आकाशलदम्याः । स्वच्<mark>छेति—स्वच्छानि,</mark> निर्मलानि, शिशिराणि, शीतलानि, मुरसानि, मधुराणि, वारीणि, जलानि, तैः पृर्णः. भरितः, भगवतः, पितामहस्य, ब्रह्मणः, श्रपत्यं, संतर्ति, हिरग्यवाह नामानं, तन्नाम प्रसिद्धं, महानदम् , त्रापश्यत् , त्रावलोकयत् , इति पूर्वेगाान्वयः । यं नदं जनाः, मानवाः शोरा इति, नाम्ना, कथयन्ती, वदन्ती । दृष्ट्वा च. अव-लोक्य च तं, ( नदमितियावत् ) ( तस्वेत्याध्याहार्यम् ) तस्य रामणीयकं, मनोहारित्वं, तेन हृतं, स्ववशीकृतं, हृदयंयस्या तादशी, तस्येव तीरे तटे, वासं, स्थितिं, त्र्यरचयत् । सखि ? मधुरा:, मुग्धकरा:, मयूराणां, बर्हाणां, विरुतय:, शब्दाः । कुसुमेति-कुमुमानां, पुष्पाणां, पांशुपटलंः, धृतिसमृहैः, सिक-

मधुरमयूरविरुतयः कुसुमपांशुपटलसिकतिलतरुतलाः परिमलमत्तमधुप-वेगाीवीगा रिगतरमगाीया रमयन्ति, मां मन्दीकृतमन्दाकिनी द्यतेर-स्यमहानदस्योपकएठमुमयः । पत्तपानि च हृदयमत्रैव स्थातुम्मे इति । श्रमिनन्दितवचना च तथेति तया तस्य पश्चिमे तीरे समवातरत्। एकस्मिश्च शुचौ शिलानलमनाथे तटलतामण्डपे गृह्बुद्धिवबन्ध । नातिचिरादुत्थाय सवित्र्यासार्धमुच्चितार्चनकुसुमा-सस्त्रो । पुलिनपृष्ठप्रतिष्ठित सेकतशिवलिङ्गा च भक्षया परमया पञ्चत्रह्म-पुरः सरां सम्यङ्मुद्रांबबन्ध, विहितपरिकरा ध्रवागीतिगर्भामवनिपवन तिला सैकतवन्तः, तरूसां, वृदासां, तलाः, अधोभागाः, परिमलेन, सुग-न्धिना, मत्तानां, उन्मत्तानां, मधुपानां, षट्चरणानां, वेणीसमृहः, सेंववीणा, तन्त्री, तस्या:रिणतेन, रेण रेण शब्देन, रमणीया:, शोभना:, मन्दीकृता, मन्दाकिन्या: गंगाया:, दातिः. कान्ति:, येन तथोक्रस्य, श्रस्य महानदस्य, शोरास्य, उपकर्ठभुमयः, पार्श्व प्रदेशाः, मां रमयन्ति, प्रारायन्ति । मे हृह्यं, अर्जनस्थातु, अस्मिन्नेव तटेस्थिति कर्त्तु, पत्तपाति, प्रणयी । अभिनिन्द्तेति-अभिनंदितं, समर्थितं, वचनं यस्यास्तथोक्षा, तस्य पश्चिमे तीरे, पश्चिमतटे, समावतरत् । एकस्मिश्च, शुची, पवित्री, शिलानलसनाथे, शिलातलयुक्को, तट-लतामगडपे, तटपार्श्ववित्लितागृहं, ( कुंज-इत्यर्धः ) गृह बुद्धिं, इदमावयोः गृहं, इति बुद्धि, मिंतं बबंध, चकार ( कृतवतीत्यर्यः ) विश्रान्ता च मार्गश्रमं द्रीकृत्य, च नातिचिरात, ( सद्येवेतिभावः ) उत्थाय, सावित्र्यासार्धं, स्वस-क्यासह, उचितानि, एकत्रिकृतानि, यानि, अर्चनकुसुमानि, पूजापुष्पाणि, तैः, सन्नौ, स्नानंकृतवती । पुलिनेति—पुलिनस्य, सैकतप्रदेस्य, प्रष्टे, उपरि, प्रतिष्ठितं, स्थापितं, सैंकतं, वालुकामयशिवलिङ्गं, यया सा परमया भत्तया. श्रद्धया, पञ्चन्नह्माणि, ( सद्योजात वामदेवाघोर तत्पुरूपेशानरूपाणि ) पुरः सरागि, अप्रगण्यानि, यस्यां तादशीं, मुद्रां, कराङ्ग्लिसंयोग

गगनदहननप नतुहिनिकरगायज्ञमानमयीर्मृतीरष्टाविष ध्यायन्ती सुचिर-मष्टपुष्पिकामदान् । श्रयत्रापनतेन फलमूलेनामृतरममप्यतिशिशयिप मागोन च स्वादिन्ना शिशिरेगा शोगावारिगा। शरीरस्थितिमकरोत् । श्रातिवाहितदिवमा च तम्मिल्लतामण्डपशिलातले कल्पित पल्लव-शयना सुष्वाप । श्रान्यद्यरप्यनेनेव कमेगानकंदिनमत्यवाह्यत् ।

एवमनिकामत्सु दिवसेषु गच्छनि च काले याममात्रोद्दनं च रवा-वुत्तरस्यां ककुभि प्रतिशब्दपुरिनवनगद्धरं गम्भीरतारनरम् . तुरङ्ग हेषित-सम्यक् , विधिपवेशं, बबन्धं, कृतवर्ता । प्रथमंसद्योजातपजामार्भ्य क्रमशः, वामदेव, त्र्यवार, तरपुरूप इशानपूजाविधाधिनात्वैवंपसमुद्रा विधानन पञ्चब्रद्याणि च्यप् त्रयदितिभावः ) विहितपरिकरा, कृतपूजानिधाना, ध्रवाख्या-तन्नाम गीति वयुन्दविशेषः, अस्ति गर्ममध्ये, यरयास्ताम्, अन्तरान्तरगीति-पूर्विकां, पुष्पाञ्जलिसदादिन्यनेनान्वयः । श्रवनिः, पृथ्वां, पवनः, वायुः, गगनं, श्राकाशं, तपनः, स्यें:, तृहिनिकिंग्सा:, चन्द्रः, दहनः श्राप्तः, सिललंजलं, यजमानः, याज्ञिकः, एताः अवन्याद्यात्मकाः, ताः, ऋष्टीं, मृतीः ( शंकरस्ये-त्यर्थः ) ध्यायन्तां, ध्यानंकुर्वन्तां, ऋष्टपुष्पिकां, ऋष्टेपद्मान, ऋदात्, दत्तवता । त्रयत्रोपनतेन, त्रानायासप्राप्तन, फलम्लेन, कन्दादिना, त्रामृतर्माप, पीयृष्मपि, त्रातिशिषयिपमारोन, त्रातिशयितुर्मिच्छता, स्वादिम्रा, त्र्यतिस्वादयुक्तेन, शिशि-रेण, शांतेन, शोणवारियाा, शोयानदजलेन, शरीरस्थिति ( नत्वातृप्तभोजन-मितिभावः ) त्र्यतिवाहितदिवसा, त्र्यतिकान्तदिना, तस्मिन्ततामडपे, नतागृहे, शिलातले, प्रस्तरखगडे, कन्पितं, निर्मितं, पत्नवानां, शयनं, शय्या, यया, एवंभूता, मुखाप, पर्गाशयनेएव निदालोमे इतिभावः । अन्येषुरिति-अन्येषुः, त्रापरदिने, त्रापि त्रानेनेवक्रमेण, क्रमशः, नक्लंदिनं, त्राहर्निशं, त्रात्यवाहयत्। एवं अतिकामत्मु, गच्छत्मु, दिवसेषु, दिनेषु, गच्छति च काले, समये,

याममात्रमिव, प्रहरमात्रामेव, उद्गुगते, उदिते, रवी, सुर्ये, उत्तरस्यां, उदीच्यां,

हार्मशृगोन् । उपजातकृतुह्ला च निर्गत्य लतामण्डपादिलोकयन्ती त्रिकचकेतकोगर्भपत्रपारुडुरं रजः संघानं नानिद्वीयमि सम्मुखमापतन्त-मपरयत् क्रमेगा च सामीप्योपजायमानाभिव्यक्तिः तस्मिन्महति शफरोद्-रश्रूसरे रजमिपयमीव मकरचकं सवमानं पुर: प्रधावमानेन, प्रलम्बकुटि-ल भचपल्लवघटितललाटज्रुटकेन, धवलद्न्तपत्रिकाद्य्तिहसितकपोलिभ-कर्काम, दिशि, प्रतिशब्देन, प्रतिध्वनिना, प्रितान, पृणानि, वनगहराणि, काननकन्दराः, येन तं गम्भीरतारतरं, श्रातिशयित गम्भीरं, शब्दं, तुरङ्गमाणां, अक्षानां, यानिहं पितानि, शब्दविशेषाः, तेषां, हादः, निनादः. तं अश्रुगोत्, कर्णकृहरतामनयत् । उपजातकृतृहला, च, उपजातः, उत्पन्नः, बुतृहलः. त्रीतमुक्यं, यया एवंभूता, लतामगडपात् लतागृहाद्, निर्भत्य, विलोकयन्तो । विकचेति--विकचं, विकस्ति, केतकांगर्भपत्रं, तदाख्यपुष्पप्रस्नवं, तद्वत्, पाराडुरं, ईषच्छुश्रम्, रजःसंघातं, धूलिसमृहं, नातिद्वीयसि, अनितदुर्वातीने, ( पार्श्वविनिधेपेतिभावः ) सम्मुचात्, पुरोयायिमार्णात्, व्यापतंतं, त्र्यागच्छंतं, त्रपश्यत । कमेरा च, कमराः, सामिप्येति—सामीप्येन, नैंकटयेन, उपजाय-माना, प्रादुर्भुता, त्राभिव्यक्तिः, स्फुरता यस्य तादशं, त्रश्ववृन्दं, त्रश्वसमूहं, ददर्श, त्र्यवलोकयत् , इत्यनेनान्वयः । तस्मिन् , ( त्रश्चवृन्देत्यर्थः ) शफरोदर धूसरे, शफरस्य, मन्स्यस्य, उदरवत् धूसरं, धूसरवर्णकं, तस्मिन्, रजसि, पांशी, पयसीव, जलमिव, मकरेति—मकरचक्र मकराः, जल जन्तवः, तेषां चकं, मग्डलं, तदिव, प्रवमानं तरमाणं, पुरः, ऋषे, प्रधावमानेन, (शीघ्र-गमनेनेति भावः ) प्रलम्बेति-प्रलम्बनेन, लम्बमानेन, कृटिलेन, कुश्चितेन, कच:, केश: (चिकुर: कुन्तलो बाल: कच: केश: शिरोरुह: इत्यमर:) पक्षवइव, नवपत्रमिव, तेन, घटिता, बद्धो, ललाटे, मस्तके, जूटकेन, केशबंधेन, एवं-भूतेन । धवलेति धवलायाः. शुश्रायाः, दन्तपत्रिकायाः, गजदन्तर्राचत कर्णाभरणायाः, या, यतिः, कान्तिः, तया हसिता, उद्भासिता, कपोलभित्तिः.

त्तिनाः पिनद्धकृष्णागुरुपङ्कच्छुरणकषायकञ्चकेन, उत्तरीयकृतशिरोवेष्ट नेन, वामप्रकोष्टनिविष्टहाटककटकेन, द्विगुगापट्टपट्टिकागाढ्प्रन्थिप्रथिता-सिधेनुना, त्र्यनवरतव्यायामऋशकर्कशशरोरेण, वातहरिण्यूथेनेवमुह्-र्मुहुः स्वमुङ्घीयमानेन, लङ्कित्तसमविषमावटविटपेन, कोराधारिगा, क्रपाग्गपाग्गिना, संवागृहोन वेवियवनकुपुमकत्तमूलपर्गोन, ''चल चल याहि याहि, अपसर्पापसर्प पुरःप्रयच्छ पन्थानम्" इत्यनवरतऋतकल गंडस्थलं, यस्य तेन । पिनद्धेति-पिनद्धः, धारितः. कृष्णागुरुपङ्कस्य, गंध-द्रव्यविशेषद्रवस्य, च्छुरर्णेन, र्ञाधवासनेन, कषाय, सुरभिः, कञ्चुकः, वारवाराः, येन, तथाभ्तेन, उत्तरायेण, तद् वस्त्रेण, कृतं, शिरोबेष्टनं, उष्णीषं, थेन, द्विगुरोति—द्विगुरा।, द्विरावृत्ता, या, पष्टपश्किा, वस्त्रखराडं, ( पेटिका इति-प्रसिद्धा ) तस्या, गाढेन, कठिनेन, अंथिना, प्रथिता, निवद्धा, असिधेनुका, छ्रिका, येन तथोक्केन । अनवरतेति-अनवरतेन, निरन्तरेख, कृतः, व्या-यामः, ब्रङ्गचालनं, तेन, कृशं, हस्वं, कर्कशं, कठिनं, एवं भृतेन शरीरेण, विश्रहेगा । वातहरिगाा, वाताभिमुरवंधार्वान्त ते, तेषां यः यूथः, समृहः, तनेव, मुहुर्मुहु: वारम्यारं, खं, श्राकाशं, उड्डीयमानेन, श्रति वेगनधावमानेने-त्यर्थ: । लङ्कितेति—लाङ्घेतः त्र्यतिकान्तः, समानां, समतलानां, विषमाणां, विषमप्रदेशानां, खवटानां, उन्मार्गाखां, विटपः, विस्तरः, ( प्रसरेतिभावः ) येन तथा भतेन । केणधारणा, लगुड़धारिणा, (कोणो वाद्य प्रभेदेस्यात् वीगादीनां च वादने, एक देशे गृहा दीनामश्री च लगुड़े Sपि च इतिमेदिनीं ) कृपारापाशिना, धृतासि हस्तेन, च । सेवेति सेवार्य, स्वामिनः, स्वाभिष्ट-देवस्य वा, नेवार्थं, गृहीतानि, विविधानि, नानाविधानि, वनस्य, कुसुमानि, पुष्पासि, फलानि, मृलानि, कन्दानि, पर्णानि, प्रत्रासि, च, थेन, तथाभूतेन, चल, चल, याहि, याहि, श्रागच्छ, श्रागच्छ, श्रपसर्पापसर्प, श्रपगच्छ, पुरः, श्रप्रतः पन्थानम् , मार्ग, प्रथच्छ, देहि, इति, एवं, श्रनवरतं, निरन्तरं, कृतः, कलेन, युवप्रायेगा, सहस्रमात्रेगा पदातिवलेन सनाथमश्रवृन्दं सन्दद्र्श ।

मध्ये च तस्य सार्धचन्द्रेगा मुक्ताफलजाल मालिना विविधस्त्र खण्डखचितेन शङ्कचीर फेन पाण्डुरेगा चीरोदेनेव स्वयं लच्मीं दातु-मागतेन गगन गतेनातपत्रेगा कृतच्छायम्, अच्छाच्छेनाभरगाद्युतीनां निवहेन दिशामिव दर्शनानुरागलग्नेन चक्रवालेनानुगम्यमानम्, आनि-तम्ब विलन्बिन्या मालतीशेखरस्रजा सकलभुवनविजयार्जितया रूपप-विहितः, कल कलः लालाहलः, येन तथाक्षेन, युव प्रायेगा, तरूगाबहुलेन, सहस्रमात्रेगा, (सहस्र परिमितेन) पदातिवलेन, पद चारिमेन्येन, सनाथं, सहितं, अश्ववृदं, अश्वसमृहं, ददर्श।

मध्ये इत्यादितः, अष्टादश वर्षायंकिश्वद् युवानमद्राचीत् , इत्यनेनान्वयः । मध्येच तस्य (अश्वनृत्देत्यर्थः) सार्ध चन्द्रेरा, अर्द्धशशिना, (इवेतिशेषः) मुक्ताफल जाल मालिना, मुक्ताफलानां, मौक्तिकानां, जालं, समूहः, तस्य माला स्रक्, तहत् । विविधेति—विविधानां, नानाविधानां, रत्नानां खराडेंः, शक्लैंः, खितं, पिटतं, तेन, शङ्खः, कम्युः, चीरं, दुग्धं, तस्य यः फेनचयः, डिराडीर निचयः, तहत् , पाराडुरं, श्वेतं, तेन, चीरोदेनेय, चीरोदरागेरोय, (लच्मी जनकेत्यर्थः) स्वयं, लच्मीं, रमां, दातुमागतेन, प्राप्तेन, गानगतेन, आकाशिस्यतेन, आतपत्रेरा, छत्रेरा, कत्तच्छायम्, कृता छाया, अनातपं (आतप निवारणिमित्यर्थः) कान्तिश्च, यस्य तं । अच्छाच्छेन, स्वछेन, आभररायुतीनां, भूषराप्रभागाम् , निवहेन, समूहेन, दर्शनानुरागलग्नेन, दर्शने, अवलोकने, यः अनुरागः, प्रेम, तेन लग्नं, आसक्तं, तेन दिशां चक्र वालेन, मराडलेन, अनुगम्यमानं, अनुसतं, आ नितम्बं, नितन्वपर्यन्तं, बिलम्बन्याः, लम्बमानायाः, मालतीशेखरस्रजा, मालतीलतायाः यत् शेखरं, पुष्पं, तेन रिचतया शिरोमालया, सकलानां, सर्वेषां, भुवनानां, (भू:भुवःस्वः स्वरूपाणां) विजयाय, जेतुं, आर्जितया, एकत्रितया (प्राप्तया इत्यर्थः) हपपताकेव, सीन्दर्थ वैजयन

ताकयेव विराजमानम् , समुर्त्सार्पिभिः शिखण्डकपद्मरागमगोरकगौरंश-जालैरदृश्य मानवतद्वताविधृतैर्वालपल्लवेरिव प्रमृज्यमानमार्गरेगापुरुप-वपुषम् वकुलकुड्मलमण्डलीमुण्डमाल मण्डनमनोहरेगा कुन्तलम्त बक्रमालिना मौलिना मीलिनातपं पिवन्तमिव दिवसम् . पशुपितजटामुकुटमृगाङ्क द्वितीयशकलघटितस्यव, महजलच्मोसमालिङ्गि तस्य ललाटपदृस्य मनः शिलापङ्कपिङ्गनेन लावण्येन लिम्पन्तमि-न्यंवः विराजमानम् । शोर्भतम् , समुत्यपिभिः समुद्रच्यद्भिः शिखण्डकपद्मरा-गमणोः, शिखंडकं, शिरो भवणा, यः, पद्मरागमणिः, तदाख्यमणिः (रत्नं ) तस्य, श्ररूणै:. रक्कैं:. श्रंशुजालैं:. किरणनिचर्ये: । श्रदृश्यमानेति--श्रदृश्य-मानया, ऋदर्शनया, वनदेवतया, वनाधिशतत्र्यादेव्या, विश्वताः, धारिताः, तैः, वालपल्लवेरिव, नविकसलयेरिव, प्रष्टुज्यमान मार्गरेगार्, प्रसृज्यमानाः. ऋपनी-यमानाः, मार्गरेरावः, गमनादङ्गलग्नाधृलयः, यस्य तादशं, श्रष्टरावपुपं, रक्न-शरीरं । बकुलेति-ववुल वृडमलानां, बबुलमुबुलानां, मण्डली, मालाइब, मुग्डमाला, मगडमाला, तया मग्डनं, शोभा, तेन, मनोहरेगा । कुटिले-ति—क्टिलः, भिक्तमान , यः कुन्तलानां, कचानां, स्तवकः, रुच्छः, तेषां माला, समृहः. तद्रता. मैं।लिना. किराटेन, (शिरोभृपर्गं नेतिभावः) मीलिता-तर्प, दूरीकृतघर्मा (किराट प्रभावादित्यर्थ: ) दिवसं, दिनं, पिवंतमिव, पानंकृ-तवंतिमव । पशुपतीनि—पशुपतेः, शङ्कग्स्यजटासु, यत्, मुकुटं, शिरोभूष-राभृतं, यः मृगाङ्गः, ऋद्वेचन्द्रः, तस्य द्वितीयं, ऋन्यं, शकलं, खगडं, तेन, घटितस्येवः रचितस्येव, (ऋर्द्धचन्द्राकृतेरित्यर्थः) सहजेति—सहजा, नैसर्गिकी, या लद्मी:, शोभा, यहा, महजा, सहोत्पन्ना, या लद्मी:, रमा,(श्रांतिसोभाग्य-त्वात्, श्रीः निरन्तर मेव सहोद्र प्रेम्णा नावसदितिभावः ) तया समालिङ्गितः, युक्तः, तस्य ललाट पर्श्स्यः, सस्तकप्रदेशस्य । सनः शिलेति-सनःशिलाः रक्तवर्गाः, ( मनिमलधानुविशेषः ) तस्य पङ्कः, द्रवः, तद्वत् , पिङ्कलः, गौर-

वान्तरिचम् , श्रभिनवयौवनारम्भावष्टमभप्रगल्भदृष्टिपाततृग्गीकृतित्रभु-वनस्य चत्तुषः प्रथिम्ना, विकच कुमुद्कुवलय कमलसगः महस्त्र संद्वा-दिनदशदिशं शरद्मित्र प्रवर्तयन्तम् , श्रायतनयननदीसीमान्तसंतुब-न्धेन, ललाटनट शशिमिण शिलानलगलितंन कान्तिमलिलस्रोतसंब-द्राचीयसा घोगावंशेन शोभमानम्, त्र्यतिसुरभिसहकारकर्पृर कल्लोल पारिजातक परिमलमुचा, मत्तमधुकर कुलकोलाहल खरेगा मुखंन सतन्दनवनं वसन्तमिववसन्तम्, असुन्नसुहत्परिहास-वर्षाः. तन लावगयेन, सान्द्यमा, लिम्पन्तांमव, लपन कुवेन्तामव, ब्रम्हांरज्ञं, दिग्भागम् । **श्रभिनवेति** ः श्रभिनवस्य, नूतनस्य, श्रौवनारम्मे, यः, श्रवष्टम्भः, गर्वः, तेनप्रगल्भः, चतुरः, यः, दष्टिपातः, अवलोकनं, तेनतृशी कृतं, तुच्छतां-नीतं, त्रिभुवनं, त्रिलोकं, पेन, तथोक्कस्य, चन्नुपः, नेत्रस्य, प्रथिम्ना, विस्तारेरा । विकचिति—विकचनां, विकसितानां, वृत्वलयानां, नीलेल्पलानां, बुसुदानां, कमलानां च, सरः सहस्रं:, मरोवरसंघे:, मंछदिता, दशदिशो येन, तथाभूतन, शरदिमव, शरत्कालिमवप्रवर्भयन्तम, प्रकटयन्तं । स्त्रायतेति-स्त्रायते, विशाल, त्यनं, नेत्रे, एव नयो, तपाः, सीमान्तेषु, प्रान्तमागेषु, "यः" सेतु-वंधः, पुलनिर्माणं, तेन । ललाटेति--ललाटतटं, मस्तकं, एव शशि मणि शिलातलं, चन्द्र कान्त मर्गाः प्रस्तर तलं, तस्मात् गलितं, निःसृतं, तेन, कान्तिसल्लिल खातसेव, मान्दर्यजल प्रवाहेगोव, द्राघायमा, ऋतिदार्घेगा, घोणा वंशेन, नासादगडेन, शोभमानम् । श्रातिसुरभीति-श्रातिसुरभिः, श्राति-शयन सुगंधवत्, अतएव, सहकारः, आम्रः, कपूरं, कल्लालकं, लवह (लीग) पारिजातं, तेषां पुष्पविशेषाणां, परिमलं, सुगधं, मुखतीतिपरिगल मुचा, तेन । मत्तानां, मधुकराणां, षट्पदानां, कोलाहलं, शब्दं, तेन मुखरं, सशब्दं, एवं-भूतेन, मुखेन, सनन्दन वनं, नन्दन काननं, वसन्तमिव, ऋतुमिव, वसन्तं, तष्ठंतं । श्रासन्नेति—श्रासन्नेन, पार्श्ववर्तिना, सुहृदा, मित्रेखा, यः परिहासः,

भावनोत्तानित मुखमुग्धहसितेर्दशनज्योत्स्नास्त्रपितदिङ्मुखैः पुनःपुन-

र्नभिस सञ्चारिगां चन्द्रालोकिमव कल्पयन्तम् , कद्म्बमुकुल स्थूल-मुक्ताफल युगलमध्याध्यामितमरकतस्य त्रिकएटककर्गाभरग्रस्य प्रेङ्कतः प्रभया ममुत्सर्पन्त्या सकुसुमहरित कुन्दपल्लव कर्गावितंसमिवोपलच्य-मार्गम् त्रामोदितमृगमद्पङ्कलिखितपत्र भङ्ग भास्त्ररम् , भुजयुगलमुद्दा-ममकराक्रान्त शिखरमिव मकरकेतुद्ग्डद्वयं द्धानम्, धवलब्रह्मसूत्र हास्यं, तस्य भावना, भावाववोधः, तरिमन्, उत्तानितं, उन्नमितं, यत् , मुखं, त्र्याननं, तस्य मुभ्यानि, मनोज्ञानि, 'यानि, हासेतानि, हिमतानि, तें: । दश-नेति--दशनानां, दस्तानां, ज्योत्त्रया, कास्त्या, स्नपितानि, धौतानि, दिज्ञा-खानि, दिग्भागानि, येषु तथाभ्तैः । पुनः पुनः, वारंवारं, नभिन, व्याकाशे संचारिंगां, प्रयटनशीलं, चन्द्रालोकमिव, शशिकिरण शुभ्रत्वमिव, कल्पयन्तं, विस्तारयन्तं । **कदम्वेति**---कदन्यमुकुलवत् , स्थृलं, पीनं, यत् , मुक्लाफल युगलं, मोक्किकयुग्मं, तस्य मध्ये, श्राध्याश्रितं, श्राधितं, मरकतं, तन्नामरत्नं, यस्य, यत्र वा, तथाक्तस्य, त्रिकगटककर्णाभरणस्य, त्रीणि, कणटकानि, ( कगटक सदश्यः, शलाकाः, इतिभावः, ) यत्र तादशं, यत् , कर्गाभरगं, कर्षाभृषरां, तस्य प्रेह्मतः, दीष्यमानस्य, प्रकम्पतो वा, समुत्सर्पन्त्या, समुद्रच्छ-न्त्या, स कुसुमं, पुष्पसहितं, हरितं, हरिहर्णं, कुन्दपल्लवं, कुन्दाख्य वृत्त पत्रं, तदेव, कर्गावतंयं, कर्गभृषगां, तमिव, उपलक्त्यमागाम् , प्रतीयमानं, श्रामोदीति-श्रामोदी, सौरभवान, यः, मृगमदपङ्कः, कस्तुरिकारसः, तेन लिखितः, चित्रितः, यो पत्रभङ्गः, पत्ररचना, तेन भास्वरं, दीप्यमानम्। उदामेति—उदामेन, उद्भटेन, मकरेसा, ( बाहुस्थितमकाराकार, मांस पिण्ड विशेषः ) तेन, त्राकान्तं, व्याप्तं, ( त्र्राधिष्ठतं ) शिखरं, त्र्राप्रभागं, यस्य, तादशं, भुजयुगलं, बाहुयुग्मं, मकरकेतुदग्डद्वयं, मन्मथदग्डयुगलम्, दधानं, धारयंतम् । धवलेति - लवलेन, सितेन, बह्मसूत्रेण, यज्ञोपवीतेन,

सीमन्तितं सागरमथनसामर्षगङ्गास्रोतः संदानितमिव मन्दरंदेहमुद्धहन्तम्, कर्पृरक्तोदमुष्टिच्छुरणपांशुलेनेव कान्तोच्चकुत्त्वकवाकयुगल-विपुलपुलिनेनोरःस्थलेनस्थूलभुजायामपुश्चितम्, पुरो विस्तारयन्त-मिव दिक्चकम्, पुरस्तादीषद्धोनाभिनिहितेककोणकमनीयेन पृष्ठतः कच्याधिक्तिपल्लवेनोभयतसंवलनप्रकटितोरुविभागेनहारीतहरितानिबि-इनिपीडितेनाधरवाससाविभक्ततनुतर मध्यभागम्, अनवरतश्रमोप-

सीमन्तितं, सन्नद्भम् । सागरेति-सागरस्य, समुद्रस्य, मथनेन, सामर्षा, सकोपा, ( पतिद्वेषादित्यर्थः ) या गङ्गा, भागीरथी, तस्याः, स्रोतसा, प्रवाहेण, सन्दानितमिव, बद्धामेव, मन्दरं, मन्दराचलम्, इव, देहं, शरीरं, उद्वहंतम्। कर्पूरेति-कपूरस्य, जोदः, चूर्णं, तस्य मुष्टिः, ( मुष्टिनिहित कपुरामितभावः) तस्य च्छुरर्णं, लेपनं, तेन, पांशुलं, शुभ्रं, तेन । कान्तेति-कान्तायाः, स्त्रियाः, उच्च कुचावेव, स्तर्नो, एव, चकवाकयुगलं, चकवाकमिथुनं, तस्य विपुलं, वृहत् . पुलिनं, सेंकतं, तेनेव, उरःस्थलेन, वज्ञःस्थलेन । स्थृ-**लेति**—स्थूलेन, पीनेन भुजयो:, त्रायामेन, विस्तारेण, पुजितं, समाहतं, दिक्चकं, दिङ्मगङलं, पुरः, श्रय्रे, विस्तारयन्तमिव, प्रसारयन्तमिव। <mark>त्र्यधोनाभीति</mark>—नामेरघः त्र्रधोनाभिः, तत्र, निहितः, स्थापितः, एकः, क्रोराः, श्रंशः, तेन, कमनीयं, लावएयमयं, तेन पृष्टतः, पश्चात् । कच्येति—कच्या-याः, काञ्च्याः, ''कच्या वृहतिकायां स्यात् काञ्च्यांमध्येभबन्धने'' इति मेदिनी'' त्राधित्तिप्तः, वद्धः, पह्नवः, प्रान्तभागो यस्य तेन, उभयतः, उभयोः, भागयोः, संवलनेन, सङ्कोचनेन, प्रकटितः, प्रकाशितः, उवीर्विभागः, थेन, तथाभूतेन, ( ऊरुशब्दोऽत्र पाद मात्राभिन्यज्ञकः ) हारीत हरिता, हारितः, पत्तिविशेषः, तद्वत् हरिद्वर्णं तेन, निविड निपीड़ितेन, सुददनिबद्धेन, श्रधर वाससा, परिधान वस्त्रेण, विभक्तः, प्रकटितः (विभाजितो वा ) तनुतरः, श्रतिकृशः, मध्यभागः, कटिप्रदेशः, यस्य, तम् । अनवरतेति-अनवरतं, निरन्तरं, कृतः, यः, श्रमः

चितमांस कठितविकटमकरमुखसंलग्नजानुभ्यां विशालवज्ञःस्थलोपल-वेदिकोत्तम्भत शिलास्तम्भाभ्यां चारुचन्द्नस्थासकस्थूलकान्तिभ्या-मुरुद्एडाभ्यामुपह्सन्तिमित्रेरावतकरायामम्, श्रातिभरितोरुभारवह्नग्वे-देनेव तनुतरजङ्काकाएडं, कल्पपाद्पपल्लवपाटलस्योभयपार्श्वावलम्बिनः पादृहयस्य दोलायमानैर्नेखमयृखैरश्वमण्डनचामरमालामिव रचयन्तम्, श्राभिमुखमुच्चेरुद् छिरितिचिरमुपरिविश्राम्यद्भिरिव वलितविकटम्, पत-

ब्यायामः, तेन, उपचितं, प्रवृद्धं, यत् मांसं, तेन, कटिनं, हढं. विकटं, वृहत्, मकरमुखं, जानुनोरुपरि प्रदेशं, तेन, संयते, संलग्ने, जानुनी, ययोः, ताभ्याम् । विशालेति—विशालं, वृहत्, यत् वत्तः स्थलं, उरुतदं, तदेव उपलेपदिका, प्रस्तररचितंबदिका, तस्याः, उत्तम्भनाय, धारसाय, शिला स्तम्भी, पाषासा स्तम्भौ, ( तत्स्वरूपावितिभावः ) ताम्याम् । चार्विति—चारुणा, लावगय-वता, चन्दनस्थासकेन, बिन्यस्तमलयजन, स्थ्ला, त्रातिशया, कान्ति:, प्रभा, ययोः, ताभ्यां, उरूद्गडाभ्यां, जङ्घाप्रदेशाभ्यां, ऐरावत कराऽऽयामम् । इन्द्र वारणा शुगडादगड विस्तारम् , उपहसन्तिमव, हास्यं वृज्जीनव । अतिभरि-तेति—श्रिति, श्रत्यर्थं, भरितयोः, पूरितयोः, उत्रोंः, भारस्य, वहनेन, धार-र्गोन, यः लेदः, परिश्रमः, तेनेव, तनुतरः, श्रितिक्रशः, जङ्घाकाग्डः, जानृ, श्रधोभागः, यस्य तं । कल्पपाद्वेति-कल्पपादपस्य, कल्पतरोः, पल्लवः, किसत्तयः, तद्वत् , पाटलं, ईपदक्कं, तस्य, उभयपार्थावर्लाम्बनः, उभयोः, ह्रयोः, पार्श्वयोः, पार्श्वभागयोः, त्रालम्ब्यते, इति तादशस्य, पादद्वयस्य, पाद-युगलस्य, दोलायमानैः, प्रकन्पमानैः, नखमयूखैः, नखकिरसौः,ः । ऋश्वेति— त्रथस्य, तुरगस्य, ( स्व वाह्नस्येति भावः) मंडनं त्र्रलंकरणं, चामरमाला, तामिव, रचयन्तम् , कुर्वन्तम् । **श्रमिमुखेति** —श्रमिमुखं, सम्मुखं, उर्चे:, उद-बद्भिः, उत्पतद्भिः, त्रातिचिरं, त्रातिसमयं, विश्राम्यद्भिरिव, विश्रामं कुर्वद्भि-रिव, वित्तिनं, गतिबिशेषः, तेन, विकटं, उद्घटं यथा स्यात्तथा पतिद्धः, उच्च-

द्भिः खुरैः खिएडतभुवि प्रतिच्चादशनविमुक्तखण्यणायितखरखलीने रीर्घवाण्लीनलालिकेललाटलुलितचारुचामीकरचक्रके शिञ्जानशात-कौम्भजयनशोभिनि मनोरंहसि गोलाङ्गूलकपोलकालकायलोम्नि नील-सिन्धुवारवर्गे वाजिनीसमारूढम् , उभयतः पर्याग्रपट्टाश्चिष्टहस्ताभ्यामा-सन्नपरिचारकाभ्यांदोधूयमानधवलचामरिकायुगलम्, अप्रतः पठतो र्लाद्भः, खुरैः, शफैः, खरिडतभुवि, खरिडता, खर्डशः कृता, ( उत्पाटितेति-भावः ) मृः, पृथ्वां, येन, तादृशेन, प्रतिक्त्र्रां, वारम्वारं, दशनैः, दन्तैः, विमुक्तः, श्रपसारितः, तेन खगाखगायितः, खगा खगा शब्दवत् , इतः, खरः, कर्कशः, खलानः, कविका, (चिवित्तिभावः ) येन तथामृत । दीर्घेति-दांघायां, वृहत्यां, घाणायां, नामिकायां, लानः, लानः, लालिकः, कविकाशे-खरं यस्य तादशे, सत्ताद, मस्तक, लुलितं, चर्चालतं, (वेगनेतिमावः) चारः, मुन्दरं, यत् , चामीकरचकं , मुत्रर्णवत्तयं, यस्य, तथीक्तं । शिञ्जा-नेति—शिजानं, यत्, शानकोम्भजयनं, "जयनं स्यातुरङादि सन्नाहंं इति मेदिनीं ' स्वर्ण रचित अश्ववर्म, तेन शोभिते, मने,रंहसिः, मन इव रंह, वेगः, यस्य तादशे । **गोलाङ्गृलेति**—गं तांगृलः, कृष्णमुखवानरः, ( लंगृर् इति प्रसिद्धः ) तस्य कपोलवन् , गगडध्देशवत् , कालाः, कृष्णवर्णाः, कायलेमानि, शर्राररोमाणि, यस्य तादशे । नीलेति—नीलं, यत् , सिन्धुवारं, तदाख्य पुष्पं, तस्येव वर्णों, यरयतथाभूते । वाजिनि, ऋश्वं, समारुढम् , स्थितं, उभ-यतेति—उभयतः ( उभयोः पार्धयोरित्यर्थः ) पर्यागोति—पर्याणपटः, অधप्रुष्ठस्थितासनः, तस्मिन् , আভিছা, संयतः, हस्तः, (वामकरः, इतिभावः, ) याभ्यां, तथोक्राम्यां, श्रासन्नपरिचारकाभ्यां, पार्धवर्तिभ्यां, दोधू-यमानं, वीज्यमानं, धवलं, शुम्रं, चामरिकायुगलम्, चामरयुग्मम्। त्रावतः, पुरस्तात् , पठतः, पठनशीलस्य, वन्दिनः, म्तुतिपाठकस्य, सुभा-पितेम, सुभाषगोन, अकगटिकते, रोमािबते, कपोलफलके, गगडतटे, यत्र वन्दिनः सुभाषितमुत्कण्टिकतकपोलफलकेन लग्नकर्णोत्पलकेसरपचम-शकलेनेव मुखशिशना भावयन्तम् ,श्रनङ्गयुगावतारिमव दर्शयन्तम् ,चंद्र-मयीमिव सृष्टिमुत्पादयन्तम् , विलासप्रायमिव जीवलोकं जनयन्तम् , श्रज्ञरागमयमिव सार्गान्तरमानयन्तम् ,श्रङ्गारमयमिव दिवसमापादय-न्तम् , रागराज्यमिव प्रवर्तयन्तम् ,श्राकर्षणाञ्जनिमव चत्तुषोः, वशी-करणमन्त्रमिव मनसः, स्वस्थावेशचूर्णमिवेन्द्रियाणाम् ,श्रसन्तोषमिव कौतुकस्य, सिद्धयोगमिव सौभाग्यस्य, पुनर्जनमदिवसमिव मनमथस्य,

तथाभूतेन । लग्नेति —लानानि, संसक्तानि, कर्णोत्पलस्य, कर्ण भूवणभूतस्य, कुमुदस्य, केसराणि किंजल्कानि, पद्माणि, नेत्ररोमाणि, (तेषां) शक-लानि, खराडानि, यस्मिन् , तेनेव, मुखशशिना, मूखचन्द्रेण, भावयन्तं. चिन्त-यन्तं । श्रानङ्गेति —ग्रानङ्गस्य, कामस्य, युगे, समने, श्रवतारः, श्रवतरणं, ( जन्मप्रहरामितियावत् ) तमिव, जीवलोकं, मर्त्यलेकं, दर्शयन्नं, चन्द्रमयी-मिव, चन्द्रप्रायमिव, सर्षि, सर्गं, उत्पादयन्तम् । विलासप्रायमिव, कामोद्भवा-नन्दमिव, जीवलोकं, जनयन्तम् । श्रनुरागमिव, प्रेमातिशयमिव, मार्गान्तरं, पन्थानं, तद्भागं च, त्रानयंतं, प्रापयन्तम् । श्रंगारमयमिव, श्रगाराख्यरस-मिव, दिवसं, दिनं, त्रापादयन्तम् , दुर्वन्तम् । रागराज्यमिव, रागः, स्तेहः, तस्यराज्यमिव, एकाधियत्यमिव, प्रवर्तयन्तम् । स्राकर्षणाञ्जनमिव, कशीकरण-कज्जलमिव, चत्तुषोः, नेत्रयोः, मनसः, चित्तस्य, वशीकरणमंत्रमिव, वशी-कर्तुं मंत्रप्रयोगिमत, इन्द्रियाणां, ज्ञानकर्मेन्द्रियाणां, ( चत्तुरादीनामित्यर्थः ) स्वस्थावेशचूर्णमिव, (स्वस्ययथास्थात्तथा त्र्यावेशयतीति तथाभूतं) चूर्णं, वशीकरणद्रव्यं, तदिव । ऋसंनोषिमव, ऋतृप्तिमिव, कौतुकस्य, ऋाश्वर्यस्य । सौभाग्यस्य, सीजन्यतायाः, सिद्धयोगिमव, सिध्ये, (कार्याणामित्यर्थः ) योगः, उपायः, तमिष । मन्मथस्य, कामस्य, पुनर्जन्म दिवसमिव, स्वपरजन्मदिन-मिव। यौवनस्य, रसायनमिव, श्रीषधमिव, (गुणान्तराधानमित्यर्थः)

रसायनिमव यौवनस्य, एकराज्यिमव रामणीयकस्य, कीर्तिस्तम्भिमव रूपस्य, मूलकोषिमव लावण्यस्य, पुण्यकर्मपरिणामिमव ७सारस्य, प्रथमाङ्करिमव कान्तिलतायाः, सर्गाभ्यासफलिमव प्रजापतेः, प्रताप-मिव विश्रमस्य, यशः प्रवाहिमव वैदेग्ध्यस्य. श्रष्टादशवर्ष देशीयं युवा-नमद्र।चीत् ।

पार्श्वे च तस्य द्वितीयमपरसंश्चिष्टतुरङ्गम्, परंप्रांशुमुत्तप्तपनीय स्तम्भावदातं, परिण्यतवयसमि व्यायामकितिकायम्, नीचनखरमश्रुकचम्, शुक्तिखलितम्, ईधन्तृन्दिलम्, रोमशोरः स्थलम्,
रामणीयकस्य. सौन्दर्यस्य, एकराज्यिमय, श्रद्धितीयमिव । कीर्तिस्तम्भिमव,
यशस्तम्भिमव, रूपस्य । मृलकोषिमव, प्रधाननिधित्तेत्रमिव, लावर्यस्य,
सौन्दर्यस्य, संवारस्य, प्रजायाः, पुर्थकर्मपरिणामिमव, पुर्यप्रलिमव, कान्ति
लतायाः, प्रभावङ्गर्याः, प्रथमाङ्क् रिभव, प्रराहिमव, प्रजापतेः, ब्रह्मणः, सर्गाभ्यासफलिमव । सर्गस्ययत् कर्गाः, निर्माणं, तत्र यः, श्रभ्यासः, (श्रभ्यसनमभ्यासः, ) कर्माण प्रौद्धं तस्य यत् फलं, तिमव । विश्रमस्य, विलासस्य,
प्रतापिमव, कान्तिप्रवाहिमव । वैद्यस्यस्य, नैपुर्यस्य, यशः प्रवाहिमिव, यशसां,
यत् प्रस्रवर्णं विस्तारं तिमव । श्रष्टादश वर्षं देशीयं, श्रष्टादशवर्षवयस्यं,
युवानं, प्रौढं, पुरुषं श्रद्वान्तीत्, श्रपस्यत् ।

पार्श्वंच तस्य, (दधीचस्येत्यर्थः) द्वितीयं, त्र्यपरं, त्रान्यं, संश्विष्ठतुरङ्गम्, संसक्तं, ( त्रश्वाक्विमित्यर्थः) परं, त्र्याधकं, प्रांशुं, उन्नतशरीरकमितिया- वत् । उत्तप्तेति — उत्तप्तं, प्रज्वितितं, यत् , तपनीयं सुवर्णं, तस्य स्तम्भवत् , स्थूणवत् , त्र्यवदातः, गीरवर्णः, तं, परिणतवयसमिष, परिणतम्, परिपाकतां-गतम्, वयः, त्र्यवस्था, यस्य तं, तथाभूतमिष, (बृद्धमपीति यावत् ) व्यायामेन, निरन्तरत्रङ्गप्रचालनपरिश्रमेण, काठिन्यतांप्राप्ताकाया, शरीरं, यस्य तं, नीचाः, निम्नाः, (लम्बमानाः, इतिभावः) नखाः, रमश्रवः, मुखबाला

अनुल्बसोदारवेशनया जरामपिविनयिमव शिक्तयन्तम्, गुसानपि ग-रिमासामिवानयन्तम्, महानुभावनामपि शिष्यतामिवजनयन्तम्, आ-चारस्याचार्यकमिवकुर्वासम्, धवलवारवास्यासिस्सम्, धौतदुकूलपट्टि-कापरिवेष्टिनमोलि पुरुषम्।

त्र्यथ स युवा पुरोयायिनां यथा दर्शनं प्रतिनिवृत्य विस्मयमानम-नसां कथयतां पदानीनां सकाशादुपलभ्यदिव्याकृति, तत्कन्यायुगल-कचाः, केशाश्र यस्य, तं, तथाविधं, शुक्तिखलितं, शुक्तिवत्, शंवृक वत्, खलतिं, खलबाटम्, ईपत्, क्षिचित्, तुन्दिलं, स्थ्लोदरं, रौमशं, बहु लामयुक्तं, उरःस्थलं, वत्तःस्थलं, यस्य तथाभृतं । त्र्यनुल्बगोति-त्रातुल्वर्णं, त्रातुत्कटः, ( संमित्रतिभावः ) उदारः, विशुद्धः, वशो, (संमिय वस्र परिधारसमित्यर्थः ) यस्य, तस्य भावः तत्ता, तथा, जरामपि, बृद्धत्वमपि, विनयमिव, त्र्यतिनम्रभावमिव, शिक्तयन्तं, ( पाटयन्तमित्यर्थः ) गाँख मिव, गरिमारामिव, गुणानिव, दान्तिगयादीनिव, गरिमार्ग, गाँख तां, ब्रानयन्तं, प्रापयन्तं । महानुभावतामपि, उदारतां ( महत्वतामितियावत् ) शिष्यतां, छात्रतां, जनयन्तं, उत्पादयन्तं, त्राचारस्य, त्राचार्यकं, ( ऋध्यापकत्व मित्यर्थः, ) कुर्वाणं, कुर्वन्तं, ( विद्यानिपुणन्वादितिभावः ) धवल वारवाण धारिणं, धवलं, सितं, यत् वारवाणं, (वारयतिदूरीकरोतिबाणं शर्रामित बारवाएां, ) कवचं, तं, धारिएा, धोतेति—धातया, प्रज्ञालितया, दुकृत पहिक्या, वस्त्रखारिङकया, परिवेष्टितः, परिश्चिष्टः, मोलिः, चूडा यस्य पुरुषं, ददशंतिशेष: ।

श्रथेति—स युवा, पूर्वनिर्दिष्टस्तरूषाः, पुरोयायिनां, श्रयमामिनां, यथा-दर्शनं, (पूर्वोक्तशिलातलेस्थितां, दृष्ट्वेत्यर्थः) प्रतिनिवृत्य, पुनरागत्य, विस्मयमानं, श्राश्रयीन्वितं, मनः, येषां तथौक्तानां, कथयतां, वदतां, पदातीनां, पदसैन्य चारिखां, सकाशात्, पार्थतः, उपलभ्य, ज्ञात्वा, मुपजात कुतृह्लः प्रतृयांतुरगो दिद्यज्ञुस्तं लतामण्डपोद्दशमाजगाम । दृगदेव च तुरगादवतनार । निवारितपरिजनश्च, तेन द्वितीयेन साधुना-सह चरणाभ्यामेव सविनयमुपससर्प । कृतोपसंप्रह्णो तो सावित्री समं सरस्वत्या किसलयासनदानादिना कुसुमफलाध्यावसानेन वनवासो-चितेनातिथ्येन तथाक्रममुपज्ञप्राह । श्चासीनयोश्च तयोरासीना नातिचिरिमवित्रे स्थित्वा तं द्वितीयं प्रवयसमुद्दिश्यावादीत्—'श्चार्य, सहजलज्ञा धनस्य प्रमदाजनस्य प्रथमाभिभाषण्णमशालीनना, विशेषतो वनमृगीमु-

दिच्या, दर्शन योज्या, आकृतिः, मृतिः-एवं मृतंतन् कन्यायुगलम् , दष्टकन्या-युग्मं, उपजातकृत्हलः, उपजातः, उत्पन्नः, कृत्हलः, ( दर्शनाभिलाप इत्यर्थः) प्रतृर्णतुरगः, विद्वताश्वः, दिङ्जु, द्रष्ट्रभिच्छु, तस्यपृर्ववर्णितस्य, लतामग्रडप-स्य, उद्देशं, प्रान्तभागं, त्राजगाम, त्रागतः, दूरादेव च, दूरतः, तुरगात्, त्रश्वात् , त्रवततार, निवारितपरिजनश्र, निवारितः, निपंधितः, परिजनः, पार्श्व वर्तीजनः येन तथाभृतः, तेन द्वितांधेन, त्रपरेसा, साधुना सह वृद्धेनसार्ध, चर-गाम्यामेव, पादाभ्यामेव, सर्विनयं, अथा स्या-तथा, उपसंसर्प, श्रामत्। ( चरणाम्यामेवंत्यत्राति विनयं,सूच्यते ) कृतोपसंग्रहणं, कृतं, विहितं, उपसं-ग्रहर्गा, सममानेनग्रहर्णा, प्रणामादिकं वा ययो:, तथाभतौ । किसलयासन दानादिना, पल्लवनिर्भितव्यासनदानादिना, कुसुमफलार्ध्या वसानेन, कुसुमेन, पुष्पेरा, फलेन च, यत् ऋर्घं, ऋर्घंदानं (पृजनिमत्यर्थः ) तदव, अवसानं, श्चन्तं, यस्य, तेन, वनवासोचितेन, वनवासयोग्येन, ( नहिवनवासे नगर वस्तुनि लभ्यन्ते त्रातः ) त्रातिथ्येन, त्रातिथिसत्कारेण, यथाकमं, यथानियमं, उपजग्राह, त्रादरं चकार (त्रादत वतीतिभावः) त्रासीनयोः, उपविष्टयोः, तयोः, त्र्यासीना, स्थिता:, किंचिचिरं विलम्ब्य, तं द्वितीयं, प्रवयसं, स्थविरावस्थाकं, उद्दिस्य, उद्देश्यमिमनीय, त्रवादीत् , सहजेति सहजा, स्वाभाविका, लजा-तद्रुष धर्न, यस्य एवंभृतस्य प्रमदाजनस्य, फुलम्त्रीजनस्य, प्रथमाभिभाषग्रां,

ग्धस्य कुलकुमारीजनस्य । केवलिमयमालोकनकृतार्थीय चत्तुषे स्पृह-यन्ती प्रेरयत्युद्न्तश्रवण्कुनूह्लिनीश्रोन्नवृत्तिः । प्रथमदर्शनेचोपायन-मिवोपनयति सज्जनः प्रगायम् । श्रप्रगल्भमपि जनं प्रभवता प्रश्रयेगापितं मनोमध्वित्र वाचालयति । ऋयवेर्नेव चातिनम्रेसाधौ धनुषीव गुगाः परां कोटिमारोपयति विस्नम्भः। जनयन्ति च विस्मियमतिधीरधियामदृष्टपूर्वा दृश्यमाना जगति स्रष्टुः सृष्ट्यतिशयाः । यतिस्रभुवनाभिभावि रूपमिद प्रथमं, प्राक्, अभिभाषणं, आलापनं, अशालीना, धृष्टता, (चापल्यमिति भावः ) विशेषतः, प्रायेणा, वनमृगीमुग्धस्य, वनस्यमृगी, हरिणी, तद्वत् मुग्धः, सरल: तस्य, ( वनमृगी इत्यत्र जनसम्पर्क राहित्यं व्यज्यते ) कुल-कुमाराजनस्य, ( प्रथमाभिमापणाता नैं।चित्यमैवेत्यर्थः ) केवलं, इयंश्रोत्रवृत्तिः, श्रवसोन्द्रियव्यापारः, ऋालोकनेन दर्शनेन, ( युवयोरितियावत् ) कृतार्थाय, मने।रथसिध्ये, चत्तुषे, नयनाय, स्प्रहयन्ती, स्प्रहां कुर्वन्ती, ( नेत्रवद् स्वय-मिप कृतार्थतां गंतुमिच्छन्तीत्यर्थः ) उदन्तस्य, वृत्तस्य, ( युवयोरितिभावः ) श्रवसं, श्रोत्रविषयी करसं, कुत्हृत्तिनी, उत्पन्नकुत्हृत्वा, प्रेरयति, नियोजयति, ( त्र्यालापयितुंमामिति रोपः ) प्रथमं, ऋपृवंमित्यर्थः । दर्शनं, ऋवलोकनं, तस्मिन्, उपायनमिव, उपहारमिव, प्रणयं, स्नेहं, सञ्जनः, साधुजनः, उपनयति, प्रकटयति । श्रप्रगल्भमिष, मुग्धमिष, जनं, प्रभवता, महता, प्रश्रयेस, विनयेन ( विश्वासेनेत्यर्थ: ) त्र्रापितं, दत्तं, ( सज्जनायत्तीकृत-मितिभावः ) मनः चित्तं, मधु इव, मद्यमिव, वाचालयित, वाचालं करोति । **अयत्नेति**—अयत्नेनेव, परिश्रमंविनेव, अतिनम्रेसार्थो, विनीतसाधुजने धनु-षीव, कार्मुकेइव, गुराः, विनयादि, ( मौर्वाच, ) परां कोटिं, परममुत्कर्षे, (धनुषः शिखाञ्च) श्रारोपयति, स्थापयति, विश्रम्मः, विश्वासः, ऋतिधीरिधयां, त्र्यतिघोराधीः, बुद्धिर्येषां तथा विधानां, त्र्यदृष्टपूर्वाः, पूर्वमनवलोकिताः, दृश्य-मानाः, दृष्टिपथं प्राप्ताः, स्नष्टः, विधातुः सृष्टिः, सर्गः, तस्यात्रातिरायाः,

मस्यमहानुभावस्यकुमारस्य । सौजन्यपरतन्त्रा चेयं देवानांप्रियस्याति-भद्रता कारयति कथां, न तु युवतिजन सहोत्था तरलता । तत्कथयागम नेनापुण्यभाकतमोविकमजृभ्भित विरहव्यथयाशून्यतां नीतो देशः । क वा गन्तव्यम् । कस्य वायमपहृतहरहुङ्काराहंकारोऽपर इवानन्यजो युवा ।

उत्कर्षाः ( सर्वश्रेष्ठ वस्तुनीतिभावः ) यतः, त्रिभुवनाभिभाविरूपमिदं, त्रिभुवनस्य, भू:भुवः स्त्रः, इत्यस्य, श्राभिभावितं, तिरस्कृतं, रूपं येन, तथोक्रस्य, महानुभावस्य ( योग्यस्येत्यर्थः ) कुमारस्य ( दधीचस्येति ) विस्मयं, त्राश्वर्यं, जनयन्ति, उत्पादयन्ति । सौजन्येति—सौजन्यस्य, सौभा-ग्यस्य, परतन्त्रा, पराधीना, इयं, देवानां, गीर्वागाना, ( पूज्यानामित्यर्थः ) त्र्यतिभद्रता, शिष्टाचारः, ( तवसमीपे इतिभावः ) कथां कारयति, ( वद-तीत्यर्थः ) ( देव।नांप्रियः, इति मूर्खं केचिद् ब्याहरन्ति परंनात्र मूर्खशब्दवाच-कोऽयं शब्दः प्रणायातिशय बोधकोयमत्र ) युवतिजन सहोत्था, युवतिजनानां, प्रौढस्त्रीणां, सहोत्था, नंसिंगंकी, तरलता, चाबल्यं, नतुकथां कारयतीति पूर्वेण-सम्बंधः । अथमुनिशापं विचित्य सरस्वत्याः, भर्तृयोग्यतां दधीचस्य च मनिम निधाय परिचयंपृच्छति । तत्कथयेति—तत् , तस्मात् , कथय, वद, श्रागम-नेन कतमोदेशः, त्रपुरायभाक् , पुरायरहितः, कृतः, विक्रमजृभ्भितविरहव्य-थया, विक्रमेरा, वलेन, जृम्भिता, उद्दीपिता, या बिरहव्यथा, वियोगपीड़ा, ( युवयोरितर्थः ) तया, शून्यतांनीतः ( यस्मादेशाद्भवन्तावागतौ सदेशः सां प्रतं युवयोः विच्छेदेनातितरंदुःखमनुभवति एतदेव तस्यापुरायभाकृत्वमित्यर्थः ) क्ववा गमनं युवयो: कस्येति—(कस्यापत्यमित्यर्थः,) अपहृतेति—अपहृतः, नाशितः, हरस्य, शिवस्य, हूङ्काराहंङ्कारः, गर्वः, येन, तथाभूतः ( हर कोधा-नलेनादग्धइत्यर्थः, ) श्रानन्यजः, नास्ति श्रान्यस्माञ्जनम् यस्यसोऽनन्यजः, त्रात्मभूः, कामः, एबंभृतोऽयं युवा, तरूणः, कस्येति पूर्वेगान्वयः । किलाम्नः,किं नामाभिधेयस्य, समृद्धः, प्रवृद्धः, तपः, यस्य, पितुः ( पातिरक्ततीति पिता )

कि नाम्नः समृद्वतपसः पितुरयममृतवर्षा कौस्तुभमिणिरिवहरेईद्य-माह्नाद्यित । का चास्य त्रिभुवननमस्या प्रभातसम्ध्येव महतस्तेजसो-जननी । कानि वास्य पुण्यभाञ्जि भजन्त्यभिख्यामत्तराणि, त्रार्थ परि-परिज्ञानेऽप्ययमेव कमः कौतुकानुरोधिनोहृद्यस्य' इत्युक्तवत्यां तस्यां प्रकटितप्र श्रयोऽसौ प्रतिव्याजहार 'त्रायुप्मिति, सतां हि प्रियंवदता कुल-विगा । न केवलमाननं हृद्यमिष च ते चन्द्रमयमिव सुधाशीतलेरान-न्दयति वचोभिः।सोजन्य जन्मभूमयो भूयसाशुभेन सज्जननिर्माण्शि-

तस्य अमृतवर्षा, अमृतं, पीयृपं, वर्षति, सिम्नतीति, अमृतवर्षा, कौस्तुभमिण-रिव, तदाख्यरत्नामव, हरे:, विष्णोः, हृदयं, चित्तं, त्र्याल्हादयति, त्र्यानन्दयति, ( यथा के स्तुभमणिः हरेः, हृदयमानन्दयति, तथैंवायमापि त्रानन्दयति जनानां चंतांसीत्यर्धः ) ( कींस्तुभमगोरमृतप्रस्रवर्णं प्रसिद्धम् ) का चास्य ( पुरोदश्य-मानस्येतिभावः ) त्रिभुवननमस्या, त्रिलोकीपृज्या, प्रभातसंश्येव, प्रातः काली-नसंध्येव, महतरतेजसः, समृद्धकान्तेः, जननी, माता ( संध्या समये सर्वेऽपि प्राणिनः भगवद्स्मरणं कुर्वन्ति, श्रतः त्रिलोकापूज्येतिभावः ) तामिव । (उपमा) कानि वास्य, पुरायमाजिपुरायवन्तीत्यर्थः । श्राभिख्यां, संज्ञां, भजन्ति, कथय-न्तीत्यर्थः, श्रज्ञराणि, वर्णाः, ( किंनामधेयोयमितिभावः ) श्रार्थपरिज्ञानेऽपि, श्रयं साधुरितिज्ञानेऽपि, कातुकानुरोधिनः विशेषपरिचय कर्त्रः, हृदयस्य, चित्त-स्य, श्रयमेवकमः, नियमः (ज्ञानपरम्परा, इत्यर्थः) इत्युक्तवत्यां, णवं कथयन्त्यां, तस्यां, ( सावित्र्याभित्पर्थः ) प्रकटित प्रथयः, दर्शितसौजन्यः, त्र्यसौ, प्रतिन्या-जहार, प्रत्यत्तरमदात् । सतामिति —सतां, सज्जनानां, प्रियंवदता, मधुरभाषित्वं, कुलविद्या, वंशपरम्परागतकला, ( नैसर्गिकीविद्येत्यर्थ: ) न केवलमाननं, मुखं, श्रपितु हृदयमपि, चित्तमपि. ते, चन्द्रमयमिव, शशित्वमिव, सुधाशीकर शीतले:, श्रमृतविन्दुवच्छिशिरे:, बचोमि:, बचने: (मधुरालापैरित्यर्थ:) त्रानन्दयति. ग्रीणयति । मौजन्येति—सौजन्यस्य, सदाचारस्य, जन्मभूमयः,

ल्पकला भवादश्यो जायन्ते । दूरे तावद्न्योन्यस्यालापनमभिजाते सद् दशोऽपिमिश्रीभूतामहर्ती भूमिमारोपयन्ती । श्रूयताम् श्रयं खलु भूष-गांभागववंशस्य भगवतो भूर्भुवःस्विष्ठितयतिलकस्य, श्रद्धप्रभावस्त-म्भितजम्भारिभुजस्तम्भस्य, सुरासुरमुकुटमणिशिलातलशयन दुर्ललि-तपादपङ्केरहस्य, निजतेजः प्रसरसुष्टपुलोम्नस्च्यवनस्य वहिर्वृत्तिजीवितं

उत्पत्तिस्थानानि, भूयसा, वहुलेन, शुभेन, पुरुयेन, सज्जननिर्माणे, रचेन, शिल्पकला, शिल्पविद्या, इव, भवादश्यः, भवत् शदशाः, जायन्ते, उत्पद्यन्ते । दूरे-इति—ग्रन्योन्यस्य, परस्परस्य, (सज्जनानामितिशोषः) श्रालापनं, भाषरां, दूरे, तावत् , ( तिष्ठन्त्वत्याध्याहार्यम् ) त्र्यभिजातेः, सत्कुलोत्पन्नः, सह, सार्ध, मिश्रीमूताः, संमिश्राः, इशोऽपि, दृष्टयोऽपि, महतांमूमि, स्थानं, ( स्वर्गमितियावत् ) आरोपयन्ति, नयन्ति । अयंखलु, भूषणं, अलङ्कारणं, भार्गववंशस्य, मृगोरयंभार्गवः, तस्य, वंशं, कुलं, तस्य, । भगवतः, भूः, पृथिवी, भुवः, श्रन्तरीचं, स्वः, स्वर्गः, तेषां त्रितयं, तस्य तिलकं, शिरोभूषणं, तस्य । अद्भ्रेति-अदभ्रः, महान् , प्रभावः, तेनस्तम्भितः, रुद्धः, जम्भारेः (जम्भः तदाख्यः, श्रमुरस्तस्यारिशत्रुः) इन्द्रः, तस्य, भुजएवस्तम्भः, येनतथोक्कस्य, (पुरा श्रश्विनी कुमाराभ्यां, यज्ञभागभुजां-करू, इति प्रार्थितोऽयं तथा ताभ्यांभागं द दत् , कुद्धेन इन्द्रेण रोषित, ततश्रास्यसत्रज्ञहस्तः, स्तम्भितोऽभूदितिपुराणे त्रवधयम् ) सुरासुरेति— सुराणां देवानां, त्र्रमुराणां, राज्ञसानां, "च" मुकुटेषु, मौलेषु, यानि मणि-शिलातलानि, रत्नप्रस्तराः, तेषु, शयनेन, दुर्ललित, दुर्गम्यं, ( ऋत्यादतिमिति-भावः ) पादपङ्करुहं, चरणकमलं, यस्य, तथाभूतस्य, ( सुरासुर वन्यस्थे-त्यर्थः ) निजेति—निजानां, स्वकीयानां, तेजसां, प्रसरेण, विस्तारेण, सुष्टः, दग्धः, पुलोमा, तदाख्यराच्चसः, येन, तथाभूतस्य, ( पुरा गर्भवतीमृगोः पत्नी . पुलोम्नाराचसेन हता, तदानीं गर्भस्थोऽसी मुनिर्गर्भाचुच्योत, ततश्चान्वर्थना<sub>म्ना</sub> द्योचो नाम तनयः। जनन्यस्यजितजगतोऽनेकपार्थिवसहस्रानुयातस्य शर्यातस्य सुता राजपुत्री त्रिभुवनकन्या रत्नं सुकन्यानाम। तां खलु देवीमन्तर्वत्रीं विदित्वा वैजनने मासिप्रसवाय पिता पत्युः पार्श्वात्स्वगृह-मानाययन्। त्रासून च,सा तत्रदेवी दीर्घायुषमेनम्। त्रानेहसावर्धत तत्रै-वायमानिद्दतज्ञातिवर्गो बालस्तारकराजङ्व राजीवलोचनो राजगृहे। भर्तृभवत मागञ्जन्त्यामपि दुहितरिनासेचनक दर्शनिममममुञ्जन्माता-महोमनोविनोदनं नप्तारम्। त्रारिचतायं तत्रैवसर्वा विद्याः सकलाश्च-

नेनच्यवतेन राज्ञसाद्यथः पुराखे ऋतुसंधेयाचैषावार्ता ) च्यवनस्य, च्यवननःस्रः बहि:. बहिप्रदेरो, वृत्ति:, ऋवस्तानं यस्य तादृशं, जीवितं, जीवनाश्रय:, दधीचो-नाम, तनयः, पुत्रः, जितजगतः, जगद्विजयिनः, श्रनेकानि, वहूनि, पार्थिवानां, चपाणां, सहस्राणि, तैं:, श्रनुयात:, श्रनुगम्यमानः, ( सेवितइत्यर्थ: ) तस्य-शर्य्यातस्य, तदाख्यराज्ञः, त्रिभुवनकन्यारत्नं, त्रिभुवने याः, कन्याः, तासु, रत्नभृता, सुकन्यानाम, सुकन्याभिषेया, श्रस्यजननी, माता । तांखलु, ( सुकन्यामितियावत् ) द्वीं, श्रन्तर्वर्त्वीं, विदित्वा, ज्ञात्वा, वैजननेमासि, प्रसवाय, पिता, ( शर्यातः ) पत्युः, ( च्यवनस्य ) पार्श्वात् , स्वगृहं, स्वोश्म, त्रानाययत् , त्रानेहसा, कालेन, त्रानन्दितः, ज्ञातिवर्गः, कुटुम्बिजनः, वालस्तारक राज इव, बालचन्द्रइव, राजीवलोचन:, कमलाचः, तत्रैंव, राजगृहे, मातामह्वेश्माने, भर्तृभवनमागच्छन्त्यामपि मातरि, ( च्यवनः पार्श्वसमागनामिपमुकन्यामित्यर्थः ) त्राप्तेचनकं, त्रातिनृप्तिकरं, दर्शनं यस्य, तदासेचनकंतृप्तेर्नास्त्यन्तो यस्य दर्शने । तथाभृतं, मनोविनोदं, मनसः, त्रानन्द जनकं, इमं, मातामहः, शर्यातः, नप्तारं, दाहित्रं, (दुहिता दूरेहिता दोग्धेर्वा पितुः सकाशात् ) न, श्रमुखत् , न प्रोपेतवानितभावः । सर्वाविद्याः, सकलाः, सम्पूर्णाः, कलाः, चतुषच्ठयात्मकाः, तत्रैव, श्रशिज्ञत, शिज्ञां-लेमे । कालेति कालेन, समयन, उपारुद्यीवनं, जातयीवनं, इमं,

कलाः। कालेन चोपारुढ योवनिमममालोक्याहमिवासावप्यनुभवतु मुख कमलावलोकनानन्दमस्येति मातामहः कथंकथमप्येनंपितुरन्तिकम-धुना व्यस्त्र्यत्। मामपि तस्य देवस्य सुगृहीतनाम्नः शर्यातस्याज्ञा-कारिगां विकुन्तिनामानं भृत्यपरमागुमवधारयतु भवती। पितुः पादमू-लमायान्तं मया साभिसारमकोरोत्स्वामी। तद्धिनः कुलकमागतं राजकुलम्। उत्तमानां च चिरंतनता जनयत्यनुजीविन्यपि जने किय-न्मात्रमपि मन्दान्तम्। श्रचीग्यः खलु दान्तिण्यकोशो महताम्। इतश्चगव्यूति मात्रमिव पारेशोगां तस्य भगवतस्च्यवनस्य स्वना-

त्र्यालोक्य, दृष्ट्वा, त्र्याह, उवाच, त्र्यहमिव (मत्सदशिमत्यर्ध: ) त्र्रसाविष, ( अस्यपिताच्यवनोऽपि,) अस्य, मुखकमलावलांकनसुखं, मुखपद्मदर्शने यत्सुखं, त्रानन्दः, तं, त्रानुभवतु, नयतु । ( इतिविचार्येतिभावः ) मातामहः, शयतिः, कथंकथमपि, स्रतिकृञ्ज्रे सा, पितुरन्तिकं, पितुः पार्श्वगमनाय, ऋधुना, साम्प्रतं, एनं, व्यसर्जयत् , प्रेषितवान् । मामिप, तस्यदेवस्य, नृपतेः, सुगृहीतनाम्रः, सुगृहीतंनाम यस्य तथोक्कस्य, ( प्रातः स्मरणीयस्थेतिभावः ) शर्यातस्य, तदा-ख्यस्य, त्राज्ञाकारिणं, सेवापरायणं, विकृत्तिनामधेयं, मृत्यपरमाणुं, नुद्रतरं किंकरं, भवती, अवधारयतु, जानातु । पितुः पादमृलं, पितुः पार्धं, आयान्तं, त्रागच्छन्तं, ( एनमितिशेष: ) मया साभिसारं, ससहायं, स्वामी, प्रभु:, श्रवन रोत् । ( श्राज्ञापयदित्यर्थः ) तद्धीति—तत्राजकुलं नः, श्रस्माकं, कुलकमा-गतं, (वंश परम्परासेवितमित्यर्थः ) हीति (निश्रयार्थः ) उत्तमानां, सज्ज-नानां, चिरंतनता, ( चिरानुगत्यमित्यर्थः ) त्र्यनुजीविनि, सेवके कियन्मात्रमपि, श्राल्पमात्रमपि, मन्दाचं, लाजां, (चिरकालसेवके महतांलाजा जायते, इति मामनुजीविनमपि स्वदै।हित्र सहचरं कृतवानित्यर्थः ) खलु, निश्चयेन, महतां दान्तिएयक्रोशः, त्रौदार्यनिधिः, त्रज्ञीराः, ( नन्तरं प्राप्नोतीत्पर्थः ) ( स्वदान्नि-ग्यादेवंकृतवानितिभावः ) इतश्र, श्रस्मात् स्थानात् , पारेशोगां, शोगस्य, नद- स्नानिर्मितव्यपेदेशं च्यावनं नाम चेत्ररथकल्पं काननं निवासः । तद्विधिरेवनौयात्रा । यदि च गृहीतत्त्रणं दाित्त्र्यमनवहेलं वा हद्यमस्माकमुपिर भूमिर्वा प्रसादानामयं जनः श्रवणाही वा ततो न विमाननीयोऽयं नः प्रथमः प्रण्यः कुतृह्लस्य । वयमि शुश्रूप्वो वृत्तान्तमायुष्मत्योः । नेयमाकृतिर्दिव्यतां व्यभिचरित । गोत्र नामनी तु श्रोतुमभिलषित नौ ह्ययम् । तत्कथय कतमोवंशः स्पृह्रण्यीयतां जन्मना नीतः । का चेयमत्रभवती भवत्याः समीपे समवाय

स्य पारेइति पारेशोणम्, गन्यृतिमात्रं, कोशयुगं (इव) तदेवतन्मात्रं, तस्मिन्, तस्य भगवतः, स्वनाम्ना, निर्मितः, कृतः, व्यपदेशः, संज्ञा यस्य तथोर्क्नं, चैत्ररथ-कल्पं, चैत्ररथं नाम कुवेरोद्यानं, (तत्सदशमित्यर्थः) काननं, उद्यानं,तस्मिन्, निवासः, स्थितिः । नौ, त्र्यावयोः, यात्रा, गमनं, तदविधरेव, तद्पर्यन्तमेव, गृहीतेति - गृहीतं, स्वीकृतं, च्रापदा च्रिएयं, स्वल्प कालीन चातुर्यं, येन तथाभूतं, श्चनवहेलं, नास्ति श्रवहेला, श्रवज्ञा, (श्रपमानं ) यस्य तादरां, श्रस्माऋंहदयं प्रसादानां, श्रनुप्रहाणां, भूमिः, स्थानं, श्रवणार्हः, श्रोतुंयोग्यः, श्रयंजनः, न, विमाननीय:, श्रनादरणीय:, ( नोपेक्तणीय इतिभाव: ) नः, श्रस्माकं, श्रयं. प्रथमः, त्र्यादः, प्ररापः, स्नेहः, कुतुह्रतस्य, कौतुकस्य, ( श्रवराौत्मुक्यस्ये-त्यर्थः ) त्रायुष्मत्योः, युवयोः, वृत्तान्तं, इतिवृत्तं, शुभूषवः, श्रोतुमिच्छावः । ( वयमिप'' इत्यत्र द्विवचनपदवाच्ये, श्रादरार्थंबहुवचनम् नाशङ्कनीयोऽयंदोषः ) इयमाकृति, दिव्यतां, देवत्वमित्यर्थः, न व्यभिचरति, नातिकामित, (निह एतादशी त्राकृतिर्दिन्यतांविनाभवितुशक्यते ) गोत्रनामनी, गोत्रं, वंश प्रवर्तकः; नाम, श्रमिधंयं, च, श्रोतुं, कर्णविषयीकर्तुं, नौ, श्रावयोः, हृदयं, श्रमिलवित, इच्छति । तत्कथय, वद, कतमोवंशः, कुलं, जन्मना, जन्मप्रहर्णेन, स्पृहरणीयतां, रपर्धायोग्यतां, नीतः, (किस्मन्कुले श्रस्या जन्म इतिभावः) इयं, पुरोदश्यमाने-त्यर्थः, त्रात्रभवती, पूज्या, भवत्याः, तव, समीपे, पार्श्वे, विरोधिनां, परस्पर विरु-

इव विरोधिनां पदार्थानाम् । तथाहि । संनिहितबालान्धकारा भास्वन्मू-र्तिश्च, पुण्डरीकमुखी हरिग्णलोचना च, बालातपप्रभाधरा कुमुदहा-सिनीच, कलहंसस्वना समुत्रतपयोधरा च, कमलकोमलकरा हिम-

द्धानां, पदार्थानां, वस्तुनां, समवायड्व, नित्यसंबंधइव, का, (एषाइतिशेषः) तथा-हि, तमेवार्थमवगच्छेत्यर्थः I सन्निहित बालान्धकारा, सन्निहिताः, बालाः, नवाः, त्र्यन्थकाराः, तमांसि, भास्वन्मृतिश्र, भास्वतः, सूर्यस्य, मूर्तिः, ( सूर्यमूर्ति-सकासे अन्धकाराः नसम्भाव्यंते, अतः-विरोधः ) सन्निहिताः, सङ्गताः, बालाः, केशाः, श्रान्धकारा तमांसि, इव यस्याः सा, भास्वन्मृतिः, भास्वती, दीप्य-माना, मुर्तिर्यस्यास्तथोक्का, इतिपरिहारः । पुगडरीकमुखी, पुगडरीकः, तदाख्य-दिगाज:, सिहो वा, तस्येव, मुखं, यस्या:, हरिणलोचना च, हरिण इव, मृग-इव, लोचने, वत्रे यस्याः, तथोक्ना, ( या च व्याघ्रमुखी सा हरिएा लोचनाक्यं, इति विरोधः ) पुरुडरीकं, श्वेतपद्मं तद्वद्मुखंयस्याः, तथाभूता, हरिरालोचनाच, ( याहि कमलमुखी सातुहरिएा लोचनाभिवतुं शक्या एवेतिपरिहार: ) बालात-पेति--बालातपस्य, सूर्यस्य, प्रभां, धरतीति, तथोक्ना, कुमदहासिनी च, कुमु-दवत् हासोविद्यतेयस्याः, तथाभृता, ( यत्र हि वालातपः, तत्र ऋमुद हसनं, नैवसंभवति तस्य रात्रों विकसन शीलत्वात् त्र्यतः विरोधः ) बालातपः नव-सूर्यालोकः, (ईषद्रक्रमित्यर्थः) तस्यप्रमेव, प्रमा, कान्तिः, यस्य तथाभूतः, श्रथरः, श्रोष्टः, यस्याः, तथाभूता, इति परिहारः। कलहंसेति-कलः, मधुरः, हंसस्य, स्वनः, शब्दः, यस्याः, तथाभूता, सनुन्नतपयोधरा च, समुन्नताः, समुजदा:, पयोधरा:, मेधा:, यस्यां तथोक्का ( प्रावृद्धित्यर्थ: ) ( निह प्रावृट् काले हंसानां स्वनःश्रूयते, यतः ते मानसं प्रयान्तितत्समये, श्रात-विरोधः ) कतः, मधुरः, इंसस्येव, स्वनो यस्यास्तथोक्का, समुन्नताः, प्रवृद्धाः, पयोधराः, स्तनाः, यस्यास्तथोक्का, इतिपरिहारः । कमलेति - कमलं, पद्मं, तद् कोमलौ, करौ हस्तौ, यस्याः, तथोक्का, हिमगिरेः, हिमालयस्य, शिलावत्, पृथुः,

गिरिशिलापृथुनितम्बा च, करभोरुर्विलम्बितगमना च, श्रमुक्तकुमा-रभावा स्त्रिग्धतारका च, इति । सा त्ववादीत्-श्रार्थ, श्रोष्यिसकालेन । भूयसो दिवासानत्र स्थातुमभिलपित नौ हृद्यम् । श्रल्पीयांश्चायमध्वा । परिचय एव प्रकटीकरिष्यित । श्रार्थेण न विस्मरणीयोऽयमनुषङ्ग दृष्टोजनः, इत्यभिधाय तृष्णीमभूत् । दृधीचस्तु नवाम्भोभारगम्भीराम्भो

महान् , नितम्बः, कटकं, यस्याः, तथोक्ना, ( याहि कोमलकरा साक्यंहिमशिला पृथुनितम्बा तस्याश्वकाठिन्यत्वात् विरोधः । सादृश्यात् , यथाहिमगिरेः शिला प्रवृद्धाशुभाचभवति तथैवास्याः नितम्बमपिभाति, इतिपरिहारः। करभोरुः, करभस्य, उष्ट्रस्य, उरु इव उरु:-यस्याः तथाभूता, विलम्बितं, श्रातिमंदं, गमनं, यस्याः, तथोक्का, ( याउष्ट्रवद्गच्छति साकथंवित्तम्बितगमना इतिविरोधः) करभः, करप्रान्तभागः तद्वत् , उरुः, जङ्घायस्याः सा, ( त्र्यतिकोमल जङ्घा त्रातएव विलम्बित गमना इति परिहारः । त्रामुक्तकुमारभावा, नमुक्कः, नत्यकः, कुमार भावः, वाल्यं ( शेशविमत्यर्थः ) स्त्रिग्धतारका, स्निग्धा, स्नेह प्रका-शिका, (प्रणयप्रकाशिनीत्यर्थः) तारका, श्रद्धणः कनीनिका, यस्यास्तथोक्का ( यथा वात्तभावः नत्यकः सानहिजानातिप्रेमबंधनं, इतिविरोधः। कुमारे, कार्तिकेये, भावः, भिक्कर्यस्याः तथोक्का, इति परिहारः । स्निग्धः, प्रेमपात्रं, तारकः, तन्नाम देत्यः, ( कुमार भक्तायाः कुमार शत्रुंप्रति स्नेहोविरूदः, इति पूर्वार्थेपरिहार: ) इति, एवं, सातु, त्र्यवादीत् , त्र्यकथयत् । त्र्यार्थ ? कालेन, समयेन, श्रोष्यति, ( श्रस्याः वृत्तमितियावत् ) भूयसः, बहून्, दिवसान् , श्रत्र स्थातुं, नौ, त्रावयोः, हृदयं, ग्राभिलषति, इच्छति । त्रल्पोयान् , श्रत्यल्पः, श्रम्बा, मार्गः, परिचयः, संस्तवः, प्रकटीकरिष्यति, प्रकाशियपित । श्रनुषङ्ग दष्टः, श्रानुषङ्गेण, कार्यान्तर संलग्ने, दष्टः, श्रावलोकितः, श्रायंजनः ( सरस्वती-रूप: ) श्रार्थेगा, भवता, निवस्मरग्रीयः, स्मृतिपथंनेयः, रावेतिभावः, इत्य-भिधाय, इत्युक्ता, तूष्णीमभूत्, मीनं दधार । नवामभोभारेति--नवानां,

धरध्वानिभया भारत्या नर्त्तयन्वनलताभवनभाजो भुजगभुजः सुधी-रमुवाच त्र्रार्यं, करिष्यित प्रसादमार्याराध्यमाना । पश्यामस्तावत्ता-तम् । उत्तिष्ठ, व्रजामः, इति । तथेति च तेनाभ्यनुज्ञातः शनकैरुत्थाय कृतनमस्कृतिकृच्चचाल । तुरगारूढं च तम् प्रयान्तं सरस्वती सुचि-रमुत्तम्भितपद्मगा निश्चलतारकेगा लिखितेनेवचज्जुषा व्यलोकयत् । उत्तीर्य शोग्णमचिरंगोवकालेन द्धोचः पितुराश्रमपदं जगाम । गते च तस्मिन्सा तामेविदशामालोकयन्तीसुचिरमतिष्ठत् । कृच्छ्रादिव च संजहार दशम् श्रथ मुहूर्तमिवस्थित्वा स्मृत्वा च तां तस्य रूपसंपदं पुनः

नृतनानां, ( सद्यसिवतानाभित्यर्थः ) श्रम्भसां, जलानां, भारेण, गम्भीरोयोऽ म्मोधरध्यानः, पयोधरनादः, तन्निभया, तत्सदशया, भारत्या, वाएया, नर्तेयन् , वनलता:, वक्कर्यः, एव, भवनानि, सद्मानि, भजन्ते, त्राश्रयन्ते, तथोक्कान् ( भुजगान् , सपोन् , भुजते इति भुजगभुजः ) तान् , मयूरान् । तैरिवयथा-स्यात्तथा, मुर्वारं, धेर्यावष्टम्भपूर्वकं, उवाच, त्र्यगादीत् । त्रार्यः ! त्र्यार्या, श्रेष्ठा, ( एषा, इतिभावः ) त्र्याराध्यमाना, सेव्यमाना, ( सेवितेत्यर्थः ) प्रसादं, त्र्यनु ग्रहं, करिष्यति । पश्यामस्तावत्तात, पितरम् । उत्तिप्ठं, व्रजामः, गच्छामः । तथा, तेनप्रकारेण, तेनाभ्यनुज्ञातः, श्रनुमोदितः, शनकः, शनैः, उत्थाय, कृत-नमस्कृतिः, विहितनमस्कारः, उचचाल, प्रतस्थे । तुरगारूढं, श्रश्वारूढंचतं, प्रयान्तं, गच्छंतं, उत्तम्भितेन, निश्वलेन, पद्मारा, निश्वलतारकेरा, स्थिरकिनीनिकया, च, लिखितेनेव, चित्रितेनेव, चत्तुषा, नेत्रेरा, सुचिरं, त्रातिसमयं, व्यलोकयत् , ददर्श । शोरामुत्तीर्य, शोरामदावतररां विधाय, त्र्याचरेर्णव, सत्वरमेव, कालेन, समयेन, दधीचः, पितुराश्रमपदं, पितुः पाद-मूलं, जगाम, गतः । गते च तस्मिन् , ( दधीचगमनानन्तरमित्यर्थः ) सा-तामेर्वादेशं, तमेवदिग्भागं, त्रालोकयन्ती, पश्यन्ती, सुचिरं, बहुकालं, त्राति-ष्ठत्, स्थितवती । कुछूत् , काठिन्येन, च, दशं, दृष्टिम् , संजहार, न्यवर्तयत् ।

पुनर्न्थस्मयतास्याः हृद्यम् । भूयोऽपि चत्तुराचकाङ्च तदर्शनम् । स्रव-शेव केनाप्यनीयत तामेव दिशं दृष्टिः । स्रप्रहितमपिमनस्तेनेव सार्थम-गात् । स्रजायत च नव पञ्चव इव बालवनलतायाः कुतोऽप्यस्या स्रानु-रागश्चेतिस । सालसेव शून्येव सनिद्रेव दिवसमनयत् ।

त्रस्तमुपयाति च प्रत्यक्पर्यम्तमण्डले लाङ्गलिकास्तवकताश्र-त्विषि कमलिनीकामुके कठोरसारसशिरः शोगाशोचिषि सावित्रे त्रयीम-

य्यय, य्यस्मादनतरं, मुहृतिमिव स्थत्या, यल्पकालंस्थित्वा, तां, तस्य (दथी-चस्पेतिपावत्) रूपसंपदं, रूपनिविं (लावएयभित्यर्थः) स्मृत्वा, च, स्मरणं विधाय, पुनः पुनः, वारंवारं, यस्याहदयं, चितं, व्यस्मयत, विस्मयमगच्छत् भूपोऽपि, पुनरिप, चतुः, नेत्रं, तद्रशंनं, याचकाङ् ज्, ऐच्छत् । अवशिति—्यवशेव, परार्थानेव, केनापि, केनिवदिप, तामविदशं, दिग्मागं, दृष्टिः, य्यनीयत, नीयते, त्राप्रहितेति—य्यप्रहितमिप, य्यप्रेरितमिप (य्यनियुक्तमपीत्यर्थः) मनः, चितं, तेनेवसार्थं, (द्यीचेनसहेत्यर्थः) य्यगात्, य्रगमत् । वाल वनलतायाः, वनवद्वर्याः, कृतोऽपि, नवपद्वत्व इव, नृतनपत्र इव, य्यस्याः, (सरस्वया इतियावत्) चेतसि, मनिस, यनुरागः, स्नेहः, य्यनायत, उत्पन्नः, ग्रह्वेव, रिक्तेव, साल्वेव, यालस्ययुक्तेव, सनिद्रेव, निदितेव, दिवसं, दिनं, य्यनयत्, य्रत्यवाहयत् ।

यस्तमुपयाति, यस्तंगच्छिति, प्रत्यक् पर्यस्तमंडले, प्रतीच्यां, पिधमायां-दिशि, पर्यस्तं, पिततं, मंडलं, यस्य तथाभृते । लाङ्गलिका, य्रौपधिवशेषः, तस्याः, यत् , स्तवकं, गुच्छं, तद्वत् , ताम्नाः, रक्तवर्णाः, त्विषः, प्रभाः, यस्य तथाभृते । कमिलनीकामुके, (विकाशशीलेत्यर्थः ) कठोरेति—कठोरः, कठिनः, (वृद्धत्वमुपगत इस्यर्थः ) यः सारसः, पित्तविशेषः, तस्यशिरइव, शोणा, रक्तवर्णा, शोचि, कान्तिः, यस्य, एवंभूते, सावित्रे, सवितुरिदं सावित्रं, तिस्मन् (सर्ये ) त्रशीमये, (ऋग्यजः साम्रोत्नित्यं त्रवी ) तदात्मके, ते निसं, येतेजसि, तरुगतर तमालश्यामले च मिलनयितव्योमव्योमव्यापिनि ति-मिरसंचये, संचरितसद्धसुन्दरी नृपुररवानुसारिगि च मन्दंमन्दंमन्दा-किनीहंसइव समुत्सपित शशिनि गगनतलम्, कृतसंध्याप्रणामानिशा-मुख एव निपत्य विमुक्ताङ्गी पल्लवशयने, तस्थो । सावित्रयपि कृत्वा यथाकियमाणां मायंतनं क्रियाकलापमुचिते शयनकाले किसलयशयन-मभजत । जातिनिद्रा च सुष्वाप ।

इतरा तु मुहुर्मुहुरङ्गवलनेविं जुलित किसलयशयनतला निमीलित-

(प्रभायुक्ते इत्यर्धः) तरूगोति—तरुगातरः, नृतनः, तमालः, तदारुयवृद्धः, तद्वतः, रयामलः, ईपन्नालवर्णः, तिस्मन्, व्योम, श्राकाशं, मिलनयित, मिलनवित, स्थामलः, ईपन्नालवर्णः, तिस्मन्, व्योम, श्राकाशं, मिलनयित, मिलनवित, व्योमव्यापिति, श्राकाशमाच्छादिनि, तिमिरसंचयं, श्रम्थकार पटलं स्रिक्चरिति—सम्भरन्तीनां, इतस्ततः गच्छन्तीनां, सिद्धसुन्दरोगां, सिद्धसुन्दरोगां, सिद्धसुन्दरोगां, सिद्धसुन्दरोगां, सिद्धसुन्दरोगां, व्याद्धाराव्यत्, श्रनुसरित, श्रमुगच्छिति, मंदं मंदं, शनेः शनेः, मन्दाकिनी हंस इव, गंगा हंस इव, समुत्सपिति, समुद्भच्छित, गगनतलं, श्राकाशोः, शिशित्, चन्द्रे । कृतेति—कृतः, संध्यायां, संध्यायं वा, प्रगामः नमस्कारः, यथा तथोक्षा, (उपासितसंध्येतिभावः) निशामुखमेव, प्रदोषसमय एव, (निहं शयन कालेइत्यर्थः,) निपत्य (नच यथाशयनिमितिभावः) विमुक्ताङ्की, निहितशरीरा, (निःसहाया इतियावत, व्यउदत्विमुक्काङ्कीशच्येन ) पक्षवशयने, किसलयशयने, तस्थो, स्थितिचकार । सावित्यपि, यथाकियमागां येनकेन प्रकारेगा विहितं, सायंतनं, संध्यादिकमे, यया एवंभृता, उचिते, युक्के, शयनकाले, समये, किसलय शयनं, पत्रशस्यां, श्रमजत, प्राप, जातिनदा च, प्राप्तिद्वा च, सुप्वाप, शयनमकरोत् ।

इतरातु, ( सरस्वतीत्यर्थः ) मुहुर्मुहुः, बारं बारं, अङ्गवलनः, अङ्गचा-लनेः, ( इतस्ततः, अङ्गप्रचेपैरित्यर्थः ) विलुलितेति— विलुलितं, अवगाहितं, किसलयशयनतलं, पक्षवशय्या, ययाः, तथाभृता, निमीलित लोचनापि, निमी लोचनापि नाभजत निद्राम् । श्रचिन्तयच्च—'मर्त्यलोकः – खलु सर्व-लोकानामुपरि, यिन्मन्नेवं विधानि संभवन्ति त्रिभुवनभूपणानि सकल-गुण्यामगुरूणि रत्नानि। तथाहि । तस्यमुख लावण्यविन्दुरिन्दुः । तस्य च चत्तुषो विचेपा विकचकुमुद्कुवलयकमलाकराः । तस्य चाधरमणे-दीधितयोविकसितबन्ध्कवनराजयः । तस्य चाङ्गस्यपरभागकरण्म-नङ्गः । श्राः! पुण्यभाञ्जि नानि चत्त्तंषि चेतांसि योवनानि वा स्रोणानि, येषाममौ विषयोद्शीनस्य । च्रगं नु द्शीयना च तमन्यजनमजनिकृते

लिते, संकृत्विते, लःचने, नेत्रे, यया, तशाभुतापि, निद्रां, नाभजत, न, प्राप Ⅰ श्रचिन्तयच, चिन्तयामास, च, मर्त्यलोकः, भलोकः, सर्वलोकानां, खर्गपाता-लादीनां, उपरि, श्रेष्ठः । यस्मिन् ( मर्त्यलंकि, इतियावन् ) त्रिभुवनभूषणानि, ( भृ:-भुव: स्व:, त्र्रालंकरणानि. सकल श्राम गृह्णा, सकला:, गुणा:, दाच्चि-ग्यादयः, तेषां प्रामः, समूद्रः, तेनगुरुणि, महान्ति, एवंविधानि, एतादशानि, रत्नानि, सम्भवन्ति, उत्पद्यन्ते । नस्य ( दधचीस्त्रेत्वर्यः ) मुखस्य, वदनस्य, यत् , लावग्यं, चारुत्वं, ( संंन्दर्यमितियावत् ) तस्य, बिन्दुः, कराः, ( श्रल्प मात्रलावएयमित्यर्थः ) इन्दुः, चन्द्रः, । तस्य, चज्जुवोः, नयनयोः, विद्धेषाः, निपाताः, ते, एव, विकचानां, विकसितानां, कुमुद्रानां, कैंरवाणां, कुवलयानां, नीलोतपलानां, कमलानां, पद्मानां, च, त्राकराः, निचयाः । त्राधरमणेः, त्राध-रोष्टस्य, दीधितयः, किरणाः, ( एवेतिशेषः ) विकसितानां, प्रफुल्लितानां, बन्धू-कानां, पादपविशेषाराां, यत् वनं, काननं, तस्य रोजयः, पंक्रयः । तस्य, च, श्रङ्गस्य, शरीस्य, परभाग करणं, (श्रन्यावयविमत्यर्थः) श्रनङ्गः, कामः । ( श्रस्य, दर्शाचस्यकाम: द्वितीयंशरीरमितिभाव: ) श्रा:, इतिहर्षविषादयो: । पुरायभाञ्जि, पुरायानिभजनते इति तानि, स्त्रीणानि, स्त्रीणां, नारीणां, इमानि ( तत्सम्बन्धीनि-इत्यर्थः ) श्रथवा, स्त्रीणां समृहाः, स्त्रैणानि, नारिजातयः । येषां, ( चत्त्ररादीनामितिभावः ) असौ ( पूर्विनिर्दिशेयुवा ) दर्शनस्य, अवलोक

नेव मे फिलतमधर्मेगा। का प्रतिपित्तिरिदानीम्' इति चिन्तयन्त्येव कथं कथमण्युपजातिनद्रान्तग्मशेत। सुप्ता च तं दीर्घलोचनं ददर्श। स्व-प्रासादितद्वितीयदर्शना चाकर्णाकृष्टकार्मुकेगा मनिस निर्दयमताड्यत मकरकेतुना। प्रतिबुद्धाया मदनशरताड़ितायाश्च तस्या वार्तामिवोपल-ब्धुमरितराजगाम। तथा हि। ततः प्रभृति कुसुमधूलिधविताभिवेनल-ताभिरताड़िनाऽपि वेदनामधत्त। मन्दमन्दमारुनविधुतैः कुसुमरजोभिः

नस्य, वित्रयः, गांचरः, ( दर्शनपथि गत इत्यर्थः ) ज्ञणां, ज्ञ्रणमात्रं ( निमेष-मात्रमितियावत् ) नु, ( इतिवितर्के ) दर्शयता, त्र्यवलोकयन्त्या, च, त्र्यन्येति— अन्यजन्मनि, पूर्वजन्मनि, यः, जनिः, जन्म, (निन्दित कर्मणामित्यर्थः ) तत्कृतेनेव, तदुद्भवंनेव, मे, मम, श्रधर्मेण, पापेन, फलितं, ( ५वंजन्मकृतक-र्मणा ईटशीविकृतिर्जाता, इतिभावः ) इदानीं, साम्प्रतं, का प्रतिपत्तिः, इति कर्तव्यता, ( किमनुष्ठेयमितिभावः ) इति चिन्तयन्त्येव, विचार्यमाणा एव, कथं कथमपि, केनापिप्रकारेगा, ( अतिकृछादितिभावः ) उपजातिनद्रा, प्राप्तनिद्रा, चर्णं, चरामात्रं, ( नत्वधिकामत्यर्थः ) त्र्यशेत, सुप्ता ( च ) तं, दीर्घलोचनं ( दधीचमितियावत् ) ददर्श, श्रपश्यत् । स्वप्नेति—स्वप्ने, निद्रावस्थायां, त्रासादितं, प्राप्तं, द्वितीयं, त्रापरं, दर्शनं, (तस्येत्यर्थः ) यया एवंभूता । त्राकर्णाकृष्टं, कर्णपर्यन्तं, त्राकृष्टं, कर्षितं, कार्मुकं, धनुः, येन, एवं भूतेन, मनिस, हृदि, निर्देयं, दयारिहतं यथास्यात्तथा, ( निष्ठुरभावेनेत्यर्थः ) मकर केतुना, कामेन, श्रताङ्यत, ताड़िता । प्रतिबुद्धायाः, जागरितायाः, मदनशर ताड़ितायाः, कामबार्णपीड़ितायाः, तस्याः, ( सरस्वत्याः, इतिभावः ) वार्ती, वृनं, उपलब्धुं, ज्ञातुं, त्रारतिः, वस्तु वैराग्य कामदशा । त्र्याजगाम, प्राप्तः । ततः प्रमृति, तदारभ्य । **कुसुमेति**—कुसुमानां, धृलिभिः, परागैः, धवलिता. शुभ्रतांनीता, ताभिः, वनलताभिः, श्रताङ्तिाऽपि, श्रपीङ्तिाऽपि, वेदनां, ब्यथां, त्र्यधत्त, त्र्यनुबभृव । ( लता स्पर्शे सुखमनुभव एव जनानां परं ऋस्या-

श्रदृषित लोचना श्रपि श्रश्रुजलं मुमोच । हंसपचनालवृन्तचय विधुतैः

शोगाशीकरैः श्रसिकाऽपि त्राद्रेतामगात् । व्रङ्खन्कादम्बमिथुनाभि-रनृढ़ाऽप्यघूर्णत वनकमलिनीक्ल्लोलट्रोलाभिः । विघटमानचक्रवाक युगलविस्रष्टेः ऋस्ष्रष्टाऽपि श्यामनाम् ऋानतान विरह्निश्वासधूमैः । पुष्पधूलीधूसहैरदृष्टाऽपि व्यचेष्टत मधुकर कुलैः। श्रथ गगारात्रापगमे निवर्तमानस्तंनेव वर्त्मना नं देशमागत्य तथैव निवारित परिजनश्छ-स्तुविपरीतमेवत्यर्थः ) मन्दं मन्दं, शनैः शनैः, यथास्यात्तवा, मारूत विधुतैः, वायु प्रकम्पनैः, वुसुमरजोभिः, पुष्पधृलिभिः, श्रदूषित लोचना, श्रकलुषितनेत्रा त्र्यपि, ( त्र्यपीति संभावनायाम् ) त्र्यप्रजलं, मुमोच, त्यत्याज । हंसेति— हंसानां, पद्माएव तालवृन्तचयाः, ब्यजन समृहाः, तैः, विश्वताः, विन्नाः, तैः, शोगाशांकरैं:, शंगास्य, तन्नाम नदस्य, शीकराः, जलकगाः, तैः, ऋसिक्काऽपि, य्रोतंचिताऽपि, यार्रतां, जाड्यं, यगात् । प्रे**ङ्कदिति**—प्रेङ्कान्ति, सञ्चरन्ति, कादम्बानां, कलहंसानां, मिथुनानि, युग्मानि, यामु, तथोक्काभिः, वन कर्मालनी कल्लोल दोलाभिः, वनेषु, याः, कर्मालन्यः, पश्चिन्यः, ताः, एव, कल्लोलदोलाः, लहरि रूपा:, दोलन यंत्रासि, ताभि:, अन्टाऽपि, अनुपर्वशिताऽपि, अधूर्णेत, प्रकम्पत । निघटमानेति--विघटमानैः, विरहंप्राप्यमार्गः, चक्रवाकानां, युगर्लः, मिथुनैः, विग्छाः, त्यक्ताः, तैः, विरद्दनिश्वासधूमैः, विरहे, वियोगे, ये, निश्वासाः, ते धूमाइव, तैः, ऋरपृष्टाऽपि, ऋरपरिताऽपि, स्यामतां, कालुप्यं, ( श्रंङ्गाररसमलिनताज्ञापकमितिभावः ) त्र्याततान, विस्तारितम् । पुष्पेति—पुष्पाणांधूलिभिः, रजैः, धूसराः, कपिशाः, तैः, मधुकरवृत्तैः, षट्वदसम्हैं:, ऋद्ष्यऽपि, ऋदंशिताऽपि, ब्यचेष्टत ( तेपारवै:पींड़िताभूमी विलु लित वतीत्यर्थः ) **त्र्राथति—**गरारात्रापगमे, वव्ह्योनिशाः, गरारात्रं, तस्यापगमे, त्रातिकान्ते, तेनैव वरर्मना, मार्गेण, निवर्तमानः, प्रतिनिवृत्तः, तं देशं, ( शोराप्रप्रान्तिमितियावत् ) त्रागत्य, तथैंव ( पूर्विनिर्दिष्टमिव ) निवारितः,

त्रधारद्वितीयो विकुत्तिर्डुहोके। सरस्वती तु तं दृरादेव संमुखमाग-च्छन्तं प्रीत्या सम्यक्समुत्थाय वनमृगीवोद्प्रीवा विलोकयन्ती मार्गपरि आन्तमस्त्रपयदिवधवितद्शदिशा हशा। कृतासनपरियहं तु तं प्रीत्या सावित्री, पप्रच्छ—आर्य, कचित्कुशली कुमारः' इति। सोऽब्रवीत्— आयुप्मति, कुशली। स्मरति च भवत्योः। केवलममीपुदिवसंपु तनी-

परिजनः, सहचरजनः, येन, तथाभृतः, छत्रधार द्वितीयः, ( छत्रधारेशासहे-त्यर्थः ) विकृत्तिः, तन्नामद्धीचसहचरः हुर्द्वेकं, प्राप्तः, ( स्रागत इतियावत् ) सरस्वती तु , तंदूरादेव, दूरतः, एव, सम्मुखं त्रागच्छंतं, त्रायान्तं, श्रीत्या, प्रेम्णा, सम्प्रक्, यथास्यात्त्रथा, उत्थाय, वनमृगीव, हरिगीव, उदुर्थवा, ऊर्ध्व-नीता श्रीवा ययातथाभृता, विलोकयन्ती, पश्यन्ती, मार्गपरिश्रान्तं, क्किनं, धव-लिता, शुभ्रतांनीता, दशदिशः यया तथाभृतया, दशा, दण्ट्या, खन्नपयत् , इव, ( स्नापितवतोत्यर्थः ) ऋतेति—ऋतासनपरिश्रहं तु, ( तिष्टन्तमितियावत् ) नं, ( विकुत्तिर्सं ) प्रांत्या, प्रेम्सा, पप्रच्छ, अपृच्छत् । आर्यकुरालंकुमारस्य । इति । केवलं, अर्मापुदिवसेषु, दितेषु, तर्नायसीं, ( अतिकृशमितियावत् ) तनु शरीरं, विभर्ति, धारयति । अविज्ञायमानां, अज्ञातां, आनेमित्तां, कारणरहितां, रहत्यतां, अभावं, इत्र, आधक्तं, अनुभवति । ( सर्वदाभवत्योः स्मरणमेवकरो-तीत्यर्थः ) त्र्यन्वक्, मत्पश्चात् , ( सत्वरमेवेत्वर्थः ) दः, युष्माकं, वार्तां, वृत्तं, विज्ञातुं, ज्ञानाय, मालर्तातिनाम्ना, मालतीनामधेया, वाि्गनी, दूर्ती, त्र्यार्गाम-ष्यति । सा, मालता, कुमारस्य, दर्धाचस्य, उद्यृवसिनं, जीवनम्, ( प्राग्रासद्द-शीलर्थः ) तच्छ्रत्वा, तदाकग्र्यं, सावित्री, पुनः, स्राभापत, उवाच । स्रतु, ( खिल्विति निश्वयार्थवोधकमव्ययम् ) कुमारः, त्र्वतिमहानुभावः, त्र्रात्यौदार्य-शोलः, यत् , त्र्यविज्ञायमाने, त्र्यविज्ञातकुलर्शाले, च्रराष्ट्रेऽपि जने, परिचितिं, परिचयं, अनुबधाति, दधाति । ( महानुभावा हि स्वपरभेदरहिताः विश्वभेवस्वं मन्यन्त-इतिभावः) तस्य हि ( हीतिनिश्वयार्थवोधकमन्ययम् ) यदच्छया, स्वे-

यसीमिव तनुं विभिर्त । अविज्ञायमानां चानिमित्तां शून्यतामिवाधत्ते । अपिच । अन्वकसमागमिप्यति मालनी।तनाम्ना वाणिनी वर्ता वो विज्ञातुम् । उच्छ्वसिनं सा कुमारस्य' इति । तच्छ्रुत्वा पुनरिप सावित्री समभाषत—'अतिमहाऽनुभावः ख शुकुमारः यदेवमविज्ञायमानेच्रण्दष्टेऽपि जने परिचितिमनुबन्नाति । तस्याहि गच्छतो यद्दच्छया कथमप्यंशुकमिव मार्गलतासु मानसमस्मासु सुदूर्तमासकतमासीत् । अमूल्यं हि
सोजन्यमाभिजात्येन वः स्वामिसृनोः । अलसः खलुलोको यदेवं सुलभसोहार्दानि येनकेनचित्र कीण्याति महनां मनांसि । सोऽयमोदार्यातिशयः कोऽपिमहात्मनामितरजनदुर्लभो येनोपकरण्यी कुर्वन्तित्रिभुवनम्'

च्छया, गच्छतः गतवतः, कथं कथमि, केनापि, प्रकारेण, मार्गलतासु, मार्गनिक्षिपु, (लप्नमितिरोपः, ) अंशुकिमव, वस्त्रमिव, अस्मासु, मानसं, वित्तं, मुहुर्तं, घटिकाद्वयं, आसकं, अनुरक्तं, आसीत्। (मार्गचलनशीलस्य अनवधानतया लतासु वश्वलमंसंभाव्यते तथेव मार्गगतः, वह्नरीक्ष्यसु अस्मासु हृदयवस्त्रमासक्रमभृदित्यर्थः) वः, युप्माकं, स्वामि स्नोः, प्रभु कुमारस्य, सद्वंश प्रस्तत्वेन, सीजन्यं, हृदयप्राहिता, अमृल्यंहि, (निहकेवलं वाचिकं आन्तरभावेनापिसीहाईता विद्यतेतस्यमनसीत्यर्थः) अलेसेति अलसः, चेष्टारहितः, (मूर्खोवा) लोकः, संसारः। सुलमेति सुलभानि, सुप्राप्याणि, सौहार्दानि, मित्रताः, येषां, तानि, महतां, सज्जनानां, मनांसि, चित्तानि, येन, केनचित् (साधारणेन वस्तुनेत्यर्थः) नकीणाति, नकेतंप्रभवति। सोऽयं, औदार्यातिशयः, अतिशयेन औदार्थम्। महात्मनां, विदुषां, कोऽपि, कश्चिदिप्, (अनिर्वचनीयइतियावत्) इतर जनदुर्लभः, चुद्रजनदुर्लभ्यः, येन, त्रिभुवनं उपकरणीकुर्वन्ति, अलंकुर्वन्ति (वशीकुर्वन्तीतियावत्) विकुत्तः, उचावचैः, नानाविधैः, आलापैः, वचनैः, सुचिरं, चिरकालं, स्थित्वा, यथाभिलिपतं, इिक्तं, प्रदेशं, स्थानं, अयासीत्, जगाम। (सुचिरं वार्तालापंविधायग-

इति । विकुत्तिरुचावचैरालापैः सुचिरमिवस्थित्वा, यथाभिलषितं देशम-यासीत् ।

श्रपरेद्युक्तदिते भगवित्युमणावृद्धामयुतावभिद्रुततारके तिरस्क-ततमिस तामरसव्यसिनित सहस्ररश्मो शोगामुत्तीर्यायान्ती, तरलदंह-प्रभावितानच्छलेनात्यच्छं सकलं शोगासिललिमवानयन्ती. स्फुटिता-तिमुक्तककुसुमस्तवक समित्विप सटाले महित स्गपताविव गोरी तुर-ङ्गमेस्थिता, सलीलमुरोवधारोपितस्य तिर्यगुत्कर्णातुरगाकर्ण्यमाननूपु-तवानित्यर्थः।

त्रपरेवरिखतः मालतीयमदृश्यतं, इत्यनेनान्वयः । उदिते, उद्यंप्राप्ते, भगवति, कल्याण करे, द्यमणी, आकाशरत्ने (सूर्येइल्यर्धः) उद्दामयुती, उद्दामा, उत्कटा, युतिः, कान्तिः, यस्य तम्मिन् , श्रमिद्रताः, ताडिताः, (तिरे-हिता इतियावत् ) तारकाः, नक्त्राांगा, थेन तथाभुते, तिरस्कृततमसि, विमानिता न्धकारे, (द्रीकृतेइत्यर्थः) तामरसन्यासन्यसनिनि, तामरसस्य, रक्षोतप-लरय, ''यत्ं व्यासः विकासः, तत्र व्यसनिनि, त्रासक्ते, सहस्वरश्मीं, सूर्ये, शोर्गं, पृवोंक्रनदं, उत्तीर्य, अवतरर्गं विधाय, आयोग्तीं, आगच्छन्तीं। तर-लेति—तरलाः, चञ्चलाः, याः, देहप्रभाः, तासां, वितानः, विस्तारः, स, एव, छलं, तस्य वा, तेन, अत्यच्छं, अतिशुद्धं, ( अमलिमितियावत् ) सकलं, सम्पूर्णं, शोणसिललं, जलं, इब, श्रानयन्ती, सहचररूपेण त्राकर्षयन्ती। स्फुटितेति—स्फुटितः, विकाशंगतः, यः, अति मुक्तककुमुमस्तवकः, अति-मुक्तकः, माधवीलता, तस्या, पुष्पगुच्छः, तत्, समाः, सदशाः, त्विषः. कान्तयः, यस्य तथाभृते, सटाले । जटावति मृगपताविव, सिंह इव, गौरी, गौरवर्गा, ( पार्वतीच ) तुरङ्गमे, ऋश्वे, स्थिता, सत्तीलं, र्लालयासहितं, यथा-स्यात्तथा, उरोवधा, श्रश्वारूढस्य चरण स्थापनाय द्रव्य विशेषः ( रकेव इति प्रसिद्धः ) तत्र त्रारोपितस्य, स्थापितस्य, ( पाद युगलस्येतियावत् ) । तिर्च्य-

रपदुरिणतस्यातिबङ् नेन पिण्डालक्तकेन पल्लवितस्य कुंकुमिपञ्जरितपृ-ष्ठस्यचरणयुगलस्य प्रसरिद्धरितलोहिनैः प्रभाप्रवाहेरुभयतस्ताडनदो-हदलोभागतानि किसलयितातिरिक्तरक्ताशोकवानानीवाकर्षयन्ती, सक-लजीवलोक हृदयहठहरण्यायेषण्ययेवरशनया शिञ्जानज्ञघनस्थला, धौत-धवलनेत्रनिर्मितनिर्मोकलघुतरेणाप्रपदीनेनकंचुकेन तिरोहिनतनुलता,

गिति—तिर्यक्, वहं, यथास्यात्तथा, उत्कर्णन, ऊर्ध्वनीतेन कर्णेन, तुरगेण. श्रश्वेन, त्राकर्ण्यमानं, श्रृयमार्गं, (श्रृतिमधुरत्वादित्यर्थः ) नूपुरयोः, पाद-भूषणयोः, पटुः, स्पष्टं, रिणतं, शब्दं, यस्य, तथाविधस्य, त्रातिवहलेन, श्रिधि-केन पिगडालक्ककेन, लाज्ञारसेन, पत्नवितस्य, किसलय इवाचरतः । कुंकुमेति— कुंकुमेन, (तदाख्यरक्तद्रच्य विशेषेण), (कुंगू इत्याखोन) पिन्नरितं, ईवदक्रतां-नीतं, पृष्टं यस्य, तथाभूतस्य, चरणयुगलस्य, पादयुग्मस्य, प्रसरिद्धः, चलद्भिः, त्रतिलं।हितः, रक्तवर्णः, प्रभाप्रवाहैः, कान्तिप्रसरैः, । ताडनेति—ताइनं, प्रहारः एव, दोहदः, गर्भाभिलापः, तत्र, यः लोभः, इच्छा, तेन, श्रागतानि, किसल-यानि, पल्लवानि, अत एव, अतिरिक्षानि, विस्तानि, रक्षाशोकवनानि, काननानि तानि, त्राकर्षयन्ती, त्राकृष्यनयन्ती, इव । सकलेति-सकलानां, जीवलो-कानां, हृदयानि, मनांसि, तेषां, हठेन, सहसा, (श्रीद्वत्यपूर्णत्वमितियावत्) यत् , हरणं , स्ववशीकरणं , तस्य , घोषणा , वाद्यविशेषानुगता ( वचनानीत्यर्थः ) तयेव, रशनया, काञ्च्या, ( मेखलयेतिभावः ) शिजानं, रणत्, (सशब्दमिति-यावत् ) जवनस्थलं, यस्याः, तथाविधा । धौतेति —धौतं, प्रज्ञालितं, श्रतएव, धवलं नेत्रं, वसनविशेषः, तेन, निर्मितः, रचितः, निर्मोकः. सर्पकञ्चुकः, तद्दत्, ल उतरः, सूच्मः, तेन, श्राप्रपदीनेन, प्रपदं, पादाष्रं, प्रपदात्, श्रा, ( समन्ता-दित्यर्थः ) त्राप्रादं, पादाप्रपर्यन्तं, (पादाप्रमाच्छा।देतमित्यर्थः ) कञ्चुकेन, वारवार्णेन, तिरोहिता, त्राच्छादिता, तनुरेव, शरीरमेव, लता, बल्लरी, यया, तयाभूता । ञ्रातेति -- ञ्रातः, सूद्धमः, कञ्चकस्य, वर्मणः, (शरीराञ्जादनस्येति-

छातकञ्चुकान्तरदृश्यमानैराश्यानचन्द्नधवले खयवे: स्वन्छसिललाभ्य-न्तरिवभाव्यमानमृगालकागडेव स्रसी, कुसुम्भरागपाटलं पुलकबन्ध-चित्रंचगडातकमन्त: स्पुटं स्फटिकभूमिरिव रक्षनिधानमाद्धाना, हारेगामलकीफल निस्तुलमुकाफलेन स्पुरितस्थूलप्रह्गाशारा, शार-दीव श्वेतविरलजलधरपटलावृता द्यो:, कुचपूर्णकलशयोरुपरि, रत्नप्रा-लम्बमालिकामस्ग्यहरित किरगाविस्त्लियनीं वस्यापिपुग्यवतो हृद्य-

भावः ) श्रन्तरे, मध्ये, दश्यमानाः, दृष्टिंगताः । श्राह्यानेति--श्राश्यानानि, ईषत्-शुष्कार्णि, चन्दनानि, मलयजानि, तेः, धवलाः. शुभ्राः, तेः, श्रवयदैः, श्रद्धैः, ( शरीरभागैरित्यर्थः ) स्वच्छेति—स्वच्छानि, श्रमलानि, साललानि, जलानि, तेषां, त्रभयन्तरेषु, मध्यभागेषु, विभाव्यमान:, लच्यमारा:, मृरा।ल-कारडः, पद्मलता, यरयाः, यस्यां वा, सरसीव । कुसुम्भेति--वुरुम्भ-रागेण, कुसुम्भः, पुष्पविशेषः, तस्यरागेण, वर्णेन, पाटलं, ईपद्रक्लं, पुलक-वन्धेन, नानावर्ण निर्मितबिन्दुविन्यासेन, चित्रं, ( मनेक्सितियावत् ) चएडा-तकं, श्रद्धोरुकम्, ( उरोरधः पातिवस्त्रविशोषः ) श्रन्तः स्फुटं, ( श्रभ्यन्तरो ज्वलनमिति यावत् ) रत्ननिधानं, कोशं, त्रादधाना, धारयन्ती । हारेण, मुक्का फलस्रजा । **श्रामलकीति**—श्रामलकीफलोनि, ( श्रामलाइति प्रसिद्धं ) निस्तु-लानि, तुलारहितानि, ( उपमारहितानीत्यर्थः ) मुक्काफलानि, ( यत्र तादरीन-त्यर्थः ) । स्फुरितेति—स्फुरितैः, राजितैः, स्थृलैः, (मुस्पष्टैरितियावत् ) ब्रह-गर्णः, नत्त्वत्रमराडलैः, शारा, विचित्रा, शारदीव, शरत्समयमिव । श्वेतेति— श्वंतं:, शुभ्रे:, (जलापगमादितियावत्) विश्लेः, ऋत्यर्ल्पः, जलधराणां, मेघानां, पटलैंः, समृहैः, श्रावृता, श्रच्छादिता, दौः, श्रन्तरीच्नम् । कुचे।त— कुचैं, स्तनैं, पूर्णकलशाविव, कुम्भाविव, तयोरुपरि, रत्नप्रालम्ब मालिकां, रत्न- स्रजं । श्रारुगोति—श्रारुगोन, रक्तवगोन, हरितेन, श्यामलेन, किरगे,न, मयुदे-नन, ( मरकतमणीनामिति यावत् ) विसत्तयाः, पह्नवाः, सन्ति ऋस्यां, तादशी

प्रदेशवनमालिकामिव बद्धां धारयन्ती, प्रकोष्टनिवष्टस्यैकैकस्य हाटक-कटकस्य मरकतमकरवेदिकासनाथस्य हरितोक्कतदिगन्ताभिर्मयूख-सन्तितिभः स्थलकमिलनीभिरिव लच्मीशङ्कयानुगम्यमाना, बहलता-म्बूलकृष्णिकान्धकारितेनाधर संपुटेन मुखशशिपीतं ससन्ध्यारागं ति-मिरमिव वमन्तीं, विकच नयनकुवलय कुतृहलालीनयालिकुलसंहत्या

( सजातपत्रामित्यर्थः ) कस्यापिषुग्यवतः, पुग्यभाजः । हृद्य प्रवेशेति-हृद्ये, चिने, प्रोशः, तस्मैं, बनमालिका, पत्रपुष्पर्राचता माला, तामिव, ( पूर्णकल ते वनमःला प्रदानं लोकेप्रसिद्धम् ) वद्धां, प्रथितां, धारयन्ती, । ( कश्चित् पुग्यवान् जनः, श्रास्याः हृदयं प्रविशतीति मङ्गलाय पृर्णकुम्भस्थापन मि यर्थः ) प्रकोष्ठेति—प्रकोष्टः, मरिएवन्धपर्यन्तहस्तावयवः, तरिमन्, निविष्ठः, धृतः, तस्य, हाटककटकस्य, सुवर्णकङ्कणस्य, मरकतेति—मरक-तस्य, मरकतमर्णः, मकरवेदिका, मकराकृतिप्रन्थिः, तया सनाथः, युक्कः, तस्य, (तद्भ्षितस्येति यावत् ) **हरिती कृतेति**—हरिती कृताः, श्यामतांत्राप्ताः दिगन्ताः, दिग्मागाः, याभिः, तथाभूताभिः, मयूखसंतितिभिः, किरणसमृहैः, स्थल हमलिनीभिरिय, भूपद्मिनीभिरिय, ( पत्रपुष्यसहिताभिरित्यर्थः ) लक्त्मीः शङ्कया, लद्मिरियंकमलहस्ता (पद्मविलासिनीतिभावः) इति बोधेन, श्रानु-गम्यमाना, अनुश्चियमाणा, बहलेति—बहलेन, बारम्वारं ( चर्वितनेतियावत् ) ताम्बूलेन, या, कृष्णिका, कृष्णवर्ण रेखा, तथा, श्रम्धकारितः, सञ्जाततमः, र्तन, त्रधर संपुटेन, त्रधरोष्ठेन । मुखंति—मुखमेव, शशीः,चन्द्रः, तेन, पीतं, कृत पानं, यद् संध्या रागं सन्ध्यासमय लें।हित्यम् (तेन सहवर्तमानं) ( स्वभावा-रुणस्याधरस्य ताम्बूलयोगादुत्प्रेचितम् ) तिभिरं, ब्रन्धकारं, इव, वमन्ती, उद्गि रन्ती ( भुक्कोद्रीर्णभोजनं वमनं, तमित्यर्थः ) विकचेति—विकचे, विकस्वरे, नयने, नेत्रे, कुवलये, नोले.त्यले, इव, तयोः, कुत्हलात् , कांतुकात् , श्रालोना, सक्का, तथेव, श्रलि कुलमंहत्या, भ्रमरसंतत्या, नीलांशुक जालिकया, नीला, नीलांग्रुक जालिकयेवनिरुद्धार्थवद्ना, नीलीरागनिहित नीलिम्ना शिति-गलशितिना वामश्रवणाश्रयिणासादन्तपत्रेण कालमेघ पल्लवेनेव विद्यु-दिवद्योतमाना, वक्कलकत्तानुकारिणीभिस्तिस्भिर्मुकाभिः कल्पितंन वालिकयुगलेनाधोमुखेनालोकजलवर्षिणा सिक्चन्तीवातिकोमले मुज-लतं, दिन्निणकर्णावतंसितया केनकीगर्भपलाशक्षेखया रजनिकर जिद्वयेव लावण्यलोभेन लिद्यमानकपोलनला, तमालश्यामलेन मृग-मदामोदनिष्यन्दिना तिलकविन्दुना मुद्रतमिवमनोभवसर्वस्यं वदन-

र्नालवर्गा, या, ऋंशुकवालिका, वसनश्रन्थिका, तया, निरुद्धं, श्राच्छादितं, यार्द्धवदनं, मुखं, यया, तथाविधा । ( मार्गेचचुषि कीटादेर्पतनभयादित्यर्थः ) नीलीति--नीलीरागेण, ( नील' इतिप्रसिद्धः ) तस्य, रागेण, वर्णन, निहितः श्रपितः, नीलिमा, नीलन्वं, यत्र, तथाभृतेन । शितिगलेति शितिगलः, नीलकराठः, ( शङ्कर इत्यर्थः ) तद्भत् , शितिः, नीलं, तेन, वामश्रवरााश्रविसा, वामकर्णाश्रितेन, दन्तपत्रेण, कुन्दपुष्पाकारालङ्कारविशेषेण, कालनेघपस्नवेन, नीलनेघविस्तारेण, विद्युदिव, तिङदिव, द्योतमाना, दीप्यमाना । वकुलेति— वकुलफलानुकारिस्मीभिः, अनुकर्तृभिः, ( तद्वदाचरसर्शालेरित्यर्थः ) तिस्रभिः, त्रिभिः, मुक्ताभिः, मुक्ताफलैः, कल्पितेन, रचितेन, वालिकायुगलेन, बलयद्दयेन, श्रश्रोमुबेन, नताननेन । श्रालोकेति-शालोकः, उद्योतः, एव, जलं, पानीयं, तं वर्षतीति, तेन, श्रातिकोमले, भुजएव लते, ते, सिखन्तीव, सेचनकुर्वाणा, इत्यर्थः । दिन्तगोति—दिन्तगोकर्णे, श्रवतंतितया, श्रलंकृतया । केतकीति— केतक्यागर्भपलाशः, मध्यपत्रं, स, एव, लेखा, रेखा, तया, रजनीकर जिह्नये र, रजनीकरस्य, चन्द्रस्य, जिह्ना, रसना, तथेव, लावरायलोभेन, सान्दर्यलोभेन, लिश्रमानं, चुप्यमाणं, कपोलतलं, गगडस्थलं, यस्याः, तथाभूता । तमाल-श्यामलेन, तमालवत् श्यामलः, कृष्णवर्णः, तेन । मृगमदेति - मृगमदस्य, कस्तृरिकायाः, त्रामोदः, सीरभं, त, निष्यन्दतं, स्रवतीति तथा विधेन, विन्दुना

मुद्रहन्ती, ललाटलासकस्य सीमन्तचुम्बिनश्चटुलतिलकमग्रोरुद्ञ्चता चटुलेनांशुजालेन रक्तांशुकेनेवकृतशिरोवगुग्टना. पृष्ठप्रेङ्कृदनादर संयमन शिथिलजूटिकाबन्धा, नीलचामरावचृिलनीव चूडामग्रिमक-रिकासनाथा, मकरकेतुकेतुपताका, कुलदेवतेव, चन्द्रममः, पुनः संजी-वनौषधिरिव पुष्पधनुषः, वेलेवरागसागरस्य, ज्योत्स्नेव यौवन चन्द्रो-

कराकेन, मुद्रितं, चिन्हितं, इव, मनोभव सर्वस्वं, कामसर्वस्वधनं, वदनं, मुखं, ( मुखस्य सर्वोत्कृष्टेंन, कामोद्दीपकत्वादित्यर्थः ) उद्वहन्ती, धारयन्ती । लला— टेति—लल.टे. मस्तके, लासकः, नर्तकः, ( स्फुरन्नितियावत् ) तस्य, सीमन्त-चुम्बिनः, सीमन्तः, केशपाशमध्यवर्तिरेखा ( सीमन्तो केशवरो ) कौसीमान्तोऽ न्यः ) तं, चुम्बति, स्पृशति, तस्य, (सीमन्तस्पर्शिन इतियावत् ) चटुलः, चम्रतः, यः, तिलकमणिः, तिलकाकार पद्मरागमणिः, ( मस्तकभूषणिमत्यर्थः) तस्मादः, उदखता, उद्गच्छता, चरुलेन, चम्रलेन, (तरलेनेत्यर्थः ) ग्रंशुजालेन, किरणसमूद्देन, रक्तांशुकेनेव, रक्तवसनेनेव, कृतं, रचितं, शिरसः, श्रवगुग्टनं, त्रावरर्ण, यया, तथाभूता । पृष्टेति—पृष्ठे, पृष्ठदेशे, प्रेङ्कत्, लम्बमानः, त्र्यनादरसंयमनेन, हलावन्धनेन, शिथिलः, स्वलितः, यः, जूटिकावन्धः, केशजालः, यस्याः, तथाविधा । नीलेति—नीलं, नीलवर्णं, चामरमेव स्त्रव-चूलं, पताकाधोर्वार्तं वसनं, चिन्हं वा, त्रियतेऽस्याः, तथाभ्ता । चूड़ाम-**गाति** —चूड़ायां, मस्तके, या मिंग मकरिका, मकराकारमणि:, तया सनाथा, युक्का, ( सिहतेत्यर्थः ) श्रतएव मकरकेतोः, मदनस्य, केतुपताकेव, ध्वजकेतन-मिव, इ.लंदवतेव, इ.लस्य, वंशस्य, या, देवता, ऋधिष्ठातृदेवीव, चन्द्र-मसः, इन्दोः, पुष्पधनुषः, कामस्य, पुनः, सङ्गीवनं, हरक्रोधाग्नि जलितस्यपुन-र्जन्मप्राप्तिः, तस्यौषधिरिव, सर्जावनाख्यलतेव । रागेति—रागः, प्रेम, ( स्नेहातिराय इत्यर्थ: ) सैव सागरः, समुद्रः, तस्यदेलेव, तीरमिव, यद्वा, प्रवाहमित, ( यथैवसमुद:---त्रेलामितकम्यनप्रसरति, तयैव, सीन्दर्यातिशयाद्यना

दयस्य, मज्ञनदीव रतिरसामृतस्य, कुसुमोद्गतिरिव सुरततरोः, बालविद्येव वैदग्ध्यस्य, कौमुदीपकान्तेः, घृतिरिव धैर्यस्य, गुरुशालेव गौरवस्य, वीजभूमिरिव विनयस्य, गोष्ठीवगुगानाम्, मनस्वितेव महानुभा-वतायाः तृप्तिरिव तारुण्यस्य, कुवलयद्लदामदीर्घलोचनया पाटला-धरया कुन्दकुड्मलस्फुटदशनया शिरीपमाला कुसुमारभुजयुगलया दृष्टिर्नान्याषुर्व्वापुप्रसर्ति. श्रस्यामेवस्थितत्यर्थः ) ज्योतस्नेवेति-सामान प्रौंढावस्था, तदव, चन्द्रोदयः, तस्य ज्योतस्नेव, कान्तिरिव । ( यथा चन्द्रोदयेऽ पि यावन्नहि ज्योरत्न। विकसति, तावन्निकमपि विलसति, तथैवतां विना यौवन मुपमा न कुत्रापि शौभमाना दश्यते इतिभावः ) रतिरसामृतस्य, रत्यायद्रसं, तंदवामृतं, तस्य, महानदीव, महासारिदिव | सुरततरो:, सुरतं, स्त्री पुरुष संगमं, तदेव, तरु:, वृद्धः, तस्य, कुसुमोद्गिरिव, पुष्पोद्गम इव । वैदग्ध्यस्य चातुर्यस्य, बालविरोव, नवशिक्तितेव, (बालकाज्ञे पठिता मिर्वातेभावः) ( वाल्य संस्कार: निह त्यक्तुं शक्यते कदापि, तथेंबैतां, वैदम्ध्यमपि ) कान्ते:, प्रभाया:, कौमुदीव, चन्द्रिकेव । घैर्व्यस्य, धीरताया:, वृतिरिव, धारण कर्त्राव । गौरवस्य, उत्कर्षस्य, गुरुशालेव, गुरुगृहमिव, यहा, गुर्वा महती, शाला, गुरुशाला, सेव । विनयस्य, नम्रतायाः, बीजभूमिरिव, वपनच्चेत्रमिव । गुगानां. सौजन्यादिनां, गोष्ठीव, समाज इव । महानुभावतायाः, महद्गीर-वस्य, मनस्वितेव, प्रशस्तमनशान्तित्वमिव । तारुगयस्य, यौवनस्य, तृप्तिरिव, संतोषमिव। कुत्रलयेति-कुवलयदलदाम, नीलकमलदलमाला, तद्वत्, र्दार्घे, श्रायते, लोचने, नेत्रे, यस्याः, तथाभृतया । पाटलाधरया, ईषद्रक्राध-रोष्ठया । कुन्देति-कुन्दानां, माध्य पुष्पाणां, कुड्मलानि, मुकुलानि, तानीव, स्फुटाः, उज्ज्वलाः, दशनाः, दन्ताः, यस्याः, तथोक्कया । शिरीषेति-शिरी-षाणां, तन्नाम कुसुमानां, मालावत् , स्निगव, सुकुमारं, क्रोमलं, भुजयुगल, वाहुयुग्मं, यस्याः, तथभूतया । कमलेति—कमलं, पद्मं, तद्दत् कोमलौ, करौ,

कमलकोमलकरया बकुलसुरभिनिःश्वसितया चम्पकावशतया कुसुम-मय्येवताम्बूलकरङ्कवाहिन्या महाप्रमाणाश्वतराकृढयानुगभ्यमाना, क-तिपयपरिचारकपरिकरा मालती समदृश्यत । दृगदेव च द्धीच प्रेम्णा सरस्वत्या लुण्ठितेव मनोर्थेः, आकृष्टेव कुतृहलेन, प्रत्युदृतेवोत्क-लिकाभिः, आलिङ्गितेवोत्कण्ठया, अन्तः प्रवेशितेव हृद्येन, स्निपिते-वानन्दाश्चभः विलिप्तेव स्मितेन, वीजितेव उच्छ्वसितेः, आच्छादितेव चन्नुषा, अभ्यचितेव वदनपुण्डरीकेणा, सावीकृतेवाशया, सविधमुप-

हर्स्तों, यस्याः, तथोक्तया । **वकुलेति**---वकुलवत् , तदाख्यपुष्पवत् , सुरभिः, सुगन्धिः, निश्वसितं. श्वसन, यस्याः, ताविधया । चम्पकावदातया, चम्पक पुष्पवत् . ख्रवदातया, गौर वर्णया, खताग्व, कुसुममय्येव, पुष्पमय्येव, ताम्बृत्त करङ्क वाहिन्या, ताम्बूलानां, करङ्कः, पात्रं, तं, वहति, धारयतीति, तथोक्कया। महेति महत् श्रथिकं, प्रमार्गां, परिमार्गां, यस्य तादृशः, ( अत्युन्नतिमितियावत् ) योऽश्वतरः, त्रश्वायांगर्दमेनजातः, त्रश्वाकारः पशुः ( सम्बर इतिप्रसिद्धः ) यद्वा, तरूगाः, प्रौंढः, अर्थः, तुरङ्गमः ( वत्सोत्ताश्वर्षभेभ्यश्रतनुत्वन् " ५ । ३ | ६१ | पा० इतितनुत्वे तरपू | नं, श्रारूडा, श्राधिता, तथा, श्रनुगम्य, माना, त्र्यनुश्रिता । कतिपयेति—कतिपयाः, केचनः, परिचारकाः, भृत्याः, परिकरा:, ( परिवारा:, सहचरा इत्यर्थ: ) यस्या:, तथोक्का मालती समदृश्यत् द्रादेवच, रदृत एव, दधीच प्रेम्णा, स्नेहेन, सरस्वत्या (कर्तृभृतयेत्यर्थः) ल्एिठतेत्र, हतेत्र, मनोरथैं:, इच्छितें:, कुत्तृहलेन, खौत्सुक्येन, खाक्रुष्टेंव, त्र्याकिषतेन, उत्कलिकाभिः, त्र्यांत्सुक्येंः, प्रत्युद्गतेन, उद्गच्छदेन, उत्कराठया, स्पृहया, त्र्यालिङ्गितेव, कृतालिङ्गनेव, हृदयेन, चेतसा, त्र्यन्तः, त्र्राभ्यन्तरं, प्रवे-शितेव, कृतप्रवेशा इब, स्निपितेव, कृतस्नानिमव, त्यानन्दाश्रुभिः, त्यानन्दाश्रु जलैं:, स्मितेन, ईषद्धास्थेन, विलिप्तेव, कृतलेपनेव, उद्युवासितैं:, निश्वासैं:, वाजितेव, कृतव्यजनेव, चत्तुषा, नेत्रेंगा, ग्राच्छादितेव, श्रावृतेव, बदन पुग्ड-

ययो । अवतीर्य च तुरगाद्दृरादेवावनतेन मूर्भा प्रगाममकरोत् । आलिङ्गिता च ताभ्यां सविनयमुपाविशत् । सप्रश्रयं ताभ्यां संभाषिता च पुण्य भाजमात्मानममन्यत । अकथयंच द्धीच संदिष्टं शिरसि विनिहितेनाञ्जलिना नमस्कारम् । अगृह्णाचाकारतः प्रभृत्यप्राम्यत्या तैस्तैरपि पेशलेरालापैः सावित्री सरस्वत्योर्भनसी ।

क्रमेगा चातीतेमध्यंदिनसमये शोगःमवतीर्गायां सादित्र्यांस्ना-तुमुत्सारितपरिजना साकृता मालती कुसुमप्रस्तरशायिनीं समुप-

रोकेण, मुखकमलेन, अभ्यचितेन, पूजितेन, आशया, रष्ट्रिया, सर्खाञ्चतेन, कृतसीहरेन, सविधं, पार्थ, उपययो, प्राप्ता । अनितीयिति— द्रादेन, द्रत एव, तुरगात्, अश्वात्, अन्वतार्थ, अन्वतर्णाविधाय, अन्नतेनमुध्रां, नतशिरसा, प्रणाममकरेत्, प्रणति चकार । ताभ्यां, (सरस्वतीसाविधीभ्यां ) आलिङ्गिता, कृतालिङ्गना, सविनयं, यथास्यात्तथा, उपाविशत्, उपविष्ठा । सप्रअयेति— स प्रथ्रयं, सविनयं, ताभ्यां, संभाषिता, कृतवार्तालापा, आत्मानं, रवं, पुर्यभाजं, पुर्यवंतं, (कृतार्थं मितियावत् ) अमन्यत्, । शिर्मि, मस्तके, विनिहितः, कृतः, अञ्जलः, यया, एवंभूता, दधीचसंदिष्टं, संदेशं, नमस्कारं, अकथयत्, उवाच । आकारेति—आकारतः प्रभृति, आकारात् , तथाविधात् पूर्वोक्कात् , (सोम्यादित्यर्थः ) प्रभृति (दर्शनादारभ्येत्यर्थः ) अश्रम्यतया, (ग्राम्यत्वदोष रहितयेतिभावः ) अतिपेशलेंः, अतिसुतु मारंः (सोजन्यपूर्वे-रित्यर्थः ) आलापंः, वचनैः, सावित्रीसरस्वत्योः (द्वयोरित्यर्थः ) मनसी, चित्ते अगृह्णात् , स्व, वशवर्तिनमकरोत् ।

क्रमेश व श्रतीते, मध्यन्दिनसमये, मध्यान्हकाले, शे.शं, तन्नामनदं, स्नातुं, स्नानाय, श्रवतीर्शायां, श्रवतितायां, सावित्र्यां, उत्सारितपरिजना, दूरीकृतसेवका, साकृता, साभिप्राया, (हृदयान्तरित निगृहभावा ) मालती, कुसुमेति—बुसुमं, पुष्णं, एव, प्रस्तरः, शयनं, (प्रस्तीर्यतेऽसावितिप्रपर्धकात्,

सृत्य मरस्वनीमावभाषे—'देवि' विज्ञाष्यं नः किंचिदस्ति रहसि । श्रतो मुद्दूर्नमवधान दानेन प्रसादं क्रियमाण्मिच्छामि' इति । सरस्वती तु द्यी च संदेशाशङ्किती, किं वच्यतीति स्तनविनिहितवामकरनखिकरण-दन्तुरितमुद्भियमानकुत्हलांकुरिनकरिमबहृदयमुत्तरीयदुकूलवल्क लेकिदेशेन संद्रादयन्ते, गलतावतंसपञ्जवेन कुत्तृहलात् श्रोतुं श्रवणेनेव धाष-मानेनानवरतश्वाससंदोहदोलायिनां जीविताशामिव समासन्नलतामव-

हतरतः कर्मएयल् ) तत्रशेते या इति तथाभृताम् । सरस्वतीं समुपस्रत्य, पार्श्व वर्तिनीभूय, श्रावभाषे, श्रवादीत् । देवि ? रहिस, एकान्ते, किश्चित् , विज्ञाप्यं, क रानीयं, अस्ति । अतः, अनेनकार ऐन, मुहुर्त, घटिकाद्वयं, अवधान रानेन, सावधानेन, प्रसादं, प्रसन्नतां, कियमाणं, संपाद्यमानं, इच्छामि, ईहे । सरस्व-तीतु, ( वाग्देवी ) दथीच संदेशं, वृत्तं, ( वाचिकं वा ) तदाशिङ्किनी, श्राशङ्क-युमारा, किंवच्यतीति, किंकथयिष्यतीति । स्तनेति - स्तने, पयोधरे, विनि-ं हितस्य, दत्तस्य, वामकरस्य, वामइस्तस्य, नखानां किरगौं:, कान्तिभि:, दन्तु-रितं, सन्नातदंतं (इव) (वर्तमानमितियावत्) उद्भिरामानेति—उद्भिरा-माना, उच्छेयमानाः ( कर्म कर्तरिशानच् ) कृत्हलां कृराणां, कौतुकप्ररोदाणां, निकराः, निचयाः, यस्य, तथाभूतं, हृदयं, चिनं, **उत्तरीयेति**—उन्तरीयं, यत् दुकूलं, वसनं, तदेववल्कलं, तस्य, एकदेशः, एकांशः, तेन, संञ्चादयन्ती, श्राच्यादयन्ती, गलता, स्वलता, श्रवतंशपन्नरेन, कर्णालङ्कारपत्रेण, (इत्थं-म्मुतलज्ञासे इत्यनेनतृतीया ) श्रोतु, कर्साविषयीकर्तु, श्रवसोन, इव, श्रोत्रेन्द्रियेः र्णेत्र, धावमात्रेन, प्रवावता । श्रनवरतेति-श्रनवरतानां, निरन्तराणां, श्वा-सानां, संदोह:, समृहः, एव, दोला, दोलनयंत्रं, तां, त्रापिता, प्राप्ता, तां, ( यथा दोलनयन्त्रं स्वस्थानादपगच्छतिपुनरागच्छतिच, तथैवनिश्वासः शरीरा-न्तराद् गच्छिति पुनश्रोळ्वास रूपेण शरीराभ्यन्तरमागच्छिति, इति दोलास्थि-तामित्यर्थः ) जीविताशामिव, समासन्नलतां, सन्नि हेत वस्तरी, व्यवलम्बमाना,

लम्बमाना, समुत्पुल्लस्य मुखशशिनो लाक्ण्य प्रवाहेगा शृंगाररसंनेव सावयन्ती जीवलोकम्, शयनकुसुमपरिमललग्नेमेधुकरकदम्बकैमेदना-नलदाहश्यामलेमेनोरथेरिव निर्गत्य मृतेँकृत्तिप्यमागा, कुसुम शयनी-यात्स्मरशरसंज्वरिग्णी, मन्दं मन्द्मुदगात्। 'उपांशु कथय' इति कपोलतल प्रतिबिम्बतां लज्ज्येव कर्णमूलं मालतीं प्रवेशयन्ती मधुरया गिरासुधीरमुवाच।

'सिवि! मालिति! किमर्थमेवमिमद्धासि। काहमवधानदानस्य शरीरस्य प्रग्णानां वा। सर्वस्याप्रार्थितोऽपि प्रभवत्येवातिदेलं चज्जुध्यो जनः। सा न काचिद्या न भवसि मेस्वसा सखी प्रग्णयिनी प्राग्णसमा

त्राध्ययन्ती । लावण्य प्रवाहेण, सौन्दर्यस्रोतसा, श्वः र सेनेव, (रिति धानोहि रसः श्वः रः) तेनेव, जीवलोकं, प्राणिजातं, प्रावयन्ती, उत्प्रवनंकारयन्ती । शयनेति—शयनकुसुमानां, परिमलेन, सुगन्धिना, लग्नानि, संसक्तानि, तंः, मधुकरकदम्बकंः, अमरसम्हैः । मद्नानलेति—मदनानलेन, कामाग्निना, यः, दाहः, ज्वलनं, तेन, श्यामलाः, कृष्णवर्णाः, तंः, मूर्तेः, मूर्तिमद्भिः, उत्विप्यमाणा, प्रिच्यमाणा, कुसुमशयनीयात्, पुष्पपर्यङ्कात् । स्मरेति—स्मरस्य, कामस्य, शरेः, बाणःः, (शरप्रहारेरित्यर्थः) (संभूतेतिशेषः) यः, संज्वरः, सन्तापः, तद्वती । मन्दं, मन्दं, शनैः, शनैः, उदगात्, चचाल । उपांशु, सुगृढं, (सत्यमितियावत्) कथय, वद । कपोलेति—कपोलतले, गएडस्थले, प्रतिबिम्बता, प्रतिफलिता, तां, लज्जथेव, बीडेव, कर्णभृलं, भावत्वः, मालतीं, तन्नाम दूतिं, प्रवेशयन्तीं, श्रभ्यन्तरं नयन्ती, मधुरयागिरा, मधुरवाग्या, सुधीरं, यथास्यात्तथा, उवाच, उक्कवती ।

श्रभिदधासि, कथयसि श्रप्रार्थितोऽपि, प्रार्थना रहितोऽपि, श्रातिवेलं, श्रातिमात्रं, चत्तुष्यः, नयनरञ्जनः, जनः, सर्वेस्य, प्रभविति, योग्यः। सा न काचित्, कापि, या, मे, मम, स्वसा, भगिनी, सस्ती, प्रणयिनि, प्रेमास्पदा, च । नियुज्यतां यावतः कार्यस्य त्तमं त्तोदीयसो गरीयसो शरीरक-मिरम् । त्र्यन्वस्करमाश्रवं त्विय मे हृदयम् । प्रोत्या प्रतिसरा विधेया-स्मि ते । व्यावृणु वरवर्णिनि ! विवित्ततम्' इति । सा त्ववादीत्— देवि जानास्येव माधुर्य विषयाणाम् , लोलुपताँ चेन्द्रियमामस्य, उन्मादिनां च नवयौवनस्य, पारिस्रवतां च मनसः । प्रख्यातैव मन्म-थस्य दुर्निवारता । त्र्यनो न मामुपालम्भेनोपस्थातुमर्हसि । न च बालिशना चपत्तना चारणता वा वाचालतायाः कारणम् । न

प्राणसमा च, प्राण सदशी च। नियुज्यतां, नियोक्तव्यं, जोदीयसः, ऋतिज्ञु-इस्य, गरीयसः, ऋतिगुरूणः, कार्यस्यत्तमं, योग्यं, इदं, शरीरकं, देहं । अन-वस्करं, त्रवस्करः, मलः, तद्रहितः, (परिशुद्धमितियावत् ) त्राश्रवे, वचने, स्थिते, मे, मम, त्विय, हृदयं, चिनं, ( श्रक्रपटत्वेनकर्तव्यं त्वद्वचोमघेत्यर्थः ) पीत्या, प्रेम्णा, प्रतिसरा, नियोज्या, (श्रनुकूलर्जानीनीनियावत् ) ते, तव, विश्वेया, विधीयते, दीयते, (श्वाज्ञा इतियावन् ) यया, सा, (वश्या ) ( श्राज्ञाकारिर्णातियावत् ) श्रह्मि, इत्यनेनान्वयः । वरवर्णिनि ?, सुन्दरि ! च्यावृग्गु, प्रकाशय, विवित्तितं, कथनार्ह, ( इच्छितमितियावत् ) देवि ?, विष-याणां, स्रक् चन्दनायुपभोग्यवस्त्तां, माधुर्यं, मनोहारित्वं. इन्द्रियप्रामस्य. चत्तुरादीन्द्रिय समूहस्य, लोलुंपतां, लालसतां, जानासि. वेत्सि, एव । नव-याँवनस्य, प्रीढावस्थायाः, उन्मादितां, उन्मादकारित्वं, च, मनसः, चेतसः, पारिप्रवतां, चाञ्जन्यं, जानास्येवंति पूर्वेण सम्बन्धः । मन्मथस्य, कामस्य, दुर्निवारता, त्र्रवाध्यता, प्रंख्याता, प्रसिद्धा, एव, त्र्रतः, माम् , ( मास्तती-मितियाक्त् ) उपास्तम्मेन, उपास्तम्भदानेन, (तिरस्कारेशेत्यर्थः ) उप-स्थातुं, प्रहीतुं, न, श्रार्हसि, योग्यासि । बालिशता, श्रज्ञता, चपलता, चाबन्यं, चारणतां, दौत्यं, (यशः-पोषणशीलतेतियावन्) वाचाल-तायाः, बहुभाषितायाः, कारणं, हेतुः. न, च, (त्वद्रशेयदहंबचिम तन्नमम

किक्रिन्न कारयत्यसाधारग् स्वामिभिक्तः । सात्वं देवि, यदैव दृष्टा-सि देवेन, तत एवारभ्यास्य कामो गुरूः, चन्द्रमा जीवितेशः, मलय-मरुदुच्छ्वास हेतुः, त्र्याथयोऽन्तरङ्गस्थानेषु, धंतापः परमसुहृत् , प्रजा-गर श्राप्तः, मनोरथाः सर्वगताः, निःश्वासा विष्रहाप्रेसराः, मृत्युः पार्श्व-वर्ती, रग्रग्कः सञ्चारकः, संकल्पाबुद्धयुपदेशवृद्धाः । कि वा वि-वालिशतादयः, नैव हेतवरितिताप्तयार्थः ) कितदित्यपेत्तायामाह । नेति-असाधारणा अनन्यसदशी, स्वामिभिक्तः, प्रभी अनुरागः, किंचित् , किंमपि, न, कारयतोति न, श्रिपितु सर्वमेव कारयतीतिभावः । सा त्वं, ( सरस्वतीरूपा ) यदा, एव. देवेन दधीचेन, दशसि. त्रावलें कितासि, तत एवारभ्य, ततः प्रमृति त्रस्य, कुमारस्य, कामः, मन्मयः, गुरुः श्राचार्यः ( उपदेष्टा इति यावत् ) यथैवाज्ञापयति तथैव करोति, वशवर्तित्वादित्वर्थः। चन्द्रमा, जीवितेशः, प्राराधिरः, (शिशिरतया कामाप्ति निर्वापरा कारणत्वात्, अमृतमयत्वेन च जीवन रत्त्रण त्त्रमत्वादित्यर्थः ) यद्वा. जीवितेशः मृत्युः ( चन्द्रोदयसमयेका-मिनां सततमुपास्यमानाः कामाप्तिवर्द्धकतया मृत्युंदिशन्तीतितात्पर्यार्थः) मलयमहन्, मलयबायुः, उत्र्वास हेतुः, उत्र्वास कारणं, ( यदाहिमलयमहृदः हतितदंवासौनिश्वसितीत्वर्थः ) त्रान्तरङ्गस्थानेषु, त्राभ्यन्तरस्थानेषु, त्राधयः, मानसीव्यथाः. ( स्वजनाः यथासर्वदा परिचरन्ति तथैवाधयः एनंनिरन्तरमाश्र-यन्तीलार्थः ) सन्तापः, परमसुहृत् , मित्रं, ( सतत सहचरमितिभावः ) यद्वा-परम्-त्रसहृत् . प्राणहरः । प्रजागरः, जागरणं, श्राप्तः, विश्रम्भभाजनः, ( श्रारमीयइत्यर्थः ) नैनंत्यजतीतिशेषः । मनोरथाः, श्रभिलाषः, सर्वगताः, सर्वगामिनः, निश्वासाः, श्वसनानि, विप्रहाप्रेसराः, विप्रहस्य, विशिष्टज्ञानस्य, देहस्य वा, श्रव्रगामिनः, शरीरं परिखज्य गन्तुमिच्छन्तीत्यर्थः, मृत्युः, मरग्रां, पार्श्ववर्ता, पार्श्वचर: ( त्वदनङ्गी कियमारो, मररांनिश्वितमितिताप्तर्यम् ) रणरणकः, उत्करठा, एव, सम्रारकः, प्रेरकः । सङ्कल्पाः, मनसो कल्पनाः.

ज्ञापयामि । अनुरूपोदेवोदेव्या इत्यात्म संभावना, शीलवानिति प्रक्रम विरूद्धम् , धीरइत्यवस्था विपरीतम् , स्थिरप्रीतिरिति निपुणो-पन्नेपः, जानाति सेवितुमित्यस्वामिभावोचितम् , इच्छति दासभाव-मामरणात्कर्तुमितिधूर्तालापः, भवनस्वामिनी भवसीत्युपप्रलोभनम् , पुण्य भागिनी भजतिभर्तारं तादृशमितिस्वामिपन्नपातः, त्वं तस्य मृत्यु-रित्यप्रियम् , अगुण्ज्ञासीत्यधिन्नेपः, स्वप्नेऽस्यबहुशः कृतप्रसादासी-

वुद्धे:, ज्ञानस्य, उपदेश: "इदं कुरु" एवंकरणीयं" इत्येवंरूप:, तस्मिन्. वृद्धाः, महान्तः, स्थविराश्च । किं वा, विज्ञापयामि, कथयामि, श्रवुरूपः, सुयोग्यः, देवः, दधीचः, ( उक्नेइतिशेषः ) ( एवं सर्वत्रवज्ञेयम् ) इति, श्रात्म-संभावना, त्र्यात्मश्लाघा । शीलवान् , सुशीलः, ( त्र्रसावितियावत् ) प्रक्रम-विरूदं, प्रसङ्गविपरीतम् ( ईद्द्राव्यापारवतः वृतः शीलवत्विमित्यर्थः ) धीरः, धैर्यनान् , इति. त्रवस्था विपरीतम् , त्रवस्थाकामजनितदशा, तरयाः, विपरीतं विरूद्धं, ( धीराः नहार्वे विलपन्तीत्वर्थः ) स्थिरप्रीतिः, श्रचलप्रेमा, इति, निपुणोपत्तेप:, निपुणस्य, चतुरस्य, ( यथाकथश्चित् कर्माण दत्तस्येत्यर्थ: ) उपन्नेप:, उपक्रम: ( श्रालापइतियावत् ) ( स्थायित्वकीर्तनं विना नास्य कार्य-सिद्धिरित्येव मुक्तिः युज्यते इत्यर्थः ) सेवितुंपरिचरितुं , जनाति ( ( प्रणया-नुगमनमितियावत् ) त्र्रास्वामिभावोचितं, स्वामित्वानुपयुक्तं, ( नहिसेवन्तस्वा-मिन: ,सेवकान् प्रत्युत: सेवकैरेव स्वामी सेव्येते ) श्रामरणात् , श्राजीवनं, दास-भावं. सेवकरवं, इच्छति, इति, धूर्तालापः, प्रतारकवचनं, ( धूर्तैः स्वकार्य-सिध्येरेवं, कथ्यते इत्यर्थः ) भवनस्वामिनी, गृहकर्त्रा, भवसि, इति, प्रसोभनं, बोभप्रदर्शनं । पुरायभागिनी, धन्या, ताहरां, ( सुयोग्यमित्यर्थः ) भर्तारं, पतिं भजति, इति, स्वामि पच्चपातः, स्वामिनि ( यदर्थमहमागता ) तस्मिन्, प्रभौ, इतिभावः । पत्तपातः, अतिप्रणयः । त्वं, तस्य, मृत्युः; ( त्वां विना-अरिष्यत्यसावित्यर्थः ) इतिः ऋप्रियः निष्दुरवचनं । ऋगुणज्ञाः गुण परिज्ञाने-

त्यसाचिकम् , प्राग्णरचार्थमर्थयत इति कातरता, तत्रागम्यतामित्याज्ञा, वारितोऽपि बलादागच्छतीति परिभवः । तेदवमगोचरे गिरामसीतिश्रु-त्वा देवी प्रमाग्णम्' इत्यभिधाय तूष्णीमभूत् ।

श्रथ सरस्वती प्रीति विस्फारितेन चत्तुषा प्रत्यवादीत्—'श्रवि' नशक्तोमि बहु भाषितुम्। एषास्मि ते स्मितवादिनि वचसि स्थिता। गृह्यन्ताममी प्रायाः, इति। मालती तु 'यदाक्कापयिस्यित प्रसादः' इति यसमर्था, इति, श्रिष्ठतेपः, श्रपमानः, स्वप्ने, निद्रावस्थायां, बहुशः, बारं बारं, कृतप्रसादा, कृतः, विदितः, प्रसादः, श्रनुभ्रहः, यया, तथाभृता। (त्वां स्वप्ने, दृष्ट्वा, श्रसांमहतां प्रीतिमलभतेत्वर्थः) इति, श्रसाद्धिकम् । साचिरहितं, (स्वप्नेसाचित्यामभावादित्यर्थः) प्रायारचार्थं, जीवनरचित्ं, श्रथ्यते, प्रार्थयते, (त्वत्प्रसादमित्यर्थः) इतिकातरता, दंन्यं, (दीनानामेवालापमेतदितिभावः) तत्र, तत्पार्श्वं, श्रागम्यतां, इति, श्राज्ञा, श्रादशः। बारितः, निषद्धः, (मागन्तव्यंत्वयामसमीपं, इति) श्रिष, संभावनायां, वलात, द्रात्, श्रागच्छतीतिप्रदेशवः तिरस्कारः। तत्र, तस्मात्, गिरां, वाचां, श्रगोचरे, श्रविषये, श्रसि, (निहिक्सिपिवक्तं) समर्था इतिभावः) इतिश्रुत्वा, निशम्य, देवी, भवती, प्रमायां, (प्रमीयते, श्रनुमीयते, इतिप्रमाणं। इत्यमिधाय, कथियत्वा, तृष्णी मभृत्, मौनं लंमे।

श्रथ, श्रानिविस्फारितेन, प्रीत्या, प्रेम्णा, विस्फारितं, विस्तारि-तं, (उन्मीलिनिमर्स्यः) तेन, चतुषा, नेत्रेण, प्रत्यवादीत्, उक्कवती श्रापि ? बहु, श्रिषितं, माधितुं, कथियतुं, नशक्कीमि (श्रसमर्थास्म) स्मितवादिनि ? मधुरमाथिणि ?, एषा, श्रहं, ते, तव, वचिस, श्राज्ञायां, स्थिता, श्रास्म श्रमीप्राणाः, (मदीयं जीवनिमर्स्थः) गृहह्यन्तां, स्थीक्क । मालतीतु, यदाः ज्ञापयिन, श्राज्ञां करोसि, श्रातिप्रसादः, श्रनुप्रहः, (भवत्या इतिशेषः) इति, व्याहत्य, कथियत्वा, प्रहर्षः, श्रानन्द विशेषः, तेन, पखशा, पराधीना, (सुक्षे-

व्याहृत्यप्रहर्षपरवशा प्रण्म्य प्रजावना तुरगेण ततार शोण्म्। श्रगात्र द्धीचमानेतुं च्यवनाश्रमपदम्। इतरा तु सखी स्नेहेन सावित्रीमपि विदित वृत्तान्तामकरोत्। उत्कण्ठाभारभृता च ताम्यता चेतसा कल्पायितं कथंकथमपि दिवसशेषमनेषीत्। श्रस्तमुपगतवित भगवित गभस्तिमृति, स्तिमिततरमवतरित तमसि, प्रह्सितामिव सितां दिशं पौरन्द्रीं द्रीमिव केसिरिण्मुख्वित चन्द्रमसि, सरस्वती शुचिनि चीनांशुकसुकुमारे तरङ्गिणी दुकूलकोमले, शयन इव शोण्मेंकते

नेतियावत् ) प्रणम्य, नत्वा, प्रजविना, दुतगामिना, तुरगेण, ऋश्वेन, शोणं, नदं, ततार, त्रवतीर्गा । दधीचमानेतुं, त्रानयनाय, च्यवनाश्रमपदं, च्यवन-स्थानं, त्र्यगात् , च, त्र्रगमत् । इतरातु ( सरस्वती ) सस्त्रीस्नेहेन, प्रम्णा, सावित्रीमपि, स्व सहचरीमपि, विदित वृत्तान्तां, विदितः, ज्ञातः, वृत्तान्तः, ( दर्धांचेसरस्वत्याः अनुरागवृत्तं यस्यास्ताम् ) एवं भूतां, श्रकरोत् । चकार ( सावित्रीसविधेसर्ववृत्तमकश्यदितिभावः ) उत्कराठाभारभृता, उत्कराठानां, श्रीत्सुक्यानां, भारः, श्रातिशयः, तं, विभर्ताति, तेन, ताम्यता, विलश्यता, चेतसा, मनसा, कल्पायिनं, ब्राह्मंदिनं कल्पः, तद्वदाचरित, तं, ( कल्प शदश-मितिभाव: ) कथं कथमपि, केनापि प्रकारेगा, दिवसं, दिनं, अर्नेषीत्, व्यतीत यत् । गभस्तिमति, वि.रणशालिनि ( सूर्ये इतियावत् ) भगवति, कल्याणकरे, श्रस्तं, श्रस्ताचलं, उपगतन्ति, प्राप्ते, ( श्रस्तंगते इत्यर्थः ) स्तिमिततरं, मन्दं मन्दं, अवतरित, आविभेवित, प्रहसितामिव, प्रकरेंगा, कृद्धारयामिव, सितां, शुभ्रां, पौरन्दरीदिशं, पुरन्दरस्य, इन्द्रस्य, इयं, यद्वा, पुरन्दरः, ऋधिप्ठाता, यस्याः, सा पौरन्दरी, त, दिशं, ( पूर्वामितिभावः ) दरीमिव, गुहामिव, केस-रिशा, सिंहे, मुझति, त्यजति, ( उदयमाने इत्यर्थः ) चन्द्रमसि, शशिनि । सर-स्वती-शुचिनि, स्वच्छे, चीनांशुकं, चीनदंशोद्भवं बस्त्रं, तद्भत्, सुकुमारः, श्राति क्रोमलः, तस्मिन्, तरङ्गणि, (प्रतिदिवसच्चीयमाणेनजलेन कृतरेखेल्पर्यः)

समुपविष्टास्वप्रकृतप्रार्थनापाद्पतनलम्नां द्धीचचरण्नस्वनिद्रकामिव ललाटिकां द्धाना, गण्डस्थलाद्र्शे प्रतिबिन्बितेन, "चास्हासिनि ?", श्रयमसावाहृतो हृद्यद्यितो जनः' इति अवग्यसमीपवर्तिना निवेद्यमान मद्न सन्देशेवेन्दुना, विकीर्यमाण्नखिकरणचक्रवालेनबालव्यजनी-कृतचन्द्रकलाकलापेनेवकरेगावीजयन्ती स्वेदिनं कपोलपट्टम् , 'श्रत्र द्धीचाहते न केर्नाचत्प्रवेष्टव्यम्' इति तिराश्चीनं चित्तभुवापतितां विला-दुकुलकोमल, दुकुलवत् सुकुमारे, शयनं, शय्यायां, इव, शांगसेंकते, शोगनद-पुत्तन, समुर्पावष्टा, स्थिता । स्वप्नेति—स्वपन, स्वपनावस्थायां, कृता, या, प्रार्थना, ''मामनुगृहाण,'' इस्त्रभ्यर्थना, तस्या, यत्, पादयोः, (दधीचस्यंस्पर्थः) पतनं, तेन, लग्ना, संसक्का, ताम् । द्धीचेति—दर्धाचस्य, यः, चरणनखः, तस्य, या, चिन्द्रका, ज्योत्स्ना, तामिव, ललाटिकां, शिरोभृषणं, ( तिलक-मितियावत् ) दधाना, धारयन्ती । गण्डेति-गण्डस्थलं, कपोलतलं, एव, স্মাदर्शः, दर्पणः, ( श्रतिस्वच्छमितियावत् ) तत्र, प्रतिबिम्बितः, प्रतिफल्तिः, तेन, चारुहासिनि ?, मधुरभाषि ए ? श्रयमसी, ( पूर्वनिर्दिष्टः ) हृदयद्यिती-जनः, हृदयवत्नमः, श्राहृतः, श्रानीतः, ( मयेतिशेषः ) ''इति'' श्रवशासमीप वर्तिना, कर्ण पार्श्ववितेना, निवेद्यमानेति--- निवेद्यमानः, विज्ञाप्यमानः, मदन-स्य, कामस्य, सन्देशः, वाचिकं, यस्यें, तथोक्का, इन्दुना, चन्द्रेण । विकीर्य-मागोति-विकीर्यमाणं, इतस्ततः प्रसार्यमाणं, नखिकरणानां, मयुखानां, चकवालं, मराडलं, यस्य तथोक्षेन ऋतएन, वालव्यजनीष्टतः, नवचामरत्वेनपृतः अथवा, बालकृतं व्यजनं, चामरं, तत्कृतः, चन्द्रकला कलापः, चन्द्रकलानिचयः, येन, तथोक्तेन, स्वेदिनं, (कामोद्भूत घर्माक्रमितियावत्) क्योलपट्टं, गगड-स्थलं, करेगा, इस्तेन, उपबीजयन्ती, व्यजनं कुर्वन्ती । श्रत्र ( हृदये इति यावत् ) दधीचाहते, दधीचंविना, न, केनचित् , केनापि, प्रवेष्टब्यं । इति,

तिरश्रीनं, तिर्थक्यथास्यात्तथा, चित्तभुवा, कामेन, पातितां, निचिप्तां, विलास

सवेत्रलतामित्र वालमृग्गालिकामधिस्तनं स्तनयन्ती कथमपि हृद्येनव-हन्ती प्रतिपालयामास । श्रासीच्चास्यामनसि—'श्रहमपि नाम सर-स्त्रती यत्रामुना मनोजन्मना जघन्येव परवशीकृता । तत्र का गगाने-तरासुनपस्त्रिनीष्त्रति तरलासु तरुगोषु' इति ।

श्राजगाम च मधुमास इव सुरभिगन्थवहः, हंस इव कृतमृणा-लधृतिः, शिखण्डीव धनप्रीत्युन्मुखः, मलयानिल इवाहितसरसचन्दन वेवलतामिव, विलासाय वेवयष्टिमिव, (द्वारपालः श्रान्यप्रतेशनिवारणाय वेवयष्टि तिरश्चीनं स्वाप्यतीतिलोक प्रसिद्धः) वालमृणालिकां, नव मृणाललतां, (विरहसन्ताप शान्त्यं धारितामिखर्यः) श्राविस्तनं, स्तनोपरि, स्तनयन्ती कलयन्ती । कथमपि, हृदयेन, चेतसा, वहन्ती, धारयन्ती, प्रतिपालयामास, प्रतिक्तां चकार । श्रासीदिति —श्रस्याः, सरस्वत्याः, मनिस, हृदि, श्रासीच, श्रहमपि (श्रातिधीरादेवताऽपीति यावत्) नाम, यत्र, श्रमुना, श्रानेन, मनोजनमा, कामेन जघन्येव, नीचेव, परवशो कृता, परवशतांनीता । तत्र, का गणाना, गणानं, (किंकथनीयमित्यर्थः) इतरासु, श्रम्यासु, तपस्वनीषु, तप्रशिलाषु, श्रानिदरलासु चल्लासु तहणीषु, युवतीषु । (श्रान्ययुवतीनांतुक्तिक-धनं, यदर्यकिकरोतीति )।

श्राजगामेति - श्राजगाम इत्यतः मालतीद्वितीयोदधीचः, इत्यनेनान्वयः ।
मधुमासइव, वसन्तइव, सुरिनः, सौरभशालिनं, गंधंवहित, धारयतीति,
तथोक्कः (पन्ने) सुरिमः, सौरभवान्, गन्यवहः, पवनः, यवत्याभृतः ।
हंसइव, कृता, विहिता, मृणालेन, (कामसन्ताप निवृद्धर्यमितिभावः) पृतिः,
धेर्यं, येन, तथाभृतः, यद्वा, कृता मृणालेन, पृतिः, जीवन रक्तगं, येन, तथोक्कः,
शिखणडीव, मयूर इव, घना, सान्द्रा श्रीतिः (स्नेहातिशयः) तस्यां, उन्मुखः
(तत्प्राप्तिले लुप इतियावत्) (पन्ने) घने, मेघे, (तहर्शने इतिभावः) या, श्रीतिः,
प्रेम, तस्यं, उन्मुखः, ऊर्ष्वमुखः । मल्यानिल इव, मल्यमरुदिव, श्राहितः,

धवलतनुलतोत्कम्पः, कृष्यमाण इव कृतकरकचप्रहेणप्रहपितना, प्रेर्य-माण इव कंदपींद्दीपनद्त्तेण द्त्तिणानिलेन, उद्यमान इवोत्कलिका-बहलेन रितरसेन, परिमलसंपातिना मधुपपटलेन पटेनेव नीलेनाच्छा-दिताङ्गयष्टिः, अन्तःस्फुरता मत्तमदनकरिकर्णशङ्खायमानेन प्रतिमे-न्दुना प्रथमसमागमविलासविलत्तस्मितेनेव धवलीकियमाणैककपोलो-दरो मालतीदितीयो द्धीचः।

जनितः, सरसेन, सान्द्रेण, ( घृष्टेनेतियावत् ) चन्दर्नन, धवलायाः, शुश्रायाः, तनुलतायाः, श्रद्भयष्टेः, उत्कम्पः, कम्पनं (कामज्वरेगोत्यर्थः ) यस्य, तथा-भूतः (पत्ते) श्राहितः, जनितः, सरसानां, स्निग्धानां, चन्दनानां, धवाः, वृत्त-विशेषाः, तान्लान्ति, त्राश्रयन्तीति, तथाभृताः । याः, तनुलताः, सूच्मवक्षर्यः, तासाम्रउत्कम्पः, कम्पनं, येन, तथाविधः । कृष्यमारण इव, त्राकृष्ट इव, कृतः, करेला, इस्तेन, मयूबेन च, कचप्रहः, केशप्रहर्णा, चेन, तथाभूतेन, प्रहपतिना, चन्द्रमसा । प्रेर्यमाण इव, प्रेरित इव, कंदपोंईापनदत्त्रेण, कन्दर्पस्य, कामस्य, उद्दी-पने, उत्तेजने, दत्त्रेण, चतुरेण, दित्तिणानिलेन, दित्तिण वायुना । उद्यमान इव, नीयमान इव, उत्कलिका, वहलेन, रणरणकभूयिष्टेन, रतिरसेन, रत्यास्वादेन । परिमलेति-परिमलेन, गात्रसौरभेषा, सम्पतित, निपततीति तथाभूतेन । मधुप पटलेन, भ्रमर समूहेन, पटेनेव, वसनेनेव, नीलेन, मीलवर्शन, श्राच्छादिता, आवृता, अइ यष्टिः, शरीर, यस्य, तथाभूतः । अन्तः रफुरता, अन्तर्विराजमा-नेन, मत्तः, दुर्मदः, मदनः, कामः, एव, करी, इस्ती, तस्य, कर्रो, श्रवरो, यः, शङ्खः, (शङ्क्षनिर्मितभूषणाविशेषः) स इवाचरतीति, तेन, प्रतिमेन्दुना, प्रतिबिम्ब-तशशिना, प्रथमेति-प्रथमः, श्रादाः, समागमः, सङ्गः, तस्मिन् , यः, विलासः. तेन, विलत्नं, सलज्जं, यत्, मृदु हास्यं, तेन इव, धवलीकियमाणं, शुभ्रतांनीय-मानं, एकस्य, कपोलस्य, गराडप्रदेशस्य, उदरं, श्रभ्यन्तरं, यस्य, तथाभूतः, माल-तीद्वितीयः, (मात्तत्यासहेत्यर्थः) दधीचः,(पूर्वनिर्दिष्टःकुमारः) श्राजगाम, प्राप्तः ।

त्रागत्य च हृद्यगतद्गीयानूपुरस्विमित्रयेव हंसगद्गद्या गिरा कृत संभाषणा यथा मन्मथः समाज्ञापयित, यथा यौवनमुपिद्शित, यथानुरागः शिच्चयित, यथा विद्ग्धनाध्यापयित, तथा तामभिरामां रामा-मरमयत् । उपजातविश्वम्भा चात्मानमकथयदस्य सरस्वती । तया तु सार्थमेकं दिवसिमवानयत्संवत्सरमिषकम् ।

श्रथ देवयोगात् सरस्वती बभार गर्भम् । श्रसूत चानेहसा सर्व लज्ञग्णाभिरामं तनयम् । तस्मै च जातमात्रायैव 'सम्यक्सरहस्याः सर्वे-

हृद्येति—हृद्यंगता, ( मनसिप्रविष्टा इति यावत् ) या, द्यिता, प्रिया, तस्या:, नूपुररव:, रणारणक शब्दविरोप:, तेन, मिश्रा, मिलिता, ( एकत्वंगते-त्यर्थः ) तयेव, इंसगद्रस्या, ( इंसशब्द मथुरयेतिमात्रः ) गिरा, वाचा, कृत-सम्भाषणः, विहित वार्तालापः, ( देवि ? ते कुशल विविधमालपन् ) यथेति-यथा, येनप्रकारेण, मन्मयः, कामः, समाज्ञापयति, श्राज्ञांकरोति । यैवनं, उप-दिशति, श्रनुशाशित । श्रनुरागः, प्रेम, शिच्चयति, शिच्चां ददाति । विदम्धता, चतुरता, ऋध्यापयति, पाठयति । तथा, तां, ( सरस्त्रतीं ) स्रभिरामां, मना-रमां, रामां, प्रियां, श्ररमयत् । ( श्रनोचित्यं हि देवता विवयक श्रङ्कारप्रदर्शन मतः नात्र विस्तारेण प्रदर्शितं ) कुमारात्ये गान्धर्व विवाह वर्णनौचित्यऽपिनात्र-तद्वर्णनं, शापावसान मात्रपरत्वादाख्यायिकायाः, श्रान्यथा, तथा, निन्दनीयः पतिपरित्यागः कथमकारि, इत्यादिकुतर्कप्रसङ्गात् ) उपजात विश्रम्भा, समुत्पन्न विश्वासा, त्र्रस्य, दधीचस्य, त्र्रात्मानं, ( स्वीयंभाविमर्ख्यः ) सरस्वती, त्र्रकः थयत् । तया, सरस्वत्या, ( शापादिकमिति यावत् ) सार्ध, सह, श्रिधिकंसम्ब-त्सरं. वर्षमेकं. एकंदिनमिव. वासर्गिव. श्रानयत् . व्यतीतयत् । श्रायेति — त्राथ, त्रानन्तरं, देवयोगात् , भाग्यात् , सरस्वती, गर्भ, बभार, दघार । त्राने-इसा, कालेन, सर्वल ज्ञ ग्राभिरामं, मनोगं, तनयं, पुत्रं, श्रस्त । तस्में, तनयाय जातमात्राय, ( उत्पन्नायेखर्यः ) सम्पक्, यथास्यात्तवा, सरहस्याः, रहस्यं,

वेदाः सर्वाणि च शास्त्राणि सकलाश्च कलाः मत्प्रसादात्स्वयमाविभवि-प्यन्ति' इतिवरमदात् । सद्भृतृश्लाघया दर्शयितुमिव हृद्येनादाय दधीचं पितामहादेशात्समं सावित्र्या ब्रह्मलोकमारुरोह् । गतायां च तस्यां दधीचोऽपि हृद्ये ह्यादिन्येवाभिह्तो, भागववंशसंभूतस्य श्रातुर्ब्राह्मणस्य जायामच्चमाला भिधानां मुनिकन्यकामात्मसूनोः सम्बर्धनाय नियुज्य विरहातुरस्तपसं वनमगात्। यस्मिन्नेवावसरे सरस्वत्यसूत तनयं तस्मिन्ने-वाच्चमालापि मुतं प्रसूतवती । तो तु सा निर्विशेषं सामान्यस्तन्या शनेः शनैः शिशू समवर्धयत् । एकस्तयोः सारस्वताख्य एवाभवत्, द्वितीयो-

उपनिषत् , तेन, सहवर्तमानाः, सर्वेवेदाः, ऋग्यजुः सामाथर्वाणः, सर्वाणि च, शास्त्राणि, मोमांसादीनि, कलाः, चतुः षष्टिसंख्याकाः कामविद्याः। मत्प्रसा-दात्, स्वयं, श्राविभीविष्यन्ति, प्रकटिष्यन्ति । इति, एवं, वरमदात्, वरंद-त्तवती । सद्भर्तृश्लाघया, सत्, उत्तमः, यः, भर्ता, पतिः, तस्मिन्, श्लाघा, गौरवं, तया, दर्शयितुं, प्रदर्शनाय, इव, दधीचं, हृदयेन, चेतसा, त्रादाय, नीत्वा, पितामहादेशात् , ( पुत्र मुखदर्शनानन्तरं ते शाप विरतिः, इत्यादेशात् ) सावित्र्यासमं, ब्रह्मलोकं, पितामह स्थानं, त्र्याहरोह, गता । गतायां च तस्यां, ( सरस्वत्यामितिभावः ) दधीचोऽपि, हृदये, चेतसि, हादिन्या, वज्रेण, इव, श्रमिहतः, ताङ्तः, भार्गववंशसम्भृतस्य, भार्गवकुलोद्भवस्य, भ्रातुः, ब्राह्मणस्य, जायां, दियतां, श्रद्धमालाऽभिधानां, श्रद्धमाला, नाम्नी, मुनिकन्यकां, पुत्रिं, त्रात्मसूनोः, स्वतनयस्य, संवर्धनाय, वर्धितुं, नियुज्य, विरहातुरः, विरह पीड़ित:, तपसे, तप: कर्तुं, वनम्, श्रगात् , गतवान् । यस्मिननेवावसरे, समथे, सरस्वती, तनयं, पुत्रं, श्रस्त, तस्मिन्नेव, ( समथे-इतियावत् ) श्रज्ञमालापि, सुतं, पुत्रं, प्रस्तवती, प्रसवंचकार । तो तु, वालको, सा, श्रज्जमाला, निर्विशे-षम् , ( स्वपुत्रादभिषा भावेनेत्यर्थः ) सामान्यस्तन्या, ( उभयोः साधारण मितियावत् ) स्तन्यं, दुग्धं, यस्याः, तथोक्षा । शनैः शनैः, समवर्धयत् ,

ऽपि वत्सनामाभवत् । श्रासीच तयोः सोद्ययोरिव स्ष्रृह्णीया प्रीतिः । श्रथ सारस्वतो मातुर्मेहिन्ना यौवनारम्भ एवाविर्भृताशेषविद्या संभारस्तिस्मन्सवयिस श्रातरिप्रेयिस प्राण्यसमेसुदृदि वत्से वाङ्मयं समस्तमेव संचारयामास । चकार च कृतदारपरिष्रहस्यास्य तस्मिन्नेवप्रदेशे प्रीत्या प्रीतिकूटनामानं निवासम् । श्रात्मनाप्याषाद्री, कृष्ण्याजिनी, वल्कली, श्रच्चवलयी, मेखली, जटी च भूत्वा तपस्यतो जनयितुरेव जगामान्तिकम् । श्रथ तस्मात्प्रवर्थमानादिपुरुषात्जनितात्मचरणोन्नति-

पालितवती । तयोः (पूर्वनिर्दिष्टयोः ) एकः, सरस्वतीपुत्रः, सारस्वताख्यः, सारस्वत नामा, श्रभवत् । द्वितीयः, श्रद्धमाला पुत्रः, वत्सनामा, वत्साभिधेयः, तयो:, वालकयो:, सोदर्यथो:, एक-उदरोद्भवयोरिव स्पृहराीया, प्रशंशनीया, प्रीति:, प्रेम, त्र्यासीत् । त्र्यथ, त्र्यनन्तरं, सारस्वतः, मातुः (सरस्वत्याः) महिन्ना, प्रभावेरा, यौवनारम्भएव, प्रौढावस्थायामेव, त्राविभूताः, प्रादुर्भृताः, श्रशेषाः, सकलाः, विद्याः, तासां, संभारः, सन्घः, तस्मिन्, सवयसि, समान वयस्के, ञ्रातरि, प्रेयसि, प्रारासमे, सुहृदि, मित्रे, वत्से, वाड्ययं, शास्त्रं, सम स्तं, सम्पूर्णं, एव, संचारयामास । प्रवेशयामास, ( सर्वास्ताविद्याः वत्समशिच यदित्यर्थः ) कृतदारपरिग्रहस्य, कृतविवाहस्य, श्रस्य ( वत्सस्येत्यर्थः ) तिस्मन्, एव, प्रदेशे, स्थाने, प्रीत्या, प्रेम्णा, प्रीतिकूट नामानं, तदाख्यं, निवासं, स्थिति, चकार, अकरोत् । आत्मना, स्वयं, ( अपीतिसंभावनायां ) आषाढी, पालाश दराडधारी, कृष्णाजिनी, कृष्णाशार मृगचर्मावरणमितिभावः । वल्कली, वल्कलं वृत्तत्वक्, तद्वान् (तरुत्वग्धारीत्यर्थः) श्रज्ञवलयी, रुद्राज्ञ जपमालाधारी, मेखली, मेखला, काम्री ( मुझतृएारचित तड़ागी ) तद्वान् । जटी, जटा, रुच संहतकेराः, तद्वान् । ( जटिल इति यावत् ) भूत्वा, एवं मुनिवेषंविधाय, तप-स्यतः, तपस्यां कुर्वतः, जनयितुः, पितुः (दधीचस्थेतियावत् ) ऋन्तिकं, पार्थं, जगाम, त्रगमत् । अथेति—तस्मात् , प्रवर्धमानात् , वृद्धिगच्छतः,

निर्गतप्रघोषः, परमेश्वरशिरोधृतः, सकलकलागमगम्भीरः, महामुनिमा-न्यः, विपत्तत्तोमत्तमः, त्तितितललब्धायितः, श्वस्खलितप्रवृत्तोभागी-

श्रादिपुरुषात् , पूर्वपुरुषात् , ( वत्सादितियावत् ) श्रथवा, प्रवर्धमानात् , सन्त-लावृद्धिंगच्छनः, ब्रादि पुरुषात्, रूर्वजात्, (भार्गवादित्यर्थः) (पत्ते) नारायणात्। जनितेति-जनिता, वृद्धिनीता, त्राहमचरणेन, त्राज्ञानेन, या, उन्नतिः, अभ्युदयः, तया, निर्गतः, (दिगन्तगत इत्यर्थः ) प्रघोषः, ष्वनिः, ( र्कार्तिरित्यर्थः ) यस्य, तथोक्तः । श्रथवा, जानिता, कृता, श्रात्मनां, स्वेषां, ( स्वबंशीयानामितियावत् ) चरणानां, कठादि शाखाध्यायिनां । उन्नति:, उत्कर्षः, तया, निर्गतः, प्रयोषः, यशः यस्य, तथाभूतः ( पत्ते ) जनितस्य, उत्पादितस्य, श्रात्मचरणस्य, ( वलिञ्जलनसमये, स्वकीयतृतीयपाद-स्वेतिभावः ) उन्नत्या, उर्ध्वगत्या, निर्गतः, प्रयोषः, कलकल शब्दः, यस्य, तथोक्तः । ( तदानितचरण स्पर्शन, ब्रह्मकटाहमेदादित्यर्थः ) ब्रह्मकटाहस्थिता गङ्गा भगवचरण स्वर्शात् कटाहभङ्गे महीतले प्रपात, इत्यस्या विष्णोश्वरणोद्भ-वेति प्रसिद्धिः ) परमेश्वरशिरोष्टतः, परमेश्वरः, सत्राट्, तेन, शिरसाष्टतः, ( सम्मानित इतियावत् ) (पत्ने) परनेश्वरेख, शङ्करेख, शिरसावृत, घारितः, ( हरशिरश्चारीत्यर्थः ) **सकलेति**—पकलाः, सर्वाः, कलाः, विद्याः, तासां, त्र्यागमेन, प्राप्तेन, ( ज्ञानेनेतियावत् ) गम्भोरः, पूर्णः, ( पत्ते ) सकलकत्तेन, शब्दविरोषेण, सह, यः, श्रागमः, प्रवहणं, तेन, गम्भीरः, । महा मुनिमान्यः महान्तश्च ये मुनयः, तैः, मान्यः, त्रादरणीयः, त्रयवा, महामुनिवत्, मान्यः, मानार्हः ( पत्ते ) महामुनिः, जन्हुः, तेन, मान्यः, सेव्यः, ( पवित्र वुश्या उदरेण धृतत्वादितियावत् ) विपत्तेति—विपत्तत्वाभव्तमः, विपवाणां, शत्रूणां चोमे, पराजये, चमः, समर्थः । ( पच्चे ) विपच्चाः, पचरहिताः, ( पर्वता इति यावत् ) तेषां, चोमे, तरङ्गाघातेन, खराडने, चमः, शरूः । चितितलेति— च्चितितलेषु, पृथ्वी भागेषु, लब्धा, प्राप्ता, त्र्यायतिः, प्रतिष्ठा, (पत्ते) त्र्यायतिः, रथीप्रवाह इव पावनः प्रावर्तत विपुलो वंशः । यस्माद्ञायन्त वात्स्या-यना नाम गृह्मुनयः, श्राञ्जितश्रौता, श्रप्यनालम्बिनालीकवककाकवः, कृतकुकुटत्रता, श्रप्यवेडालवृत्तयः, विवर्जितजनवृत्तयः, परिहृतकपट-

विस्तारः, येन, तथाभूतः । ऋरखांत्ततप्रवृत्तः, नास्तिरखांत्ततं, सदाचारभ्रंशः, यस्मिन् , तद्, यथास्यात्तथा, प्रवृत्तः, ख्यातः, (पत्ते) श्रस्खलिनं, श्रानिरुद्धं, प्रवृत्तः, प्रवहरां, यस्य, तथाभृतः । भागीरथी प्रवाहइव, गङ्गास्रोतइव, विपुलः, महान् , पावनः, पावतः, वंशः, उत्तं, प्रावर्तत (ख्यातिंलोमे-इतिभावः) यस्माद् ( वंशादितियावत् ) वातस्यायननाम, वत्सदंशे द्भवाः, गृहसुनयः, गृहस्थिताः, मुनयः, ( मुनिवदाचरन्त इतिभावः ) श्राश्रितश्रौताः, श्राश्रितः, श्रवलम्बितः, श्रीतः, वेदविहितः, श्राचारः यैः, तथोक्का, ( कपटभावं परित्यज्यवेदानुष्टानक-र्तार इतिभावः ) पत्ते, श्रौतं, श्रुतौ, कर्षोएव, त्र्याश्रितं, स्थितं, ( चिरवृत्तमिति-भाव: ) त्रालम्बितः, स्वीकृतः वकस्य, पित्तिवशेषस्य, काकुः, भ्वनिः, (भिन्न-करठष्वनिर्धारै:काकु रित्यभिर्धायते ) यैः, तथाभूताः, । ( यैः वकवृत्तिः (छद्म) स्वीकृता तै:कथं वेदमार्गमनुसर्यतं ) इतिविरोधः । परिहारे-श्रलीकं, तुल्रद्म परि-छनंं श्रमालिम्बतः, श्रस्वीकृतः, वकस्य काकुः, ध्विनः, यैः तथोक्काः, । कृतेति-कृतं, कुक्कुटानां त्रतं, भक्त्णां, यैं: तथोक्ताः, श्रापि, श्रवेडालवृत्तयः, नास्ति वैडाली, विडाल सन्वधीनिवृत्तिः, व्यवहारो थेषां तथाभूताः,। यैं: कुक्कुटभन्नणं कृतं ते कथं, श्रवैडालवृतयः, इतिविरोधः, परिहारे, कुक्कुटवर्त, कुक्कुटाएडप्रमाणां प्रासभोजनं, एवंभृताः । चान्द्रायणादि वतेषु कुक्कुटाएड प्रमाणं प्रास भोजनं कियते, एव । विवर्जितेति— विवर्जिता, जनानां, दुर्जनानां, श्रथवा, जनेषु, दुराचारपुरुषेषु, वृत्तिः, व्यवहारः, यै:, तथोक्षाः । परिहृतेति-परिहृतं, परित्यक्षं. कपटकीरस्य. दुष्टशुकस्य, कुचीकूर्चाकृतं, ''किचरमिचिर'' इति ऋव्यक्त शब्दो:, यै:, तथाभृताः, यद्वा, परिहृतं. कपटं, व्याजस्तुतिः, ( निम्दास्तुतिरितियावत् )

कीरकुचीकूचीकूताः, ऋगृहीतगह्नराः, न्यकृतनिकृतयः, प्रसन्नप्रकृत यः, विगतविकृतयः, परपरिवादपराचीन चेतसः, वर्णत्रयव्यावृत्तिविशुद्धान्थसः, धीरधिषणावधूताध्येषणाः, श्रसङ्क सुकस्वभावाः, प्रण्तप्रण्यिनः शमितसमस्तशास्त्रान्तर संशीतयः, उद्घाटितसमस्त्रशंथार्थप्रन्थः, कवयः,

कीराणां, कुर्चाकूचाः, श्रनर्थकशब्दालापाः, तेषु, श्राकूतं, श्राभिप्रायः येः, तथोक्ताः । ( यथापाठिताहिशुकाः, रज्जयन्तिलोकानां मनांसि, परं नहि तेषां तादशी प्रवृत्तिः, परमते बाह्मणास्तुसमन्यवहारिणोनकापटिका वाचाला इति-भावः ) श्रागृहीतेति—श्रगृहातगह्नराः, न गृहीतं, भृतं. गह्नरं, पापं. भैंः, तथोक्काः । न्यक्कृतेति--न्यक्कृताः, तिरस्कृतां निकृतिः, शाठ्यं, येः, तथा-भूताः । प्रसन्नेति-प्रसन्ना, शुद्धाः प्रकृतिः, स्वभावः, येषां ( सौम्या इति-यावत् ) विगतेति—वगता, विकृतिः, विकारो येषां ते, ( ऋविकृतिचत्ता इतिभावः ) परंति-परंषां, परिवादं, निन्दायां, पराचीनं, पराङ्मुखं, चेतः, येषां (पर्रानन्दा रहिता इत्यर्थः) वर्णोति—वर्णत्रयाणां, चत्रिय, वैश्य, राह्माणां, व्यावृत्त्या, विवज्जेने ( प्रतिप्रहादि वेमुख्येनेतिभावः ) विशुद्धानि, पवित्राणि, अन्धांसि, अन्नानि, वेषां तथामूताः । धीरेति— घोरा, धैर्यशाल-नी, या, धीषणा, बुद्धिः, तया, श्रवधूता, तिरस्कृता, श्रधेषणा, याञ्चा, यै:, तथाभूताः, ( परिस्क्रियाचनमित्यर्थः ) श्रसङ्कसुकस्वभावाः. श्रसङ्कसुकः, स्थिरः मृदुक्ष, स्वभावः, येषां, तथोक्षाः । प्रणत प्रणयिनः, प्रणतेषु, नम्रेषु जनेषु, अनुरागिणः । शमितेति—शमिता, शान्तिनीता, (सिद्धान्तेन निराष्ट्रतेस्वर्धः) समस्ताः, समप्राः, शाखान्तरागां, कठादि वैदिक शाखाविशेषागां, शंशोति, संशयः, यैः, तथाभृताः । उद्घाटितेति—उद्घाटिताः, स्फुटिकृताः, ( व्याकृ-ताइतियावत् ) समप्रातां, सम्पूर्णानां, प्रन्थानां. शास्त्रागां, ऋर्धमन्थयः, ग्ढार्थाः यैः, तथोकाः, ( शास्त्र संशयदृत्तिकरणशीला इतियावत् ) कवयः, काव्यनिर्मातारः, वाग्मिनः, सुवकारः, विमत्सराः, वि-विगतः, मत्सरः, द्वेषभावः

वाग्मितः, विमत्स्र सः, सरसंभाषितव्यसनिनः, विद्ययपरिहासवेदिनः,परि-चयपेशलाः,नृत्यगीतवादिवेष्ववाद्याः, ऐतिद्यस्यावितृष्णाः, सानुक्रोशाः, सत्यशुचयः, साधुसंमनाः, सर्वसत्त्रसौहाईद्रवार्द्रहृदयाः, तथा सर्वगुणो-पेता राजसेनानभिभूता:, चमामाज त्राश्रितनन्दनाः, त्र्यनिश्विशा वि-द्याधराः, श्रजडुाः कलावन्तः; श्रदोषास्तारकाः; श्रपरोपतापितो भास्व- <sup>ह</sup> ग्रेषां तथे हाः । **सरसेति**—सरसं, रस<mark>युक्तं, भा</mark>षितं, वचनं, तत्र, व्यसनिनः, (सद्भाषेण इतियावत् ) विद्राधेति—विदाधः, चतुरः, यः. परिहासः, केलिः तद्वेदिनः, ज्ञातारः । परिचयपेशलाः, परिचयेषु. संस्तत्रेषु (सर्जानंगितियावत् ) पेशलाः, निपुर्गाः । त्रत्यवादिघेषु, नर्तनगानादिषु, श्रवाद्याः, वहिर्भाव रहिताः, ( सर्वज्ञ इतिभाकः) ऐतिस्थस्य, इतिहासस्य, श्रवितृष्णाः, श्रासक्ताः, ( इति-वृत्र ज्ञानिन इतिभावः ) सानुक्रोशाः, सदयाः । सत्यशुचयः, सत्येन शुचयः, प्रताः । साधुसम्मताः, सज्जनमान्याः । सर्वेति सर्वेषु, सत्त्रेषु, जीवेषु, सीहा-र्द्रहर्षेण, मैत्रीभावेन, आई, क्रिप्थ, हृदयं, येषां तथाभृताः । सर्व गुणोपेताः, क्वेंक्ष्र गुर्तोः, दाक्षिण्यादिभिः, उपैताः, युक्ताः, राज्ञः, रूपस्य, सेनया, सैन्येन, श्रनभिभृताः, । श्रनांकान्ताः, (ये तु सर्वेर्गु सः सत्तरजस्तमादिभिर्यु कास्ते राजसेन रजः सम्बधिगुर्गानदम्भाइंकारादीना इतिभावः ) श्रानिभूताः, श्रापरा-जिताः, रजोगुरा रहिता भवन्ति इति विरोधः । परिहारस्तुप्राक् । समाभाजः, समा, पृथ्वी, तां, भजन्ते, ते, श्राश्रितरन्दनाः, श्राश्रितं, सेवितं, नन्दनं, तदाख्यं मुरोद्यानं ये: तथामृता: । पृथ्वी स्थितानां नन्दनाश्रयणमिति विरोध: श्रमाम्यत्वात् । परिहारे, समा, शक्तें सहिष्णुता, तद्भाजः (तद्वन्त इतियावत्) श्राश्रितनन्दनाः, श्राश्रितान्, श्रनुगतान् जनान्, नन्दयम्ति, श्रामोदयन्ति, तथाभृताः । श्रनिश्चिशाः, खङ्गवर्जिताः, विद्याधराः, देवयोनिविशेर्षाः, इति-विरोधः, तेषांखङ्गसामिप्यत्वात् । परिहारे-भ्रानिस्निशाः, श्रनिर्देयाः, विद्याधराः, विद्वांन्सः । श्रजङाः, श्रशीताः, ( उष्णोइतियावत् ) कलावन्तः वन्दाः ।

न्तः, श्रनुष्माणो हुतभुजः, श्रकुसृतयो भोगिनः, श्रस्तग्भाः, पुरयालयाः, श्रनुप्रक्रतुक्रिया द्चाः, श्रव्यालाः कामजितः, श्रासाधारणा द्विजातयः ।

( ये उष्णाभवन्तितेवर्धं चन्द्राः, इतिविरोधः, तर्य शीतरास्मत्वात् ) परिहारे-श्रजडाः, श्रमुखाः, कलावन्तः, चृत्यगीतादिपुनिषुणाः । श्रदोपाः, दोषारात्रि-स्तद्रहिताः, तारकाः, नक्तत्राणि, इतिविरोधः, रात्रिविना तारकोद्गमत्वात् । परिहारे-अदोषा: दोषरहिता: तारक:, तारयन्ति, उद्धरन्ति लोकानिति, तथा-भूताः ( उपदेष्टार इतिभावः ) ऋपरोपतापिनः, नपरान् , उपतापयन्ति, सन्ताः पयन्ति, इति. तथाभृताः, भास्वन्तः, सूर्याः, (ये, सूर्यास्तंकथं नापरसंताप कराः. ) इति विरोधः । सूर्यस्यतापहेषुत्वात् । यरिहारे-ग्रपरे पतापिनः, परान् न उपतापयन्ति, पीइयन्तीति तथाभृताः । मास्वन्तः, प्रभाशालिनः, ( लोक समाजेषु दीप्यमाना इतिभावः ) श्रनुष्माराः, शीताः, हुतभुजः, श्रग्नयः, इति विरोधः, श्रानः, उष्णात्वात् । परिहारे श्रनुष्माणः, उष्मरहिता, ( श्रीरावीइति-यावत् ) हुतभुजः, हुतं; यज्ञेषु देदभ्योदत्तं, तं भुक्रते, इति तथाभृताः ( यज्ञा-वशिष्टाशिनइतिभावः ) अकुसतयः, नास्ति, को, पृथिव्यां, विवरे वा, सृतिः, गति:, स्थिति:, वा येषां, तथा मृता:, भोगिनः, सर्पा:, इति विरोधः, (सर्पाणां-विवरेष्ट्रिथिच्यां वा अनवस्थानमसम्भवत्वात् ) परिहारे-अञ्चरतयः, अञ्च-अञ्च-सिता, स्रतिः, गतिः, श्राचारः, येषां, तथाभूताः, भोगिनः, संसार सुरूभोग-वन्तः । श्रस्तम्भाः, स्तम्भः, स्थूर्गाः, तद्रहिताः, पुगयालयाः, पुगयस्थानानि ( मन्दिराणीतिभावः ) इति विरोधेः । "स्तर्मीवना गृहस्थित रसम्भवात् । परिहारे-स्तम्भः, कामजनित सात्विकभावः, तद्रहिताः, पुरुयालयाः, पुरुयवन्तः । अलुप्तेति - न लुप्ता, अनष्टा, ऋतुकिया, यज्ञानुष्ठानं, येषा तथाभृताः, दज्ञाः दत्तः, प्रजापतिः, सः, इतिविरोधः, ( हरकोपेन तस्य यज्ञ विर्धासतत्वात् ) परिदारे-दत्ताः, चतुराः । श्रव्यालाः, संपेरहिताः, कामजितः, रुद्धाः, इतिवि-रोधः, महादेवेसततंसर्पसान्निम्यात् । परिहारे-ग्रन्यालाः, त्रहिस्राः. कामजितः,

तेषु चैवमुत्पग्रमानेषुः संसरित संसारे, यात्सुयुगेषुः श्रवतीर्गे कलौ वहत्सु वत्सरेषु, त्रजत्सु वासरेषु, श्रितकामित च काले, प्रसव-परम्पराभिरनवरतमापति विकासिनि वात्स्यायनकुते, क्रमेगा कुवेर नामा वैनतेय इव गुरुपच्चपातीद्विजो जन्म लेभे। तस्याभवन्नच्युत ईशानो हरः पाशुपतश्चेति चत्वारो युगारम्भा इव ब्राह्मतेजो जन्यमान-

कामजिथनः, ( निराभिलाष, इत्यर्थः ) श्रसाधारणाः, श्रसामान्याः, द्विजातयः ब्राह्मणाः, द्विजन्मानः, द्वाभ्यां गर्भसंस्काराभ्यां जायते इति द्विजन्मा। तेषु च, एवं, श्रनेनप्रकारेगा, उत्पद्ममानेषु, जायमानेषु, संसरति, चलति, मंसारे, जगित, यात्सु, गच्छम्, सत्यद्वापर त्रेतादिषु, श्रवतीर्गे, प्रादुर्भ्ते, कलो, कलियुगे, बहरसु, श्रातिकामत्सु, वत्सरेषु, व्रजत्सु, गच्छसु. वासरेषु, दिवमेषु, त्र्यातिकामति, गच्छति, च, काले, समये, ( प्रागभिहिते इतियावत् ) प्रमव परम्पराभि:, श्रपत्यजनमप्रवाहै:, श्रनवरतं, निरन्तरं, श्रापतित, परि-वर्द्धमाने, विकासिनि, विराजमाने, वात्स्यायनकृले, वंशे, क्रमेरा, जनपरम्पर या, वैनतेय इत्र, 'विनतायाः श्रपत्यं पुमान् वैनतेयः'' गरुहः, स इव, गुरू पद्मपाती, गुरी, श्राचार्ये, पितरि वा, पद्मपातः, भिक्तः, विद्यते श्रस्येति तथा-भतः, ( पत्ते ) गुरूभ्यां, महद्भयां, पत्ताभ्यां, पतित, उद्गच्छतीति तथाभृतः, द्विजः, (द्वाभ्यां जनम संस्काराभ्यां जायते इति द्विजः, ब्राह्मणः) (पन्ने) द्वाभ्यां जन्मागड जाभ्यां जायते इतिद्विजः, पत्नी । कुत्रेरनामा कुत्रेराभिधेयः, जन्म लेमे, श्रजायत । तस्य, कृतेरस्य, युगारम्भा इव, युगानां, सत्यादीनां, चतुर्गां, त्रारभ्भाः, प्रथम प्रवृत्तयः, ते, इव । **ब्राहमेति**—ब्राह्म', वैदिकं, तेजः, तेन, जन्यमानः, उत्पद्यमानः, प्रजानां, सन्ततीनां, विस्तारः येषां, तथोक्ताः, (पद्मे) ब्राह्मणः, विधातुरिदं ब्राह्मं, यत् तेजः, तेन, ( मनः प्रभविणोतिभावः ) जन्यमानः, प्रजाविस्तारः, येषु, तयाभूताः । युगारौ ब्रह्मणः सनकसनन्दना-दीनां चतुर्गांपुत्राशां मानमसृष्टिः, ततः जन्म हास कारणात् , सङ्कल्पान्मे-

प्रजाविस्तारा नारायण्वाहृद्ग्डा इव सञ्चक्रनन्द्कास्तनयाः । तन्न पाशुप्तस्येक एवःभवद्भूभार इवाचल कुलिरथितिश्चतुरुद्धिगम्भीरोऽर्थ-पतिरितिनाम्ना, समप्राप्रजन्मचक्रचूडामिण्मिहात्मा सूनुः ।

सोऽजनयद्भृगुं हंसं शुचि कविं महीदत्तं धर्म जातवेदसं चित्रभातुं त्र्यज्ञम् । श्रहिदत्तं विश्वरूपञ्चेति—एकादश रूद्रानिव सोमामृतरसशीक-

धुनः च सृष्टि रिति शास्त्रे ऽवधेयम् । नारायग्रस्य, विष्णोः, वाहुदग्डा, भुज-दग्डा, इव, (विष्णोधतुर्भु जत्वात् ) सचकनन्दकाः, सतां सज्जनानां, चकं, समाजं, नन्दयन्ति, श्राह् लादयन्ति, इति तथाभृताः, (पच्ने) सत्, तिष्ठत्, चकं, मुदर्शनं, नन्दकः, खङ्गः येषुतथोक्काः । तनयाः, श्रच्युतादयः, एकादश-पुत्राः, श्रभवन् , बभ्वुः । तत्र (कुले इतियावत् ) पाशुपतस्य, एकः-एव, भुभार इव, भुवः पृथिव्याः, भार इव, श्रचल कुलस्थितिः, श्रचला, स्थिरा, कुलस्य; वंशस्य, स्थितिः, यस्य, तथाभृतः (पच्ने) श्रचलानां, पर्वतानां, कुलेः, सम्हैः (सप्तिः, कृलपर्वते रितिभावः) एवं स्थितिर्यस्य तथोक्कः । (शेषशिरं स्थायाः, भूमेः नमनोक्तमन निवृत्यर्थं परितः पर्वतानामवस्थापनादिन्तिभावः) चतुरुद्धिगम्भीरः, चत्वारः, उद्ध्यः, समुद्राः, तद्वत् गम्भीरः (महाप्रभावत्वादिवकार्यस्य) (पच्ने) चतुर्भिः, उद्धिभिः, समृहैः, गम्भीरः, वेष्ठितः, इतिभावः । श्रथपतिनाम्ना समग्रेति—समग्रणां, श्रप्रजन्मनां, श्राद्माणां, च्यस्य सन्दुन्य, चूहामिणः, शिरोरक्रभूतः (श्रप्रगण्य इतियावत् ) महात्मा-स्नुः, पुतः श्रभवत् , बभ्व ।

सः, ऋषिपतिः, सृगुंहंसादीनेकादशरूद्धानिव, सोमेति—सोमः, तत्ताम लताः, तस्य, श्रमृतमिवरसः, (यज्ञशिष्ट इत्यर्थः) तस्य, शीकरः, विन्दुभिः, ह्युरितं, (पूर्णिमितियावत्) मुखं, येषां, (यज्ञकर्तृत्वात् सोमरस पायिन इति-भावः) (पत्ते) सोमस्य, चन्द्रस्य, श्रमृतरसानां, निः स्त किरणद्रवाणां, श्रीकरेः, ह्युरितमुखान्, श्रावृतवदनान्, पवित्रान्, विशुद्ध प्रवृत्तीन्, पुत्रान्, रच्छुरितमुखान्पवित्रान्पुत्रान् । श्रलभत च चित्रभानुः स्तेषां मध्ये राज-देव्यभिधानायां ब्राह्मण्यां वाग्मात्मजम् । स बाल एव विधेर्बलवतो वशादुपसम्पन्नया व्ययुज्यत जनन्या । जातस्त्रेहस्तु नितरां पितेवास्य मातृतामकरोत् । श्रवर्धत च तेनाधिकतरमेघीयमानघृतिर्धान्नि निजे । कृतोपनयनादिकियाकलापस्य समावृत्तस्य चतुर्दशवर्षदेशीयस्य पिता-पि श्रुतिस्मृतिविहितं कृत्वा द्विजजनोचितं निखिलं पुण्यजातं काले-नादशमीस्थ एवास्तमगात् । संस्थिते च पितरि महता शोकेनाभी-

तनयान् , अजनयत् । तेषां ( पुत्राणांमध्ये ) चित्रभानुः, तदाख्यः, राजदेव्य-भिधानायां, राजदेवी समाख्यायां, ब्राह्मस्यां, बार्गा, बार्गा नामानं, त्रात्मजं, पुत्रं, त्र्यलभन, प्राप्तवान् । सबागाः, विघः, देवस्य, बलवतः, प्रवलस्य ( महा-दुर्भाग्यस्वेतिभावः ) वशात् , प्रभावात् , उपसम्पन्नया, मृतया, जनन्या, मात्रा, व्ययुज्यत, वियोगितः । जातेति-जातः, उत्पन्नः, स्नेहः, प्रेम, एवंभूतः, पिता एव, श्रस्य ( वाणस्य ) मातृतां, मातृभावं, श्रकरंत् , चकार । तेन, ( चित्रभानुना ) अधिकतरं, वहुवियं, यथास्यात्तथा, एधीयमाना, ( इश्यते-त्रक्षिरनेनेतिएथः, त्र्यविश्वज्वालन काष्टं, तद्वदाचर्यमाना, उद्दीप्यमाना, धृतिः, धैर्यं, यस्य, तथाभृतः, स. निजंधाम्नि, स्वकीयेग्रहे, ऋवर्धत, ऋपालयत् , ( च-इतिसमुचयार्थ वोधकमव्ययम् ) कृतेति-कृतं, विहितं, उपनयनादि, किया कलापं, किया समूहं, यस्य, समावृत्तस्य, स्नातकस्य, ( वेदाध्यथनात्वरं समावर्तनंनामसंस्कार संस्कृतस्येतिभावः ) चतुर्दशवर्षदेशीयस्य, चतुर्दशवर्षा-यस्य, श्रुति स्मृति विह्तिं, श्रुतिः, वेदः, स्मृतिः, धर्मशास्त्रं, तद् विहिनं, कथितं, द्विजजनोचितं, ब्राह्मणजन योग्यं, निखलं, सम्पूर्णं, पुरायजातं, ( श्रीतस्मार्तिकयानिचयमितिभावः ) श्रदशमीस्थः, ''शतायुर्वेपुरूषः,'' इत्युक्तेः, त्रायुषो दशधाविमागे दशमीनाम त्रान्त्रिमावस्था, तत्र, विष्ठतीतिदशमीस्थः, स न विद्यते श्रम्येति-श्रदशमीस्थः (श्रपूर्णावस्थायामेवेतिभावः ) श्रस्तमगात्,

लमनुप्राप्तो दिवानिशं दद्यमानहृदयः कथंकथमपि कतिपयान्दिवसाना-त्मगृहे एवानैषीत् । गतं च विरलतांशोके शनैः शनैरविनयनिदालतया स्वातंत्र्यस्य, कुतृहलबहलतया च वाल भावस्य, धेर्यप्रतिपद्गतया च योवनारम्भस्य, शेशवोचितान्यनेकानि चापलान्याचरत्रित्वरो बभूव। त्रभवंश्चास्य वयसा समानाः सुहदः सहायाश्च । तथा च । भ्रातरो पारशवौ चन्द्रसंनमातृषेग्गौ, भाषाकविरीशानः परंमित्रम् , प्रग्ययनौ परलोकमगमत् । संस्थितं, मृतं, पितरि, महता शोकंन, श्रातिदुः बेन, श्राभीलं, कष्टं, श्रनुप्राप्तः, पतितः, दिवानिशं, नक्षं दिनं, दत्यमानदृदयः, प्रज्विति-चित्तः, करंकथमपि, केनापिपकारेण, कतिपयान्दिवसान् , दिनान् , श्रात्मगृहे, स्वारमनि, एव, खनैषीत् , व्यतीतयत् । विरत्ततां, खल्पतां, गते, प्राप्ते, शोके, शर्ने: शर्ने:, मन्दं मन्दं, श्रविनय निदानतया, श्रविनय:, दुराचार:, ( मदीद्ध-त्यमितियावत् ) तस्य, निदानं, मूलकारगां, तस्यभावः, तत्ता, तया, स्वातन्त्र्य-स्य, स्वाधीनायाः, कुतुहलं, ग्राथर्यं, तस्य, वहलतया, ग्राधिक्येन, बालभावस्य शिशुत्वस्य, वैर्यप्रति पज्ञतया, वैर्यविरोधि ध्या, यौवनारम्मस्य, प्रौढावस्थायाः । शेंशवोचितानि, वाल्योचितानि, त्रानेकानि, वहूनि, चापलानि, त्राचरन् , इत्वरः गमनशीलः, वभूव, अभवत्। अभवंश्वेत्यादिना आत्मनः सर्वविध कला विशारदत्वं प्रकटयति । त्र्यस्य, बागास्य, वयसा समानाः, समान वयस्काः, ( ब्राह्मणात् शूद्र कन्याया मृहायां जातीं पारशर्वो ) सुहृदः, मित्राणि, सहा-याश्च, श्रभवन् , बभुबु, l भ्रातरीं, पारशवीं, चन्द्रसेनमातृषेगीं, तन्नामाभि-घेयों, भाषाकविः, भाषायां. ( संस्कृतादिवाक्ये इति यावत् ) कविः, काव्यर-चियता, यद्वा, भाषाः, गेयवस्तुवाचः, तासु ऋविः, गाथादिषुगीतिनिर्माता, ईशानः, तन्नामधेयः, परं, उत्कृष्टं, मित्रं, सुहत् । रुद्र नारायणी, तन्नामकी, यद्वा, विष्णु महेशी, प्रणयिनी, प्रेमपात्री, वार बाण बासबाणी, तदाख्यी, विद्वांसी, परिडती, वर्शकविः, वर्श रचनायां कविः, वेशीभारतः, तदाख्यः।

रूद्रनारायगो, विद्वांसोवारवाण्यवासवाणो, वर्णकविवेंग्रीभारतः, प्राकृतकृत्कुलपुत्रो वायुविकारः, बन्दिनावनङ्गवाण्यसूचीवाणो, कात्यायिनका चक्रवाकिका, जांगलिकोमयूरकः, ताम्बूलदायकश्चण्डकः, भिषकपुत्रो मन्दारकः, पुस्तकबाचकः सुदृष्टिः, कलादश्चामीकरः, हैरिकः सिन्धुषेणः, लेखकोगोविन्दकः, चित्रकृद्वीरवर्मा, पुस्तकृत्कु-मारदत्तः, मार्दङ्गिको जोमृतः, गायनौसोमिलमहादित्यौ, सेरिन्धी कुर-ङ्गिका, वांशिकौ मधुकरपारावतौ, गान्यवीपाध्यायो दर्दुरकः, संवाहिका केरलिका, लासकयुवा ताण्डविकः, श्चाचिक श्राखण्डलः, कितवो

प्राकृतकृत् , प्राकृतभाषानिर्माता, वायुविकारः, तन्नामा । वन्दिनी, स्तुतिपाठकी, वारासूचीबार्गो, तदाख्यों। कात्यायनिका, विभवास्त्री। चक्रवाकिका, तदाः ख्या । जाङ्गुलिकः, विषवैद्यः, मयूरकः, तदाख्यः, ताम्बूल दायकः, पर्णविकेता चन्द्रकः, तदाख्यः । भिषकपुत्रः, वैद्यसुतः, मन्दारकः, तन्नामा । पुस्तकचवाकः वक्का, सुरुष्टिः, तदाख्यः । कलादः, स्वर्णकारः, (स्वर्णकारः कलादः स्यात्तध्य-चस्तु हैरिकः) चामीकरः, तमामा । हैरिकः, हीरकपरयोपजीवी, सिन्धुषेराः, तदाख्यः । लेखकः ( पुस्तकस्वेतियावत् ) गोविन्दकः, तन्नामधेयः । चित्रकृत त्रालेख्यकर्ता, वीरवर्मा, तन्नामा । पुस्तकृत् , प्रन्थकर्ता, यद्वा, पुस्तं, लेप्यादि शिल्प कर्म, तत्कृत्, शिल्पकर्मकारी, कुमारदत्तः, तदाख्यः। मार्दक्षिकः, मृदङ्गवादकः, जीमूतः, तन्नामा, गायनो, गायको, सोमिलप्रहादित्यो, तन्नामानी मैरिन्ध्री, प्रसाधनोपचारज्ञा, कुरङ्गिका, तन्नन्नी । वांशिको, वंशीवादको, नधुकरपारावती, तन्नामानी, गान्धर्वोपाध्यायः, गान्धर्व सङ्गीतशास्त्री, तस्य, उपाध्यायः, पाठकः, दर्दुरकः, तदाख्यः। संवाहिका, सेविका, केरलिः।, तजाम कापि स्त्री । लासकः, नर्तकः, स च, श्रसौ, युवा, तरुणः, तागडविकः, तदाख्यः । श्राचिकः, श्रचैः, पाशकैः, दीन्यति, कीड्तीति, श्राचिकः, यूत-करः, त्राखराडलः, तदाख्यः । कितवः, धृर्तः, भीमकः, तन्नामा । शंनाली,

भीमकः, शैलालियुवा शिखण्डकः, नर्तकी हरिग्गिका, पाराशरी सुमतिः, चपणुको वीरदेवः, कथको जयसेनः, शैवो वक्रघोणः, मन्त्रसाधकः करालः, ऋसुरविवरव्यसनी लोहितात्तः, धातुवादविद्विहङ्गमः, दार्दु-रिको दामोदरः, ऐन्द्रजालिकश्वकोराचः, मस्करी ताम्रचुडः । स एतैश्चान्यैश्चानुगम्यमानो वालतया निव्रतामुग्गता देशान्तरालोकन कोतुकाचिप्तहृदयः सत्स्विप पितृपितःमहोपाचेषु ब्राह्मगाजनोचितेषु स्वयंनर्तकः, सचासौ युवा, तयोक्तः, ( तरुणशैल्व इति यावत् ) शिखण्डकः, तन्नामा । हरिंगिका, तदाख्या, नर्तका । सुमतिः, तन्नाम्नी, पारशरी, भिन्तुः । वीरदेव:, तदारुय:, च्रपणक:, भिच्नः जयमनः, तन्नामा, कथकः, पुराणव्या-खाता । वक्रघोगाः, तदाख्यः, शैवः, शिवभक्तः । करालः, तन्नामा, मन्त्र साधकः, साधित मन्त्रः । ले.हिताज्ञः, तन्नामा, त्र्यसुर विवर व्यसनी, त्र्रासु-राणां, विवर, पातालमितिभावः । अथवा-अनुराणां, विवरं, रन्धं, (दोष इति यावत् ) तिसमन्वयसनीं, ( तज्ज्ञानानुशीलकङ्गिभावः ) विहङ्गमः, तदा-ख्यः, धातुवाद्विद्, धातवः, स्वर्णे रजतादयः, तेषां, उद्यते श्रानेनेतिवादः, गुगाः, तं वेत्तीति तथाभृतः । ( रसायन ज्ञाता इतिभावः ) दामोदरः, तदाख्यः दार्दु रिकः, वाद्यविशेष वादकः, अथवा-दर्दु राः, मेकाः, तान् वर्त्ताति, दार्टु-रिकः, ( भेकगुराज्ञ इतियावत् ) चकोराच्चः, तदाख्यः, एन्द्रजालिकः, इन्द्र जालविद्यावित् । ताम्रचृडः, तन्नामा । मस्करां, परिवाद्, ( सन्यासीति यावत् ) सः, बागाः, एतेः, पूर्वार्कः, ( सहचर्रेरिनियावत् ) अन्यैक्ष, अनुगम्यमानः, **श्रमुसर्यमाणः, बाल**तया, **शेंशव**त्वेन, निम्नतां, वश्यतां, उपगतः, प्राप्तः । देशान्तरेति—देशान्तराणां, विभिन्नदेशानां, श्रवलोकने, दर्शने, यत्, कंतुकं, त्रींत्सुक्यं, तेन, त्रान्निप्तं, त्राकृष्टं, ( नचधनले भादित्यर्थः ) हृदयं, यस्य, 🕯 तथाभूतः । सत्सु, विद्यमानेषु, त्र्यपि, पितृ पितामहोपत्तेषु, पेत्रिकेषु, बाह्मण जनोचितेषु, योग्येषु, विभवेषु, सम्पत्सु, श्रविच्छिन्ने, श्रवृटिते, विद्या प्रसङ्गे,

विभवेषु सति चाविच्छित्रे विद्याप्रसङ्गं गृहान्निरगात् । श्रगाच निरवप्रहो प्रह्वानिव नवयोवनेन स्वेरिणा मनसा महतामुपहास्यनाम् ।

श्रथ शतेः शनैरत्यु राष्ट्रयवहितमनोहिन्त वृहिन्त राजकुलानि वीच्यमाणः निरवद्यविद्याविद्योतितानि च गुरूकुलानिसंवमानः,महार्हाऽ लापगम्भीर गुणवहोष्ट उपतिष्ठमानः, स्वभावगम्भीरधीर्धनानि विद्यध-मण्डलानि च गाहमानः, पुनरपि तामेव वैपश्चितीमात्मवंशोचितां प्रकृतिमभजन् । महतश्च कालात्तामेव भूयो वात्स्यायनवंशाश्चयामात्मनो जन्मभुवं ब्राह्मणाधिवासमगान् । तत्र च चिरदर्शनादिभनवीभूतस्नेह-

विद्याऽनुशालने, सित, गृहात्, निरगात्, श्रगमत् । निरवग्रहः, स्वतन्त्रः, श्रह्यानिव, भृताविष्ट इव, स्वैरिखा, स्वेच्छाचारवता, मनसा, चेतसा, महतां, सज्जनानां, उपहास्यतां, उपहास पात्रतां, श्रगात्, प्राप, च, ।

ऋशेति—शनें: शनें:, क्रमेण, ऋत्युदारा, महती, या, व्यवहृति, व्यवहारः, ( आचारइतिमावः ) तया, मनोहृन्ति, यानि, तद्वन्ति, वृहृन्ति, राजकृतानि, राजकानि, वीच्यमाणः, पश्यन, निरवयोति—निरवयाभः, श्रमिन्दनीयाभः, विद्याभः, क्रेशलादिभः, विद्योतितानि, शोभमानानि, गुरू-कुलानि, अध्ययनस्थानानि, सेवमानः । महाहेंति—महाहाः, मधुराः, श्रालापः, वचनानि, तेः. गम्भीराः, प्रदीपाः, गुरावत्यः, विविधगुराशालिन्यः गेष्ट्यः, समाजाः, ताः, उपिष्ठमानः. सेव्यमानः । स्वभावेति—स्वभावेन, प्रकृत्या, गम्भीरागिः, धीरागिः, धीरागिः, धीर्यमानः, प्रज्ञाधनानि, येषां तानि, विद्यधमगडलानि, विद्यजनसम्हानि, गाहमानः, आश्रयन् । गाहमानः इत्यनेन, स्चितमात्मनस्तेजस्त्वम् । पुनरपि, पुनश्च, तामेव, वेपश्चितीं, विद्वजनोचितां, प्रकृतिं, स्वभावं, अभवत् , अस्वप्त् । महतश्च कालात्, आति समयानन्तरं, भृयः, पुनः, तानेव, वात्स्यायन वंशाश्रयां, वात्स्योयन वंशोद्धवैरलंकृतां, श्रारमनः, स्वस्य, जनमभृमिं, ब्राह्यणाधिवासं, विद्राध्युषितं, पुरं, नगरं, श्रगात

सङ्गवैः ससंश्रमप्रकटितज्ञातेयैराप्तेकत्सबदिवस इवानन्दिताभिगमनो बालमित्रमण्डलस्य मञ्यगतोमोत्तसुखमिवान्वभवत् ।

> इति श्रीबाणभद्रकृते हर्पचरिते वात्स्यायन, वंशवर्णनंनाम प्रथम-उच्छ्वासः।

तत्र, पुरे, चिरदर्शनात् , कालान्तरावलोकनात् । श्रामनवामृताः, नूतनतांयाताः स्नेहसद्भावाः, येषां, तथामृतैः । ससंस्तवंति—ससंस्तवं, सपरिचयं, (सादर मितियावत् ) प्रकटितं, प्रकाशितं, ज्ञातयैः, कृटुम्बिजनैः, श्राप्तेः, श्रार्त्तायः, रक्षित्यावत् ) योगिमिः, उत्सवदिवस इव, श्रानन्दितः, श्रालहादितः, श्रामिगमनः, सहचराः, येन, एवंभृतः, वालमित्रमण्डलस्य, शेशवसप्तस्मृहस्य, (पत्ते ) वाल-इव (निस्तेजस्त्वादितियावत् ) यः मित्रः, नवसूर्यः, तस्यमण्डलं, विम्बं, तस्य, मध्यगतः, मोत्तसुखिमव, निर्वाणानन्दिमव, श्रन्वभवत् , श्रनुभूत् वान् । श्रास्त्रायिकासुकविभिनिजवंश वर्णनंकियते, श्रतः पूर्वप्रसङ्गेन, वाणेन्वार्रिष, हर्षचरित पूर्व प्रसङ्गेकिमध्यालेखि स्वकीयं वृत्तमिति । इति श्रीबाणभद्य कृतहर्षचरित व्याख्यायां, श्रामुतोषिएयां प्रथम-उच्छ्वासः ।





श्री कृष्ण जी

## श्रीहर्षचित्तम्द्वितीय-उच्छ्वासः

स्रितिगर्स्भारं भूपे कृप इव जनस्य निरवतारस्य। द्रश्चतिसमीहितासद्धिं गुणवन्तः पार्थिवा घटकाः॥१॥ रागिणि निलने लक्ष्मीं दिवसो निद्धातिदिनकर प्रभवाम्। स्रनपेत्तित गुणदोषः परोपकारः सतां व्यसनम् ॥२॥

त्र्यनुकूलमुपायमाश्रित्याशङ्कते श्रीहर्पात् स्वभिप्स्तिम्— श्रतिगम्भीरेति-श्रत्यधिकं यद् गाम्भीर्ये, तस्मिन्, एवं भूते ''पत्ते'' दुरवगाहत्वं, यत्र, भूषे, राजनि, कूपइव, निरवतारस्य, निः-नास्ति, त्र्रवतारः,त्र्रवतरगां, सुसहायकादीनामाश्रयो यस्य, तथाभूतस्य, "पत्ते" सोपानादि विरहितस्य, जनस्य, लोकस्य, गुगावन्तः, गुगाः विद्याविनयादयस्तैर्युक्ताः, (पत्ते ) रज्जुवन्तः, पार्थिवाः, राजनः, एव, घटकाः, योजकाः, (सहायभूता इतिभावः) (पत्ते) पार्थिवाः, पृथिव्या, भुवः सम्भूताः ( मृष्मया इतिभावः ) घटाः, एव, घटकाः, कलसाः, समीहितसिद्धि, राजभवनेप्रवेशरुपिमष्टसाफल्यं (पत्ते) सलिलोत्तोलन रूपमिष्टसिद्धि, द्धाति, सम्पादयन्ति । त्र्यवतरिणकादि-रहितेनाति दुरवगाहा इतिगम्भीरादपि कूपात् रज्ज्वादिमुक्तेन कुम्भेन यथा जलमधिगम्यते, तथैवातिगम्भीरतया दुरधिगम्यादपिराज्ञोगुणवतां सहायकानां सम्पर्केगा जनस्याभिवाञ्छितसिद्धिजीयते इतिभावः। एतेन भूपतो गुगावान ऋष्गा एव सहाय भूतो वागास्येष्टसिद्धि सम्पादयिष्यतीतिध्वनितम् । भूपे कूपस्यावैधर्म्यसाम्यप्रतीतेरत्र, श्लेषोपमालङ्कारः । श्रर्यावृत्तम् ॥ १ ॥

परोपकार प्रिया हि मानवाः गुर्गादोषाननवलोक्येवपरेषामुप कुर्वते । रागिणीति—दिवशः, (दिवाभागे इतियावत्) रागिणि, त्रथ तत्रानवरताध्ययनध्वनिमुखराणि, भस्मपुण्ड्रक-पाण्डुरललाटैः कपिलशिखाजालजटिलैः कृशानुभिरिव कतु-

रागमिस्मन्—अस्ति रागिणि, लोहितरागवित, (पन्ने) अनुरागयुते, निलने, कमले दिनकरप्रभवां, दिनङ्करोतीित दिनकरः सूर्यस्तस्य, प्रभोत्पन्नां, लक्मीं, श्रियं, (शोभामितिभावः) (पन्ने) सम्पर्दं, निद्धाति, द्दाति, तथाहि, अनपेक्तितो, अविचारितो, गुण दोपो यत्र, तथोक्तः, परोपकारः, परेषामुपकृतिः, सतां, सज्जनानां, व्यसनं, (अतिमितिभावः) भविति। साधवः न विचारयन्ति गुणादोषान् परेषामुपकृतिरेवाश्रयते तेः। अनेन परोपकारीकृष्णः—एवं विध गुणासम्पन्ने बाणोराजसम्पदमाधास्यति-इति-सूचितम्। पूर्वाधेंचात्र अप्रस्तुतस्य निलनेदिनकृत लक्मी निधानस्योपन्यासेन, बाणाभट्टं कृष्णाविहिनायाः, श्रीहपेस्य सभापण्डितसोभाग्यलक्मीः निधानकृपस्य प्रस्तुतस्य प्रतीतेर प्रस्तुतप्रशंसाऽलंकारः, "अप्रस्तुत प्रशंसास्यात्सायत्र प्रस्तुताश्रया।" उत्तरार्धे च सामान्यत्या प्रथमार्धगतस्य सोपपत्तिकत्व विधानात् सामान्येन विशेषसमर्थनकृषोऽर्थान्तरन्यासोऽलंकारः, अत्रयोश्चाङ्काङ्गिभावत्वेनसंकरः।। २॥

ऋथेति—श्रथ-त्राह्मणाधिवासगमनानन्तरम्, तत्र (त्राह्मणाधि-वासं) अनवरतेति—श्रनवरतं, निरन्तरं, यत्, श्रध्ययनं, श्रधीतिः, तस्य, या ध्वनिः, शब्दः, तेन, मुखराणि, शब्दायमानानि, (बान्ध-वानां भवनानि, इत्यनेनान्वयः) भस्मेति—भस्मपुण्ड्केण, भस्मना कृतं यत् पुण्ड्कं तिलकं, तेन, पाण्डुराणि, धवलानि, ललाटानि, मस्तकानि, येषां, तथोक्तेः, (बटुभिरित्यनेनान्वयः) किपलेति— कपिलाः, पिङ्गलाः, ये, शिखाजालाः, चूड़ासमूहाः, (पन्ते) शिखा-जालाः, श्रचिसङ्घाः, तैः, जटिलाः, जटावन्तः, तैः (पन्ते) युक्ताः तैः लोभागतैर्बेटुभिरध्यास्यमानानि, सेकसुकुमारसोमकेदारिकाहरितायमानप्रधनानि, कृष्णाजिनचिकीर्णशुष्यत्पुरोडाशीयश्यामाकतग्डुलानि, बालिकाविकीर्यमाणनीवारचलीनि, शुचिशिष्यशतानीयमानहरितकुशपूलीपलाशस्त्रमिन्धि, इन्धन गोमयपिगडकुरसंकटानि, आमित्तीयक्तीरक्तारिणीनामित्रहोत्रधेनूनां
खुरचलयैविलिखिताजिरिवतिर्देकानि, कामग्डलब्यमृत्पिगडकृशानुभिरिव, अग्निभिरिव, कतोः, यक्तस्य, लोभान, मिषात्,
आगतैः, समुपस्थितैः, वटुभिः, ब्रह्मचारिभिः, अध्यास्यमानानि, अधिष्ठीयमानानि । सेकेति— सेकेन, सिललसेचनेन, मुकुमारा, मृदु
(सिनग्धा वा) सोमकेदारिका, यज्ञार्थरोपितंसोमवल्ल्याः स्वल्पंचेत्रं,
यत्र तया, (प्रचनेषु — अल्पतेत्रसम्भवत्वादितिभावः) हरितायमानानि,
श्यामायमानानि, प्रचनानि, श्रङ्गगानि, येषां, तानि । कृष्णाजिनेति—
कृष्णाजिनेषु, असित हरिणचर्मम्, विकीर्णाः, प्रिविप्ताः, शुष्यन्तः,

श्यामायमानानि, प्रधनानि, श्रङ्गणानि, येपां, तानि। कृष्णाजिनेति—कृष्णाजिनेषु, श्रसित हरिणचर्ममु, विकीर्णाः, प्रचिप्ताः, शुष्यन्तः, शोषमाप्नुवन्तः, ये, पुरोडाशीयाः, ह्व्याः, श्यामकाः धान्यविशेषाः, तण्डुलाः, येषु, तानि । बालिकेति—वालिकाभिः, कन्यकाभिः, विकीर्यमाणाः, प्रचिष्यमाणाः, नीवाराः, धान्यविशेषाः, एव, वलयः, पृजार्थं द्रव्याणि, येषु तानि । शुचीति—शुचयः, पृताः, ये, शिष्याः, श्रन्तेवासिनः, तेषां, शतैः, शतसंख्याकैः, श्रानीयमानाः, श्राहियमाणाः, हरिताः, श्यामवर्णाः, ये, कुशानां, दर्भाणां, पृत्यः, समृहाः, पलाशसमिधः, काष्ठानि, येषु तानि । इन्धनेति—इन्धनानां, काष्ठानां, गोमयपिण्डानां, उपलानां, च, ये कूटाः, राशयः, तैः, सङ्कटाः, सङ्कुलाः, येषु, तानि । श्रामिचीयेति—श्रामिचा, दुग्धद्धियोगः, (छाना इति प्रसिद्धा) तस्यै, हितानि, श्रामिचीयाणि, यानि चीराणि,

दुग्धानि, तानि, चरन्ति, तासां श्रिप्रहोत्र धेनूनां, क्रतवेपालितानांगवां,

मर्दनव्यप्रयतिजनानि, वैतानवेदीशङ्कव्यानामौदुम्बरीणां शा-खानां राशिभिः पवित्रितपर्यन्तानि, वैश्वदेविषण्डपंक्तिपाण्डुरि-तप्रदेशानि, हविधू मधूसरिताङ्गनविटिषिकसल्यानि,वत्सीयबा-लक्कालितलल्त्तरल्प्तर्णकानि, क्रीडत्कृष्णशारच्छागशावकप्रक-

ख़ुरवलयैः, शफ़्समृहैः, विलिखितानि, कुट्टितानि, श्रजिरेषु, श्रङ्गन वसुधासु, वितर्दिका, वेदिका, येषां, तानि। कामगडळव्येति— कमण्डलुः, मुनीनांजलपात्रं, तद्रशीमदं, कामण्डलव्यं, यत्, मृत्पिण्डं, तस्य, मर्दने, पेपगो, व्यप्रः, संलग्नः, यतिजनः, संन्यासिसमृहः, येषु तानि। वैतानेति-वितानः, ऋतुः, तस्मै, इयं, वैतानी, यज्ञीयाप्रिभूः, तादशा, या,वेदिः, तत्र शङ्कव्यानां, शङ्कवः, कीलकाः, तेभ्यो हिनानां, (शंकुसम्पादिनीनामितिभावः) श्रोदुम्बरीणां, तदाख्यवृत्ताणां (जन्तुफलकानामितियावत्) याः, शाखाः, तासां, राशिभिः, समृहैः । पवित्रेति—पवित्रितानि, पूतानि, यानि, पर्यन्तानि, प्रान्तभागाः, येषां तानि । वैश्वदेवेति-विश्वेभ्योः, देवेभ्यः, देयानि, पिण्डानि, श्रन्नानि, तेषां, पंक्तिभिः, राजिभिः, पाण्डुरिताः, धवलिताः, प्रदेशाः, येषु, तानि । हविरिति-हविषां, कत्नां, धूमैः, धूसरिताः, धूसरतांनीताः, श्रङ्गनविटिपनां, श्रजिर बृत्तार्गां, किसलयाः, पल्लवाः, येषु तानि । बुत्सीयेति बुत्सीयाः, वत्सेभ्योहिताः, (वत्ससेवाकुशला इतिभावः) ये बालकाः, मुनिशिशवः, तैः, लालिताः, श्रमेण्पोषिताः, ललन्तः, लम्फन्तः, तरलाः, चक्कलाः, तर्गाकाः, सद्योजातावत्सा, येषु तानि । क्रीड़दिति-क्रीडन्तः, चरन्तः, कृष्याशाराः, कृष्यावर्याः, येद्यागाः, (पशुविशेषाः) तेषां, शावकैः, शिशुभिः, प्रकटितः, प्रकाशितः, पशुबन्धः, (पशवो बध्यन्ते । यस्मिन् तथा भूतोयज्ञः ) तस्य प्रबन्धः (सातत्यमितियावत् ) येषु

टितपश्चबन्धप्रबन्धानि, शुकसारिकारव्धाध्ययनदीयमानोपाध्या-यविश्रान्तिसुखानि, साज्ञात्रयीतपोवनानीवचिरदृष्टानां बान्ध-वानां प्रीयमाणो भ्रमन्भवनानि, बाणः सुखमतिष्ठत्।

तत्रस्थस्य चास्य कदाचित्कुसुमसमययुगमुपसंहरन्नजृम्भत ग्रीष्माभिधानः संफुल्लमल्लिकाधवछाट्टहास्रो महाकाछः । प्रत्यग्रनिर्जितस्यास्तमुपगतवतो वसन्तसामन्तस्य वाछापत्ये-

तानि। शुकेति—शुकशारिकाभिः, कीरशारिकाभिः, त्रारब्धं, प्रकान्तं, यद् त्रध्ययनं, वेदानांपठनं, तेन, दीयमानं, सम्पाद्यमानं, उपाध्यायानां त्राचार्यागां, विश्वान्ति, सुखं, येषु तानि। त्रयी, ऋग्यजुः साम्नांत्रितयं, येषु तानि। तपोवनानीव। चिरदृष्टानां, बहुकालेनावलोकितानां, बान्धवानां, कुटुन्विनां, प्रीयमाणः, श्रत्यन्तप्रीतिमुपागतः, ध्रमन्, परिश्रमन्, भवनानि, गृहाणि, सुखं, त्रातिष्ठत्, तस्थौ। तत्रेति—तत्रस्थितस्य, श्रस्य, बाणस्य, कदाचित्, कस्मिश्चित्समये, कुसुम-समयस्य, वसन्तस्य, युगं, युग्मं, (मासद्वयमितिभावः) उपसंहरन्, दृरीकुर्वन्, प्रीष्माभिधानः, धर्मसमयः, श्रजृम्भत, प्रादुर्वभूव।

सम्फुललेति सम्फुल्ला, पुष्पिता, मिल्लका, तदाख्या, लता एव, धवलाः, शुम्राः, अहहासाः, हासविरोषाः, यत्र, तथाभूतः, महाकालः, ग्रीष्मः (पत्ते ) भयङ्करः । प्रत्यप्रनिर्जितस्य, श्रचिरविजितस्य, श्रस्तं, त्त्रयं, उपगतवतः गच्छतः, वसन्तः क्रसुमाकरः, एव, सामन्तः, सम्राट्, तस्य, वालापत्येषु, शिशुतनयेषु, इव, पयः पायिषु, सिललपान योग्येषु (पत्ते) दुग्धपायिषु । नवोद्यानेषु, विहारेषु, (पत्ते) नवं, नवीनं यदुद्गमनं येष्ं, तेषु (पृवेभेव संसारे श्रागमन प्रवृत्तिष्वितभावः ) दिशितस्नेहः, दिशितः, प्रकटितः, स्नेहः, प्रीतिः, येन, सः, मृदुः, कोमलः (पत्ते ) सदयः (ग्रीष्मसमयेनूतनानि, उद्यानानिसिच्यन्ते-इतिभावः)

ष्विव पयः पायिषु नवोद्यानेषु दर्शितस्नेहो मृदुरभूत्। श्रिभनवोदितश्च सर्वस्यां पृथिव्यां सकलकुसुमबन्धनमोत्त-मकरोत्प्रतपन्नुष्णसमयः। स्वयमृतुराजस्याभिषेकार्द्राश्चामरक-लापा इवागृह्यन्त कामिनीनां चिकुरचयाः कुसुमायुधेन। हिमदम्धसकलकमलिनीकोपेनेव हिमालयाभिमुखीं यात्रामदा-दंशुमाली।

श्रथ छलाटंतपं तपति तपने चन्दनछिखितछलाटिका-

श्रभिनवोदितेति — श्रभिनवोदितः, सद्योजातः; सर्वस्यां, श्रियिलायां; पृथिव्यां, भूमों; सकलानां, सर्वेषां, कुसुमानां, पृष्पानां; (वासन्तिकानामितिभावः) वन्धनमोत्तं, वृन्तस्वलनं, उष्णासमयः प्रीष्मकालः, प्रतपन्, (नवाभिषिक्तो हि नृप श्रानन्दातिशयात्कारासु पूर्वनिवद्धानां वन्धनमोत्तं सम्पादयति) स्वयं, श्रात्मनः श्रतु राजस्य, श्रीष्मस्य, श्रभिपेकार्षः, श्रभिपेकेन, स्नानेनः, श्रार्द्रः, (पत्ते) माङ्गलिकसलिलसिञ्चनस्यन्धादार्द्रत्वम् । चामरकलापाः, चामर वालब्यजनसमृहाः, इव, कुसुमायुधेन, कामेन, कामिनीनां, युवतिनां, चिकुरचयाः, केशकलापाः, श्रगृह्यन्त । (श्रीष्मसमये स्नानार्द्रतया श्रमंयमनात् श्रतिकोमलत्वेन प्रतीयमानाः युवतिनां विशेषण काममुद्दीपयन्तीति भावः) हिमेन, तुषारेणः, दग्धः, भस्मीकृतः, सकलानां, सर्वासां, कमिलनीनां, पद्मिनीनां, कोपेन, क्रोधेनः, इव, हिमालयाभिमुखों, तदाख्यपर्वतानुगामिनीं, यात्रां, गमनं; श्रंशुमाली, सूर्यः; श्रदात् (उत्तर दिशिमगमदितिभावः)

श्रथेति—ललाटं, मस्तकं; तपति, पीड़ग्रति, तस्मिन् (कठोरे—इति यावत्) तपने, सूर्ये तपति, द्योतमाने । "श्रसूर्य-ललाटयोर्ट शितपोः" श्रनेन खच्। चन्दनेन, लिखितः, रचितः, पुगड्कैरलकचीरचीवरसंवीतैः स्वेदोद्दिन्दुमुक्ताच्चलयवाहि-भिर्दिनकराराधननियमा इवागृद्यन्त ललनाललाटेन्दुभिः। चन्दनधूसराभिरसूर्यपश्याभिः कुमुदिनीभिरिव दिवसमसुप्यत सुन्दरीभिः। निद्रालसा रत्नालोकमपि नासहन्त दशः, किमुत जरठमातपम्। अशिशिरसमयेन चक्रवाकमिथुनाभिनन्दिताः सरित इव तनिमानमानीयन्त सोडुपाः शर्वर्यः। अभिनवपटु-

ललाटिका, भालालंकार एव, पुरुड्कं, तिलकं येषु तेः अलकाः, केशाः, एव, चीरचीवरं, वसनं, तेन, संवीताः; वेष्टिताः, तैः । स्वेदोदकस्य, धर्मजलस्य, विन्दवः, कर्णाः, एव, मुक्ताचवलया, मौक्तिक जपमालिकाः, तान , वहन्ति, धारयन्ति, तैः । दिनकरस्य, यद्, त्र्याराधनं, पूजनं, तस्य ये नियमाः, विधयः, ( व्रतानि वा ) ललनानां, स्त्रीगाां, ललाटेन्दुभिः मस्तकचन्द्रेः, अगृह्यन्त, इव। ( गृहीतमितियावत् ) ( धृत् पुरुड्को जपमालां गृह्णतीतितत्साम्यम् ) चन्दनेति—चन्दनेन, यद्वा, चन्दनवन् , धूसराः, ताभिः, सूर्यं न पश्यन्तीति, ताभिः, (सृर्योद्यादारभ्यास्तसमयान्तंकामिन्य त्र्यातप भिया स्वपन्ति सद्मसु कुमुदिन्यस्तुदिवा संकुचिता इत्युभयोः साम्यम् ) स्वापाधिक्ये त्र्रावस्थां वर्ण्यति-निद्रंति-निद्रया त्र्रालसा, दृश:, रत्नालोकं, रत्नप्रकाशं, श्रपि, (इति संभावनायाम्) नास-हन्त, न सोढ़ सक्ताः। किमुन, जठरं, कठोरं, त्र्यातपं, घर्म । त्रशिशिरसमयः प्रीष्मः, तेन, चक्रवाकमिथुनैः, चक्रवाकयुगलैः, श्रभिनन्दिताः, स्तुताः ( तेषां रात्रिषु वियोगात्स्वल्प रात्र्यभिनन्दनं युक्तमेव ) सोडुपा:, स चन्द्राः ( नज्ञािण ) सनौकाश्च । ( नदीषु जलाभावान्नो सहिता नद्यः च्रयंयान्तीतिभावः) शर्वर्यः, रात्रयः, तिनमानं, त्रालपतां, त्र्यातीयन्त, नीयन्ते। त्र्यभिनवेति-न्त्राभिनवः, चपापुंसि ) ईच्छा श्रभूत् ।

पाटलामामोदसुरभिपरिमलं न केवलं जलम् , जनस्य पवनमपि पातुमभृदभिलाषो दिवसकरसंतापात् ।

कमेण च खरखरमयूखे, खण्डिततडिच्छ्रेशवे, शुष्यत्सरिस, सीदत्स्त्रोतिस, मन्दिनर्भरे, भिल्लिकाभांकारिणि, कातरकपोत-कृजितानुबन्धबिधिरितविश्वे, विश्वसत्पतिलिणि, करीषंकपम-नृतनः पटुः, प्रसरन्, पाटलामोदः, पाटलस्याति निर्हारी परिमलः, तेन, सुरभिः, सुगन्धिः, परिमलः सुवासः, यस्य तत् न केवलं जलं, पयः, पवनं, वायुं, श्रापे, पातुं, पानाय, जनस्य, प्राणिनः दिवसकर-सन्तापात्, सूर्यतापात्, श्राभिलाषः श्राभिलषनं-श्राभिलाषः, ( घव्

क्रमेण इत्यतः—प्रावर्तन्तोन्मत्ता मातिरिधानः—इत्यनेनान्वयः। क्रमेण, खरखर मयूरवे,—खरः, तीच्णः, खरमयूरवः, सूर्यः, यिस्मन, तथाभूते, (निद्ाधकाले) इत्युत्तरिस्थितेन संबंधः। खिण्डतेति—खिण्डतं, निर्ज्ञितं, तिड्नां, विद्युतां, शेशवं, बाल्यं, (शिशु चापल्य-मितिभावः) येन, तथाभूते। (विद्युदालोकादिप श्रतितीच्णालोक-शालिनीत्यर्थः)। शुष्यदिति—शुष्यिन्त शोषं गच्छिन्ति, सरांसि, तड़ागानि, यिसमन् तथोके। सोदिदिति—सीदिन्ति, श्रवसादंगच्छिन्ति, स्रोतांसि, यिसमन् तादृशे। मन्दिनभारे—मन्दाः, स्वल्पाः, निर्भराः, प्रस्रवणानि, यत्र तथाभूते। सिल्लिकेति—भिल्लीकाः, जुद्राः कीटविशेषाः, तासांभङ्कारो विद्यते यिसमन् तथोके। कातरेति—कातराणां, प्रीप्मार्त्तान।मित्यर्थः। कपोतानां, क्रूजितानुबन्धेन, क्रूजनसात्त्येन, बिधिरतं, बिधरीकृतं, विश्वं, जगत्, येन तथाभूते। (श्रतीवमेदोमयन्त्व।त् दुःसहः प्रीष्मतापः कपोतानांकृते, श्रतः पतित्रत्वेऽपिपृथग्यहण्यमहण्यान् विश्वेसत्पतित्रिणि-विशेषण्यस्थननः, क्रान्तत्येतिभावः, पत-

रुति, विरस्रवीरुघि, रुधिरकुत्इस्रिकेसरिकिशोरकलिह्यमान-कठोरधातकीस्तबके, ताम्यत्स्तम्बेरमयूथवमथुतिम्यन्महामही-धरनितम्बे, दूयमानद्विरददीनदानाश्यानश्यामिकालीनमूकमधु-छिहि, छोहितायमानमन्दारसिन्दूरितसीम्नि, सिछिलस्यन्दसं-त्रिगाः, पित्तगः, (कपोतेभ्योऽन्येइतिभावः) यस्मिन् तथोक्ते। करीषङ्कषेति-करीषाणि, गोमयानि, कषन्ति, शोषयन्तीतितादृशाः, मस्तः, वायवः, यस्मिन् , तथाभूते । विरत्तवीरूधि, विरत्ताः, श्राल्पाः, वीरूथः, लताः यत्र तादृशे । रुधिरेति- रुधिरेषु, रक्तेषु, कुतूह्लिनः, लोलुपाइतिभावः । ये केशरिकिशोरकाः, सिंहशिशवः, तैः, लिह्य-मानः, त्र्यास्त्राद्यमानः, (रक्तथियेतिभात्रः) कठोरः, परिणतः, धातकी-स्तबकः, धातकीलतायाः पुष्पगुच्छः, यस्मिन् तथोक्ते । ताम्यदिति— ताम्यताम्, त्रातपतापेनिकाश्यतामितियावत् । स्तम्बरमयूथानां, हस्तिसङ्घानां, वमथुभिः, उद्गारैः, (करशीकरैरित्यर्थः ) तिम्यन्तः, आर्द्रीभवन्तः, महतांमहीधराणां, पर्वतानां, नितम्बाः, कटप्रकदेशाः यस्मिन् तथाभूते । दूयमानेति—दृयमानानां, ताम्यतां, द्विरदानां, हस्तीनां, दीनस्य, चीर्णतांगतस्य, दानस्य, मदस्य, त्राश्याना, ईषच्छुष्का, या श्यामिका, मङ्लेखा, तस्यां लीनाः, अतितर्षात् -संसक्ताः, मूकाः, त्रार्ततयानिःशब्दाः, मधुलिहः, भ्रमराः, यस्मिन् तथोके । होहितायमानेति—लोहितायमानैः, त्र्रालोहिता लोहिताः भवन्तः तैः ( पुष्पविकासात् रक्तायमानैरित्यर्थः ) मन्दारैः, पारिजाता-रूयतरुविशेषैः, "मन्दारः पारिजातकः" इत्यमरः । सिन्दृरिताः, सञ्जातसिन्दूराः, ( दत्तसिन्दूराइवेत्यर्थः ) सीमानः, प्रान्तभागाः, (मामाणामितिरोपः) यस्मिन् तथोके । सिछलेति—सिललानां, जलानां, स्यन्दाः, स्रवाः, तेषां सन्दोहः, समृहः, तस्य सन्देहेन, दोहसंदेहमुद्धान्महामहिषविषाणकोटिविलिख्यमानस्फुटत्स्फटि-कटणिद्द, घर्ममर्मरितगर्मुति, तप्तपांशुकुकुलकातरिविकिरे, विवरशरणश्चाविधि, तटार्जुनकुर्क्कटज्वरिवर्वमानोत्तानशफर शारपङ्कशेषपत्वलाम्भसि, दावजवितजगन्नीराजने, रजनीराज-यद्मणि, कठोरीभवति निदाधकाले, प्रतिदिशमाढौकमाना श्रमेण, मुद्यद्भिः, चित्तविकृतिंगच्छद्भिः, महद्भिः मिह्पेः विषाणानां, शृङ्गणां, कोटिभिः, श्रम्रभागैः, विलिख्यमानाः, संघृष्यमाणाः, स्फु-रन्त्यः, (सौरातपेन उद्धासमाना इति यावत्) स्फटिकटपदः, स्फटिक-शिलाः यस्मिन् तथामृतं।

घर्मेति-घर्मेण, उप्मणा, मर्मरिताः, शुष्कत्वेन मर्मर ध्विनयुक्ताः, गर्मुतः, लताविशेषाः यस्मिन ताहशे। (गर्मुन् स्त्री स्वर्णनड्योगीपति शिवपण्डयोः, नृपभास्करयोः पुंसि, इति भेदिनी) तप्तेति—तप्ताः पांशवः, रजांसि एव कुकूलाः, तुषानलाः, तैः कातराः, विकिराः, कुकुटादिपित्तिभेदाः यस्मिन् ताहशे। विवरेति—विवराणि-गर्ता एव शरणम् श्राभ्रयः येपां ते श्वाविधः-शल्याः (मृगविशेषाः) यस्मिन् ताहशे। तटेति—तटेपु-तीरेषु ये श्वर्जुनाः-तस्भेदाः तेषु ये कुरराः-पित्तभेदाः (कूंज इति हिन्दी भाषायाम्) तेषां कूटज्वरेण् श्रुति-कटुरवसन्तापेन, विवर्तमानाः उत्सवमानाः उत्तानाः-उर्द्वमुखाः ये शफराः-मत्स्याः तैः शाराः-शवलाः, पङ्काः-कर्रमा, एव शेषाः येषु तथाविधानां पल्वलानां चुद्रजलाशयानाम्, श्रमभांसि-जलानि, यस्मिन् तथोके। दावेति—दावेन-वनाग्निना, जनितं-उत्पादितं, थन् जगतां नीराजनम् श्रारात्रिकारव्यं शान्ति कर्मविशेषः, यस्मिन् तथाविधे। रजनोति—रजन्याः निशायाः राजयत्वमा-न्तयरोगः यस्मिन् । कठोरी भवति वृद्धिगच्छति, निदाघकाले-प्रीष्मावसरे

इवोषरेषु प्रपावाटकुटीपटलप्रकटलुग्ठकाः, प्रपक्रकपिकच्छू-गुच्छुच्छुटाच्छोटनचापळैरकाग्डकग्डूळा इव कर्पन्तः शर्करिळाः कर्करस्थलीः, स्थूलदृषच्चूर्णमुचः, मुचुकुन्दकन्दलदलनदन्तुराः, समन्ततः पतन्मुखरचीरीगणमुखशीकरशीक्यमानतनवः, तरु-णतरतरणितापतरले तरन्त इव तरङ्गिणि मृगतृष्णिकातरङ्गिणी-प्रतिदिशम-दिशिदिशि । त्राढौकमानेति— उपरेषु-मरुभूमिषु, श्राढौकमाना इव गम्यमाना इव । प्रपेति-प्रपा-पानीयशाला, वाटः-पन्था, कुटी-ज़ुदूरोह्म , पटलम-छदिः, एतेषां प्रकटं-प्रकाशम् , यथा स्यात्तथा लुग्ठकाः-ऋपहारकाः, इति यावत् । प्रपक्वेति—प्रपका-पकतांगता या कपिकच्छुः मर्कटी ( मर्कट सदृश लोमत्वात् कपि-कच्छुरपि मर्कटी भवति ) (ऋष्यप्रोक्ता शुकशिंविः कपिकच्छुश्च मर्कटी ) तस्याः गुच्छछटाः-स्तबकराशयः, तासां छोटने-लूने, चापलैः । श्रकारडं-श्रनवसरे करडुलाः-खर्जनरोगप्रस्ता इव । कर्षन्तेति—शर्करिलाः-पाषाग्यकिगा्यनाः, कर्करस्थलीः-पाषाग्य-खण्डयुतामहीः ( कंकरभूमी ) कर्पन्तः-कण्डुं कुर्वन्तः । स्थृलेति — स्थूलानि-विपुलानि, दृषदां-शिलानां चूर्गानि-किगाकाः तानि मुख्रन्ति-प्रचिपन्ति इति तथोक्ता । मुचुकुन्देति मुचुकुन्दानां-माध्यपुष्पागाां, कंदलानां-तन्नामपुष्पागाम् । दलनेन, दन्तुराः-संजातदन्ता इव। समन्ततः-चतुर्दिन्तु । पतदिति--पतन्तः-उङडीय-मानाः, मुखराः-कण्नतः, ये चीरीगणाः-पित्तभेदाः ( चील या ईल ) तेषां मुखशीकरैः-त्र्याननजलकर्गैः शीक्यमानाः सीच्यमानाः तनवः-शरीराणि येषां तथा विधाः।

तरुणेति—तरुणेन-श्रितप्रोदेन, तरिणतापेन-सूर्यातपेन, तरिङ्गिणि-संजाततरङ्गे, मृगतृष्णिकाः-मरीचिकाः (मृगतृष्णा मरीचिका इत्य-

नामलीकवारिणि, शुष्यच्छमीर्ममरमारवमार्गलङ्घनलाघवजव-जङ्घालाः,रैणवावर्तमण्डलीरेचकरासरसरभसारब्धनर्तनारम्भा-रभटोनटाः, दावद्ग्धस्थलीमधीमिलनमिलनाः, शिन्तितन्तपण्-कवृत्तय इव वनमयूरपिच्छचयानुच्चिन्वन्तः, सप्रयाणगुञ्जा इव शिञ्जानजरत्करञ्जमञ्जरीवीजजालकैः सप्ररोहा इवातपातुरवन-महिपनासानिकुञ्जस्थूलनिः श्वासैः, सापत्या इवोड्डीयमानजवन-मरः) एव तरङ्गिएय:-नद्यः, तासाम् त्र्यतीकवारिणि-त्र्यलीकजले, तरन्त इव-सवमाना इव । शुष्यदिति—शुष्यन्ती-शुष्कतायान्ती, शमीवत्-तरुविशेषवत्, मर्मरः-विशेषव्विनयुक्तः, मारवः-मरुदेशीयः, मार्गः-पन्था तल्लंघने, लाघवं यस्य तथाविधेन जवेन-वेगेन, जंवाला:-जंघ (युक्ताः । रैं गावेति - रैंगावी-तत्सम्बन्धिनी, त्र्यावर्त्तमण्डली. तस्याः रेचकस्य ( रेचयति वहिकरोति तथाभूतस्य ) लासकस्य-नर्त-कस्य, रसरभसेन-रागवंगेन, श्रारब्धं यन्नर्तनं तस्यारम्भे, श्रार-भटीत्राराश्च = भटाश्च तंपामियमारभटी-वीररसप्रधानविशेषः, तन्न नटाः, ताण्डवावसानेनिपुणा इत्यर्थः । दावेति—दावेन-वनानिलेन. दग्धा स्थली एव मसी तस्याः मिलनेन मिलनाः। शिचितेति— शिचिता-श्रभ्यस्ता, चपणकानां वृत्ति:-व्यवहारो, यैः एवंभूताः, मयूरपिच्छचयान्, उभिन्वन्तः-धारयन्तः (पुच्छार्थकत्वलाभात् मयृरपद्मत्राधिकम्) (ज्ञपण्काश्र्यपि निजशास्त्राज्ञया मलिनपुच्छधार-यन्ति ) प्रयागो-यात्रायां, गुञ्जाः ढकाः तैः सह वर्तमाना इत्यर्थः। शिञ्जानेति-शिञ्जानाः-शब्दवन्त्यः, जरतां-प्राचीनानां, करञ्जानां-तरुभेदानां, मंजर्यः, तासां बीजजालकैः बीजसमृहैः, सप्ररोहा इव-सांकुरा इव । आतपेति—आतपेन-संतापेन, श्रातुरागाम् श्रात्तीनाम् , वनमहिषागां, नासाभ्यः निकुञ्जेभ्य इव-लतापिहिनोदरेभ्य इव निर्गतै:-

वातहरिणपरिपारीपेटकैः, समुकुटय इव दह्यमानखलधानबुस-कूटकुटिलधूमकोटिभिः, सावीचिवीचय इव महोष्ममुक्तिभिः, लोमशा इव शीर्यमाणशालमलिफलत्लतन्तुभिः, दद्गुला इव शुष्कपत्रप्रकराकृष्टिभिः, सिराला इव त्णवेणीविकिरणैः, उच्छ्रयाश्रव इव धूयमाननवयवश्करशकलशंकुभिः, दंष्ट्राला इव

स्थूलिनश्वासैः, सापत्या इव ससन्ताना इव । उड्डीयमानेति उड्डीय-मानानां-उत्पततां, जवनतराणाम्-श्रतिवेगिनाम्, हरिणानां, परिपा-ट्यः-पर्थ्यायाः । तासां पंटकाः-समूहाः तैः सश्रुकुटय इव-सश्रूभङ्गा इव । द्द्यमानेति द्वामानानाम्-श्रातपेन दग्धानाम्, खलधानानां-धान्या-नाम्, ये वुसकुटाः तुपराशयः, कुटिलाः-कुटिलगामिन्यः, धूमकोटय इव- धूमराजय इव, तैः, सावीचिवीचय इव-श्रवीचिः-नरकविशेषः, तस्य वीचयः-तरङ्गाः-ज्वाला वा तैः सहवर्तमाना इव, महोष्ममुक्तिभिः-महान्तः उष्माणः तेषां मुक्तिभिः-त्यागैः-वृष्टिभिरित्यर्थः ।

छोमशेति — लोमशा इव-रोमपूर्णा इव। शीर्यमाणेति-शीर्य-माणानां-विदीर्यमाणानाम्, शालाम्लिफलानाम्, तृलतन्तुभिः-तृलसूत्रेः, दद्रुला इव-दद्रुवन्त इव। शुष्केति-शुष्काणां, पत्राणां, प्रकराः-समूहाः, तेषांम्, त्राकृष्टयः-त्राकर्षणानि, ताभिः, शिराला इव-शिरासमूहशालिन इव। तृणेति — तृणानां, वेणी-राजिः, तस्याः विकिरणेः-विचेपेः, उच्छाया-त्र्यविरतानि, श्रश्रूणि-नयन जलानि, येषां तथा भूता इव। धूयमानेति – धूयमानानां, कम्पमानानां, यवानाम्, शूकाः-शुङ्गाः, (शिखासूचय-इत्यर्थः) (शूकोऽस्त्री शुङ्गदययोः इति मोदिनी) तेषां शकलाः-खण्डाः, शङ्कवः-कीलाः तैः दंष्ट्रालाः-दंष्ट्रावन्तः इव। चिक्ठतेति — चिलतानां-चलतां, शलला-नाम्-शल्यकीनाम्, सूचीशर्तेः-सूचमाप्रभागेः, (श्वावितु शल्यस्त- चित्रशललसूचीशतैः, जिह्वाला इच वैश्वानरशिखाभिः, उत्सर्पत्सर्पकञ्चुकचूडाला ब्रह्मस्तम्भरसाभ्यवहरणाय कवल-ब्रह्मिवोष्णैः कमलमधुभिरभ्यस्यन्तः सकलसलिलोच्छोषघर्म-घोषणापटहैरिव शुष्कवेश्ववनास्फोटनपटुरवैस्त्रिभुवनिबभीषि-कामुद्भावयन्तः, च्युतचलचापदच्चश्रेणीशाग्तिस्तयः, त्विषम-नमयूखलतालातस्रोषकल्मापवषुष इव स्फुटितगुञ्जाफलस्फुलि-

ल्लोम्नि शलली शललं शलम्-इत्यमरः ) जिह्वाला इव-रसनावन्त वैधानरेति—वैधानरशिखाभिः—श्रिप्रिशिखाभिः, अत्सर्पदिति—उत्सर्पद्धः-उद्गच्छद्भिः, सर्पागां कञ्चकैः-निमोकैः, चूडलाः-शिखावन्तः । ब्रह्मेति- ब्रह्मस्तम्भस्य-ब्रह्मखण्डस्य रसाभ्य-वहरणाय-रसशोषणाय-रसानां-मधुरादीनांभोजनाय वा कवलप्रहं-प्रासप्रह्णाम् , उप्णोः कमलमधुभिः, त्र्यभ्यस्यन्तः-पुनः पुनः कुर्वन्तः । सकलेति--सकलनां, सलिलानाम्-जलानाम्, उच्छोषः-श्रातिशयेन शोषकः यो धर्मः-ञ्चातपः, तस्य घोषगा-प्रचारः तस्याः पटहाः, तैरिव । शुष्केति—शुष्काणां, वेगुप्रवनानां, स्कोटनस्य-विदारगास्य, पटुरवाः-महानिनादाः तै रिव । त्रिभुवनेति---त्रिभुवनविभीषिकाम्। त्रिलोकभीतिकाम् , उद्भावयन्तः-जनयन्तः । च्युतेति—च्युताभिः-स्वलिताभिः, अतएव चलिताभिः, उत्पतन्तीभिः, चाषपित्तश्रेशिभिः-नीलकएठपत्रिपङ्क्तिसः, शारिता-त्र्याप्ता, सृतयः-मार्गाः यैः तथाविधाः ( मृतिः स्त्रीगमने मार्गे इति कोषः ) त्विषिमदिति— त्विपिमतः-सूर्यस्य, मयूखलतानां-किरगाज्वःलानाम्, श्रलतस्य ज्वल-दङ्गारस्य यः स्रोषः-दहनम्, तेन कल्माषं-चित्रमित्कृष्णारक्तम्, वयुः-शरीरं येषां तथाविधाः । स्फुटितेति - स्फुटितानि-विकसितानि, गुञ्जाफलानिवत् ये स्फुलिङ्गाः-श्रप्तिकगाः तेषां श्रंगारैः श्रङ्किताङ्गाः,

ङ्गाङ्गाराङ्किताङ्गाः, गिरिगुहागम्भीरभांकारभोषणभ्रान्तयः, भुवनभस्मीकरणाभिचारचरुपचनचतुराः, रुधिराहुतिभिरिव पारिभद्रद्रुमस्तवकवृष्टिभिस्तर्पयन्तस्तारवान्वनिवभावसून्, श्रशिशिरिसकतातारिकतरंहसः, तप्तशैळिविळीयमानशिळाजतुरसळविळिप्तदिशः, दावदहनपच्यमानचटकाण्डखण्डखचिततस्कोटरकीटपटळपुटपाकगन्धकटवः, प्रावर्तन्तोन्मत्ता मातरिश्वानः।

प्लुषिताङ्गाः। गिरि-इति —गिरिगुहासु-पर्वतकन्दरासु, गम्भीरमंका-रेगा, भीषगा, भ्रान्तिः-घूर्गानं येषां ते । भुवनेति—भुवनस्य-जगतः, भस्मीकरणं-दहनं, तदेवाभिचारः-वेदविहितनिष्टुरकर्म, तत्रचरुपचने-हविपाके, चतुराः-पटवः, रुधिराहुतिभिरिव रक्ताहुतिभिरिव, परिभद्र-नामप्रुमस्य, स्तबकानां-गुच्छानाम्, वृष्टिभिः-पातैः, तारवान्-वृत्त्न-सम्बन्धिनः, विभावसून्-दावानलान् , तर्पयन्तः-प्रीगायन्तः । ऋशिशि-रेति— ऋशिशिराभिः-उष्णाभिः, वालुकाभिः, तारकितम् , रहः, वेगो येषां तथोक्ताः । तप्तेति—तप्तेपु-शैलेषु, गिरिषु, विलीयमानानां-गलतां, शिलाजतूनां-धातुभेदानाम्, रसलवै:-जलकर्गौ:, लिप्ताः-दिशो यैः तथोक्ताः । दावेति-दावदहनेन-वनाग्निना, पच्यमानानां-दग्धानां, चटकानां-पत्तिविशेषासाम्, त्र्रम्डखर्ग्डैः-डिम्बशक्लैः, रविचतेपु-व्याप्तेषु, तरुकोटरेषु-वृत्तगुहासु यानि कीटपटलानि-तद् भन्तगार्थ-मागतानि, पिपिलिकावृन्दानि, तेषां पुटपाकस्य-श्रभ्यन्तरपाकस्य, गन्धेन कटवः-उद्वेजका इत्यर्थः । उन्मत्ताः उच्छुङ्खलाः, मातरिश्वानः-वायवः, प्रावर्त्तन्तः । सर्वतेति—पुनर्तानेव दावाग्नीन् विशिनष्टि भूरि त्यादिभिः । जरठानां बृद्धानां, श्रजगराणां, सर्पाणां, गम्भीराः गलाः, कण्टप्रदेशाः एव गुहा ताभ्यः, वाहिनः, वहिनिःसरन्तः, वायवः येषु तथा भूताः । श्रतएव-भूरिभिः, वृहद्भिः, भस्नाणां, श्रप्निसंधूत्तग्यंत्राणां सहस्रेः, सन्धुच्चग्रेन, समुद्दीपनेन, चुभिताइव, समुत्तेजिताइव।

सर्वतश्च भूरिभस्त्रासहस्रसंघुत्तणज्ञुभिता इव जरठाजगरगम्भीरगलगुहावाहिवायवः कचित्स्वच्छन्दतृणचारिणो हरिणाः,
कचित्तरतलविवरविवर्तिनो बभ्रवः, कचिज्जटावलिबनः
कपिलाः, कचिच्छकुनकुलकुलायपातिनः श्येनाः, कचिद्विलीनलाचारसलोहितच्छवयोऽधराः, कचिदासादितशकुनिपच्छत-

स्वच्छन्देति—स्वच्छन्दं-स्वैरं, तृगोपु, चरन्ति-प्रसरन्ति, (पत्ते ) त्रणानिभत्तयन्ति हरिणाः-पाण्डुवर्णाः, (पत्ते ) मृगाः। तरुतलेति—तरुतलेषु यानि विवराग्णि-गर्त्तानि तेषु वर्त्तिनः, विभ्रवः-पिङ्गलाः (पत्ते) नकुलाः। शङ्जनेति—शकुनकुलानां-पत्तिविशेषा-गाम , कुलायान्-नीडानि, पातयन्ति-दहन्ति इति यथोक्ताः श्येनाः शुक्तवर्गाः, (पत्ते) पत्तिसमृहकुलायास्थितघातकाः पत्तिभेदाः। जटेति—जटाऽवलम्बिनः-जटाः-मृलानि, श्रवलम्बन्ते-श्राश्रयन्ति इति तथोक्ताः (पत्ते) जटाधारिगाः, कपिलाः-पिङ्गलाः (पत्ते) कपिलमुनिविशेषत्रतथारिगाः तापसाः । विर्लानेति-विलीनः-द्रवीभूतः, यो लाचारसः-त्र्रलक्तऋद्रवः तद्वत् , (त्र्रथवा) तेन लोहिताः-रक्ताः छवयः-कान्तयः, येषां, तथा भूताः, ऋधराः-धर्तुमशक्याः, निम्नोष्टाः वा ( पत्ते ) धराः-पर्वताः । आसादितेति—आसादितेषु-प्राप्तेषु श्रवसादंगतेषु, वा शक्रुनिनां-पिनगां, पत्तेषु, ऋता-लब्धा पटुगतिः, सम्यक् प्रसरगां यैः श्रन्यत्र-श्रासादिता-प्राप्ता, शकुनि-पत्तेगा-पत्तिगरुता, कृता-जनिता, पटुगति:-सत्वरगमनं यैः तथोक्ताः । वि-विविधा, शिखा ज्वाला येषां तथोक्ताः (पत्ते) शराः । दग्धेति दग्धाः-भस्मीकृताः, निष्शेषाः-समस्ताः, जन्महेतवः-स्वो-त्पत्तिकारगानि, तृगाकाष्टादीनि यैः (पत्ते) दग्धाः-त्त्रयिताः समस्ताः पूर्वपूर्व जन्ममजिताः संसारागमनकारगानि, पापपुरयानि पटुगतयोविशिखाः, किचहम्धिनःशेषजन्महेतवो निर्वाणाः, किचित्कुसुमवासिताम्बरसुरभयो रागिणः, किचित्सधूमोद्रारा मन्दरुचयः, किचित्सकळजगद्ग्रासघस्मराः सभस्मकाः, किचिह्रेणुशिखरलग्नमूर्तयोऽत्यन्तवृद्धाः, किचिद्चलोपयुक्तशिला-जतवः चियणः किचित्सर्वरसभुजः पीवानः, किचिद्म्यगुम्गुलोव रौद्राः, किचिङ्ग्विज्वितनेत्रदहनदम्धसकुसुमशरमदनाः कृतस्थाणु

यैः तथोक्ता निर्वाणाः शान्ताः (पच्ते) मुक्तिगताः । कुसुमेति- -कुसुमैः-धूमैः ( पत्ते ) पुष्पैः वासितं-छादितं ( पत्ते ) सुरभितम् , यत् त्रम्बरं नभः (पर्च) वस्त्रम् , तेनसुरभयः-शोभनदर्शनाः (पर्च) सौरभशालिनः । रागिणः रक्तवर्गाः (पद्मे) रागवन्तः । सधूमेति सधूमोद्गाराः-धूमनिर्गमेनसहवर्तमानाः स्त्रमन्दाः स्रितप्रवृद्धाः, रूचयः कान्तयः येषां, ( पत्ते ) धूमनामकरोगेगा मन्दारुचि -इच्छा, भोजना-दिषु येपाम् तं । सकलेति सकलं, जगदेवशासः-कवलम्, तद् घस्मराः, भज्ञकाः, समस्मभूरिकाः भस्मनां, भूरिभिः सहवर्तमानाः । वेरिवति-वेरााूना, वशानां, शिखरेषु, लग्नाः-संसक्ताः, (पद्ते) वेगाुख-रुडाप्रेषु, लग्नाः कृतभराः पूर्तयः श्रङ्गानि येषां यथोक्ताः । श्रत्यन्तवृद्धाः त्र्यतिप्रवलाः, त्र्यतिस्थविराश्च ( दृद्धा हि वंश लगुडेन सहगच्छन्ति ) **শ্रचलेति** -श्रचलेषु पर्वतेषु, उपयुक्तानिभक्तितानि, दग्धानीति-भावः, शिलाजतूनि-शिलाजत्वाख्या धातुविशेषाः यैः, पत्ते श्रचलम् श्रविच्छि<del>न्न</del>म् , यथा तथा-उपयुक्तम् , सेवितम् , श्रौषधरूपेगोतिभावः शिलाजतुः यैः तथोक्ता। त्तयिगाः निर्मागांगताः-ज्ञयरोगिगाशच सर्वानिति-सर्वागि श्रन्नानि,रसान् , जलादीं भुज्जते इति तथोक्ताः श्रतएवपीवानः स्थूलकलेवराः । कचिदिति—दग्धगुग्गलवः-भस्मीकृतगन्धद्रव्यागि, यैः तथोक्ताः, रौद्राः-भीषग्गाः-(पत्ते) शिवसेवकाः । ज्वलितेति-ज्वलि-

स्थितयः, चटुलशिखानर्तनारम्भारभटीनटाः क्वचिच्छुष्कका-सारस्रितिभः स्फुटन्नीरसनीवारबीजलाजविषिभिज्वालाञ्जलि-भिरर्चयन्त इच घर्मघृणिम्, ऋषृणा इव हठहृयमानकठोरस्थल-कमठवसाविस्रगन्धगृष्नवः, स्वमिष धूममम्भोदसमुद्भूतिभि-येव भन्तयन्तः, सितलाहुतय इव स्फुटट्बहलबालकीटपटलाः

तानां, नेत्रा- ग्णाम्-मू्लानाम् , दहनेन दग्धाः,सकुसुमाः-सपुष्पाः,शराः-तृराभेदाः, मदनाः-वृत्तभेदाश्च यैः तथोक्ताः । (पक्ते)-ज्वलिततृतीयनय नाग्निना भस्मीकृतः कुसुमशरसिह्तः मद्नः-कामः यैः तथोकाः रुद्राः । कृतेति--कृताः-स्थागापु-छिन्नशाखापु स्थितिः यैः, (पन्न) स्थागोः-हरस्य स्थितयः-व्यवहारा येः । चटुलेति चटुलशिखाः-चंचल-ज्वालाः, येषाम् , (श्रन्यत्र) चूड़ाः येषाम् । नर्तनारम्भे यः श्रारभटी-प्रधानवीररसविशेषः तत्र नटाः उभयत्रतुल्यम् । शुष्केति शुष्केषु-कासारेषु तडागेषु, सृतिः प्रसारो येषां तैः । स्फुटदिति स्फुटन्ति निर्-रसानि यानि निवारवीजानि-धान्यविशेषाः तेपां लाजान् वर्षन्ति तथोकै । ज्वालाऽञ्जलिभिः-शिखाऽञ्जलिभिः । घर्मघृशिम्-उप्श-रिमम्, त्र्रघृगा इव त्रजुगुप्सा इव त्र्यचयन्तः-पृजयन्तः । हठेति— हठात्-बलात् , हूयमानाः-दद्यमानाः, कठोरागाां, स्थलकमठानां-स्थलवर्त्तिकच्छपानाम्, याः वसाः-मेदांसि तासां यो विस्नगन्धः-श्रामगन्धः तस्यगृञ्जवः-लोलुपाः । श्रम्भोदेति—श्रम्भोदानां पयो-दानां, समुद्भूतिभिया-समुत्पत्तिभयेन, धूमं भन्नयन्तः । सलिलाहुतय इव-जलाहुतय क्व । स्फुटदिति—स्फुटन्ति-निर्गच्छन्ति, बहलानि-भूरीिया, वालानि-चुद्रािया, कीटपटलानि, चुद्रप्राियावृन्दानि, यथा तथोक्ताः रिवत्रिणः कचोषु-वहल कृमिवृन्दानि, निसरन्ति । सोषेति-सोषेगा-दहनेन, विचरन्ति-चटत् चटत् इति कुर्वन्ति,यानि वल्कलानि-

कच्येषु, श्वित्रिण इव प्रोषिवचटद्वल्कलध्यवलशम्बूकशुक्तयः शुष्केषु सरःसु, स्वेदिन इव विलीयमानमधुपटलगोलगलित-मधूच्छिष्टवृष्ट्यः काननेषु, खलतय इव परिशीर्थमाणशिखासंह-तयो महोषरेषु, गृहीतशिलाकवला इव ज्वलितसूर्यमणिशकलेषु शिलोच्चयेषु, प्रत्यदृश्यन्त दारुणा दावाग्रयः।

तथाभूते च तिसम्बत्युग्रे ग्रीष्मसमये कदाचिदस्य स्वगृहा-विस्थितस्य भुक्तवतोऽपराह्मसमये भ्राता पारशवश्चन्द्रसेननामा प्रविश्याकथयत्—'एष खलु देवस्य चतुःसमुद्राधिपतेः सकल-गाजचकचूडामणिश्रेणीशाणकोणकपणिनम्लीकृतचरणनखमणेः

तरुत्वचः तैः धवलाः शम्वृकाः शंखाः, शुक्तयः मुकास्फोटाख्याजलज-न्तुविशेषाः येषां तथोका स्वेदिन इव घर्मिण इव। शुष्केषु नीरसेषु सरःस् <sup>\*</sup>तडागेषु । विळीयमानेति – विलीयमानेभ्यः-विलयंगच्छद्भ्यः, मधुप-टलगोलेभ्यः-मधुचक्रेभ्यः, गलिता-निःसृता, मधुच्छिष्टानां, वृष्टिः, यैः नथोक्ताः । खलतय इव-खल्वाटा इव । महोपरंषु-मरुभूमिषु, परोति-परि-प्रान्तभागे, शीर्थमाणाः-प्रसरन्तः, शिखासंहतयः-ज्वालासमृहाः (पन्ने) चूडासमूहाः येपां तं तथोकाः । गृहीतेति गृहीतं, शिला एव शक्लं प्रासो येः तादृशाः । ज्वलितसूर्यमणिशकलेषु-दीप्तसूर्यकान्त-मिण्रिखण्डेपु, शिलोचयेपु-गिरिपु, दारुगाः भयानकाः, दावाग्नयः-वना-नलाः, प्रत्यदृश्यन्तः । देवेति--देवानां-राज्ञां, देवस्य-राज्ञः, चतुःसमुद्रा थिपतेः, चतुः सागरस्वामिनः । सकलेति—सकलानां, समस्तानां, राजचकार्गां-नृप-मण्डलानाम् , याः चूड़ामग्गिश्रेण्यः-शिरोरत्न पंक्तयः, द्भा एव शाखाः, निकषपापाखिदशेषाः, तेषां कोगोषु, प्रान्तभागेषु, यत्कषरां, घर्षग्म्, तेन निर्मलीकृताः, विशदीकृता, चरग्योः, नखा एव मगायः, रत्नानि यस्य तथाविधस्य ।

## श्रीहर्षचरितं

सवचकवितां घौरेयस्य महाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीहर्षदेवस्य भ्राता रूष्णनाम्ना भवतामन्तिकं प्रक्षाततमो दीर्घाष्वगः प्रहितो द्वारमध्यास्ते' इति । सोऽव्रवीत्—'श्रायुष्मन्,श्रविलिम्बतंप्रवेश-यैनम्' इति । श्रथ तेनानीयमानम् ,श्रतिदूरगमनगुरुजडजङ्गम् , कार्दमिकचेलचीरिकानियमितोचगडचगडातकम् ,गृप्रप्रेष्ठतपटचर-कर्पटघटितगलितग्रन्थिम् ,श्रतिनिबिडस्त्रवन्धनिम्नितान्तराल-रुतव्यवच्छेदया लेखमालिकया परिकलितम्धानम् , प्रविशन्तं लेखहारकमद्राचीत् । श्रप्राचीच दूरादेव —'भद्र, भद्रमशेपभुवन-निष्कारग्रवन्धोस्तत्रभवतः रुष्णस्य' इति । सः 'भद्रम्'

सर्वेति—सर्वेषां, चक्रवित्तां सार्वभोमानां, धोरेयस्य श्रयगएयस्य । महोति—महतां, राजाधिराजानां, परमेश्वरस्य-सर्विनयन्तुः, श्रीहर्षदेवस्य । प्रज्ञाततमः श्रातिप्रतितः, (श्रातिशयेन विज्ञात इत्यर्थः) दीर्घाध्वगः-दीर्घम्, श्रध्वानं-मार्गे गच्छतीति तथोकः । प्रहितः-प्रेषितः । श्रातिदृरेति —श्रातिदृरगमनेन, गुरू भारवत्यो, जडे-चलना-शक्ये, जङ्घे, यस्यतम् । कार्दभिकेति —कार्दभिकस्य-कर्दमेनिलिप्तस्य, चेलस्य, चीरिकया-खरुडेन, नियमितं संयमितम्, उच्चर्डम्-कर्कशम्, चर्ण्डान्तकम्-श्ररूपद्धोर्यन्तव्यापकम् वसनं येन तम् । पृष्टेति —पृष्टे, प्रेङ्खन्-चलत्, पटचरं-जीर्णवसनम्, कर्पटम् धर्ममञ्जेनार्थवस्त्रभागम् च तास्याम्, घटितः-रचितः, गिलतः-शिथिलः, प्रन्थिः-वस्त्रसिन्धः येन तम् । श्रातिनिविद्येति—श्रातिनिविद्येन-श्रातिधनेन, सूत्रवन्धेन, निम्नितः निमतः, श्रन्तराले-मध्ये, कृतः, व्यवच्छेदो यस्याः, तया, लेखमालिक्या-लिपिसञ्चयेन, परिकछितेति—परिकलितः-वेष्टितः, मूर्द्धा-मस्त्रक्ष्या-लिपसञ्चयेन, परिकछितेति—परिकलितः-वेष्टितः, मूर्द्धा-मस्त्रक्ष्य कम्,येन तम्, लेखहारकम्-पत्रवाहकम् । श्रद्धाचीत्-श्रपश्यत्- (दृशिर-प्रेत्त्यो) श्रप्राचीत्-श्रप्रच्वत् । भद्र, साथो ! श्रशेषेति—श्ररोषायाम्, प्रवित्तीः

→ इक्युक्त्वा प्रणम्य नातिदूरे समुपाविशत्। विश्रान्तश्चाव्रवीत्'एष खलु स्वामिना माननीयस्य लेखः प्रहितः' इति विमुच्य
चार्पयत्। श्रथ बाणः सादरं गृहीत्वा स्वयमेवावाचयत्—
'मेखलकात्संदिष्टमवधार्य फलप्रतिबन्धी धीमद्भिरपहरणीयः
कालातिपात इत्येतावदत्रार्थजातम्। इतरद्वार्तासंवादनमात्रकम्'।
श्रवधृतलेखार्थश्च समुत्सारितपरिजनः संदेशं पृष्टवान् ।
मेखलकस्त्ववादीत्—'पवमाह मेधाविनं स्वामी—जानात्येव
मान्यः यथैकगोत्रता वा, समानजतिता वा, समं संवर्धनं वा,
एकदेशनिवासो वा, दर्शनाभ्यासो वा, परस्परानुरागश्रवणं
वा, परोत्तोपकारकरणं वा, समानशीलता वा, स्नेहस्य
हेतवः। त्विय तु विना कारणेनादृष्टेऽपि प्रत्यासन्ते बन्धाविव
बद्धपत्तपातं किमपि स्निद्यति मे हृद्यं दूरस्थेऽपीन्दोरिव
च्नुमुदाकरे। भवन्तमन्तरेणान्यथा चान्यथा चायं चक्रवर्ती

सर्वेषाम्, भुवननाम्-जगताम्, निष्कारणः- ऋहेतुकः, बन्धुः, तस्य । प्रिहतः प्रेषितः ऋवाचयत्-ऋपपठन्, मेखलकः, तदाख्यः प्रागुकः पत्रवाहकः । सन्दिष्टम्-वाचिकम्, फलप्रनिवन्धी-फलंकार्यम् वध्नानि । ऋपहरणीयेति-कार्यव्याघातकः । कालातिपातः, समयविलम्बः, वार्तासम्बादनमात्रकम्, वृतान्तालोचनमात्रम्। ऋवयृतलेखार्थः, ज्ञातिलिपिनिवद्धोदन्तम् । समुत्सारितपरिजनः, परिवर्जितपरिजनः । मेखलकः, पत्रवाहकः । ऋवादीत्-प्रोवाच । एकगोत्रता, एककुलोत्पत्तिः । समानजातिता, तुल्यजातित्वम्, दर्शनाभ्यासः, पुनः पुनः साचात्करणम्, परम्परानुरागश्रवणम्— ऋन्योऽन्यसद्भावाकर्णनम् । परोच्चोपकारकरणम्— प्रत्यच्चाभावेऽपि उपकारकरणम् । प्रत्यासन्ने, समीपे, कुमुदाकरे, करवोत्पत्तिभृवि ।

दुर्जनैर्प्राहित ग्रासीत्। न च तत्तथा । न सन्त्येव ते येषां सतामिष सतां न विद्यन्ते मित्रोदासीनशत्रयः । शिशुचापला-पराचीनचेतोवृत्तितया च भवतः केनचिद्सहिष्णुना यित्कचि-दसहशमुदीरितम्। इतरो लोकस्तथैव तद्गुह्णाति विक्त च। सिल्लानीव गतानुगतिकानि लोलानि खलु भवन्त्यविवेकिनां मनांसि। वहुमुखश्रवणनिश्चलीकृतिनश्चयः किं करोतु पृथिवी-पितः। तत्त्वान्वेषिभिश्चासमाभिर्दूरिस्थतोऽपि प्रत्यचीकृतोऽसि। विक्षप्तश्चकर्ता त्वदर्थम् —यथा प्रायेण प्रथमे वयसि सर्वस्यैव चापलैः शैशवमपराधीति । तथिति च प्रतिपन्नं स्वामिना। श्रतो भवता राजकुलमकृतकालक्षेपमागन्तव्यम्। श्रवकेशीवा-दृष्परमेश्वरो वन्धुमध्यमध्यवस्त्रासि मे बहुमतः। न च सेवा-

चकवर्त्तासार्वभोमः । प्राहितः-श्रववोधितः । मित्रेति मित्राणि सुदृदः, उदासीनाः, मध्यस्थाः शत्रवः-वेरिणः, न विद्यन्ते न तिष्टन्ति । शिशिविति शिशोश्चापलम् शेशवचापल्यम्, तत्रपराचीना, श्रप-राङ्मुखी, चित्तवृत्तिर्यस्य तत्ता, तया । श्रसिद्धणुना, सोदुम-शक्नुवता, श्रदृशम्, श्रयुक्तम्, उदीरितम् उक्तम्। गतानुगतिकानि, गतं गमनम्,श्रवृगतिः, पश्चादृमनम्,श्रविवेकिनाम्, ज्ञानरहितानाम्। विद्विति -बहूनां, सुखानाम्, श्रवणेन निश्चलीकृतः निश्चयः, श्रवधारणम् यस्य, तथाभूतः । प्रत्यचीकृतः, साचात्कृतः । चापलैः, चपलकर्मभिः । श्रपराध्यतीति, श्रपराधि, सदोषं भवति इति यावत् । प्रतिपन्नम् विदितम् । श्रश्चतकाल चेपम्, समयविलम्बमकृत्वा ।

श्रवकेशीच--निष्फलतरुरिव श्रद्यष्टपरमेश्वरः-नदृष्टः, परमेश्वरः-राजाधिराजः रविश्च येन तथाभृतः । श्रद्यष्टरिवस्तरुमध्यगतछायाप्रधानः श्रवकेशी श्रपि न कस्यचित् प्रियः । बन्धुमध्यम्-बन्धूनां ज्ञातीनां वैषम्यविषादिना परमेश्वरोपसर्पणभीरुणा वा भवता भवित-व्यम् । यतो यद्यपि—

> स्वेच्छोपजातविषयोऽपि न याति वक्तुं देहीति मार्गणशतैश्च ददाति दुःखम् । मोहात्समुत्त्विपति जीवनमप्यकागडे कप्टं मनोभव इवेश्वरदुर्विदग्धः ॥ ३ ॥

मध्यम् , श्राधिवसन् श्राधितिष्ठन मे मम बहुमतः, बह्वादृतः । सेवेति--संवायां, परिचर्यायां, यद् वैषम्यं तेन विषीद्तीति तेन । दुष्टात्प्रभोः मर्यादाऽभावमाशङ्कमानाय बागाय उपदिशन कृष्णः स्वकीय स्वामिनं प्रशंसितुं प्रसङ्गान् दुर्विनीतप्रभोः स्वरूपमुपवर्णयन्नाह् । स्वेच्छेति— ईश्वरदुर्विदग्धः, दुर्विदग्धः, श्रपिण्डनः, ईश्वरः, प्रभुः ( निब्रहानुब्रह-त्र्यसमर्थः, इत्यर्थः) (पत्ते ) ईश्वरेगा-हरेगा दुर्विदग्धः-दु:-दुखं कष्टकरं यथा तथा (विवेकरहित इतियावत् ) तथा वि-विशेषेगा द्ग्ध:-भस्मीकृतः नेत्रजबिह्ननेतिभावः, मनोभव इव, काम इव कष्टं (क्लेशहेतुरित्यर्थः) ऋल्पबुद्धेः प्रभोः सेवा क्लेशकरीतिभावः । ऋथ च . पादत्रयेगा दुःशक्यत्वमुपपादयितुमाह । स्वेच्छ्रेति—स्वेच्छया, निजेच्छया, उपजाताः, उपस्थिताः, विपयाः, भोग्यवस्तृनि यस्य तथाभूतः, (पत्ते) स्वेच्छं, यथेष्टम्, उपजाताः, उपगताः, विषयाः, लच्याणि यस्य तथाभूतः। देहीति, प्रयच्छ इति वक्तुं, कथयि-तुम, न यानि न द्दाति (धातृनामनेकार्थत्वात अत्र पा धातु, दानार्थायः) ( पत्ते ) देहीति, कायावान् इति वक्तुं वचनं न याति न गच्छति । मार्गग्रातै:, यांचाशतैः (पन्ने) शरशतैः, (मार्गग्रो याचके शरें' इति मेदिनी ) दु.खं ददाति, क्लेशं जनयति, एकत्र, त्र्यनुजीविभ्यः (पत्ते) कामिभ्य इति, श्रकाण्डे, सहसाकारणान्तरे, श्रसत्यपीति यावत्,

तथाप्यन्ये ते भूपतयः, ऋन्य एवायम् । न्यक्कृतनृगनस्रिष-धनहुषाम्बरोषदशरथदिस्त्रीपनाभागभरतभगीरथययातिरमृतमयः स्वामी । नास्याहंकारकास्त्रकृटविषदिग्धदुष्टा दृष्टयः, न गर्वगुरु-गरगस्त्रहृगद्गद्गद्ग गिरः, नातिस्मयोष्मापस्मारविस्मृतस्थै-

मोहान्, श्रज्ञानान्, यथायथं दोपादोपयोः बोधशृन्यात्, (पत्तं) मोहान् स्विवकारज्ञितनमोहान् जीवनमपि प्राग्णानपि, एकत्र श्रनुजीविनाम्, (पत्तं) कामिनामितिशेषः समुत्त्विपति, समुत्कर्षति दण्डयतीन्त्र्यर्थः (पत्ते) हरित । श्लेषानुप्राणितोपमालंकारः वसन्ततिलकं वृत्तं ।

न्थक्कृतेति—नृगः, इच्वाकुपुत्रः, नलः, निपधाधिपः, निषधः, रामप्रपौत्र, "रामस्यतनयो जज्ञे कुश इत्यभि विश्रुतः । श्रातिथिस्तु कुशाज्जज्ञेनिपथस्तस्यचात्मजः । हरिवंशे" नहुपः, त्र्रायुषः पुत्रः, (पुरु-रवाप्रपौत्रश्च) त्र्यम्वरीपः ''त्र्यम्वरीषस्तुनाभागिः सिन्धुद्वीप पिताभवत्'' दशस्थः, रामपिता, ( रघुवंशे समुत्पन्नः ) पिलीपः, रामप्रपितामहः, नाभागोऽम्बरीषपिता, भरतः, दुष्यन्ततनयः, भगीरथः, सगरप्रपौत्रः, (गंगया त्रानेता) ययाति:, शर्मिष्ठायाभर्ता, च, (इन्द्समास:) इमे नृपाः, न्यक्कृताः, तिरस्कृिताः, येन सः, ( अत्र गुणाधिक्यंद्योति-तम् ) श्रमृतमयः, श्रमृतविकारः, (श्रप्रिमकाल कूटादि राहित्य वर्णनममृत मयत्वादेव सर्वे युज्यते ) नास्येति-श्रस्य, हर्षस्य, त्रहंकारः, त्रहंभावः, एव कालकूटविषं तेन दिग्धा, उपलिप्ता, स्रत एव, दुष्टा, दृष्ट्यः, श्रवलोकितानि, न । नेति -- गर्वः, श्रभिमान एव, गुरूगरं, महाविषं, तेन जानो यो गलब्रहः, कण्ठावरोधः, (यस्य श्लेप्मा प्रकुपितातिष्ट्रत्यन्तर्गले स्थिरः, त्राशु संजनयेस्कोपं जायते-Sस्य गलप्रहः ) चरके । स एव गदः, रोगः, तेन गद्गदावाचः न ्त्र्यामयकारगान वाचोऽस्पष्टत्वम् ) स्रातिस्मयः, स्रातिगर्वः, तेन य र्याणि स्थानकानि, नोद्दामद्र्पदाहज्वरवेगविक्कवा विकाराः, नाभिमानमहासंनिपातनिर्मिताङ्गभङ्गानि गतानि, न मदादित-वक्रीकृतौष्ठनिष्ठ्यृतनिष्ठुरात्तराणि जल्पितानि। तथा च। श्रस्य विमलेषु साधुषु रत्नबुद्धिः, न शिलाशकलेषु। मुक्ताधवलेषु

उष्मा, श्रौद्धत्यं स एव, श्रपस्मारः, ( मृगिः ) व्याधिः, तेन विस्मृतं, स्मरणाविषयंगतं, स्थेर्यं, स्थिरता, ये:, तानि स्थानकानि, स्थितयः न। नोहामेति- उहामः, प्रचएडः, यः, दर्पः स एव ज्वरः, ( उप्णोत्पादकत्वात ) तस्य वेगेन, विक्रवाः, पीडिनाः, विकाराः, न । ना मीति - अभिमान एव महासन्निपातः, ( श्वासः कासी अमी मूर्च्छा प्रलापो मोहवेपथुः । पार्श्वस्यवेदना जुम्भा कपायत्वं मुखस्य च वातोल्वरास्यलिंगानि, सन्निपातस्यलचयेन् ) रोगः, तेन, कृतः, बिहितः, श्रंगानां,श्रवयवानां,(पत्ते) स्वजनानांभंगः, येषु, नानि, गनानि, गमनानि च न। मद्ति—मद्ः, सौभाग्ययौवनाद्यवलपजो विकारः "मदो विकारः सौभाग्ययोवनाद्यवलपजः 'द्र्पेगो," तेन, ऋर्दितः पीड़ित, ( श्राक्रान्त इति यावन् ) स्रत एव वक्रीकृतः, स्रथवा मद एव स्रर्दितः, वातन्याधि विशेषः तेन वक्रीकृतः, यः, श्रोष्टः, तस्मात् , निष्ठ्यतानि, निर्गलितानि, निष्ठुराणि, दारुणानि, कर्कशानि वा, त्रज्ञराणि, वर्णाः (कवर्गादय इति यावत् ) येपु तानि, जल्पितानि, वचनानि, न । ऋस्येति— श्रस्य, चक्रवर्तिनः, विमलेषु, श्रनघेषु, ( श्रपापंष्वितिभावः ) (पत्ते ) ( भास्वरतयासुच्छायेप्वित्यर्थः ) साधुषु, रत्नबुद्धिः, रत्नानि एते इति बुद्धिः (ज्ञानिमिति भावः) शिला शकलेषु प्रस्तरखरुडेषु, ( हीरकादिषु इति भावः) न । परिसंख्याऽलंकारः। मुक्तेति-- मुकाधवलेषु, मौक्तिकवत् विशदेषु, गुगोपु, विद्या विन यादिषु, ( पत्ते ) मुकाभिः धवलेषु, गुर्गोषु, सूत्रेषु, ( मौक्तिक हारे- गुणेषु प्रसाधनधीः, नाभरणभारेषु । दानवत्सु कर्मसु साधन-श्रद्धा, न करिकटेषु । सर्वाग्रेसरे यशसि महाप्रीतिः, न जीवित-जरचृणे । गृहीतकरास्वाशासु प्रसाधनाऽभियोगः, न निजकलत्र-चर्मपुत्रिकासु । गुणवित धनुषि सहायबुद्धिः न पिग्डोपजी-विनि सेवकजने । श्रापि च । श्रस्य मित्रोपकरणमात्मा, भृत्योप-

ष्वित्यर्थः) प्रसाधनधीः, ऋलङ्कार बुद्धिः, ऋथवा, प्रसाधनं, प्रऋष्टम्, श्चर्जनं, गुणाङर्जनमेव श्वर्ङ्जनं, (नतुत्र्याभरणाङ्जेनमितिभावः) श्राभरणभारेषु, भारभूतेषु श्राभरगेषु, (ऋटककुण्डलादि समृहेषु) न । दानवत्सु, दानयुक्तेषु, ( पत्ते ) मद्युक्तेषु (दानं गजमदं त्यागं पालन-च्छेदशुद्धिपु" मेदिनी) साधनश्रद्धा, निष्पादनानुरागः, (पत्ते) साध्यतं त्र्यनेन इति साधनं, सेन्यं ( सेनाङ्गमितिभावः ) तद्विपियगी-श्रद्धा, (संनाङ्गत्वेन युद्धादि कर्म सम्पादनवुद्धिरित्यर्थः) करिकटेषु, हस्तिगरडेपु, (मदजलवर्षिण्वित्यर्थः) न । मद्मुचां हस्तिनां संप्रहानु-रागोनेतिभावः । अप्रेसरे, अप्रगामिने, यशसि, महाप्रीतिः, प्रेम, जीवितजरत्तृणे, जीवने ( चराभङ्कुरे-इतिभावः ) न । गृहीतेति --गृहीतः करः स्वप्राह्योभागः, याभ्यः तथाविधासु (पत्ते ) गृहीतः, घृतः करः पागिः यासां, तासु, ऋाशासु दिज्ञु, ( चेतसः ऋनधिगतविषय-तृष्णापु वा ) प्रसाधनाऽभियोगः, वशीकरण्प्रयासः (रञ्जनानुरागो वा) निजेति—निजकलत्राणि, स्वीयभार्याः, ( न परकीया इति ध्वनिः ) तान्येव चर्म्भपुत्रिकाः, चर्माच्छादितपुत्तलिकाः तासु न । गुणविति, मौर्श्रीसमन्वितं, (पत्ते) विद्याविनयादिसम्पन्ने, पिएडोपजीविनि, (श्रन्न-दानेन भरगाीये इत्यर्थः ) सहायवुद्धिः, न । ऋस्य (हर्पस्येतियावन्) मित्रोपकरगां, सुहद्रपं, उपकरगां उपकारकं वस्तु, स्रात्मा, स्वस्वरू-पम् । (त्रात्मप्रभावेगोव सर्वमसो संसाधयति, न पर्मुखमपेत्तते इत्यर्थः) 18

करणं प्रभुत्वम्, पिण्डतोपकरणं वैदग्ध्यम्, बान्ध्रवोपकरणं छद्मीः, रूपणोपकरणमैश्वर्यम्, द्विजोपकरणं सर्वस्वम्, सुरूत-संस्मरणोपकरणं हृदयम्, ध्रमोपकरणमायुः, साहसोपकरणं शरीरम्, असिलतोपकरणं पृथिवी, विनोदोपकरणं राजकम्, प्रतापोपकरणं प्रतिपत्तः। नास्यालपपुर्यययाप्यते सर्वातिशायि-सुखरसप्रस्तिः पादपत्तवच्छाया' इति। श्रुत्वा च तमेव चन्द्र-

भृत्योपकरगां, भृत्यानामुपकारसाधनं, प्रभुत्वं, प्रभावः ( संवकादीनां दानादिसम्पादनमेवास्य प्रभुत्व फलमितिभावः) पण्डितोपकरग्रां, परिडतानामुपकारसाधनं, वेदग्ध्यं विद्यावत्वं, वैचन्तर्ण्यं वा । बान्ध-वोपकरण्ं, वान्यवानामुपकारसायनं, लच्मीः, सम्पन्, (सम्पद्भिः बान्ध्रवा उपक्रियन्ते इतिभावः ) कृषगोपकरगां, कृषगानां, दीनानां, उपकरगां, पोपगाम, ऐश्वर्य । (श्रस्य ऐश्वर्य दरिद्रागां दारिद्रथमोच-नार्थमेवेतिभावः ) द्विजोपकरणं, द्विजानां, त्राह्मणानां, उपकरणं, सर्वस्वं, सर्वधनम् , सुकृतेति —सुकृतस्य, कृतोपकारस्य, संस्मरगां, तस्य, उपकरगां, उपकारकं, हृद्यं, चित्तम् (कृतज्ञोऽयमितिभावः) धर्मी-पकरगां, धर्मोपार्जनसाधनं, त्र्रायुः, जीवनसमयः (धर्मार्जनायैवजीवितमि-त्यर्थः)साह्सोपकरगां, सहसाप्राग् विविच्य वलेन, क्रियमागां कर्म साहसं. तस्य उपकरगां, उपकार सायनं, शरीरं । ऋसीति—ऋसिलता, खङ्गं, तस्या उपकरगां, उपार्जनवस्तु, ( खङ्गवलंनैवानेन पृथिवी त्र्यायत्तीकृता इतिभावः ) वितोदोपकरणं, विनोदस्य, श्रीतेः, उपकरणं, राजकं, राजचक्रम् , ( श्रनुगत राज्ञांसाहचर्येगोवायं प्रीतिमनुभवति ) । प्रतापेति-प्रतापस्य, तेजसः, उपकरण्म्, ख्यापनसाधनम्, तस्य प्रतिपत्तः, शत्रुः, । श्रल्पपुर्ण्यः, लघुभागधेर्यः । सर्वेति—सर्वाति-शायी, सर्वेभ्यः उत्कर्पवान् यः सुखरसः तस्य प्रसूतिः, उत्पत्तिहेतुः । सेनं समादिशत् 'कृतकशिपुं विश्वान्तसुखिनमेनं कारय' इति। श्रथ गते च तस्मिन्, पर्यस्ते च वासरे, संघट्टमानरकपङ्कज्ञ-संपुटपीयमाने इव चार्यिण चामतां व्रजति बालवायसास्या-रुणेऽपराङ्मुखातपे, शिथिलितनिजवाजिजवे जपापीडपाटले-ऽस्ताचलशिखरस्खलिते खञ्जतीव कमलिनीकण्टकच्ततपादपत्तवे पतंगे, पुरः परापति प्रेङ्कदन्धकारलेशलम्बालके शशिविरह-

पादपल्लवच्छायाः, पादपल्लवस्य, चरग्िक्सलयस्य छाया, श्रनातपः, (त्राश्रय, इत्यर्थः) कृतकशिपुम्, रचितशयनम्, वा सम्पादितभोजना-च्छादनव्यापारम् ,पर्यस्ते, त्र्यवसिते । संघट्टेति-सङ्घट्टमानः, सम्मीलन् यः रक्तपङ्क जसम्पुटः, रक्तकमलसम्पुटः, तेन पीयमाने इव प्रस्यमाने इव। च्चियिंग, चयोन्मुखं, चमतां, चीयातां, ब्रजति, गच्छति । बालेति— बालः, सद्योजातः, यः वायसः, काकः, तस्य श्रास्यानं, मुखं तद्वत् श्रहणे, रक्ते। परेति-पर ङ्मुखाः, प्रतिकूलाः, श्रातपाः, मयूरवाः, यस्य तथोकः। शिथिलेति— शिथिलितः, मन्दः, निजवाजिनाम , स्वाधानां, जवः, वंगो यस्मिन् तथोक्ते। जपेति—जपा, सूर्यप्रियकुसुभभेदः, तस्य श्रापीडः, स्तत्रकः, तद्वन् पाटले, रक्ते श्रस्ताचलशिखरस्खलिते, पश्चिम-गिरिच्डावलम्बिनि। खञ्जतीव, खञ्जइवाचरतीव। कमिलेनाति-कम-लिन्याः, पद्मिन्याः, कण्टकै, चतः, विद्धः, पादपल्लवः, चरण्किस-लयः यस्य तथाभूतं पतङ्गे, सूर्ये। पुरः, पूर्वस्यांदिशि, परापतित, त्रागच्छति । प्रेह्मदिति - प्रेह्मन्तः, आविर्भवन्तः, अन्धकारलेशाः, तिमिरबिन्दवः एव लम्बाः, त्र्यलकाः, चूर्गाकुन्तलाः यस्मिन् तथा भूते। शशीति-शशिनः, चन्द्रस्य विरहेगा, विच्छेदेन, यः शोकः तेन श्यामे, मिलने इव श्यामा, रात्री तस्याः मुखे, प्रारम्भे । श्रत्र श्यामा स्त्री मुखं, च, वर्ने, (पतिविच्छेददुःखंन श्यामामुखोऽपि मलिनो भवति

शोकश्याम इव श्यामामुखे, कृतसंध्योपासनः शयनीयमगात्। श्रविन्तयचैकाकी—'किं करोमि। श्रव्यथा संभाविऽतोस्मिराज्ञा। निर्निमित्तवन्धुना च संदिष्टमेवं कृष्णेन। कृष्टा च सेवा। विपमं च भृत्यत्वम्। श्रतिगम्भीरं महद्राजकुलम्। न च तत्र मे पूर्वजप्रवर्तिता प्रोतिः, न कुलक्रमागता गतिः, नोपकारस्म-रणानुरोधः, न बालसेवास्नेहः, न गोत्रगौरवम्, न पूर्वदर्शन-दान्तिग्यम्, न प्रज्ञासंविभागोपप्रलोभनम्, न विद्यातिशयकुत्-हलम्, नाकारसौन्दर्याद्रः, न सेवाकाकुकौशलम्, न विद्वद्गो-

(इति रूपकालंकारः) कृतेति - कृतसन्ध्योपासनः, विहितशायंकालि-ककर्म, शयनीयम् , शयनागारम् । एकाकी, ऋद्वितीयः । ऋन्यथा, विरुद्धप्रकारेगा, सम्भावितः, तर्कितः, निर्निमित्तबन्धुना, श्रकारग्य-मित्रेण । कष्टा, कष्टकारी । भृत्यत्वम् , भृत्यभावः, विषमम् , असह-नीयम् । श्रातिगम्भीरम् , दुर्झेयस्वभावम् । पूर्वजेति—पूर्वजैः, पितृभि , प्रवर्तिता, जनिता प्रीतिः, प्रगायः । कुलक्रमागता, वंशपरम्परागता । उपकारस्मरणानुरोधः, राजकुलेन कदाचित् मयोपकारः कृतः तस्य स्मरगां तद्नुरोधः । बालसेवास्नेहः, बाल्यात्प्रभृतिसेवानिमित्तं मम-त्वम् । गोत्रगौरवम्, कुलसम्माननम्। पूर्वदर्शनदात्तिण्यम्, पूर्व, दर्शनं, साचात्कारः, तेन दाचिएयं, सारल्यम्। प्रक्रोति-प्रज्ञायाः, बुद्धेः, संविभागः, समालोचनम्, तस्य उपलोभनम्, लोभो पापसन्धा--नम् । विद्यातिशयकुतुह्लम् , मे विद्या श्र्यतिशायिनी भविष्यति इति कुतुहलम्, कोतुकम्। नाकारसीन्दर्यादरः, त्र्याकारस्य, त्र्यवयवस्य, सौन्द्यें त्रादरः, सम्मानः । सेवाकाकुकौशलम् , सेवायां, काकुः, ध्वनि-विकार: तस्य कौशलं, पाटवम् । विद्वदिति—विदुषां, गोष्ठी, समाजः तस्याः बन्धे, स्रायत्तीकरणे वैदग्ध्यं, नैपुण्यम् न । वित्तव्यय-

ष्ठीबन्धवैद्ग्ध्यम्, न वित्तव्ययवशीकरणम्, न राजवल्लभपरि-चयः । त्रवश्यं गन्तव्यम् । सर्वथा भगवान्पुरारातिर्भुवनगुरुर्ग-तस्य मे सर्वं सांप्रतमाचरिष्यति' इत्यवर्धाय गमनाय मतिम-करोत् ।

त्रथान्यस्मिन्नहन्युत्थाय, प्रातरेव स्नात्वा, धृतधवलदुकूल-वासाः, गृहीतात्तमालः, प्रास्थानिकानि स्कानि मन्त्रपदानि च बहुशः समावर्त्य, देवदेवस्य विरूपात्तस्य ज्ञीरस्नपनपुरःसरां सुरभिकुसुमधूपगन्धध्वजवलिविलेपनप्रदीपकवहलां विधाय पूजाम्, परमया भक्त्या प्रथमहुतत्र स्रतिस्विचिचटनचटुल-

वशीकरणम्, वित्तस्य, धनस्य, व्ययः तस्य वशीकरणम्, वाध्यता न । (श्रस्तीति शेषः) राजसेवायां प्रचुरं वित्तं लभ्यते ममापितस्य व्ययं श्रावश्यकं इति । राजवल्लभः, राजप्रियः, तस्य परिचयः, परिचितिः । पुराराति—विपुरारिः, भुवनगुरुः, लोकगुरुः, महादेवः । श्रवधार्य, विचिन्त्य । धृतधवलदुक् लवासाः, परिदिन शुश्रपट्टवसनः । गृहीताल्लमालः, जपमालाधारी । प्रस्थानिकानि, प्रस्थानकालं वक्तव्यानि । स्कानि, वेदमन्त्रभागानि । बहुशः, वारम्वागम् । समावत्यं पठित्वा । देवदेवस्य, महादेवस्य । विरूपात्तस्य, त्रिलोचनस्य । चीरेति—चीरेण, दुग्धेन, स्नपनं स्नानं, पुरःसरां, पूर्वं यस्याः ताम् । सुराभिति—सुरभीणि, सुगन्धीनि, कुसुमानि पुष्पाणि, धूपाः, गन्धाः, ध्वजाः, पताकाः, विलिविषेपनानि, पूजार्थविलेपनद्रव्याणि, तैः बहुला भूयिष्टा ताम् । प्रथमेति—प्रथमं, प्राक् हुतानां, देवोद्देशेनप्रचिप्तानाम् तरलानां, चपलानाम् , तिलानां त्वचः, श्रावरणानि, तासां विघटनेन, विसरणोन चटुलाः, चंचलाः, श्रत एव मुखराः पटत्पटदिति शब्दं कुर्वाणाः, शिरावः, ज्वालाः, शेखराणि, शिर श्राभरणानि यस्य तम् ।

मुखरशिखाशेखरं प्राज्याज्याहुतिप्रविधितद्त्तिणाचिषं भगवन्तमाशुश्चत्तिण हुत्वा, दत्वा चुम्नं यथाविद्यमानं द्विजेभ्यः, प्रदचिण कृत्य प्राङ्मुखीं नैचिकीम्, शृक्कांगरागः शृक्कमाल्यः, शृक्कवासाः, रोचनाञ्चितदृर्वाप्रपत्तवप्रथितगिरिकणिकाकुसुमकृतकर्णपूरः, शिखासक्तिद्धार्थकः, पितुः कनीयस्या स्वस्ना मात्रेव
स्नेहार्द्रहृदयया श्वेतवाससा साचादिव भगवत्या महाश्वेतया
मालत्याख्यया कृतसकलगमनमंगलः, दत्ताशीर्घादो बान्धवधृद्धाभिः, श्रभिनन्दितः परिजनजरतीभिः, वन्दितचरणैरभ्यनुक्षातो गुरुभिः, श्रविवादितराष्ट्रातः शिरसि कुलवृद्धैः, विधितगमनोत्साहः शकुनैः, मौहृतिकमतेन कृतनचत्रदोहदः, शोभने मुहूर्त

प्राज्येति— प्राज्याहुतिभिः, प्रचुरघृताहुतिभिः, प्रविद्धिताः, वृद्धि नीताः, दिन्नगादिन्गादिग्वर्तिन्यः ऋर्षियः, शिखायस्य तथोकतम् । आशुगुच्छिम्, अग्निम् । (पावकोऽनतः रोहिताश्वो वायुसखा शिखावाना- शुशुच्चिगः इत्यमरः । द्युस्म् चनम्, (युम्नं वित्ते विलेऽपि च इति मदनी) नेचिकीं, गाम्, (उत्तमागोपु नेचिकी इत्यमरः) शुक्काङ्करागः, श्वेतचन्दनिद्धस्नेहः । रोचनेति— रोचनया, गोरोचनाख्यमांगल्य- द्रव्येण, ऋञ्चिताः, रिञ्जताः दृर्वाणां, कुशानाम्, अश्वपञ्चवाः तैः शन्थितं, गुम्फितम्, यत् गिरिकिणिकाकुसुमम्, ऋश्वखुरीनाम मांगिलकी ऋोपिः, तस्याः, पुष्पं, तेन कृतः, रिचतः, कर्गापूरः कर्णभूषणं येन तथोक्तः । शिखेति—शिखासु, चूडासु, सक्ताः, लग्नाः, सिद्धार्थकाः, रवेतसर्पणः यस्य तथा भृतः । स्वस्ना, भिगन्या । श्वेतवाससा धवलवस्तया । महाश्वेतया, सरस्वत्या । कृतेति—कृतम्, अनुष्ठितम्, सकलं, गमनाय मंगलं यस्य तथोक्तः । दत्ताशीर्वादः, वितरिताशिः, परिजनजरतीभिः, परिजनेपु या जरत्यः, स्थविराः ताभिः । आद्यातः,

हरितगोमयोपलिप्ताजिरस्थिएडलस्थापितमसितेतरकुसुममाला-परिचिप्तकर्णठं पिष्टपञ्चाङ्गुलपार्गडुरं मुख्निहितनवच्नूतपल्लवं पूर्णकलश्मुदीचमाणः, प्रणम्य कुलदेवताभ्यः कुसुमकलपाणि-भिरप्रतिरथं जपद्भिनिजद्विजैरनुगम्यनानः, प्रथमचलितद्विण-चरणः, प्रोतिकूटान्निरगात्।

प्रथमेऽह्नि घर्मकालकप्टं निरुद्कं निष्पत्रपादपविषमं-

शिरसि चुम्बितः । शकुनैः, सुनिमित्तभूतपित्तिभः, सुहूर्त्तिकेति— मुहूर्त्ते जानन्ति इति मौहूर्तिकाः, गणकाः इत्यर्थः, (देवज्ञगणकावपि-स्युमोहूर्तिक इत्यमरः) तेपां मतेन, श्रभिप्रायेख । कृतेति कृतम्, न्त्रत्रेषु, त्र्राश्वन्यादिषु दोहदम्, त्र्यनुरागविशेषः येन तथोक्तः। शोभनेमुहुर्ने, शुभवटिकायाम् , हरितेति— हरितेन, त्र्रशुष्केण, गोम-येन, गब्येन, उपलिप्तम् , प्रलिप्तम् , यत् त्र्वानरम् , त्रंगराम् , तदंव स्थिएडलं, परिष्कृताभूमिः, तत्र स्थापितः तम्। ऋसितेति—ऋसि-तंतराभिः, रवेताभिः, कुसुममालाभिः, परिचिप्तः, परिवेष्टितः, कण्ठः, यस्य तथोक्तम् । पिप्टेति पिष्टानां, "पिटिली" इति प्रसिद्धानां मांगलिक द्रव्याणां पंचांगुलं, पंचांगुलाकारः प्रसाधनविशेषः, तेन पाग्डुरः, शुभ्रः (पंचांगुल गृहीतिपिष्टेन चित्रित इति भावः) तम्। मुखेति – मुखं, कलसस्येतिरोषः, निहिनः, ऋर्पितः, नवः चृतपह्लवः, त्राम्नपञ्चवः यस्य तथोक्तम् पूर्णकलसम् , भरितकुम्भम् , <u>उद्दीच्यमा</u>गाः, पश्यन् । श्रप्रतिरथम् , नास्तिप्रतिरथः, प्रतिद्वन्दी यत्र तद् । जपद्भिः, बाग्यस्पद्धींकोऽपिमाभूत्, इति मंत्रं जपद्भिः, निजद्विजैः, स्वकीयैः, ब्राह्मणैः । श्रनुगम्यमानः, प्रथमं, पूर्वं चिततः, दित्तगाचरगः, वामे-तरपादः यस्य सः । प्रीतिकूटात् , एतन्नाम नगरात् , निरगात् ।

प्रथमेति - मल्लकूटनामानं प्राममगात् इत्यनेनान्वयः। प्रथमेऽहनि,

पथिकजननमस्कियमाणं,प्रवेशपाद्पोत्कीर्णकात्यायनीप्रतियातनं, ग्रुष्कमिष पल्लवितमिव तृषितश्वापद्कुललम्बतलोलजिल्लाल-तासहस्रैः पुलकितमिवाच्लुभल्लगोलाङ्गूललिह्यमानमधुगोल-चलितसम्घासंघातैः, रोमाञ्चितमिव द्रुधस्थलीक्ष्ढस्थूलाभीर-कन्दलशतैः, शनैश्चिणिङकाकाननमितकम्य मलकूटनामानं प्राममगात्। तत्र च हृदयनिविशेषेण भ्रात्रा सुहृदा च जगत्पति-नाम्ना संपादितसपर्यः सुख्यमवसत्। श्रथापरेषुरुतीर्य भगवतीं

आदिमेदिवसे । धर्मेति चर्मकाले, श्रीष्मावसरं कष्टं, दु खं यत्र तत् । निरुदकं, जलहीनम् । निष्पत्रेति – निष्पत्रेः, पत्ररहितैः, पादपैः, तरुभिः, त्रिपमं, कठोरम्। (छायाहीनाद् दुःखगाहम्) पथिकेति – पाथिकैः, पान्थजनैः, नमस्कियमागां, प्रगान्यमानम्। प्रवेशेति – , प्रवेशे, प्रवेशनारम्भे यः पाद्पः, तरुः तत्र उत्कीर्गाः, खोदिना कात्या-यन्याः, दशभुज्ञायाः, प्रतियातना, प्रतिकृतिः, यत्र तथोक्तम् । शुष्क-मपि नीरसमपि । पज्जवेति--पञ्जविनमिव, पत्रवदिव, तृषितैः, पिपा-सितै:, श्वापद्कुतै:, हिंखजन्तुसमूहै:, लिम्बतानि, बहिष्कुनानि, लोलानां, चपलानां, जिह्वालनानां, रसनावल्लीनां, सहस्राणि यै:. "इत्युत्प्रेज्ञा" पुलिकतिमव, रोमाञ्चितमिव, ऋच्छेति – ऋच्छभल्लै:, भल्जुकै:, गोलांगूलै:, कपिभेदैः, ( लंगूर इति ख्यातैः ) लिह्यमानानि श्रास्त्राद्यमानानि, यानि मधुगोलानि, मधुचकािया, तेभ्यः चलिता-नाम्, उड्डीयमानानां, सरघागाां, मधुमचिकागाां, संघाते , समृहै: । रोमाञ्चितमिव । दग्धेति –दग्धासु, भस्मीकृतासु, स्थलीपु, उपर-भूमिषु, रूढानां, जातानाम्, ऋभीरुणां, शतावरीनामौषधविशेषाणां, <sup>4</sup>कन्दलशतैः,नवाङ्कुरसमूहैः । पूर्वेगान्वयः । हृदयनिर्विशेषेगा,हृद्यात् निर्विशेषः, स्रभिन्नः तेन, सम्पादितसपर्य्यः, स्रनुष्टितसत्कारः।

भागीरथीं यष्टिगृहकनाम्नि वनग्रामके निशामनयत् । श्रन्यस्मि-न्दिवसे स्कन्धावारमुपमणितारमन्वजिरवति कृतसंश्रिवेशमास-साद । श्रुतिष्ठच नाति दुरे राजभवनस्य ।

निर्वितित्तस्नानाशनव्यतिकरो विश्वान्तश्च मेखलकेन सह सह याममात्रावशेषे दिवसे भुक्तवित भूभुजि प्रख्यातानां चिति-भुजां बहुन्शिबिरसिन्नवेशान्वीचमाणः शनैः शनैः पट्टबन्धार्थ-मुपस्थापितैश्च, डिण्डिमाधिरोहणायाहृतैश्चाभिनवबद्धेश्च, विच्ते-पोपाजितैश्च, कौशलिकागतैश्च, नागवीथीपालप्रेषितैश्च, प्रथम-

स्कन्धावारम् , संना निवेशार्थरचितपटमण्डपादिरूपम् । उपमणितारम्, मिर्गाताराख्यपत्तनसमीपं। श्रन्वजिरवति -श्रजिरवती नाम नदी तामनु, अन्वजिरवति । कृतसन्निवेशं, कृतस्थितिम् । आससाद, प्राप । निर्वितितेति—निर्वितितः, कृतः, स्नानाशनयोः, स्नानभोजनयोः, व्यतिकरः विधिः येन तथोक्तः । विश्रान्तः, कृतविश्रामः । मेखलकेन, एतन्न।मपत्रवाहकेत । याममात्रावशेष, प्रहरमात्रावशिष्टे । भूभूजि, राजनि । प्ररूपातानां, प्रसिद्धानाम् । चितिभुजां, महिभुजाम् । शिवर-संनिवेशान् , पटमण्डपानि । वीक्तमागाः, पश्यन् । पट्टबन्धार्थम् , सिंहासनमण्डप रचनार्थम् । उपस्थापितैः, श्रानीतैः । डिण्डिमाघिरोह-गाय, पटहस्थापनाय, गजस्योपरि इति भावः । वित्तेपेति—वित्तेपेगा, प्रेरगोन, नृपवृत्दैः उपायनार्थमितिभावः। उपार्जिताः, लब्धाः तैः। कोशलिकम्, नैपुर्यम्, आगतैः, प्राप्तैः। नागेति-नागवीथी, गजोत्पत्तिभूमिः, तस्याः पालः, रत्तकः, तेन प्रेपितैः, प्रेरितैः । प्रथ-मेति-प्रथमं, प्राक् यत् दर्शनम् , त्र्यवलोकनम् , तस्मिन् यत् कुत्-हलम्, कौतुकम्, तेन, उपनीतैः, प्राप्तैः। दूतेति-दूतानां, राज-वार्तावहानां, सम्प्रेषणेन, प्रेरणेन, प्रेषितैः । पत्नीति—पत्नी, व्याधानां,

दर्शनकुत्हलोपनीतैश्च, दूतसंप्रेषणप्रेषितैश्च, पत्नीपरिवृढढौकितैश्च स्वेच्छायुद्धकीडाकौतुकाकारितैश्च, दीयमानैश्चाचिछ्यभानैश्च, मुच्यमानैश्च, यामस्थापितैश्च, सर्वद्वीपिजगीषया गिरिभिरिव सागरसेतुबन्धनार्थमेकीकृतैर्ध्वजपटपटुपटहशङ्खचामरांगरागर—मणीयैः, पुष्याभिषेकदिवसैरिव कित्पतैर्वारणेन्द्रैः श्यामायमानम्, श्चनवरतचिलतखुरपुटप्रहतमृदंगैर्नर्तयद्विरिव राजलक्मी-

चुद्रप्राम, नस्य परिवृढः, श्रिपिः,तंन ढोकितैः, प्रेपितैः। स्वेच्छेति— स्वेच्छया, निजेच्छया, राज्ञ इति भावः। या युद्धकीडा तस्याम् यत्कौतुकम्, त्र्यौत्सुक्यम्, तेन त्र्याकारितैः, त्र्याहूतैः दीयमानेति दीयमानैः, राजभिः, उपढोक्यमानैः । स्राच्छिद्यमानैः, स्रपसार्यमार्गैः । मुच्यमानैः, बन्यनान् इति भावः । यामस्थापितैः, प्रहरकाल।वस्थितैः । सर्वेति—सर्वे, सकलाः, द्वीपाः, देशाः, तेषां जिगिषया, जेतुमिच्छया। सागरेति सागरस्य, समुद्रस्य सेतुः, युलम्, तद्वन्धनार्थम् गिरि-भिरिव, पर्वतैरिव । एकीकृतैः, एकत्रानीतैः । ध्वजेति—ध्वजपटाः, पताकाः, पटवः, गम्भीरनादाः, पटहाः, ढक्काः, शंखाः, चामराणि, बालव्यजनानि, श्रङ्गरागाश्च, विलेपनद्रव्याणि च तैः रमणीयैः, सुदर्शनैः । पुष्याभिषेकदिवसेरिव, ( पुष्यनत्तत्रयुक्तेदिने मङ्गलालङ्कृतः स्नाति तत्र ध्वजादिरम्यवस्तूनि सज्जीकियन्ते नादृशैः दिनैरिव ) कल्पितैः, सज्जितैः, वारगोन्द्रैः, गजन्द्रैः, श्यामायमानम्, श्यामा, निशा तद्वत् श्राचरतीति तथोक्तम् । श्रनवरतेति-श्रनवरतं, निर-न्तरम्, चिलतं यत् खुरपुटम्, शफाप्रम्, तेन प्रहतानि, ताडितानि, मुदः, मृतिकायाः, श्रङ्गानि, श्रवयवानि, यैः तथोक्ते, नर्तयद्भिरिव, नृत्यं कारयद्भिरिव । (तत्रापि वाद्यविशेषाः मृदंगाः ताडिताः भवन्ति ) सम्केति — सृक्षपुटम् , श्रोष्ठप्रान्तम् , (प्रान्तावौष्ठस्य सृक्षग्री "इत्य-

मुपहसद्भिरिव सक्कपुटप्रस्तफेनाट्टहासेन जवजडजङ्घां हरिण-जातिमाकारयद्भिरिव संघट्टहेतोईपंहेपितेनोच्छेः श्रवसमुत्पतद्भि-रिव दिवसकररथतुरगहपा, पत्तायमाणमण्डनचामरमालैर्गगन-तलं तुरंगैस्तरंगायमाणम्, श्रन्यत्र प्रेषितंश्च प्रेष्यमाणैश्च, प्रेषि-तप्रतीपनिवृत्तैश्च, बहुयोजनगमनगणनसंख्याऽत्तरावर्लाभिरिव वराटिकाऽऽवर्लाभिर्घटितमुखमण्डनकैस्तारिकतैरिव संध्याऽतप-च्छेदैरहण्चामिरकारचितकर्णपूरैः सरकोत्पलैरिव रक्त्शालिशाले-

मरः ) तस्मात् प्रसृतः, निसृतः, यः फेनः स एवादृहासः, हास्यविशेपः तेन । जवेति—जवे, वेगे, जडा, गन्तुमसमर्था, जङ्घा, यस्याः नाम् हरिगाजाति, मृगजातिम् , त्र्याकारयद्भिरिव, त्र्याह्वयमानैरिव । संघ-टेति—संवटहेतोः, परस्परसम्प्रेलनहेतोः। दिवसकरस्य, सूर्यस्य ये रथतुरगाः, स्यन्दनाश्चाः, तेभ्यः, रुट्, क्रोधः, तया, गगनतलं, नभ-स्तलम्, समुत्पतद्भिरिव, उड्डीयवाबद्भिरिव, पत्तेति-पत्तवदाचर-न्तीति, पत्तायमाणाः याः मण्डनचामरमालाः, भूपणार्थयृतचामररा-जयः, येषां तैः । तरंगायमानम्, तरंगवदाचरतीति तथोक्तम् । साम्प्रतम् क्रमेलककुत्तैः कपिलायमानं राजद्वारमिति विशिनष्टि । अन्यत्र-अन्यस्मिन् प्रदेशे, प्रेषितैः, प्रेरितैः । प्रेष्यमागौः, प्रेर्घ्यमागौः प्रेषितप्रतिनिवृत्तैः, प्रथमं प्रेषिताः पश्चात् प्रतिनिवृत्तैः। वह्निति—वहूनि योजनानि यद्गमनं, तस्य गराना, संख्या तस्याम्, श्रज्ञरावलीभिः, गणनचिह्नभूताङ्कैः । वराटिकावलीभिः—कपर्दिकाभिः । घटितेति— घटितं, खिचतम्, मुखमण्डनकं, वदनभूषणं येषां तैः तारिकतेरिव, प्रकटिततारामण्डलैरिव । सन्ध्या-शायंमुखम् , तस्याऽऽतपच्छेदैः, स्रात-पखण्डैः । ऋरुणेति—ऋरूणाः,रक्ताः,याः चामरिकाः, ताभिः रचिताः, खिचताः कर्णपूराः, कर्णाभरणाः येषां तैः सरकोत्पर्लेरिव, ऋरूण-

यैरनवरतभणभणायमानचारुचामीकरघुरुघुरुकमालिकैर्जरत्कर-अवनैरिवरणितशुष्कवीजकोशीशतैः, श्रवणोपान्तप्रेङ्कतपञ्चराग-वर्णोणीचित्रसूत्रजूटजटाजालैः किपकपोलकिष्ठैः कमेलककुलैः किपलायमानम् , श्रन्यत्र शर्ज्जलधरैरिव सद्यः स्नुतपयः पटल-धवलतनुभिः, करुपपादपैरिव मुक्ताफलजालकजायमानाऽऽलोक-लुप्तच्छायामग्डलैर्नारायणनाभिषुग्डरीकैरिवाशिष्ठरगरुडपचैः,

कमलबद्धिरिव । रक्तानां, शालीनां, धान्यानां, शालेयाः, चेत्राणि नैः । <mark>त्र्यनवरतेति-त्र्</mark>यनवरतं,निरन्तरम् ,कगा्कगायमानैः,एतच्छब्दंकुर्वद्भिः, चार्रभः चामीकरैः, सुवर्गेः (घटिना इति रोपः) घुरुघुरुकाः, एतच्छब्रुक्तियमाग्गाः मालाः येषां तैः । जरत्करञ्जवनैः, जीर्गा-कमलक।नर्नेरिव । रिणतेति -रिण्तानि यानि शुष्कवीजानि येपां, कंशीनां, पद्मानां शतैः शतसंख्याकैः । श्रवणयोः कर्णयोः, उपान्तेषु, प्रान्तेषु, प्रेह्मन्ति, चलन्ति, पंचिभः, पंचिवधैः रागैः, वर्गैः, रचिता याः उर्गाः, मेषादीनां लोमानि ताभिः चित्राग्गि, मनोज्ञनि, सूत्र-जूटा इव जटाजालानि केशत्रुन्दानि येपां तैः। कपिकपोलकपिलैः, वानरगण्डस्थलवत् पिङ्गलैः। क्रमेलककुलैः, उष्ट्रवृन्दैः। कपिलायमानम् पिङ्गलायमानम् । त्र्यन्यत्र—श्रन्यस्मिन्देशं त्र्यातपपत्रखण्डः श्वेतद्वीपा-यमानम् इति राजद्वारं विशिनष्टि, शरज्जलधरेरिव, शरत्कालमंघैरिव । सच इति स्मः तत्त्रग्रम्, ज्ञुतानां, त्रितानाम्, पयसां, दुग्धा-नाम् , पटलवन् , राशिवन् धवलम् , शुभ्रम् ननुः , येषां तथाविधैः (पत्ते) सदाः स्रुतैः, त्राचिर निर्गलितैः, पयसां, जलानां पटलैः समूहैः, धवलाः श्वेताश्च ते तनवः तथा भूतैः कल्पपाद्पैरिव, सुरतरुभिरिव मुक्तेति — मुकाफलानां, मौक्तिकानाम्, जालकैः, मालाभिः, जाय-मानः , उत्पद्यमानः, यः श्रालोकः, प्रभा, तेन लुप्तं, छिन्नम् यत् त्तीरोदोद्देशैरिव द्योतमानविकटविद्रमद्रुः, शेषप्रणाप्तस्कैरिव उपरिस्पुरत्स्फीत माणिक्यरवर्ण्डः, श्वेतगंगापुलिनैरिव राजहंसोपसेवितैरिभभवद्गिरिव निदाधसमयमुपहसद्गिरिव विवस्वतः प्रतापमापिवद्गिरिवातपं चन्द्रलोकमयमिष जीवलोकं जनयद्गिः कुमुद्दमयमिव कालं कुवैद्गिज्योत्स्नामयमिव वासरं विरचयद्गिः फेनमयीमिव दिवं दर्शयद्गिरकालकौमुदीसहस्त्राणीव

द्यायामण्डलम् , त्र्यनातपसमृहः यैः तैः (पर्तः) मुक्ताफलानां जालकैः, कल्पवृत्तप्रसृतैः मोक्तिकैः, अन्यत्रसामान्यम् । नारायण्स्य विष्णोः, नाभिपुएडरोकेः, नाभिजश्वेतकमलैरिव, श्राश्चिष्टाः,संलग्नाः, गरूडपत्ताः, रत्नविशेषाः (त्र्यन्यत्र) गरुडपित्तगाः यत्र नैः । चीरोदोद्देशैरिव, चीरसा-गरविभागैरिव । द्योतेति-द्योतमानाः,दिप्यमानाः,विकटाः,विषमाः,विद्रु-मर्ग्डाः, प्रवालद्रुमाः यत्र तैः शंवफणाफलकैरिव, उपरीति—उपरि, शिखरदेशे, स्कुरत् दीप्यमानम् , स्फीतम् स्थूल माणिक्यखण्डम् , येषां तैः (पत्ते) उपरि-फग्गाया उपरिभागे, स्कुरत् स्कीतं माग्गिक्यखण्डम् , येपु तैः । श्वेतगङ्गापुलिनैरिव, धवलगंगासैकतदेशैरिव । राजहंसेति— राजानो हंसा इव तै: नृपोत्तमै:, (पत्तं) हंसविशेपैश्च । उपसंवितानि, व्यवहृतानिः; चरितानि च तैः । निदाधसमयं, ग्रीष्मकालम् , त्र्राभिभव-द्धिरिव, जयद्भिरिव, ( श्रातपनिवारग्गात् ) विवस्वतः, सूर्यस्य, प्रतापं प्रभावम् , उपहसद्भिरिव ( सर्वतसूर्यदर्शनाभावात् ) चन्द्रलोक मय-मिव जीवलोकम् , मनुष्यलोकम् , जनयद्भिः, उत्पादयद्भिः (तस्यातिधा-बल्यात्) कुमद्मयभिव, कैरवमयभिव कालं,समयं कुर्वद्भिः सम्पादयद्भिः । ज्योत्स्नामयभिवकान्तिमयमिव, वासरं, दिनं विरचयद्भिः, कुर्वद्भिः। फेनमयीमिव, दिवम्, अन्तरीत्तम् दर्शयद्भिः, आलोकयद्भिः। श्रकालकोमुदीसहस्रागीव,कोमुदीसहस्रागि,चन्द्रिकासमूहान्,सृजद्भिः, सजिद्धिरादसिद्धिरिव शातकतवीं श्रियं श्वेतायमानैरातपत्रखएडैंः श्वेतद्वीपायमानम्, चणदृष्टनष्टाष्ट्रिङ्मुखं च मुष्णिद्धिरिव भुवन्ममाचेपोत्चेपदोछायितं दिनं गतागतानीव कारयद्भिरुत्सारय-द्विरिव कुनृपतिकलङ्ककाली कालेयीं स्थिति, विकचविशदकाशवनपाग्डुरिद्शं शरत्समयमिवोपपादयद्भिविसतन्तुमयमिवान्तिरचमाविभावयद्भिः शशिकरशुचीनां चलतां चामराणां सह-स्रेद्रीलायमानम् ,श्रिप च हंसयूथायमानं करिकर्णशङ्खेः,कल्पलतावनायमानं कदलिकाभिः, माणिक्यश्चकवनायमानं मायू-

उत्पादयद्भिः, शातक्रतवीं, ऐन्द्रीं, श्रियम् , सम्पद्म् , उपह्सद्भिरिव । श्वेतायमानैः, श्वेतइव स्त्राचरन्ति तैः, स्त्रातपत्रखण्डैः, छत्रनिवहैः, श्वेतायमानम् । चामराणां सहस्रैः,दौलायमानमिति विशिनष्टि । चर्णिति-चरोन,हप्टं नप्टं च, श्रष्टानां, दिशां, मुखानि यस्य तादृशम् ,भुवनम् , लोकम्, मुज्याङ्गिरिव, हरङ्गिरिव। आत्तेपेति -आत्तेपः, प्रसारगाम्, उत्त्रेपः, अद्घेतिनेपण्म् ताभ्यां दोलायितम् दिनं, दिवसम् गता-गतानि, यातायातानि, कारयद्भिरिव । कुनृपेति-कुनृपाः, एव कलङ्काः, त्रपवादाः, तैः, काली, मलिनातां कालेयीं, कलिसम्बन्धिनीं, स्थिति, मर्यादाम् , उत्सारयद्भिरिव, अपनयद्भिरिव । विकचेति— विकचैः, स्फुटैः त्र्यतएव विशदैः, काशवनैः, काशनामनृगाविशेपैः, पारुडुराः, धवलाः, दिशो यत्र तथा भूतम् शरत्समयम् , शरत्कालम् , उत्पादयद्भिरिव । विषतन्तुमयम् , मृगाःलसूत्रमयम् , ऋन्तरीत्तं, गगन-तलम् , त्राविर्भावयद्भिरिव प्रकटयद्भिरिव । शशिनः, चन्द्रस्य कराः, किरणा इव शुचीनि, स्वच्छानि तेषाम् , पूर्वेणान्वयः । करिकर्णशङ्केः, हस्तिकर्णेषु भूषणार्थे, विन्यस्तशङ्खेः । हंसयूथायमानम्, हंससमूह-मिवाचरन्तम् । कद्लिकाभिः, पताकाभिः, (रम्भावृत्तेथकद्ली पताका-

रातपत्रैः, मन्दाकिनीप्रवाहायमाणमंशुकैः, चीरोदायमानं चोमैः कद्छीवनायमानं मरकतमयृखैः, जन्यमानान्यदिवसमिव पद्म-रागवालातपैः, उत्पद्ममानापराम्बरमिवेन्द्रनीलप्रभापटलैः, स्रार-भ्यमाणापूर्वनिशमिव महानीस्मयृखान्धकारैः, स्यन्दमानानेक-कालिन्दीसहस्रमिष गरुडमणिप्रभाप्रतानैः, श्रंगारांकितमिष पुष्परागरश्मिभः, कैश्चित्प्रवेशमलभमानैरघोमुखैश्चरणनखपति-मृगभेदयोः ) कल्पलतावनायमानम् , कल्पद्रुमवनमिव श्राचरन्तम् । मयुरातपत्रैः, मयुरपिच्छनिर्मितच्छत्रैः । माणिक्यवृत्तकागाम् , माणि-क्यभूषित चुद्रतस्याम् । वनायभानम् , काननायमानम् । त्रांशुकै:, वसनविशेपै:, मन्दाकिनी गंगा, तस्याः प्रवाहमिवाचरति, इति तथो-क्तम् चीरोदः, चीरसागरः सद्दवाचरतीति, चौमैः, श्वेतपट्टवसनैः। मरकतमयूरवैः, हरिन्मगि।किरगैः । कदलीवनायमानम्, रम्भावन।य-मानम् , पद्मरागागाम् , पद्माख्यस्त्रानाम् , बालातपाः, ऋरुगालोकाः, तैः, जन्यमानः, उत्पद्यमानः, श्रन्यः दिवसः तिमव । इन्द्रनीलानाम्, मिगाविशेपागाम् , प्रभापटलेः, कान्तिनिचयेः, उत्पद्ममानम् , जन्य-मानम्, अपराम्बरमिव, अन्यद्गगनिव। गरुड्रेति गरुडमणी-नाम्, रत्रविशेषार्याम्, प्रभाष्रतानैः, कान्तिष्रतानैः। पुष्परागार्याम्, पद्मरागाणाम् , रश्मिभः, किरणैः, अंगारांकितमिव, अग्निस्फुलिंगा-ङ्कितमिव । कैश्चिदित्यारभ्यः शत्रुमहासामन्तैः, समन्तादासंव्यमान-मिति विशिन्छि । कैश्चित् , कतिपर्यैः, प्रवेशमलभमानैः, प्रवेशमप्राप्तु-वद्भिः । त्रतएव त्रधोमुखैः, त्र्यवनतवदनैः । चरणेति चरणेपु, पादेपु, नखाः तत्र पतिनानाम् , वदनप्रतिबिम्बानाम् , मुखच्छायानाम् , निभेन, त्याजेन, लज्जया,बीडया, स्वांगानीव, स्वशरीराणीव विशद्भिः, तदन्तलीयमानै: । कैश्चित् , कतिपर्ये:, श्रंगुलीति, श्रंगुलिभि:, लिखि- तायाः, खनितायाः, चितंः, पृथिव्याः, विकीर्यमःगानाम्, उत्चिप्यमा-ग्रानाम् , करनखिकरग्रानाम् , ह्स्तात्रभागमयृखानाम् , कद्म्वकम् , समृहः, तस्य व्याजेन, छलेन, सेवाचामराणि इव, परिचर्ग्यावालव्य जनानीव, ऋर्षयद्भिः, दद्द्भिः । कैश्चिन्, उरास्थलेति— उरास्थलेषु, वत्तःस्थलेषु, दोलायमानानाम्, लम्बमानानाम्, इन्द्रनीलानाम्, नीलकान्तमर्गानाम् , नरलानि, चपलानि, प्रभापट्टानि, कान्तिपट्टा-नि तै:। स्वामिनः, प्रभोः, यः प्रकोपः, क्रोधः नस्य प्रशमनाय, शान्त्यर्थम् । कग्ठेति — कण्ठेषु बद्घानि कृपागापट्टानि, त्र्रासिफलकानि, यैः तथा भूतैरिव । उच्छवासेति—उच्छासस्य, निश्वासपवनस्य. सौरमेण, सहन्धेन, भ्राम्यङ्गिः, संचरङ्गिः, भ्रमरपटलैः, त्र्यलिबृन्दैः, श्रन्धकारितम् , श्रन्धकार इवाचरितम् , मुखं येपां तैः । श्रपहतेति — अपहतायाः, वलाद्गृहीतायाः, लच्म्याः, राजिश्रयः, शोकेन, धृताः, लम्बाः, श्मश्रवः यैः । शेखरेति –शेखरेभ्यः, शिरोभ्यः, उड्डीयमा-नानि, उत्पतन्ति, मधुपमण्डलानि, त्र्यलिवृन्दानि येषां तथोक्तैः। प्रणामेति-प्रणामे, प्रणत्याम् विडम्बनायाः, श्रवमाननायाः, भयेन पलायमानाः, मौलयः किरीटाः येषां तथोक्तैः । निर्जितैरपि, पराजितै-रपि, सम्मानितैरिव, त्राहतैरिव, त्रानन्यशरगौ:, त्रान्याश्रयरहितै:।

नितैरिवानन्यशरणैरन्तरान्तरा निष्पततां प्रविशतां चान्तरप्रती-हाराणामनुमार्गप्रधावितानेकाथिंजनसहस्राणामनुयायिनः पुरु-पानश्रान्तैः, पुनःपुनः पृच्छद्भिः 'भद्र श्रद्य भविष्यति भुक्त्वा स्थाने दास्यति दर्शनं परमेश्वरः, निष्पतिष्यति वा बाह्यां कद्म्याम्' हति दर्शनाशया दिवसं नयद्भिर्भुजनिर्जितैः शश्रुमहा-सामन्तैः समन्तादासेव्यमानम्, श्रन्यैश्च प्रतापानुरागागतैर्ना-नादेशजैर्महीपालैः प्रतिपालयद्भिर्नरपतिदर्शनकालमध्यास्यमा-नम्, एकान्तोपविष्टैश्च जैनैराईतैः पाशुपतैः पाराशिरिभर्वणि-भिश्च सर्वदेशजन्मभिश्च जनपदैः सर्वाम्भोधिवेलावनवलयवा-

श्रन्तरान्तरा, मध्येमध्ये, निष्पतताम्, निर्गच्छताम्, प्रविशताम्, श्रन्तरप्रतिहाराणाम्, श्रन्तरं, मध्ये, प्रतिहाराः, रिच्चिः, येषाम् तेषाम्। श्रनुमार्गम्, श्रनुपथम्, प्रधावितानि, श्रनेकानि, श्रिथिजन-सहस्राणि, याचकत्रृनदानि, येषां तेषामनुयायिनः, पृष्ठगामिनः, पुरुष्यन्, जनान्। श्रश्रान्तेः, न श्रान्तं येषां तेरविरतेरित्यर्थः, पुनः-पुनः, वारम्वारं पृच्छद्भिः। भविष्यति दर्शनिमितिशेषः। स्थाने, समुचिते-प्रदेशे। परमेश्वरः, राजःधिराजः। कच्याम्, प्रकोष्ठम् (कच्याप्रकोष्ठे हम्यादेः-इत्यमरः) शत्रुमहासामन्तेः, शत्रवश्च ते महान्तः सामन्ता-श्च तेः। श्रासेव्यमानम्, उपास्यमानम्। प्रतापेति— प्रतापेन, तेजसा, श्रनुरागेण् च प्रेम्णा च श्रागताः तेः। प्रतिपालयद्भिः, प्रतीचमाणेः। श्रध्यास्यमानम्, श्रिधिशीयमानम्। एकान्तोपविष्टेः, एकदेशासनेः। श्रनेः, जेनमतावलिन्विभः। श्राहतेः, चपण्यकेः। पाशुपतेः, शेवे। पाराशरेः, पराशरमुनिमतानुतृत्तिभः। विण्यिभः, श्रद्धचारिभः। सर्वदेशजन्मभः, सार्वदेशीयैः। सर्वेति— सर्वेषाम्, श्रम्भोधीनाम्, सागराणाम्, वेलावनानि, तीरकाननानि, तेषां वलयं, मण्डलम्, तस्मन्

सिभिश्च म्सेच्छजातिभिः सर्वदेशान्तरागतैश्च दृतमण्डलैरुपास्य-मानम्, सर्वप्रजानिर्माणभूमिमिव प्रजापतीनां लोकत्रयसारोध-यरिवतं चतुर्थमिव लोकम्, महाभारतशतैरप्यकथनीयसमृद्धि-संभारम्, कृतयुगसहस्त्रीरिव कलिपतसंनिवेशम्, स्वर्गार्बुदैरिव विहितरामणीयकम्, राजलद्मीकोटिभिरिव कृतपरिव्रहं राजद्वारमगमत्।

श्चभवचास्य जातविस्मयस्य मनसि—'कथिमवेदिमयत्प्र-माणं प्राणिजातं जनयतां प्रजास्त्रजां नासीत्परिश्रमः, महाभूतानां वा परिच्चः, परमाण्नां वा परिच्छेदः, कालस्य वान्तः, श्रायुपो

वसन्तीति तथोक्तैः । दृत्मण्डलैः, उद्गन्तवाह्कवृन्दैः । उपास्यमानम् श्राश्रीयमाणम् । सर्वेति—प्रजापतीनाम्, विधानृणाम् । सर्वासाम्, प्रजानाम्, निर्माणभूमिमिव, उत्पत्तिन्तेत्रमिव (निहं श्रन्यत्र स्थित्वा प्रजापतिः सर्वान् श्रष्ट्रशक्तः) लोकेति-लोकानाम्, स्वर्गमर्त्त्र्यपातालानाम्, त्रयं, तस्य सारोचयः, स्थिरांशराशिः तेन रचितम् । महाभारत-शतेरिष, श्रसंख्यमहाभारतमदृशमहाकाव्यरिष, श्रकथनीयः, श्रानिवेचनीयः, समृद्धीनां, सम्पदां सम्भारः, सञ्चयः यस्य तथोक्तम् । कृत-युगसह्वेरिव, बहुतरसत्ययुगैरिव, किल्पतः, रचितः, सन्निवेशः, स्थानं यस्य तथा भूतम् । स्वर्गार्वेदेरिव, दशकोटिसंख्येः स्वर्गेरिव, विहितम्, श्रापितम्, रामणीयकम्, रम्यत्वं यस्य तथाभूतम् । राजेति—राजन्त्वसीणाम्, राजश्रीणाम्, कोटिभिरिव, लक्तशतेरिव, कृतपरिष्रहम्, कृताश्रयम् । राजद्वारमगमत् ।

श्रस्य बाग्यस्य, जातिवसयस्य, प्रादुभूताश्चर्यस्य। प्रजासृजां, प्रजाकर्तृग्गाम् । महाभूतानाम् , चित्यप्तेजोवायूनाम् । सृष्ट्युपादान-कारग्रभूतानामितिभावः । व्युपरमः, शेषः । परिसमाप्तिः, निःशेषेग्रा- वा व्युपरमः, ब्राकृतीनां वा परिसमाप्तिः' इति मेखलकस्तु दृरादेवद्वारपाललोकेन प्रत्यभिक्षायमानः ''तिष्ठतु तावत्त्त्रणमात्र-मत्रैव पुण्यभागी' इति तमभिधायाप्रतिहतः पुरः प्राविशत् ।

अथ स मुहर्तादिव प्रांशुना, किएकारगौरेण, वीध्रकञ्च-कच्छुच्चवपुपा, समुन्मिपन्माणिक्यपदकवन्धवन्धुरशस्तबन्ध-कृशावलग्नेन, हिमशैलिशिलाविशालवत्त्तसा, हरवृपककुदकृटवि-कटांस्तटेन, उरसा चपलहपीकहरिणकुलसंयमनपाशिमव हारं

व्ययः । प्रत्यभिज्ञायमानः। स्रोऽयमिति - श्रवगम्यमानः । श्रप्रतिहतः, श्रमिवारितः ।

श्रथंत्यारस्य पुरुषेगानुगम्यमानां निर्गत्य श्रवोचन् इति दृरेगान्वयः। प्रांशुना, उप्रकायेन। कर्णाित- कर्णािकारं, तदाख्यकुसुमभेदः, तद्दन् गौरः, शुभ्रः तेन। बीध्रेति— बीध्रेग, विमलेन (बीध्रंतुविमलात्मरुम, इत्यमरः) कञ्चुकंन, वर्मगा, च्छन्नम्, श्रावृतं,
वपुः, शरीरम् यस्य तथा विभेन। समुन्मिपदिति— समुन्मिपत्,
सम् दीष्यमानम्, माणिक्यपदकम्, मिणामयराजाधिकारचिह्नम्,
तस्य वन्धेन, प्रह्णोन, वन्धुरम्, रम्यम्, यन् शस्तम्, काञ्चनमयकटिसूत्रम्, तस्य वन्धेन, स्थापनेन, कृशम्, चीगाम्, श्रवलग्रम्,
मध्यं यस्य तेन। (मध्यमञ्चावलग्रञ्चमध्योऽन्नी-इत्यमरः) हिमेति—
हिमशेलः, हिमाचलः, तस्य शिलावन्, विशालं, प्रशस्तं, वचः यस्य
तेन। हरेतिः—हरस्य, वृषः, तस्य ककुदम्, स्कन्धपृष्ठस्थमांसपिण्डविशेषः, तस्य कृटं, शिखरम् तद्दत् विकटः, समुन्नतः, श्रंसतटः, स्कन्धदेशः यस्य तेन। उरसा, वच्चसा। चपलेति—चपलानि, लोलानि,
हपीकािण, एकादशेन्द्रियािण, हरिगाकुलानीव, मृगयूथानीव, तेषां
संयमनाय, वन्धनाय, पाशः, रञ्जुः, तिमेव हारम्, विभ्रता, दथानेन।

श्विभ्रता, 'कथयतं यदि सोमवंशसंभवः सूर्यवंशसंभवो वा भूपति-रभूदेवंविधः' इति प्रष्टुमानीताभ्यां सोमसूर्याभ्यामिव श्रवण-गताभ्यां मणिकुण्डलभ्यां समुद्धासमानेन, वृहद्धद्नलावण्य-विसरवेणिकाचिष्यमाणैरिधकारगौरवाद्दीयमानमागेंणेव दिन-कतः किरणैःप्रसादलब्धया विकचपुण्डरीकमुण्डमालिकयेव दीर्घया दृण्या दृरादेवानन्द्यता, नेष्ठुर्याधिष्ठानेऽपि प्रतिष्ठितेन पदे पदे पश्रयमिवावनभ्रेण, मौलिना पाण्डरमुण्णीपमुद्धहता, वामेन स्थूलमुक्ताफलच्छुरण्दन्तुरत्सरुं करिकसलयेन कलयता कुपाण्म, इतरेणापनीततरलतां ताडनीमिव लतां शातकौम्भीं

सोमवंशसम्भवः, चन्द्रवंशोत्पत्तिः । सूर्यवंशसभवः, रिवकुल जन्मनः । वृहिदिति चृहताम्, महताम्, वर्गलावण्यानाम्, मुखप्रभाणाम्, विस्ताः, विस्तार एववेणिका, स्रोतः, तया विष्यमाणाः, निराकिय-माणाः तैः । अधिकारेति अधिकारस्य, गौरवात्, सम्मानात्, दीपमानो मार्गा, येभ्यः तथोकः । दिनकृतः, सूर्यस्य किरणः, मयूरवः, प्रसादः, प्रसन्नता, तेन लब्धा तया, विकचपुण्डरीकपुण्ड्रमालिकयेव, स्फुटितकमलस्रजेव, दीर्घया, विशालया, टण्ट्या, लोचनेन । नन्द्यता, संतोपयता । नैष्ठ्रयाधिष्ठानेऽपि, निष्ठ्रस्यभावं नैष्ठ्रयम्, तस्य अधिष्ठानं तस्मिन् । पदं, अधिकारं, प्रतिष्ठितेन, प्रश्रयमिव, विनय-मिव अवनन्त्रेण, विनतेन, मौलिना, शिरसा, पाण्ड्रम्, धवलम्, उष्णिम्, शिरोवेष्टनम्, उद्वहता, धारयता । वामेन, सब्येन, स्थूलोति करिसलयेन, हस्तपल्लवेन । स्थूलानि, यानि, मुक्ता-फलानि, मौक्तिकानि तेषां यच्छुरणम्, विकाशः, तेन दन्तुरः, संजा-कलानि, मौक्तिकानि तेषां यच्छुरणम्, विकाशः, तेन दन्तुरः, संजा-कलानि, मौकितानि तेषां यच्छुरणम्, विकाशः, तेन दन्तुरः, संजा-कलानि, मौकितानि तेषां यच्छुरणम्, यस्य तथा भूतम्, कृपाणं कलयता, धारयता । इतरेण, दिन्निणेन । अपनीतिति अपनीता, दरीकृता,

वेत्रयष्टिमुन्मृष्टां घारयता पुरुषेणानुगम्यमानो निर्गत्यावोचत् एष खलु महाप्रतोहाराणामनन्तरश्चलुष्यो देवस्यपारियात्रनामा दौवारिकः । समनुगृह्णात्वेनमनुरूपया प्रतिपत्त्या कल्याणामि-निवेशी' इति । दौवारिकः समुपस्त्य स्तत्रप्रणामो मधुरया गिरा सविनयमभापत—'आगच्छत । प्रविशत दर्शनाय । स्तत्रप्रसादो देवः' इति । बाण्स्तु 'धन्योऽस्मि, यदेवमनुष्राद्यं मां देवो मन्यते' इत्युक्त्वा तेनोपदिश्यमानमार्गः प्राविशदभ्यन्तरम् ।

त्रथ वनायुजैः, श्रारहजैः, काम्बोजैः, भारद्वाजैः, सिन्धुदेश-जैः, पारसीकेश्च, शोर्णैश्च, श्यामैश्च, पिअरैश्च, हरिद्धिश्च, तिचिरिकल्मापैश्च, पञ्चभद्रैश्च, मिल्लकाचैश्च, कृचिकापिअरैश्च,

तरलता, चपलता ताम् ताडनीम्, ताड्यतंऽनयेति ताम् लताम्, ब्लीम्, शातकोम्भीम्, स्वर्णमयीम्, उन्मृष्टाम्, अतिशयेन विशोधिताम्, धारयता । पूर्वेग्णान्वयः । महाप्रतीहाराग्णाम्, प्रधानद्वारपालानाम्, अनन्तरः, चज्जुप्यः, प्रियदर्शनः । अनुरूपया, समुचितया, प्रतिपत्या, आदरंगा । कल्याग्णाभिनिवंशी, कल्यागो, शुभकर्मिण्, अभिनिवंशः अस्यास्ति सः अभापन, अवोचन् । कृतप्रसादोदेवः, कृतः, विहितः, प्रसादः, प्रसन्नतायेन सः देवः, राजाधिराजः । अथेत्यारभ्य तुरङ्गेः आरचितां मन्दुरां विलोकयन् इति उत्तरंग्णान्वयः ।

वनायुक्तैः वनायुदंशोत्पन्नैः । त्रारहृजैः, श्ररबदंशोद्भवैः । कम्बोजैः, तदंशजैः । भारद्वाजैः, भरद्वाजदंशजैः । सिन्धुदंशोद्भवैः । पारसिकैः, पारस्यदंशभवैः । शोगौः, रक्तवर्गौः, श्यामैः, कृष्णवर्गौः, श्वेतैः, शुक्तवर्गौः । पिञ्जरैः, पिङ्गलैः । हरिद्भिः, हरिद्वर्गौः । तित्तिरिक-लमाषैः, तित्तिरिपत्तिविशेषवत् विचित्रवर्गौः । पंचभद्रैः, पश्चसु, श्रङ्केषु, मुखसहितेषु शफेषु, (चतुर्षु इति भाव) भद्राः, कल्याणदाः तैः ।

आयतिनर्मांसमुखः, अनुत्कटकर्णकोशः, सुतृत्तश्रुह्णसुघटित-घिरकाबन्धः, यूपानुपूर्वीवकायतोद्प्रप्रीषः, उपचयश्वसत्स्क-न्धसंधिभः, निर्भुग्नोरःस्थलैः, अस्थूलप्रगुणप्रसत्तेलोहपीठकि-नखुरमण्डलैः, अतिजवत्रुटनभयादिनिर्मितान्त्राणीवोदराणि वृत्तानि धारयद्भिः उद्यद्द्रोणीविभज्यमानपृथुजघनैः, जगती-दोलायमानबालपञ्जवैः, कथमप्युभयतो निखातदृढभूरिपाश-

मल्लिकाचैः, सितनेत्रप्रान्तैः । कृत्तिकापिञ्जरैः, (तारकाकदम्बक-कल्पानेकविन्दुकल्मापितत्वचः ) इति लच्चग्युक्तेः। श्रायतेति — त्र्यायतानि, दीर्घाणि, निर्मांसानि, प्रायेग्गास्थिमयानि **मुखा**नि येषां तथोक्तैः । त्र्यनुत्कटः, कर्णाकोशः, अवरण पाशः येषां तैः । सुवृत्तेति 🦂 सुवृत्तः, सद्वर्तुलः ऋत्तगाः, चिक्रगाः, सुवटिनः सुनिर्मितः, घण्टिका, चुद्रघण्टाः तासां बन्धो बन्धनं येषां तैः । यूपेति—यूपः, यज्ञस्तम्भः, तस्य श्रनुपूर्वी-श्रनुरूप्यम् , तथा वका, श्रायता, विशाला, उद्ग्रा उन्नता, प्रीवा, करठं येषां तैः। उपचयेति —उपचयेन श्वयन्, स्फीततां गच्छन्, स्कन्ध सन्धिर्येपाम् तैः। निर्भु-इति—निर्भुग्नम्, स्थूलतया वहिर्निर्गतम् , उरःस्थलम् , वत्तः येषां तैः । श्रस्थूलाः, स्वल्पमांसा, प्रगुणा, ऋजुः प्रसृता, जङ्घा येषां तैः । लोहेति — लोह श्रातिजवेन, श्रातिवेगेन, यत् त्रुटनं छेदः, तस्मात् , श्रानिर्मितानि श्रन्त्राणि, नाडीविशेषाः येषु तथोक्तानीव वृत्तानि, वर्त्तलानि उदराणि धारयद्भिः । उद्यदिति—उद्यती, उद्यंयाती, द्रोगी, वाजिनां शोभाविशेषः तया विभज्यमानानि व्यक्तीकीयमाणानि, पृथुनि जघनानि येषां तैः । जगतीति जगत्यां, भूमौ दोलायमानाः वालाः, पुच्छलोमानि पल्लवा इव येषां तैः । उभयत-इति - उभयतः

संयमनियन्त्रितैः, आयतैरिष पश्चात्पाशबन्धप्रसारितैकां विनित्तायततरैरिवोपलद्यमाणैः वहुगुणसूत्रप्रथितप्रीवागण्डकैः, आमीललोचनैः, दूर्वारसश्यामलफेनलवशवलान्दशनगृहीतमु-कान्फरफितत्वचः कग्हूजुषः प्रतीकान्प्रचालयद्भिः, सालसवनित्रवालिधिमः, एकशफिवश्चान्तिस्रस्तशिथिलितज्ञधनार्श्वः, निद्रया प्रध्यायद्भिश्च, स्वलितहुङ्कारमन्दमन्दशन्दायमानैश्च, ताडितखुरधरणीरणितमुखरशिखरखुरलिखितन्दमातलैर्घासम-

उभयोः पार्श्वयोः, निरवातः, प्रोतः, दृढः, कठिनः, भूरिः, प्रभूतः, पाशः, रज्जुः, तेन संयमनं, बन्धनं तेन नियन्त्रिताः, िरुद्धाः तैः । श्रनायतैरपि - अविस्तरिनावयवैरपि, पश्चान् पाशवन्धेऽपि प्रसा-रितः, एकः, ऋङ्घ-पादः येषां तैः । ऋतएव ऋायतनरैरिव, दीर्घनरैरिव, उपलच्यमार्गः, दृश्यमानः। बहुगुरोति -बहुगुर्गोः, स्रनेकवृत्तैः, सूत्रैः, प्रथितः, गुम्फितः, श्रीवासु गण्डकः, भूषण्भेदः येषां तैः । श्रामीले, ईपन्मुद्रितं, लोचनं येषां नैः । दुर्वति -दुर्वारसवन् , श्यामलाः, ये फेनलवाः, फेनविन्दवः, तेः शवलान्, विचित्रान्, दशनैः,दन्तैः गृहीता:, भृता:, मुक्ता:, त्यक्ता:, लान् , फरफरिता:, पुन: पुन: ईवत् कम्पिताः त्वचः येपां नान् करण्डुजपः, करण्डुशालिनः, प्रतीकान्, श्रङ्गानि (त्र्रङ्गंप्रतीकोऽवयवोऽप्रधनः,इत्यमरः) प्रचालयद्भिः,कम्पयद्भिः। साळसेति —सालमं, लघुयथास्यात्तथा वलिनाः, कम्पिनाः, वालधयः, पुच्छलोमानि येषां तैः । एकेति -- एकशफेन, एकखुरंगा, या विश्रान्तिः, तया स्त्रस्तम्, पर्यस्तं, शिथिलितं जवनार्द्धे येषां तैः। प्रध्यायद्भिः, चिन्तयद्भिः। स्खिलितेति स्यिलितेन, हुङ्कारेगा मन्दं मन्दं यथा तथा शब्दायमानैः, ननद्भिः। ताडितेति--ताडिता या खुरधरणी, खुराधोभूः, तस्याः, रिण्तिन, शब्देन, मुखरं यत् शिखरम् , अप्रम् ,

भिलपद्भिश्च, प्रकीर्यमाण्यवसम्रासरसमत्सरोद्भृतज्ञोभेश्च, प्रकुपितचण्डचण्डालहुङ्कारकातरतरतरलतारकेश्च, कुङ्कुमप्र-मृष्टिपिअराङ्गतया सततसंनिहितनीराजनानलरच्यमाणैरिवोप-रिविततवितानैः, पुरः पूजिताभिमतदैवतैः, भूपालवल्लभैस्तुरंगै रारचितां मन्दुरां विलोकयन्, कुतृहलज्ञिष्तहृदयः किंचिदन्तर-मतिक्रान्तो हस्तवामेनात्युच्चतया निरवकाशमिवाकाशं कुर्वा-णम्, महता कदलीवनेन परिवृतपर्यन्तं सर्वतो मधुकरमयी-

येपां ते खुरास्तेः लिखितं, यन् चमानलम्, भूनलं यैः तथा विधेः। प्रकोर्यमाण्ति - प्रकीर्यमाणः, प्रचीप्यमाणः, यवप्रासः, वासकव-लम् , तस्यरसं, स्वादं, यो मत्सरः, द्वेषः ( अन्यकोऽपि तुरगो नैनमा-स्वाद्यतु इति धियेतिभावः ) तेनोद्भूतः, जनितः, चोभः, येषां तैः। प्रकुपितेति प्रकुपितः, यः चण्डचण्डालः, चण्डाश्वपालः, तस्य हुङ्कारेगा, कातरतराः, श्रातिदीनाः,तरला, चपलाः, तारकाः, कनीनिकाः ् येषां तैः । **कुङ्कुमे**ति—कुङ्कुमैः, प्रमृष्टिः, प्रमार्जनम् , तेन पिञ्जराणि, श्रङ्गानि येषां तद्भावः तत्ता तया । सततेति—सततं, सन्निहितेन, समीपस्थेनेतिभावः, नीराजनानलेन (यात्रायां वाजिनां नीराजना क्रियते ) इति शास्त्रात् नीराजनाम्निना रच्यमार्गाः तैरिव । उपरि, विततः, विस्तृतः, वितानः, उह्नोचः येषां तैः पुरइति—पुरः, ऋषे, पूजिता, अभिमता, अभिष्टा, देवता येषां तैः । भूपालवल्लभैः, राज-प्रियैः, तुरंगेः, त्रारचिताम्, शोभिताम्, मन्दुराम्, त्रश्वशालाम्, विलोकयन्, पश्यन् । (वाजिशाला तु मन्दुरा, इत्यमरः ) कुत्-हलेति कुत्हलेन, त्राचिप्तम्, त्राकृष्टं, हृद्यं यस्य सः। त्र्यति-कान्तः, गतः । हस्तवामेन, करवामभागेन । निरवकाशम् , श्रवकाश-रहितम्। परिवृतपर्यन्तं, वेष्टिनपर्यन्तम्। मधुकरमयोभिः, भ्रमर- भिर्मदस्नु तिभिर्नदोभिरिवापतन्तोभिरापूर्यमाणम्, आशामुख-विस्पिणा वकुलवनानामिव विकसतामामोदेन लिम्पन्तं ब्राणेन्द्रियं दृराद्व्यक्तमिभधृष्णयागारमपश्यत् । अपृच्छ्यं— 'अत्र देवः कि करोति' इति । असावकथयत्—'एष खलु देव-स्योपवाद्यो वाद्यं हृदयं जात्यन्तरित आत्मा बहिश्चराः प्राणा विकमकोडासुहृद्दपंशात् इति यथार्थनामा वारणपतिः । तस्या-वस्थानमण्डपोऽयं महान्दश्यते' इति । स तमवादीत्—'भद्र, श्रूयते द्रपंशातः । यद्येवमदोपो वा पश्यामि तावद्वारणेन्द्रमेव । अतोऽर्हसि मामत्र प्रापयितुम् । अतिपरवानसिम कुत्हलेन' इति । सोऽभापत--'भवत्वेवम् । आग्च्छतु भवान् । को दोपः। पश्यतु तावद्वारणेन्द्रम्' इति ।

गत्वा च तं प्रदेशं दूरादेव गर्म्भारगलगर्जितोर्जितैर्वियति

व्याप्ताभिः । मदस्युतिभिः, गजदानजलप्रवाहैः, श्रापतन्तीभिः, श्रावह-न्तीभिः । श्राशामुखिवसिर्पिगा, दिशासमचिवस्तारिगा । वकुलवना-नामिव, इत्याख्यकाननानामिव । श्रामोदेन, गन्धेन । लिम्पन्तं, पृरयन्तम, धिष्ण्यागारम्, श्रवस्थानमन्दिरम् (धिष्ण्यंस्थाने गृहे-भेऽग्नौ "इत्यमरः") उपवाह्यः, कीडाहस्ती । जात्यन्तरितः, श्रन्यां जातिं गतः । विक्रमेति—विक्रमः, वलम्, एव कीडा तस्यां सुहृत्सह्यः । दर्पशातः, दर्पः, श्रहङ्कारं (शत्रृगामिनिभावः ) शातयित, नाशयित तथोक्तः । वारण्पतिः, गजेन्द्रः । श्रवस्थानमण्डपः, वासग्रहम् । श्रदोषः, दर्शने न दोषः । प्रापयितुं, नेतुम् श्रतिपरवान, श्रतिशयेन पराधीनः । गम्भीरेति—गम्भीरेण, गलगर्जितेन, कण्ठनिनादेन, । श्रर्जितानि, एकत्रीकृतानि, तैः । वियति, श्राकाशे । चातकानां, कदम्वानि, वृन्दानि, तैः । भुवि, भूतले, भवननीलकण्ठ-

⁴ चातककद्मवकैर्मुवि च भवननीलकएउकुलैः कलकेकाकलकल-मुखरमुखैः कियमाणकलकोलाहलम्, विकचकद्म्बसंवादि-मदसुरासौरभभरितभुवनम्, कायवन्तमिवाकालमेघकालम्, अविरलमधुबिन्दुपिङ्गलपद्मजालिकतां सरसोमिवाभ्यवगाढां दशां चतुर्थीमुत्सुजन्तम्, अनवरतमवतंसशंखैरामन्द्रकर्णताल-दुन्दुभिष्वनिभिः पञ्चमीप्रवेशमङ्गलारम्भमिव गायन्तम्, अवि-रतचलनचित्रत्रिपदीललितलास्यलयैदोलायमानदीर्घदेहाभोगतया मेदिनीविदलनभयेन भारमिव लघयन्तम्, दिग्भित्तितटेषु काय-

कुलैः, गृहमयूरसमूहैः । कलाः, मधुराः, केकाः, मयूरवाचः, तासां कलकलेन, मुखरागा, शब्दायमानानि येपां नै:। क्रियमागाः, कलः, मधुरः, कोलाह्लः, यत्र तथोक्तम् । विकचेति—विकचानां, प्रफुल्लानां, , कदम्बानाम् , नीपपुष्पागाम् , संवादिना, ऋनुकारिगाा, मदः, दान जलम् स एव सुरा, मद्यप्, तस्याः, सौरभेगा, गन्धेन, भरितम्, भवनं येन तथोक्तम् । कायवन्तमिव, शरीरवन्तमिव, त्रकालमेघं, श्रविरलेति-श्रविरलाः, घनाः, ये मधुविन्दवः, मद्जलकगाः, तैः पिञ्जरं, पद्मानां, पद्माकरागां (पत्ने) तत्रामपुष्पागां, जालकं, समूहः, जातमस्यामिति तथोक्तम् । त्र्यनवरतं, निरन्तरं, त्र्यामन्द्राः, ईषद्रम्भीराः, कर्णातालस्य, नियतसंचालितश्रवणस्य, दुन्दुभेरिव, ध्वनयः, शब्दाः तैः त्र्यवतंसशंग्वैः, कर्गाभूषग्गीकृतशंग्वैः । त्र्राविरतेति—त्र्यविरतेन, अश्रान्तेन चलनेन चित्रा, सुदृश्या या त्रिपदी, पादबन्धनी, तस्यां लिततं,सुन्दरं यत् लास्यं, नृत्यं, तस्य लयाः, वाद्याद्यनेकतानताः तैः । दोलायमानेति—दोलायमानः,प्रेह्नन्,दीर्घः, महान् देहस्य श्राभोगः, •विस्तारः, यस्य तद्भावः, तत्ता तया । <mark>मेदिर्न ति</mark>—मेदिन्याः, पृथिव्याः, विदलनं, विदारगां तस्मात् यत् भयं तेन भारमिव लघयन्तम्।

मिव कग्रूयमानम्, त्राहवायोदस्तहस्ततया दिग्वारणानि-वाह्वयमानम्, व्रह्मस्तम्भमिव स्थूलिनिशितदन्तेन करपत्रेण पाटयन्तम्, श्रमान्तं भुवनाभ्यन्तरे बहिरिव निर्गन्तुमीहमानम्, सर्वतः सरस्विसलयलतालासिभिल्लेशिकैश्चिरपरिचयोपचितै-घंनैरिव वित्तिप्तसरौवलविस्तिवसरश्वलसलिलैः सरोभिरिव चाधोरणैराधीयमाननिदाधसमयसमुचितोपचारानन्दम्, अपि च प्रतिगजदानपवनादानदृरोत्विष्तेनानेकसमरविजयगणना-

दिगिति—दिगेव, भित्तिः, तस्याः, तटाः, त्राभोगाः, तेषु । कायमिव, श्रङ्गमिव कराडूयमानम् । श्राहवाय, संप्रामाय । उद्स्तः, उत्विप्तः, हस्तः, शुरुडः येन तस्य भावः तत्ता तया । दिग्वारणान्, दिग्गजान् श्राह्वयमानमिव, स्पर्द्धया श्राकारयन्नमिव। ब्रह्मस्तम्भमिव, ब्रह्माएड-मिव, स्थुलः, निशितः, तिच्छाः, दन्तः, तेन करपत्रेषा, ककचेन, पाटयन्तमित्र, विदारयन्तमित्र । भुवनाभ्यन्तरं, ऋमान्तं, पर्य्याप्तु-मलभमानम्, अतएव, वहिः भुवनाद् वाह्यदेशे निर्गन्तुं, ईहमानम्, चेष्टमानम् । सरसा, रसयुताः, किसलयाः, पल्लवाः, यासां तथाविधाः याः लताः, व्रतत्यः, ताभिः लसन्ति, राजन्ति तथोक्तेः, लेशिकेः, घासिकैः, चिरपरिचयेन, चिरानुगत्या, उपचितैः, समाहूतैः, घनैरिव, मेघैरिव । विद्यिप्तेति—विद्यिप्तानि, विकीर्गानि, सरीवलानां, विसानां, मृगालानां, विसरेगा, विस्तरेगा, शवलानि, मिश्राणि, सलिलानि यै:, तथाभूतै:। श्राधोरगौ:, हस्तिपालै:, श्रधीयमानः, उत्पाद्यमानः, निदाधसमयस्य, श्रीष्मकालस्य, समुचितेन, उपयुक्तेन, उपचारगोन, सेवया, श्रानन्दः, यस्य तम् । प्रतिगजेति - प्रतिगजानां, प्रतिद्वन्द्विह्स्तिनां, दानपवनस्य, मद्सौरभवाहिनोमरुत-इत्यर्थः। श्रादानेन, प्रहर्गेन, दूरं, उत्चिप्तः, उद्धृतः तेन । श्रनेकेति - श्रने-

लेखाभिरिव बिलवलयराजिभिस्तनीयसाभिस्तरिङ्गतोदरेणाति-स्थवीयसा हस्तार्गलद्गडेनार्गलयन्तिमिव सकलं सकुलशैल-समुद्रद्वीपकाननं ककुभां चक्रवालम्, एकं करान्तरापितेनोत्प-लाशेन कदलीदगडेनान्तर्गतशीकरिसच्यमानमूलम्, मुक्तपल्लव-मिवापरं लीलावलिबना मृणालजालकेन समररसोचरोमाञ्च-कगटिकतिमिवदन्तकाडं वहन्तम्, विसर्पन्या च दन्तकाग्डयुग-लकस्य कान्या सरःक्रीडास्वादितानीव कुमुद्वनानि बहुधा वमन्तम्, निजयशोराशिमिव दिशामर्पयन्तम्, कुकरिकीटपाट-

केषां, समराणां, युद्धानां, विजयाः, तेषां गण्ना संख्यानं तस्याः लेखाभिरिव, लिपिभिरिव, बलिवलयराजिभिः, वलयाकार्वलिश्रे-गिभिः, तनीयसीभिः, श्रतिचुद्राभिः । तरङ्गितं, भङ्गिमत्, उदरं यस्य रतथोक्तेन । त्र्यतिस्थवीयसा, त्र्यतिस्थृलेन, हस्तार्गलद्ग्डेन, त्र्र्याल-यन्तमिव, निरुत्धन्तमिव, ककुभां, चक्रवालम्, दिङमण्डलम्। एकं दन्तकाण्डमित्यर्थः न्वयः । करान्तरार्पितेन, करस्य शुण्डस्य श्रन्तरे, मध्ये, श्रर्पितेन । उत्पलाशेन, उद्गतपत्रेगा, कदलीद्गडेन, रम्भास्तम्भेन, श्रन्तगतैः, शीकरैः, जलकर्णैः, सिच्यमानं मूलं यस्य तथोत्तम् । मुक्तापल्लवमिव, मुक्ताफलिकसलयमिव । परं, अन्यम, लीलावलम्बिना, लीलयावलम्बते इति तथोक्तेन । मृग्गालजालकेन, कमलसमृहेन । समरेति—समरे, युद्धे, यो रसः, तेन उचाः, उद्गताः, रोमाञ्चा एव कण्टकाः श्रस्येति तथोक्तम्, दन्तकाण्डं, दशनस्तम्भम्, वहन्तं, द्धानम् । विसर्पन्त्या,विसरन्त्या, दन्तकाण्डयुगलस्य कान्त्या, प्रभया। सर:कोडेति—सरसि या कीडा, विहारः, तत्र त्रास्वादि-र्तानि, भुक्तानि तानीव कुमुदवनानि, कैरववृन्दानि, बहुधा, अनेकधा, वमन्तं उद्गिरन्तम् । निजयशोराशिभिरिव, स्वकीत्तिं समृहमिव, दिशां,

नदुर्लिलतानिसहानिवोपहसन्तम्, कल्पद्रमदुकूलमुखपष्टमिव चान्मनः कलयन्तम्, हस्तकाण्डदण्डोद्धरण्लीलासु च लद्य-माणेन रक्तांशुकसुकुमारतलेन तालुनाकविल्तानि रक्तपद्मवना-नीव वर्षन्तम्, त्राभिनविकसलयराशिमिवोदिरन्तम्, कमलकव-लपीतं मधुरसमिव स्वभाविष्गलेन वमन्तं चत्तुषा, चूतचम्प-कलवलीलवंग ककोलवन्त्येलालतामिश्रितानि ससहकाराणि कपूरपूरपूरितानि पारिजातकवनानीवोपभुक्तानि पुरः करटा-

श्रर्पयन्तम्, ज्ञिपन्तं । कुकरोति – कुत्सिताः, करिगाः, हस्तिनः, ते एवकीटाः, चुद्रप्राणिभेदाः, तेपां पाटनेन संहननेन, दुर्लेलिताः दप्ताः तान् । करुपद्रुमेति - कल्पद्रुमस्य दुकूलं, श्वेतपृट्टवसनं, तदेव मुख-पटः, तमिव, श्रात्मनः, स्वस्य धारयन्तं, कलयन्तम्। हस्तेति-हस्तः, शुरुडः एव कारुडदरुडः, स्तम्भयष्टिः, तस्य उद्धरस्यानि नान्येव लीलाः तासुलच्यमाग्रेन दृश्यमानेन, रक्तांशुकसुकुमारतलेन, रक्त-वसनकोमलतलेन, तालुना, तालुदेशेन, रक्तपद्मवनानि, रक्तकमल-वृन्दानि, कवलिनानि, भि्चनानि, वर्षन्तं, वमन्तं । श्रमिनविकस-लयराशिमिव, नृतनपत्नवसमृहमिव, स्वभावपिङ्गलेन, सहजदीपशिखा-तुल्यवर्गोन, चज्जुपा, कमलानां कवलेन, प्रासेन पीतं मधुरसिमव, मकरन्दमिव, वमन्तं, वर्षन्तं । पुरः, श्रव्ने, करटाभ्यां, गण्डाभ्याम् , (करटः स्यात् कटोगएड:-इत्यमरः) बहलमदाऽऽमोदव्याजेन, प्रभूत-दानवारिगन्धच्छलेन, चूतेति— चृतं, रसालं, चम्पकं, चम्पकपुष्पं, लवली, एतन्नामवृत्तविशेषपुष्पम्, लवंगं, लवङ्गकलिका, कक्कोलं, इत्याख्य तरोःफलम्, तद्वन्ति, एलालतामिश्रितानि, सफलैलावल्ली-युक्तानि, ससहकाराणि त्र्यतिसोरभाम्रसहितानि । ( श्राम्रः चूतो रसा-लोऽसौसहकारोऽति सौरभ -इत्यमरः ) कर्पू रपूरपृरितानि, कर्पूरा-

भ्यां बहुलमदामोद्वयाजेन विस्जन्तम्, श्रहनिशं विभ्रमस्तह-स्तिस्थितिमिर्ध्यखिष्डतपुरु हे जुकारण्डकरण्ड्रयनलिखितैरलिकुल-वाचालितैर्दानपृटकैविलभमानिम्य सर्वकाननानि करिपतीनाम् श्रविरलोद्दिनदुस्यन्दिना हिमशिलाशकलमयेन विभ्रमनचत्रमा-लागुर्णेन शिशिरोकियमाणम्, सकलवारेणन्द्राधिपत्यपृट्टबन्ध-बन्दुरिम्बोक्षस्तरां शिरो द्धानम्, महुर्मुहुः स्थिगतापावृतदि-ङ्मुखाभ्यां कर्णतालवृन्ताभ्यां वीजयन्तिम्य भर्तृभक्त्या दन्त-पर्यक्किकास्थितां राजलद्मीम्, श्रायतवंशक्रमागतेन गजाधिप-

ख्यवृत्तस्यसुगन्धिमयानि, पारिजातकवनानि, पारिजाताख्यपुष्पाणां काननानि विसृजन्तमिव । विभ्रमेति—विभ्रमेण कृता हस्ते, शुण्डे, स्थितः, यैः तादशैः । स्राति—श्रर्द्धेद्विषिडतः, भुग्नः, पुरङ्केत्तुकारुडः 🔻 (गन्ना) तेन यत् कण्डूयनं,खर्जनं,तेन लिखितानि तै: । त्र्यलिकुलैः,मधु-करसमृहैः,वाचालितानि, मुखरितानि तैः । दानपट्टकैः, दानसनन्दपत्रैः, करिपतीनां, गजपतीनां, सर्वकाननानि, विलभमानमिव, स्ववशी-क्रियमाण्मित्र । <mark>ऋविरलेति</mark>—ऋविरलं, निरन्तरं, उद्विन्दुस्यन्दिना, जलकराम्माविगा, हिमशिलाशकलमयेन, तुहिनशिलाखण्डमयेन, विभ्रमेति - विश्रमाय, शोभार्थ, या नज्ञमाला, सप्तविंशन्ति मौक्ति-कमाला, तस्याः, गर्गोन । शिशिरीकियमाण्म, शीतलीकियमाण्म्। सकलेति सकलानां वारगेन्द्राणां, गजेन्द्राणां, श्रिधिपत्यं, प्रभुत्वं, तस्य पट्टवन्धः, तेन वन्धुरं, रम्यं, उच्चेस्तरां, ऋत्युचं, शिरः, मस्तकं, द्धानं, धारयन्तं । स्थगितेति—स्थगितं, स्राच्छादितं, स्रपावतं, प्रकटितं, दिङ्मुखं याभ्यां तथाविधाभ्यां, कर्णावेव तालवृन्ते ताभ्याम् दन्तेति—दन्त एव पर्येङ्किका, चुद्रपर्येङ्कः, राजलच्मीं, नृपश्चियं बीजयन्तमिवंति-अन्वयः । आयतेति - श्रायतः, दीर्घः, वंशः प्रष्ठ-

त्यचिन्हेन चामरेणेव चलता बालिधना विराजमानम्, स्वच्छ-शिशिरशोकरच्छलेन दिग्विजयपीताः सरित इव पुनःपुनर्मुखेन मुञ्चन्तम्, चणमवधानदानिस्पन्दोकृतसकलावयवानामन्यद्वि-रदिणिडमाकर्णनबलनानामन्ते दोर्घशीत्कारैः परिभवदुःख-मिवावेदयन्तम्, अलब्धयुद्धमिवात्मानमनुशोचन्तम्, आरोहा-धिक्रिदिपरिभवेन लज्जमानिमवाङ्गुलीलिखितमहीतलम् मदं मुञ्चन्तम्, अवद्यागृहीतमुक्तकवलकुपितारोहारटनानुगोधन मद-

द्गडः, कुलब्रतस्यक्रमेण त्रागतः, परम्परयात्राप्तः, गजाधिपत्यं तस्य चिह्नं, लच्चगं, तेन, वालधिना, पुच्छेन, विराजमानं, शोभमानम्। स्वच्छेति—स्वच्छानां, विमलानां, शिशिरागाां, शीतलानां, शीक-राणां, श्रम्बुकणानां, छलं तेन, दिशां विजये, पीनाः नाः सरितः,नदीः, मुख्यन्तं, त्यजन्तं । ऋवधानेति—ऋवधानस्य, मनोनिवेशस्य, दानेन, निष्पंदीकृताः, निश्चलीकृताः, सकलाः, स्रवयवाः यासु तासाम्। त्र्यन्येषां, द्विरदानां, गजानां, डिण्डिमाकर्गाने, पट्टहनादश्रवगो या वलनाः, चालनाः, नासाम् । अन्ते, अवसाने, दीर्घशूत्कारैः, दीर्घकालं व्याप्य निर्गतैः, ''शीत्'' इत्याकारकाव्यक्तशब्दविशेषैः । परिभवदुःख-मिव पराभवखंदमिव, त्र्यावद्यन्तम् , प्रकटयन्तम् । त्र्र्यलब्धयुद्धमिव, त्रप्राप्तर**ग्मिव त्र्यात्मानं, स्त्रं, त्र्यनुशो**चयन्तं, चिन्तयन्तम् । **आरोहेति** – आरोहस्य, अधिकृढिः, अधिरोह्गां, सैवपरिभवः, तेन लज्जमानमिव श्रङ्गलीभिः, करिकरायावयवैः, (पत्ते) करशाखाभिः लिखितं, खण्डितं, महीतलं, भूतलं येन तथोक्तम् ,(लिजितानां भूलेखनं स्वभाव इतिभावः ) मदं दानवारि, गर्वञ्च, मुख्चन्तं, त्यजन्तं । श्रय-क्रोति—अवज्ञया, अवहेलया, आदौगृहीता पद्धात् मुक्ताः ये कवलाः नै: कुपितः, रुष्टः यः त्रारोहः, हस्तिपालः तस्य त्रारटना त्रजुरोधेन। तन्द्रीनिमीलितनेत्रत्रिभागम्, कथं कथमपि मन्दमन्दमनादरा-दाददानं कवलान्, श्रवजग्धतमालपत्तवस्नुतश्यामलरसेन प्रभू-तत्तया मद्प्रवाहमिव मुखेनाप्युत्परजन्तम्, दलन्तमिव द्पेण, श्रसन्तमिव शौयण, मूर्च्छन्तमिव मदेन, त्रुट्यन्तमिव नारुग्येन, द्रवन्तमिव दानेन, वलान्तमिव वलेन, माद्यन्तमिव मानेन, उद्यन्तमिवोत्साहेन, ताम्यन्तमिव तेजसा, लिम्पन्तमिव लाव-ग्येन, सिञ्चन्तमिव सौभाग्येन, स्निग्धं नखेषु, परुषं गोमविपये, गुरुं मुखे, सर्च्छप्यं विनये, मृदुं शिगिसि, दृढं परिचयेषु,

मदेति—मदेन या तन्द्रा, निन्द्रा तया निमीलितः, नेत्रयोः त्रिभागः यस्मिन् तद् यथा तथा, कवलान् , श्रासान , श्राददानं गृह्नन्तं । श्रव-जम्घेति—श्रवजम्धानां, स्वादितानां, तमालपल्लवानां स्रुताः, निर्ग-लिताः, श्यामलाः रसाः यस्मात् तथोक्तेन, मुखेन, वदनेन प्रभूततया, प्राचुर्येगा, मदप्रवाहमिव, दानवारिश्रोत इव उत्मृजन्तं, मुख्यन्तं, दलन्तमिव, स्वयंभिद्यमानभिव, श्वसन्तमिव, जीवन्तमिव, बुट्यन्त-मिव, स्खलन्तमिव, द्रवन्तमिव, स्वन्तमिव । दानेन, मदेन । वल्गन्त-मिव, विचेष्टमानमिव । माद्यन्तमिव, मत्ततां प्रकटन्तमिव । उद्यन्त-मिव, उद्यमानमिव, ताम्यन्तमिव, क्रिश्यन्तमिव। लिम्पन्तमिव, संयोजयन्तमिव। सिञ्चन्तमिव, वर्षन्तमिव। नखेषु, स्निग्धं, प्रीतिवान, रोमविषये, परुषं, प्रीतिशून्यः, यः, स्निग्यः, कथं, परुषः, इतिविरोधः । स्निग्धं, चिक्तगः, परुषं, कठोरः, इति परिहारः । मुख्युकः, विनये शिष्यम् ,यः,गुरुः, सकथं शिष्यः,इतिरोधः ।गुरुः विस्तीर्गः, सन्दिष्यः, सुशीलः, इति परिहारः । शिरसिमृदुं, परिचयेषु दृढं, यः कोमलः कथं स कठोरः, इति विरोधः, मृदुः, नम्रः । महन्तं जनं वीच्यशिरसा-नतो भवति, इति परिहारः । स्कन्धवन्धे, प्रीवामूले हस्वं, लघु त्रायुपि हस्वं स्कन्धवन्धे, दीर्घमायुषि, दरिद्रमुदरे, सततप्रवृत्तं दाने, बलभद्रं मदलीलासु, कुलकलत्रमायत्ततासु, जिनं त्रमासु, विद्व-वर्षे कोधमोत्तेषु, गरुडं नागोद्धृतिषु, नारदं कलहकुतृहलेषु, शुष्काशनिपातमवस्कन्देषु, मकरं वाहिनीत्तोभेषु, श्राशीविषं दशनकर्मसु, वरुणं हस्तपाशाद्यदिषु, यमवागुरामरातिसंवेष्टनेषु, कालं परिणतिषु, राहुं तीक्णकरग्रहेषु, लोहिताङ्गं वक्रचारेषु,

दीर्घः,यो लघुः कथं सदीर्घः,इति विरोयः।दीर्घः चिरञ्जीवीतिपरिहारः। उद्रे द्रिद्रं दाने सततप्रवृत्तं, यः द्रिरद्रः कथं स दानकर्त्ता,इति विरोधः । दरिद्रं, कृशं दाने मद्वारिग्णि इति परिहारः। बलभद्रं, बलरामं, मद्लीलासु मदः, दानवारि, सुरामत्तता च तल्लीलासु । कुलकलत्रं, कुलाङ्गना, त्र्यायत्तासु, वाध्यतासु, बलभद्रकुलकलत्रयोः मदमत्तता-वाध्यतयाचविरोधः । जिनं, बुद्धदेवम् , बह्निवर्षम् , ऋग्निवृष्टिम् , क्रोध-मोत्तेषु, कोपप्रसरेषु ( त्रात्र शमप्रधानजिनवह्निवर्षयोः ज्ञमाक्रोधमोत्त-योश्चविरोधः ) नागोद्धृतिषु, नागानां, प्रतिपत्तहस्तिनां, सर्पागां, च उद्धितपु, निपातनेषु । नारदं देविषे नारं जलं ददानीति तथोकं च कलहकुतुहलेषु, विवादकौतुकेषु, युद्धव्यापारेषु च शुष्काशनिपानं, वृष्टिं विना वज्रपतनं, अवस्कन्देषु, शत्रृग्गां आक्रमग्रेषु । मकरं, जलजन्तुभेदं वाहिनीचोभेषु, शत्रुसेनादलनेषु, नसुद्वेलकरगोषु च। त्र्याशीविषं, सर्पे दशनकर्मसु, दन्तव्यापारेषु । वरुगां, जलाधिपतिं, हस्त एव पाशः हस्तपाशः तेन श्राकृष्टयः, श्राकर्षगानि तासु । यम-वागुराम् , यमस्य वागुरा, प्रागाबन्धनजलं, ताम् । त्र्ररातिसंवेष्टनेषु, शत्रुसमाक्रमगोषु । कालं, यमं कृष्णावर्णेख्य परिगातिषु, अन्तकर्मसु, तिर्यग्दन्तप्रहारकर्मसु, शुभाशुभकर्मविपाकेषु च । तीच्रणकरप्रहरोषु, तीच्योन, तीब्रेग्य, करेग्य, शुण्डेन प्रहग्यानि, श्राक्रमग्यानि, (पन्ने)

श्रलातचकं मण्डलभ्रान्तिविज्ञानेषु, मनोरथसंपादकं चिन्तामिष-पर्वतकं विकमस्य, दन्तमुक्ताशैलस्तम्भनिवासप्रासादमभिमान-स्य,घण्टाचामरमण्डनमनोहरमिच्छासंचरियमानं मनस्वितायाः, मद्धारादुर्दिनान्धकारं गन्धोदकधारागृहं कोधस्य, सकाञ्चन-प्रतिमंमहानिकेतनमहंकारस्य, सगण्डशैलप्रस्ववणं कीडापर्वतम-वलेपस्य, सदन्ततोरणं वक्रमन्दिरं दर्षस्य, उद्यकुम्भकूटाटाल-

तीच्याकरः, सूर्यः, तस्य प्रह्गानि, प्रासाः, तेषु । लोहिनाङ्गं, मङ्गल-प्रहं, वक्रचारेषु, कुटिलगतिषु । ऋलातचक्रं, तदाख्य काव्यवन्धविशे-पम् ,उल्मुकमण्डलं च, मण्डलभ्रान्तिविज्ञानेषु, मण्डलाकारेण भ्रान्ति, भ्रमगुं तस्यां विज्ञानानि, विशिष्टानि ज्ञानानि परिचयाः, इत्यर्थः, तेषु । मनोरथसम्पादकम्, त्र्यभिमतसिद्धिदम् । चिन्तामिगः, चिन्तितवस्तु-प्रदरत्नविशेषः तस्थपर्वतम्। दन्तेति—दन्तावेव मुक्ताशैलस्तम्भौ, मौक्तिकपाषाग्यस्तम्मौ यत्र नादशम्, निवासप्रासादम्, निवासभवनम् श्रभिमानस्य । घएटेति—घण्टाश्च, चामरागि। च तेपां मण्डनेन मनोहरं, मनोज्ञम् । इच्छया यत् संचरगं, गमनं तदेवविमानं यस्य-तम् । मनस्वितायाः, वीरतायाः । मद्धाराभि , दुर्दिनं, श्रतएव, अन्धकारं, तमसि युक्तं, गन्धोदकधारागृहं, सुवासित जलधारागृहं, कोधस्य, कोपस्य । सकाञ्चनेति-काञ्चनप्रतिमायुक्तम् । महानिक-तनम् , विशालमन्दिरम् , श्रहंकारस्य । सगग्डेति—गण्डः, कपोलः एव शैलः तत्र प्रस्रवराम्, निर्भरः तेनसहवर्तमानम्, त्र्रवलेपस्य, गर्वस्य । सदन्तेति---इन्तावेव तोरगः, वहिद्वीरम् (पन्ने) दन्तरचित-तोर्गाः तेन सहवर्तमानम् । वज्रमन्दिरम् , पाषागागृहम् । उच्चेति— उची, उन्नती, बुम्भी एव कूटी यस्य तत् श्रष्टालकम्, हर्म्य तहत् विकटं, भयंकरं, संचारि, जङ्गमं, गिरिदुर्गम्, पर्वतरूपम् महागृहम्,

कविकटं संवारि गिरिदुर्गं राज्यस्य, कृतानेकबाण्विवरसहस्रं लोहप्राकारं पृथिज्याः शिलीमुखशतक्षां कारितं पारिजातपादपं भूनन्दनस्य, तथा च संगीतगृहं कर्णतालतागडवानाम् , श्रापा-नमग्डपं मधुपमग्डलानाम् , श्रन्तःपुरं श्रद्धाराभरणानाम् , मदनोत्सवं मदलीलालास्यानाम् , श्रच्यगणप्रदोषं नच्चत्रमाला-मग्डलानाम् , श्रकालप्रावृट्कालं मदमहानदीपूरप्रवानाम् ,

( यत्र शत्रुः गन्तुमसमर्थः ) कृतेति--कृतानि, श्रनेकानि, बागाविवर-सहस्राणि, बार्णप्रचेपार्थ छिद्रसहस्राणि, यत्र तन् लोहप्राकारम्, लोहनिर्मितप्राचीरम् । शिळीति—शिलिमुखानां, मधुकराणां, बाणानां वा शतेः, भंकारितः, निनादितः, विद्धो वा, तम्। पारिजातपादपं, देवनरुविशेषः । भूनन्दनस्य, पृथ्वी एव नन्दनवनम् , नस्य, (पत्ते ) पृथिवीं नन्दयति पालनेन प्रीगायति इति भूनन्दनः, राजातस्य। कर्गानालतारडवानां, श्रवग्रतालनर्तनानाम्, संगीनगृहम्। स्रापान-मण्डपं, पानगृहं, मधुपमण्डलानां, मधुकरवृन्दानाम् , (पत्ते) मद्यपा-यिनाम् , श्रङ्गारामरग्गानाम् , श्रङ्गाराः, सिन्दृरादिभिः, रचनाविशेषाः, एवाभरगानि तेपाम् (पत्ते ) शृङ्गाररसभूषगानाम्। श्रन्तःपुरम्। मदेति – मदयतीति, मदनः, मदकरः, तस्योत्सवं (पत्ते ) कामोत्सवं, मदलीलास्यानाम्। अचुग्रोति - अचुण्याः, पृर्गः, मेघावरण्रहितः, प्रदोषः, निशामुखं ( पत्ते ) ऋत्तुएगाः, पृर्गाः, प्रदोः प्रकृष्टहस्तः यस्य तथोक्तम् (भुजः बाहूप्रवेष्ट्रोदोः "इत्यमरः) नक्तत्रमालाः, तारकराजयः, मण्डलानि, गोलाकारवेष्ट्रनानि, (पत्ते) नत्त्रत्रमालाः, सप्तिविशति-मौक्तिकहाराः एव मण्डलानि तेषाम् त्रकालप्रविष्टकालं, त्र्यसमयवर्षा-समयम् । मदेति-मदा एव महानद्यः तासांपूराः प्रवाहाः तेषां पञ्जवाः, गतिविशेषाः तेषाम् । स्रालीकशरत्समयं, मिथ्याशरत्कालं, सप्तच्छद- अलीकशरत्समयं सप्तच्छद्वनपरिमलानाम्, अपूर्वहिमागमं शीकरनीहाराणाम्, मिथ्याजलधरं गर्जिताडम्बराणां दर्पशात-मपश्यत्।

त्रासिचास्य चेतिस—'नृतमस्य निर्माणे गिरयो प्राहिताः परमाणुताम् कुतोऽन्यथा गौरविमदम् । त्राश्चर्यमेतत् । विन्ध्य-स्यदन्तावादिवराहस्य करः' इतिविस्मयमानमेनं दौवारिको-ऽब्रवीत्--'पश्य ।

मिथ्यैवालिखितां मनोरथशतैर्निःशेषनष्टां श्रियं

चिन्तासाधनकल्पनाकुरुधियां भूयो वने विद्विपाम् । त्रायातः कथमप्ययं स्मृतिपथं शून्यीभवचेतसां

नागेन्द्रः सहते न मानसगतानाशागजेन्द्रानि ॥ ४ ॥

वनस्य, सप्तपर्णवनस्य, परिमलाः, गन्धाः,मद्जलानिमतिभावः, तेषाम्। श्रपूर्वेहिमागमं, नूतनहेमन्तं, शीकरनिहाराणां, जलकग्ररूपशिशिरा-णाम्। मिथ्याजलधरं, श्रलीकपयोदं, गर्जिताऽम्बराणां, गर्जितान्येव श्राडम्बराः तेषाम् दूर्पशातमपश्यत्।

निर्मागो, सृष्टो, प्राहिताः, प्रापिताः, गोरवं, गुरुत्वं, ऋाश्चर्यं, चमत्कृतिः, ऋाद्विराहस्य, वराहरूपेगावतीर्गस्य विष्योरित्यर्थः। विस्मयमानं, चमत्कुर्वागाम्।

मिथ्येति—निःशेपेग्, नष्टा, तां । श्रियं, राजलच्मीं । मनो-रथेति—मनोरथानां, मनोकामनानां, शतेः । मिथ्येव, मृषेव, ब्रालि-खिताम्, चित्रितां मनसिसोचितामित्यर्थः । भूयः, पुनः । चिन्तेति— चिन्तया, (पुनः निजश्रीप्राप्त्यर्थं कमुयायं करिष्यामः) इति सोचनेन, साधनानां, युद्धसामग्रीगां, कल्पनया श्राकुला धीर्येषां तथाविधानाम् । श्रतण्व शून्यीभवच्चेतसाम्, शून्यीभवत्, (निराशीभवदित्यर्थः) चेतो तदेहि । पुनरप्रेनं द्रदयसि । पश्य ताबद्देवम्' इत्यिभिधीयमानश्च तेन मदजलपङ्किलकपोलपट्टपिततां मत्तामिव मदपिमलेन मुकुलितां कथमपि तस्माद्दृष्टिमारुप्य तेनैव दौविशकेणोपदि-श्यमानवर्त्मा समितिकम्य भूपालसहस्रसंकुलानि त्रीणि कद्या न्तराणि चतुर्धे मुक्तास्थानमण्डपस्य पुरस्तादिजरे स्थितम् , दूरादृर्ध्वस्थितेन प्रांशुना कणिकारगौरेण व्यायामव्यायतवपुषा

येषां तादृशानाम् । वने द्विपां, वनवासिनां, शत्रुग्गाम् । ऋथमपि, मइना कष्टेन, स्पृति पथम् त्रायातः, (त्र्रहो तेनेवारर्णपतिना पराजिताः वयमितिभावः) स्मर्गीगतः तथाविधः श्रयं नागेन्द्रः, गजपतिः, मानसं चित्तं, सरोवरविशेषश्चगताः तान्, त्र्याशाः, तृष्गाः, त्र्राभिलापः, इत्यर्थः । ता एव गजेन्द्राः, त्र्याशाः, दिशः, दिग्गजाश्च तान् न सहते न चमते (एनस्यस्मरगोऽरीगाां पुनरुद्वारस्य त्र्वाशाऽपिनोद्यति इतिभावः ) अत्र त्राशासु गजेन्द्रागामभेदारोपात् रूपकालङ्कारः, शार्दृलविक्रीडित वृत्तम् ॥ ४॥ मदेति - मद्जलेन, पङ्किलः, मलिनः, कपोलपट्टः, मण्डतट, तत्र पतिताम्। मदेति – मदपरिमलेन, मद-गन्धेन, मुकुलितां, मत्तामित्र, चीवामित्र, दृष्टिं, लोचनम्, स्राक्टप्य, निर्वर्त्य । भूपालेति-भूपालसहस्राणि, नृपसहस्राणि, तैः संकुलानि, व्याप्तानि कचान्तराणि। चतुर्थे इत्यारभ्य चक्रवर्त्तनं हर्षम् अद्राचीत् , इत्यनेनान्वयः । सत्येति—सत्यस्य, सत्यनिरूपण्स्य, यत् श्रास्थान-मण्डपं, सभागृहं, तस्य विचारालयस्येतिभावः । पुरस्तात् , ऋप्रतः, श्रजिरे, श्रंगने, स्थितं, तिष्ठन्तं, दूरात् , ऊर्द्वस्थितेन, दण्डायमानेन, प्रांशुना, उन्नतकायेन, कर्णिकारः, पुष्पभेदः, तद्वत् गौरेण, शुभ्रेण । व्यायामेति—व्यायामेन, व्यायतं विभक्तावयवं, वपुः शरीरं यस्य तेन । शस्त्रिगा, शस्त्रपियाना । शरीरपरिचारकः, शरीरसेवकः, तादृशः

शिक्षणा मोलेन शरीरपिश्चारकलोकेन पिङ्क्तिस्थितेन कार्त-स्वरस्तम्भमण्डलेनेव पिरवृतम्, श्रासन्नोपिविष्टविशिष्टेष्टलोकम्, हिर्चन्द्नरसप्रवालिते तुपारशीकरशीतलतले द्न्तपाण्डुरपादे शिशमिये इव मुक्ताशैलिशलापट्टशयने समुपिविष्टम्, शयनीय-पर्यन्तिवन्यस्ते समर्पितसकलिवग्रहभारं भुजे, दिङ्मुखिवस-पिणि देहप्रभाविताने विततमिणिमययूखे धर्मसमयसुभगे सर-सीव मृदुमृणालजालजटिलजले सराजकं रममाणम्, तेजसः

लोकस्तेन । कार्तेति-कार्त्तस्वरं, स्ववर्गी, तस्यस्तम्भमण्डलेन, स्तम्भनिवहेन, ( स्वर्णी सुवर्णी रुक्मां कार्त्तस्वरम "इत्यमरः ) परिवृतं, परिच्छादितम् । ऋासन्नोते—ऋासन्ने समीपं, उपविष्टाः, स्थिताः, विशिष्टाः, सम्भ्रान्ताः, इष्टाः, श्रमिलपिताः लोकाः यस्य तम् । हरिचन्दनेति हरिचन्दनस्य, मलयजस्य, यः, रसः, द्रवः, तेन, प्रचालिते, विधौते । तुपारेति - तुपारशीकरवत् शीतलं, तलं यस्य तथोक्ते । दन्तेति—दन्तवन् , पाग्डुरौ, श्वेतौ, पादौ, चरगाौ यस्य तथाविधे । शशिमये इव, चन्द्रमये इव, मुक्ताशैलस्य, मैक्तिकपर्वतस्य, शिलापट्ट एव शयनं, शय्या तस्मिन् । समुपविष्टम् । शयनीयेति— शयनीयस्य, शय्यातळस्य, पर्यस्ते, प्रान्तभागे, विन्यस्तः, निहितः, तस्मिन् । भुजे, करे । समर्पितेति--समर्पितः, निहितः, सकलस्य, विष्रह्स्य, शरीरस्य, भारं येन तम्। दिङ्मुखेति—दिशां, मुखानि, विसर्पति, व्याप्रोति तथाविधे, देहप्रभाविताने, श्रङ्गकान्तिविस्तारे । विततेति—वितताः, विस्तृताः, मग्गीनां, मयूरवाः, किरगाः, यत्र तस्मिन् , घर्मसमयसुभगे, ब्रीष्मकालरमणीये । मृद्विति मृदुभिः, कोमलैः, मृगालजालैः, विससञ्जयैः, जटिलानि, जालानि यत्र तिसन्। सराजकं, राजगणसहितम्, रममाणं, विहरन्तं, केवलैः, तेजसः,

परमाणुभिरिव केवलैर्निमितम्, श्रानिच्छन्तमपि बलादारोप-थितुमिव सिंहासनम्, सर्वावयवेषु सर्वलचणैर्गृहीतम्, गृही-तब्रह्मचर्यमालिङ्गितं राजलद्या, प्रतिपन्नासिधाराधारण-व्रतम-विसंवादिनं राजिपम्, विषमराजमार्गविनिहितपद्रख-लनभियेव सुलग्नं धर्मे, सकलभूपालपरित्यक्तेन भीतेनेव लब्ध-वाचा सर्वात्मना सत्येन संव्यमानम्, श्रासन्नवारविलासिनी-प्रतियातनाभिश्चरणनखपातिनीभिर्दिग्भिरिव दशिभः प्रणम्य-

प्रतापस्य, प्रमासुभिः, निर्मितं, सृष्टम् । ऋनिच्छन्तं, इच्छारहितम्, सर्वावयवेषु, हस्तपादादिषु, सर्वलक्ष्णैः, शुभ चिह्नैः, गृहीतं, युक्तम् । गृहीतं, अवलम्बितं, ब्रह्मचर्य येन तम्। राजलच्म्याः, नृपश्रियाः, त्रालिङ्गितम्। प्रतिपन्नेति प्रतिपन्नं, त्र्यवलम्बितम्, त्र्रसिधारा-धारण्ञतं, खङ्गपहण्ञतं, विसंवादी,विरुद्धवक्ता सनतं । विपमेति— विषमं, दारुषो, नतोन्नतरूपं च, राजमार्गे, राजनीतौ, राजपथं च विनिहितस्य, ऋर्पितस्य,पादस्य, स्खलनभियेव,धर्मेसुल<mark>ग्नम्। सकलेति</mark> -सकलैं:, भूपालैं:, परित्यक्तः, तेन भीतेनेव लब्धा, गृहीता वाकृ तेन । सर्वातमना, सर्वस्वरूपेण, सत्येन, संवमानं, परिचर्यमाण्म । श्रास-न्नेति--श्रासन्नानां, निकटस्थितानां, वारविलासिनीनां, वेश्यानां, प्रतियातनाभिः, प्रतिच्छायाभिः, चरणनखपातिनीभिः, दशभिः, दिग्भिरिव, प्रग्णस्यमानं, ऋभिवन्द्यमानम्, दीर्घैः, ऋायतैः, दिगन्त-पातिभिः, दिगन्तगामिभिः, लोकपालानां, इन्द्रादीनां, कृताकृतिमव, कार्याकार्यमित्र प्रत्यत्तवेत्तमार्णम्, परिपश्यन्तम्। मर्गाति—मर्णा-पादपीठस्य, पृष्ठे, उपरि, प्रतिष्ठिताः पतिताः रचिताश्च कराः, किरणाः, हस्तश्च यस्य तेन, दिवसकरेण, सूर्येण, उपरीति—उपरि-गमने, ऊर्द्धगमने, या श्रभ्यनुज्ञा, श्रनुमितः, तां मृग्यम।गामिव, प्रार्थ-

- मानम्, दीर्घेदिंगन्तपातिभिदंष्टिपातेळोंकपाळानां कृताकृतिमिव प्रत्यवेत्तमाण्म् , मिण्पादपीठपृष्ठप्रतिष्ठितकरेणोपरिगमनाभ्य-नुक्कां मृग्यमाणमिव दिवसकरेण्, भूषणप्रभासमुत्सारणबद्धपर्य-न्तमण्डलेन प्रदक्षिणिकियमाणिमव दिवसेन, अप्रणमिद्धिर्गिरि-भिरपि दूयमानं, शौर्योप्मणा फेनायमानिमव चन्द्नधवळं ळावण्यजळिधमुद्धहन्तमेकराज्योर्जितेन, निजप्रतिबिम्बान्यपि नृपचकच्चुडामिणिधृतान्यसहमानिमव दर्पदुःखासिकया चामरा-निळिनिभेन वहुधेव श्रसन्तीं राजळद्मीं द्धानम्, सकळिमव चतुःसमुद्रळावण्यमादायोत्थितया श्रिया समुपिश्ठिप्टम्, आभ-रणप्रभाजाळजायमानानीन्द्रधनुःसहस्राणीन्द्रप्राभृतप्रहितानि
- मानमिव । भूषणेति भूषणानाम् , अलंकाराणां, प्रभाभिः, किरणेः, समुत्सारणेन, सन्ताडनेन, वहं, धृतं, पर्यन्तेषु, मण्डलं, गोलं, येन तथोक्तेन । प्रदक्षिणीकियमाणम्, वेष्ट्यमानम् । दिवसेन, दिनेन । अप्रणमिन्नः, प्रणितमकुर्वद्भिः, गिरिभिः, पर्वतेरिः, दृयमानिमव, सन्तप्यमानिमव। शौर्योप्मणा, बलोप्मणा, फनायमानिमव। एकेति— एकराज्येन, क्रिजंतः, तस्य, भावः, एकराज्योज्जितंतन । लावण्यजलिं, सौन्द्यीिष्मं, उद्वहन्तम् । नृपचकः, राजमण्डलेः, चूड़ामणिभिः, शिरोरत्नेः, धृतानि, गृदीतानि, निजप्रतिविम्बानि, असहमानिमव, अस्तमानिमव । दर्पदुःखासिकया, अहंकारजशोककृषणोन, चामरानिलनिमेन, चामरमहत्व्याजेन, बहुधा श्वसन्तीं, राजलक्मीं, द्धानम् । सकलं । चतुरिति—चतुर्गों, समुद्राणां समाहारः चतुस्समुद्रम् तस्यलावण्यं तत्। आदाय, गृहीत्वा, उत्थितया, आविर्भूतया, श्रियाः, लच्याः, समुपसृष्टमिव, समालिङ्गितिमव। आभरणेति—आभरणानां प्रभाजालेन, दिप्तिसमृहेन, जायमानानि, उत्पद्ममानानि, इन्द्रधनुषां,

विलभमानिमव राज्ञां संभाषणेषु परित्यक्तमिप मधु वर्षन्तम् काव्य-कथास्वपीतमप्यमृतमुद्धमन्तम्, विस्नम्भभाषितेष्वनाकृष्टमिषि द्वद्यं दर्शयन्तम्, प्रसादेषु निश्चलामिपि श्रियं स्थाने स्थाने स्थापयन्तम्, वीरगोष्टीषु पुलकितेन कपोलस्थलेनानुरागसंदे-शमिवोपांशु रणश्चियः श्रग्वन्तम्, त्रातिकान्तसुभटकलहालापेषु स्नेहवृष्टिमिव दृष्टिमिष्टे कृपाणे पातयन्तम्, परिहासस्मितेषु गुरुष्ठतापभीतस्य राजकस्य स्वच्छमाशयमिव दशनांश्चिनः

इन्द्रचापानाम्, सहस्राणि, इन्द्रप्रभृतप्रहितःनि, इन्द्रेण, प्राभृतेन, उपोढकत्वेन, प्रहितानि, प्रेषितानि । विलभमानमिव, प्रापमाण्मिव । राज्ञां, सम्भाषगोपु,समालपनेषु परित्यक्तम्। मधुवर्षन्तम्,मधुरसवमन्तं काव्यकथासु, श्रपीतमपि, श्रनास्वादितं, श्रमृतं, पीयृपं, उद्वमन्तम् । विस्नम्भभाषितेषु विश्वस्ताऽलापेषु, त्र्यनाकृष्टमपि, त्र्रगृहीतमपि, हृद्यं, मनोऽभिप्रायं, दर्शयन्तं, प्रकटयन्तम् , प्रसादंपु, प्रसन्नतासु, निश्चला-मपि, स्थिरामपि, श्रियं, लच्मीं, स्थाने, योग्ये, स्थापयन्तम्। वीर-गोष्ठीषु, वीरसमाजेषु, पुलिकतेन, रोमाञ्जितेन, कपोलस्थलेन, गण्डदेशेन, उपांशु, रहसि रणश्रियाः, संप्रामलच्म्याः श्रनुरागसंदेश-मिव शृण्वन्तम् ,त्र्याकर्ण्यन्तम् । <mark>स्रतिकान्तेति</mark>-श्रतिकान्ताः,त्र्यतीताः, सुभटानां सुयोद्धृयां,कलहाः तेषां त्र्यालापाः कथा तेषु, इष्टेक्टपायो, स्नेहृतृष्टिमिव, स्नेहवर्षण्मिव, दृष्टिं, लोचनं पातयन्तम् । परिहासस-म्मितेषु, नम्मेहासेषु, गुरुणा,महता, प्रतापेन, तेजसां, भीतस्य, त्रस्तस्य, राजकस्य, राजचकस्य, दशनांशुभिः, दन्तिकरगोः, स्वच्छं, निर्मलं, श्रारायं श्रभिप्रायं कथयन्तम्। सकलेति—सकलानां;लोकानां,जनानां, हृदयेषु स्थितमपि न्याये,नीतिमार्गे तिष्ठन्तं, वर्तमानम् ,यः सर्वलोकहृदि- 🐬 स्थः कथं स एकत्रतिष्ठतीति विरोधः । नहि स्रन्याय्यमाचरतीतिपरिहारः ।

कथयन्तम्, सकललोकहृदयस्थितमपि न्यायं तिष्ठन्तम्, अगो-चरे गुणानामभूमौ सौभाग्यानामविषये वरप्रदानानामशक्ये आशिषाममार्गे मनोरथानामितदृरे दैवस्यादिस्युपमानानाम-साध्ये धर्मस्यादृष्टपूर्वे लद्दम्या महत्वे स्थितम्, अरुणपाद्प-लवेन सुगतमन्थरोरुणा वज्रायुधनिष्ठरप्रकोष्ठपृष्ठेन वृषस्कन्धेन भास्वद्विम्बाधरेण प्रसन्नावलोकितेन चन्द्रमुखेन कृष्णकेशेन वपुषा सर्वदेवतावतारमिवैकत्र दर्शयन्तम्, अपि च मांसलम्यू-

गुगानां, विद्यावितयादीनां, ऋगोचरं, ऋविषये। सौभाग्यानां, ऋभूमौ, अस्थानं, वरप्रदानानां, ऋविषये, ऋगोचरं, ऋशिषां, ऋशक्ये, त्रसाध्ये, मनोरथानां, त्र्रातिदृरे, उपदिश्यमानानां, सादृश्य, बोधका-नाम् , ऋसाध्ये, साधयितुमशक्ये, धर्मस्य, ( कर्त्तरिपष्ठी ) ऋदृष्टपूर्वे, प्रागदृष्टे, लच्च्यामहत्वे, उत्कर्षे । अरुगति- अरुगः, रक्तः, पाद-पल्लवः, चरणिकसलय, यस्य तेन (पत्ते) त्रकणस्य, सूर्यसार्थः, पाद्-पल्लवेन । सुगतेति—सुष्ठु, गतं, गमनं, ययोः तथाभूतौ मन्थरौ, मृदुगामिनौ, उरू यस्य तेन (पत्ते) सुगतः, बुद्धः तस्य मन्थरः, मन्द-गामी उरुः तेन । वज्रोति—वज्रं, कुलिशमेव त्रायुधं, श्रस्नविशेषः तद्वत् निष्ठुरं, कठिनं, प्रकोष्ठः, करस्यमग्गिबन्धभागः, पृष्ठं च यस्य तेन (पत्ते) वज्रायुधः, इन्द्रः तस्य निष्ठुरं प्रकोष्ठः, पृष्ठं तेन । वृष-स्कन्धेन, बलिवदंसिन (पत्ते) वृषस्य, धर्मस्य स्कन्धस्तेन । भास्व-दिति—भास्वान् , दिप्यमानः, बिम्बमिवाधरो यस्य (पत्ते) भास्वतः, सूर्यस्य विम्बमिवाधरः तेन । प्रसन्नेति-प्रसन्नं, निर्मलं, श्रवलोकितं, र्छ्शनं यस्य तेन, (पत्ते) प्रसन्नः, ऋाशुतोषः (शिवः) तस्य ऋवलोकितं, दर्शनमिव तेन । चन्द्रमुखेन, कृष्णकेशेन, कृष्णबालेन (पत्ते) श्रीहरेः केरोन, वपुषा, शरीरेण, सर्वदेवतावतारमिव । मांसलेति-- मांस- खमालामिलिनितमहोतले महित महाहें माणिक्यमालामिण्डत-मेखले महानीलमये पादपीठे कलिकालिशिरसीव सलीलं विन्य-स्तवामचरणम्, त्राकान्तकालियफणाचकवालं बालिमव पुण्ड-रोकात्तम्, कौमपाण्डुरेण चरणनखदीधितिप्रतानेन प्रसरता महीं महादेवीपट्टबन्धेनेव महिमानमारोपयन्तम्, अप्रणतलोकपा-लकोपेनेवातिलोहितौ सकलन्यितमौलिमालास्वतिपीतं पद्म-

लाभिः, महतीभिः, मयूरवानां, किरणानां मालाभिः, समृहैः, मलि-नितम्, मलयुक्तम्, महीतलं येन तथोक्षे । महतीति - महति, महाई, महामूल्ये, माणिक्येति-माणिक्यमालया, मण्डिता, श्रलङ्कृता, मेखला, नितम्बभागः, (मध्यभागः, इत्यर्थः) यस्य तादृशे । महानील-मये, महानीलमिंगिनिर्मते, कलिकालशिरिस इव, कलिमूर्द्धनि इव, सलीलं, सविलासं, विन्यस्तेति-विन्यस्तः, निहितः, वामचरणः, येन तथोक्तम्। त्र्याकान्तेतिः—त्र्याकान्तं, व्याप्तं, कालियस्य, नाग-विशेषस्य, फगाचक्रवालं, फगामण्डलं येन तथोक्तम, बालं, शिशुं-पुरुडरीकात्तम् , श्रीकृष्णमिव, (पत्ते) पुरुडरीके,श्वेतपद्मे इव श्रक्तिणी यस्य तथोक्तम् । चौमपाण्डुरेगा, चौमं, श्वेतपृहम् , तद्वत् पाण्डुरः, धवलः तेन । चरणेति चरणानखानां, दीधितिप्रतानेन, मयूरव-विस्तारेगा, महीं, पृथ्वीं, प्रसरता, व्याप्नुवता । महादेवीति—महा-देवी, तस्याः पट्टबन्धः, चौमाच्छाद्नविशेषः, तेनेव महिमानं, महत्वं, श्रारोपयन्तम् । श्रप्रणतेति नप्रणताः, श्रप्रणताः ते च ते लोक-पालाश्चेति श्रप्रगातलोकपालाः तेषु कोपः, क्रोधस्तेनेव, श्रातिलोहितौ, श्रतिरक्तौ श्रतएव। सकलेति सकलानां, समन्राणां, नृपतीनां, राज्ञां मौलिमालासु, मुकुटराजिषु, श्रतिपीतम्, श्रतिशयेन, गृहीतं, पद्मरागरत्नानां, तदाख्यमणीनां, स्रातपिमव, वमन्तो, उद्गिरन्तो ।

रागरत्नातपिषव वमन्तौ सर्वतेजस्विमग्डलास्तमयसंध्यामिष धारयन्तावशेषराजककुसुमशेखरमधुरसस्रोतांसीव स्नवन्तौ समस्तमामन्तसीमन्तोत्तंसस्रवसौरभभ्रान्तैर्भ्रमरमग्डलैरमित्रोत्त-माङ्गेरिव मुहूर्तमप्यविरहितौ संवाहनतत्परायाः श्रियो विकचर-कपङ्कजवनवासभवनानीव कल्पयन्तौ जलजशङ्खमीनमकरसना-थतलतया कथितचतुरम्भोधिभोगचिह्नाविव चरगौ दधानम्,

सर्वेति --संबंधां तेजस्विमण्डलानां, वीरसमूहानां, (सूर्योदीनामिति-भावः) श्रस्तमयसन्ध्यामिव, नाशप्राप्तिम्तपसायंकालमिव, श्रस्तगमन सन्ध्याकालमिव च धारयन्तो दधानो । अशोषति - अशोषाणां, समस्तानां, राज्ञां कुसमानि पुष्परचितानि इति भावः, यानि शेख-राणि, शिरोभूपणानि, तेषां मधुरसाः, मकरन्दरसाः तेषां श्रोतांसीव प्रवाहानिव, स्ववन्तौ, वर्षन्तौ । समस्तेति—समस्तानां, सामन्तानां, त्र्रधीश्वरागाम् (सामन्तः स्यादधीश्वरः--इत्यमरः) सीमन्ताः, संयताः, केशाः तेषां, उत्तासाः, मण्डनानि याः स्त्रजः, मालाः, तासां सौरभेगा, सुगन्धेन, भ्रान्तानि, घूर्णमानानि तैः । भ्रमरमण्डलैः, मधुकरवृन्दैः, अमित्रोत्तमांगैः, शत्रुशिरोभिः, अविरहितो, युक्तो । संवाहनेति संवाहनं, शरीरमईनरूपासेवा तस्मिन् तत्परा, रता, तस्याः श्रियः, लच्च्याः। विकचेति विकचानि, प्रफुल्लानि, रक्तपङ्कजवनानि, रक्तकमलकाननानि, एव वासभवनानि नानीव कल्पयन्तौ, रचयन्तौ। जलजेति--जलजं, कमलं, शङ्खः, कम्बुः, मीनः, मत्स्यः, मकरः, जलजीवभेदः, तैः, सनाथं, युक्तम्, तलं ययोः तयोभिवः तत्ता तया । कथितेति- कथितं, प्रकटितं, चतुर्गाम् , श्रम्भोधीनां, साग-राणां, भोगचिन्हं, भोगलज्ञणं याभ्यां तथाभूतामिव चरणों, पादौ, द्धानं, धारयन्तम् । दिङ्नागेति - दिङ्नागस्य, दिग्गजस्य, दन्तौ, दिङ्नागद्दन्तमुसलाभ्यामिव विकटमकरमुखप्रतिबन्धबन्धुरा-भ्यामुद्दोललावण्यपयोनिधिप्रवाहाभ्यामिव फेनाहितशोभाभ्यां कल्पचन्दनद्रमाभ्यामिव भोगिमण्डलशिरोरत्नरिष्टमरज्यमानम्-लाभ्यां हृद्यारोपितभूभारधारणमाणिक्यस्तम्भाभ्यामूरुद्दण्डाभ्यां विराजमानम् , अमृतफेनपिण्डपाण्डुना, मेखलामणिमयूखख-चितेन, नितम्बबिम्बव्यासङ्गिना, विमलपयोधौतेन, नेत्रसूत्रनिवे-

मुसलौ, ताभ्यामिव । विकटेति—विकटः, उत्कटः, यो मकरस्य, जलजीवभेदस्य, मुखमिव प्रतिबन्धः, तेन बन्धुरो, उन्नतानतौ ताभ्यां ( बन्धुरस्तूत्रतानतम् --इत्यमरः ) ( पत्ते ) विकटः, यो मकरमुखः, मकरमुखाकृति भूषण्विशेषः, स एव प्रतिबन्धः तेन बन्धुरौ, रम्यौ ताभ्याम् । उद्वेलेति-उद्वेलः, उच्छलन् , वेलातिक्रान्तश्च यः लावएय-पयोधिः, लावण्यसागरः, तस्य प्रवाहावित्र स्रोतसीव, ताभ्याम्। फंनेति—फेनै:, त्र्याहिता, जनिता, ययोः, ताभ्याम्। भोगीति---भोगीनां, नृपाणाम्, सर्पाणां च ( भोगी भुजङ्गमेऽपिस्यात् प्रामपात्रे-नृपेपुमान्—इत्यमरः) मण्डलस्य, वृन्दस्य, शिरोरत्रानि, तेषां रिश्मिभः, मयूरवैः, रज्यमाने, ऋलङ्क्रियमाणे, मूले, पादमूले, वृत्तमूलं च ययोः ताभ्याम् । हृद्येति—हृद्यं, चित्तं, तत्र, ऋारोपितः, यो भूभारः, तस्य धारगो, मिणक्यस्तम्भौ ताभ्याम् । उरुदृण्डाभ्यां विराजमानम्। अमृतेति अमृतस्य, फेनपिण्डः, फेनराशिः तद्वत् (पत्ते) फेनपिएडै:, पाएडु:, धवलः, तेन । मेखलेति - मेखला, काञ्ची, तत्र ये मगायः, रत्नानि (पत्ते) मेखलासु, नितम्बेषु । मन्दरस्येति— मन्दरस्य ये मण्यः, तेषां मयूर्वैः, किरणैः, खचितं, तेन नितम्ब-विम्बसङ्गिना, नितम्बमण्डलसंसक्तेन, ( पत्ते ) कटितटब्यापिना । विमलेति—विमत्तैः, स्वच्छैः, पयोभिः, जर्तैः, (पत्ते) दुग्यैः, धौतेन,

शशोभिनाधरवाससा वासुिकनिर्मोक्षेणेव मन्दरं द्योतमानम्, श्रघनेन, सतारागणेनोपरिकृतेन द्वितीयाम्बरेण भुवनाभोगिमव भासमानम्, इभपतिदशनमुसलसहस्रोल्लेखकितनमस्रणेनापर्या-प्राम्बरप्रथिसा विविधवाहिनीसंत्रोभकलकलसंमर्दसहिष्णुना कौलासिमव महता स्फटिककतटेनोरुणोरः कपाटेन राजमानम्,

त्तालितेन । नेत्रेति—नेत्रस्य, वस्त्रविशेषस्य (नेत्रं मथिगर्गे वस्त्रभेदं मूले द्रमस्य च इति मेदिनी ) सूत्राणां, तन्तूनां, निवेशेन, रचनया, (१क्ते) नेत्रं, मन्थनरज्जुः, तस्य सूत्राणां, निवेशेन, त्र्याधानेन, शोभते इति तथोक्तेन । ऋधरवाससा, परिधानवस्त्रेगा । वासुकिनिर्मोकेगोव, वासुकेः, नागराजस्य, निर्मोकेरोव, कञ्चुकेनेव। मन्दरं, तदाख्यं पर्वतं, द्योतमानं, राजमानं, ऋयनेन, सृच्मेरा, घनः, मेघः, तद्रहितेन च। सतारागणेन, ताराः, सूत्रविन्दवः, नचत्राणि च तेषां गणः, समृह: तत्सहितेन । उपरिकृतेन, उपरिधृतेन, ( पत्ते ) ऊर्द्धवर्त्तिना । द्वितीयेति—द्वितीयेन, श्रम्बरेगा, वसनेन, गगनेन च । भुवनाऽऽभो-गमिव, भुवनाऽऽयामामिव, भासमानं, विराजमानम्। इभपतीति — इभपते:, गजपते:, दराना एव मुसलानि, तेषां सहस्राणां, उल्लेखेन, निरवननेन, कठिनं दृढं मसृगां, कोमलं च ( पत्ते ) चिक्रगां तेन । **ऋपर्याप्तेति**—ऋपर्याप्तं, यत् श्रम्बरं, त्राकाशं, तस्येव प्रथिमा तेन (पत्ते) ऋपर्याप्ते ऋम्बरे प्रथिमा, विस्तारो यस्य तेन । विविधेति --विविधानां, बहुविधानां, वाहिनीनां, चमूनां, संज्ञोभे, समवाये, यः कलकलः, कोलाहलः, तेन संमर्दः, संक्लेशः (पत्ते ) वाहिनीनां, नदीनां, संज्ञोभे, यः कलकलः, तेन सम्मर्दः, तं सहितुं शीलमस्येति तथोक्तेन । उरुगा, महता, उरः कपाटेन, वत्तस्थलरूप कपाटेन । महता, स्फटिकतटेन कैलासमिव, एतदाख्यपर्वतमिव विराजनानम्। श्रीसरस्वत्योरुरोवद्नोपभोगविभागसूत्रेणेव पातितेन शेषेणेव च तङ्गुजस्तम्भविन्यस्तसमस्तभूभाररुष्धविश्रान्तिसुखप्रसुप्तेन हारद्गडेन परिवेष्टितकंधरम्, जीविताविधगृहीतसर्वस्वमहा-दानदीत्ताचीरेणेव हारमुक्ताफर्रानां किरणिनकरेण प्रावृतवत्तः-स्थर्म्, अजिगीषया बार्टभुंजैरिवापरैः प्ररोहङ्गिर्बाहूपधान-शायिन्याः श्रियाः कर्णोत्परुमधुरसधारासंतानैरिव गरुद्धिर्मुज-

श्रीसरस्वत्योरिति- श्रीसरस्वत्योः, लच्मीवाग्देव्योः, उरोवदनयोः, यथा क्रमेगा लच्च्या उरसः वाग्देव्या वदनस्येतिभावः, उपभोगः, सम्भोगः तस्य विभागसूत्रं, सीमावन्धनसूत्रम्, तेनेव पातितेन, परा-जयेनेतिभावः । तद्भुजेति —तस्य, हर्पस्य भुजः, एवस्तम्भः, तस्मिन् विन्यस्तः, यः समस्तः, भूभारः, पृथ्वीभारः, तेन लब्धा, प्राप्ता, या विश्रान्तिः, विश्रामः, तया सुखं यथा तथा प्रसुप्तः, निद्रितः तेन रापेगा, श्रनन्तनागनेव। हारदण्डेन, हारयष्टिना, प्ररिवेष्टिता, श्रालिङ्गिता, कन्द्रा, ग्रीवा यस्य तं । जीवितेति— जीवितं, जीवनं, श्रविः, शेषो येषां तानि, गृहीतानि, यानि, सर्वाग्णि स्वानि, धनानि, तेषां महादानं, तस्मिन् या दीज्ञा, त्रतधारगानियमविशेषः, तस्याः चीरं, कोपीनम्, तेनेत्र । हारेति—हारस्य, जालमालायाः, मुक्तानां, मौक्तिकानां, किरणाः, मयूरवाः तेषां निकरेण, समूहेन । प्रावृतेति प्रावृत्तं, त्राच्छादितं, वज्ञःस्थलं, येन यस्य वा तम् । अजेति न जायते इति त्रजः, विष्णुः, जिगीषा, जयेच्छा तया (त्र्यजाविष्णु हरच्छागाः इत्य-मरः) वालैः, नवैः, प्ररोहद्भिः, जायमानैः, भुजैरिव। वाह्नप्रधानेति— बाहूरेव, उपधानं, उपवर्हः तत्र शायिन्याः, श्रियः, लच्न्याः । कर्गोत्प-लेति—कर्णोत्पलस्य, श्रवतंसभूतकमलस्य, मधुरसधाराणां, मक-रन्दप्रवाहाणां, सन्तानैरिव, समूहैरिव, गलद्भिः, चरद्भिः, भुजजनमनः, जन्मनः प्रतापस्य निर्गमनमागैरिवाविर्भवद्भिरस्णैः केयूररत्न-किरण्दएडैस्भयतः प्रसारितमण्मियपचितानिमेव माणिक्य-महीधरम् , सकळलोकालोकमार्गागेलेन चतुरुद्धिद्रिचेपखा-तिर्शलाप्राकारेण सर्वराजहंसवन्ध्रवज्रपञ्जरेण भुवनलद्मीप्रवेश-यङ्गलमहामणितोरणेनातिदीर्धदीर्दण्डयुगलेन दिशां दिक्पालानां च युगपदायतिमपहरन्तम् , सोद्र्यलद्मीचुम्बनलोभेन कौस्तु-भमणेरिव मुखावयवतां गतस्याधरस्य गलता रागेण पारिजात-

बाहुजनितस्य, प्रतापस्य, तंजसः, निर्गमनमार्गेरिव । त्र्याविभेवद्भिः, प्रकटयद्भिः, ऋरुणैः, रक्तेः । केयुरेति – केयुरस्त्रानां,ऋङ्गदस्थमणीनां, किरणा एव दण्डा स्तैः । प्रसारितेति -प्रसारितौ, मण्रिमयौ, पत्तवितानो, विस्तृतपत्तो, यस्य नथोक्तम् । माणिक्यमहीधरं, माणि-क्यरत्रनिर्मितपर्वतम् । सकलेति सकलानां, लोकानां, त्रालोकः, उद्योतः, तस्य मार्गः, पन्था, तस्य ऋर्गलः तेन । चतुरिति--चतुर्गा, उद्धीनां, समुद्रागां, सम्बन्धी, परिचेपः, परिवेष्टनमेव, खातानि, परिरवाः, तेषां शिलाप्राकारः पापागानिर्मितं ( प्राचीरमित्यर्थः ) तेत । सर्वेति—सर्वेषां, राजइंसानां, नृपश्रेष्ठानां, बन्धे, वन्धने, वज्रपिखरं, (पाषागानिर्मितपिञ्जरमित्यर्थः) तेन । भुवनेति-भुवनानां, लच्म्याः, प्रवेशस्य मंगलं, महामणितोरणं, अनर्घ्यमणिनिर्मितवहिद्धीरं तेन । **अतिदीघेति** — अतिदीघे, अत्यायतं, दोद्गडयुगलं, भुजदण्डद्वयं तेन युगपत्, समकालं, त्रायितं, दैर्ध्यं, प्रभावञ्च त्रपद्रस्तं, नाशयन्तम्। सौदयति—सौदर्या, सहोदरा, या लच्मीः, श्रीः तस्याः चुम्बनाय, लोभः तेन । कौस्तुभमगोरिव, (चीरसागरोत्पन्नतया सहोदरस्येवेत्यर्थः) 🕈 मुखावयवतां, वदनाङ्गतां, गतस्य, प्राप्तस्य, ऋधरस्य, गलना, स्रवता, रागेगा. लौहित्येन, पारिजातपल्लवरसेनेव, पारिजातदेवतरुकिसलय

पत्नवरसेनेव सिश्चन्तं दिङ्मुखानि, श्चन्तरान्तरा सुद्दत्परिद्वास-स्मितै: प्रकीर्यमाण्विमलदशनिशखाप्रतानैः प्रकृतिमृदाया राज-श्चियाः प्रज्ञालोकिमिव दर्शयन्तम्, मुखजनितेन्दुसंदोहागतानि कुमुदिनीवनानीव प्रेषयन्तम्, स्फुटधवलदशनपिङ्क्तकृतु-दवनशङ्काप्रविष्टां शरज्ज्योत्स्नामिव विसर्जयन्तम्, मदिरामृत-पारिजातगन्धगभण भरितसकलककुभा मुखामोदेनामृतमथन दिवसमिव सुजन्तम्, विकचमुखकमलकणिकाकोशेनानवरत-मापीयमानश्वाससौरभमिवाधोमुखेन नासावंशेन, चत्तुषः स्तीर

द्रवेग्गेव, दिङ्मुरवानि, सिक्चन्तं,ज्ञालयन्तम्। त्र्यन्तरान्तरा,मध्येमध्ये । सुहृदिति—सुहृद्धिः, सह ये परिहासाः, तेषु स्मितानि, मन्दहासाः तैः । प्रकीर्यमाणेति—प्रकीर्यमाणाः, विचिप्यमाणाः, विमलाः, दशनिकरणानां, दन्तमयूरवानां, शिखाप्रतानाः, श्रिर्चिनिचयाः, येषु तथोक्तैः । प्रकृतिमूढायाः, स्वभावमुग्धायाः, राजश्रियः, नृपलच्म्याः । प्रज्ञाप्रलोकिमव, ज्ञानयुतिमिव दर्शयन्तम् । मुखेति —मुखं, जनितः यः इन्दुसन्देहः तेन त्र्यागतानि, कुमुदिनीवनानीव, प्रेषयन्तं, इन्दुरयं नेति कृत्वा विसर्जयन्तम् । स्फुटेति—स्फुटधवला, या दशनपङ्क्तिः, तया कृता, जनिता, या कुमुद्दवनशङ्का, तया प्रविष्टां, ( मुखाभ्यन्तर-मितिभावः ) शरज्ज्योत्स्नां, शरत्कालिककौमुदीमिव, विसर्जयन्तं, (नैतानि कुमुदवनानीति कृत्वा त्यजन्तम्) मदिरेति—मदिराऽमृत-वत् यः पारिजातगन्धः, सगर्भे यस्य तेन । भरितसकलककुभाः, सर्व-दिक्षप्रसारिगोति यावत् , मुखामोदेन, वदनसौरभेगा, त्र्रमृतमथनदिवस-मिव, पियूषमन्थनदिनमिव, सृजन्तं, जनयन्तम्। विकचेति विकचं, प्रफुल्लं, मुखं, कमलमिव तस्य कर्णिकाकोशः, बीजकोशस्तेन ( कर्णिका करिहस्ताप्रे उन्वराटे कर्णभूवणे इति मेदिनी ) श्रधोमुलेन,

स्निग्धस्य धचलिम्ना दिङ्मुखान्यपूर्ववद्नचन्द्रोद्योद्वेलक्तीरो-द्षावितानीव कुर्वाणम् , विमलकपोलफलकप्रतिविम्बतां चामरत्राहिणीं वित्रहिणीमिव मुखनिवासिनीं सरस्वतीं दधानम् , श्ररुणेन चूणामणिशोचिषा सरस्वतीर्ध्याकुपितलद्दमीप्रसादनल-म्नेन चरणालक्तकेनेव लोहिताथितललाटतटम्, श्रापाटलांशुत-न्त्रीसंतानवलयिनीं कुएडलमणिकुटिलकोटिबालबीणामनवरत-चिंठतचरणानां वाद्यतामुपवीणयतामिव स्वरव्याकरणविवेक-नताननेन, नासिकारूपवेगुना, श्रनवरतं निरंतरम्, श्रापीयमानम्, श्राघायमागां श्रासस्य, सोरमं, येन तथोक्तम्। क्तीरंति – क्तीरवत् स्निग्धं तस्य चत्तुषः धवलिम्ना, श्वैत्येन,दि ङ्मुखानि, श्रपूर्वः, वदन-मेव चन्द्रः तस्य उदयेन उद्वेलः, वेलायामुच्छलितः, यः चीरोदः, तेन सावितानीव । विमलेति—विमले, कपोलफलके, गण्डतटे, प्रति-🍍 विम्बिता, प्रतिफलिता ताम् । विप्रह्णीमिव, मूर्तिमनीमिव । सरस्वतीं, बाग्देवीं, द्धानम् धारयन्तम् । श्ररुणेन, रकेन । चूडेति चूडामणेः, शिरोरत्रस्य, शोचिषा, ऋर्त्विषा । सरस्वर्ताति— सरस्वत्यां, ईर्प्या, द्वेषः, तथा कुपिता या लच्मीः, तस्याः प्रसादनं, चरणप्रिणिपातेन सान्त्वनं, तेन लग्नं, संसकं, तेन चरण लक्तकेन । छो हितेति – लोहि-तायितः, त्रम्णितः, ललाटः, यस्य तथोक्तम् । त्रापाटलेति—त्रापा-टलाः, ईपद्रक्ताः, त्र्रंशवः, मयूरवाः एवः तन्त्रीसन्तानाः, तन्त्रीसङ्घाः, तेषां वलयः, मण्डलं विद्यतेऽस्याः ताम्। कुण्डलेति —कुण्डलयोः, कर्णभूषणयोः, ये मण्यः तेषां कुटिलाः, भङ्गीमती, कोटिः, शिखा, सा एव बालवीगाा, सप्ततन्त्री ताम्। श्रनवरतेति—श्रनवरतं, निर-न्तरं, चलिताः, चरगाः, येषां तथोक्तानां । उपवीगायतां, वीगाया . उपगायतां तेषामिव । स्वरेति—स्वराः, निषादादयः, व्याकियन्ते, विशारदम्, श्रवणावतंसमधुकरकुलानां कलकिणितमाकर्ण-यन्तम्, प्रत्फुल्लमालतीमयेन राजलब्म्याः कचप्रहलीलालग्नेन नखज्योत्स्नावलयेनेव मुखशशिपरिवेशमगडलेन मुग्डमालागुणेन परिकलितकेशान्तम्, शिखगडाभरणभुवा मुक्ताफलालोकेन मरकतमणिकिरणकलापेन चान्योन्यसंवलनवृज्ञिनेन प्रयाग-प्रवाहवेणिकावारिणेवागत्य स्वयमभिषिच्यमानम्, श्रम-जलविलीनबहलकुष्णागुरुपङ्कातिलककलङ्ककिष्तेन कालिका

प्रकाश्यन्ते श्रनेनेति स्वरव्याकरणः स चासौ विवेकः, स्वरव्याकरण्-ज्ञानं तेन विशारदं चतुरं, यथा तथा । श्रवणति - श्रवणयोः, कर्णयोः, यो अवतंसो तयोः मधुकरकुलानि, भृङ्गसमृहाः, तेपां कलकणितं, मधुररिातम्, त्र्याकर्णयतम् । उत्फुल्लेति — उत्फुल्लमालतीमयेन, विकसितमालतीगुम्फितेन, राजलच्म्याः, नृपश्चियः, कचप्रहः, केशा-कर्पणं तस्य या लीला, विलासः तया त्र्यालग्नं, संसक्तं तेन। नखाते-नखानां, ज्योतस्नाः, प्रभाः, नासां वलयं, भण्डलं तेनेव । मुखेति— मुखं, शशीव, चन्द्र इव तस्य परिवेशमण्डलं, परिधिमण्डलं तेन । मुण्डमालागुगोन, शिरोमालया, परिकल्पितः, परिग्छः, केशान्तः यस्य तथोक्तम् । शिखग्डेतिः -शिखण्डाभरगां, चूडालंकारः तस्माद् भवतीति तथोक्तेन । मुक्तेति - मुक्ताफलानां, त्र्यालोकेन, प्रभया । मरकतमग्गीनां, किरगाकलापेन, प्रभाजालेन । अन्योऽन्यस्य, संवलनं, मिश्रयां तेन वृज्ञिनं, कलुपम्, तेन । प्रयागेति— प्रयागे, गङ्गायमुनासरस्वतीसंगमे, या प्रवाहवेशिका, तिस्रणां, स्रोतोरुपावेग्गी तस्याः वारि तेनव । श्रमिसिक्च-मानं, क्रियमाण्भिपेकमित्यर्थः । श्रमेति—श्रम जल इत्यारभ्य वारविलासिनीभिः, विलप्यमान सौभाग्यमिव सर्वतः इत्यनेनान्वयः।

प्रार्थनाचाटुचतुरचरणपतनशतश्यामिकाकिणेनेव नीलायमान-ललाटलेखाभिः चुभितमानसोद्गतैरुत्कलिकाकलापैरिव हारै-रुत्तसद्भिरवप्टभ्यमानाभिविलासवल्गनचटुलैर्भूलताकल्पैरीर्ष्यया श्रियमिव तर्जयन्तीभिरायामिभिः श्वसितैरविरलपरिमलैर्मलय-मारुतमयैः पाशैरिवाकर्पन्तीभिविकटबकुलावलीवराटकवेष्टित-मुखैर्भृहांद्गेः स्तनकलशैः, स्वदारसंतोपरसमिवाशेषमुद्धरन्तीभिः,

अमजलन, घर्मेण, विलीनं लुप्तं, वह्लं, घनं, यत् ऋष्ण।गुरुपङ्कतिलकं, कालागुरुद्रवरचितं तिलकं तस्य कलङ्कं, चिह्नम् तेन कल्पितः रचितः, तेन । कालिम्ना, श्यामलत्वेन । प्रार्थनेति - प्रार्थनायां, चादुचतुरं, सविलासं यानि चरण्पतनानि, तेषां शतेन, या श्याभिका, कालिमा, तस्याः कियाः चिह्नविशेषः तेन । नीलेति नीलायमाना, नीले-वाचरन्तीः, ललाटलेखाः, भाललेखाः, यासां ताभिः । चभितेति — ज्ञुभितानि, इष्टलाभविरहात् चोभंगतानि यानि मानसानि, चेयोसि, तेभ्यः उद्गताः, उत्थिताः तैः, ज्ञुभितं, वातांवशात् चंललं यत् मानसं, तदाख्यं सरः,नस्मात् उद्गतैः-इति च । उत्कत्तिकाकलापैरिव, रग्रारगि-कासमृहैरिव वीचिसमृहैरिव च, उल्लसद्भिः राजमानैः हारैः, अवष्टभ्य-मानाभिः,स्तब्धीकियमाणाभिः, । विळासेति-विलासेन, विश्रमेण,यद् वल्गनं, चलनं तत्र चटुलाः, पटवः तैः । भूलताकल्पैः, लतासदृशीभिः (भ्रुभिरित्यर्थः) श्रियमिव राजलत्त्मीमिव। तर्जयन्तीभिः। श्रायामिभिः, दीर्चै:, श्वसितै:, निश्वासै: ऋविरतः, सान्द्रः, परिमतः, सुगन्यः येषां तैः, मलयमारुतमयैः, दृत्तगानिलनिर्मितैः, पाशैरिव, रज्जुभिरिव, त्राकर्षयन्तीभिः, वशीकुर्वतीभिः विकटेति—विकटा स्थूला या वकुला-वली, वकुलमाला सेव वराटकः, रज्जुः (वराटकः पद्मवीजकोपे रज्जोकपर्वेक इति मेदिनी ) तेन वेष्टितं, मुखं येषां तैः । बृहद्भिः, कुचोत्कम्पिकाविचारप्रेङ्कितानां हारतरस्त्रमणीनां रिश्मभिराकृष्य हृदयमिव हटात्प्रवेशयन्तीभिः, प्रभामुचामाभरणमणीनां मयूखैः प्रसारितैर्वहुभिरिव बाहुभिरालिङ्गन्तीभिर्जृम्भानुबन्धबन्धुरवद्-नारविन्दावरणीकृतैरुत्तानैः करिकसल्यैः सरभसप्रधावितानि मानसानीव निरुन्धतीभिर्मदान्धमधुकरकुलकीर्यमाणकर्णकुसुमर-जःकणकृणितकोणानि कुसुमशरशरनिकरप्रहारमूर्च्छामुकुलिता-

महद्भिः, स्तनकलसैः, पयोधरकुम्भैः । स्वदारेति—स्वस्य दाराः, पन्नयः, ताषु सन्तोषः, एव रसः, रागः तमिव । त्र्रशेषं, समग्रं, उद्ध-रन्तीभिः, उत्तोलयन्तीभिः, रक्तीकुर्वन्तीभिरितिभावः। कुचेति-कुचानां, स्तनानां, उत्कम्पिका, (कम्पविशेषः) एव विकारः, श्रन्यथा-भावः, तेन प्रेङ्कितानां, चालितानाम्। हारतरत्तमग्गीनां, हारेषु तरलाः, भास्वराः, ये मण्यः, रत्नानि तेषां, रश्मिभः, किरणैः । प्रभामुचां, कान्तिवर्षिणां, त्राभरणमणीनां, भूषण्रतानाम्, मयूरवैः, किरणैः। श्रालिङ्गन्तीभिः, श्राश्लिप्यन्तीभिः । जुम्भेति – जुम्भाणां, कामजनि-तानुभावविशेषाणां, ऋनुबन्धेन, सातत्येन, बन्धुराणि, रम्याणि, बदनानि, मुखानि, ऋरविन्दानीव, पद्मानीव, तेषां ऋावरगाीकृताः, त्रावर्णत्वेनोद्धृताः तैः । उत्तानैः, उद्धवीकृतैः, करिकसलयैः, सरभ-सप्रधावितानि, सवेगप्रचलितानि, निरुत्धंतीभिः, अवरोधं कुर्वेतीभिः। मदेति—मदेन, श्रन्थानि यानि, मधुकरकुलानि तैः क्रियमाणानि, चिप्यमागानि, यानि, कर्णकुसुमानां, रजांसि, परागाः, तेषां कर्णैः, लेशै:, कृष्णिताः, संकोचिताः, कोषाः, एकदेशाः येषां तानि । श्रत-एव-कुसुमेति—कुसुमशरस्य, कामस्य, शरनिकराणां, बाणसमू-हानां, प्रहारैः या मूर्च्छां, मोहः तया, मुकुलितानि इव, लोचनानि, नयनानि, चतुरं । संचारयन्तीभिः, प्रसारयन्तीभिः, श्रन्योऽन्य-

नीव छोचनानि चतुरं संचारयन्तीभिरन्योन्यमत्सरादाविर्भ-चद्गङ्गरभुकुटिविभ्रमित्तप्तैः कटात्तैः कर्णेन्दीवराणीव ताडयन्ती-भिरिनमेषदर्शनसुखरसराशि मन्धिरितपद्मणा चत्तुषा पीतिमिव कोमलकपोलपालीप्रतिविम्बितं वहन्तीभिरिभलाषलीलानिन् मित्तिस्मितैश्चन्द्रोदयानिव मदनसाहायकाय संपादयन्तीमिरङ्ग-भद्भवलनान्योन्यघटितोत्तानकरवेणिकाभिः स्फुटनमुखराङ्गलीका-एडकुएडलीकियमाणनखदीधितिनिभेनाकिंचित्करकार्मुकाणीव

मत्सरादिव, परस्परेर्प्यादिव । आविर्भवदिति आविर्भवन्तः, उत्पद्यमानाः, भंगुराः, कुटिलाः, ये भ्रुकुटिविश्रमाः तैः चिप्ताः तैः । कर्गोन्दीवराग्गीव, अवग्गनीलोत्पलानीव, ताडयन्तीभिः । अनिमे-पेति-त्रानिमेपं, निर्निमेषं, दर्शनं, त्रावलोकनं, तेन सुखरसानां, म् सुखस्वादानां, रसः, जलं तस्य राशिः यस्मिन् तं । मन्थरेति─ मन्थरितानि, निश्चलानि, पचमाणि, लोमानि यस्य तेन चत्तुषा, नेत्रेरा, पीतमिव। कोमलेति-कोमलायां, कपोलपाल्यां, कपोलतले, प्रतिविम्बितं, प्रतिफलितं, वहन्तीभिः, धारयन्तीभिः। श्रभिलापेति— श्रमिलापस्य, कामतृष्याायाः, लीलया, विलासेन, निर्निमित्तानि, हेतुरहितानि, स्मितानि, मृदुह्सितानि तैः। मद्नसहायकाय, काम-सहायकाय, सम्पादयन्तीभिः, कुर्वन्तीभिः। श्रंगेति श्रङ्गानां, भङ्ग-वलनेन, जुम्भादिजनितभिङ्गिविशेषेगा, श्रान्योऽन्येन, परस्परेगा, घटिताः, कृताः, उत्तानाः या करवेणिकाः, परस्परानुबन्धेन स्थितयोः, करयोः श्रंगुलिविन्यासविशेषाः, ताभिः । स्फुटनेन, त्रुटनेन, मुखराः, सशब्दाः, ये, ऋंगुलयः, एव कारुडाः, शाखाविशेषाः, तैः कुरुडलीक्रिय-<sup>¶</sup>माणानां, नखानां, दीधितिनिव**द्याः, मयूरवनिचयाः ते**षां, <mark>निभः,</mark> तेन । श्रकिञ्चित्कराणि, कामस्य, मदनस्य, कार्मुकाणि, धन्रंषि तानीव,

रुपा भञ्जतीभिर्वारिवलासिनीभिर्विलुप्यमानसौभाग्यमिव सर्व-तः स्पर्शस्वित्रवेपमानकरिक्सलयगलितचरणारिविन्दां चरणग्रा-हिणीं विहस्य कोणेन लोलालसं शिरिस ताडयन्तम्, अनवर-तकरकितकोणतया चात्मनः प्रियां वीणामिव श्रियमपि शिक्त-यन्तम्, निःस्नेह इति धनैरनाश्रयणीय इति दोषैनिंग्रहरुचिरि-तोन्द्रियेदुरुपसर्प इति कलिना नीसर इति व्यसनैर्भीरुरित्यय-शसा दुर्ग्रहचिच्चृत्तिरितिचिच्तभुवा स्त्रीपर इति सरस्वत्या, पणढ इति परकलत्रैः काष्टामुनिरित यतिभिर्धूर्त इति वेश्याभि-

रुपा, कोपंन, भञ्जतीभिः, खरुडयन्तीभिः। चिलुप्यमानेति-विलु-प्यमानं, ह्रियमागां, सोभाग्यं, वाल्लभ्यं, यस्य तथोक्तमिव। स्पराति— स्पर्शेन, स्वित्र , घम्मक्तिः, वेपमानः, कम्पमानश्च, यः करकिसलयः, तस्मात् गलितं, च्यतं, चरणारविन्दं, पादपदां, यस्याः, तथोक्ताम्। चरणवाहिणीं, चरणसंविनीम् , कोर्णेन, वीर्णावादनद्रण्डेन । लीला-ऽत्तसं, विलासमन्थरम् । ताडयन्तं, प्रहरन्तम् । स्ननवरतेति-स्नन-वरतं, निरंतरं, करकलितः, हस्तगृहीतः, कोग्गो येन तथाविधः तस्य-भावः तत्ता तया, प्रियां, शिच्चयन्तं, श्रभ्यस्यन्तं, निःस्नेहः, स्नेह-शून्यः । श्रनाश्रयणीयः, श्रसेवनीयः, निप्रहे, वशीकरणे, रुचिः, त्र्यभिलाषो यस्य सः । दुरुपसर्पः, दुर्द्धर्षः । कलिना, चतुर्थयुगेन । नीररसः, निरनुरागः । व्यसनैः, मृगयादिभिः, भीरः भयशीलः, त्र्यपयशसा, त्र्रपकीर्त्याः । दुर्ब्रहेति—दुर्घहा, दुराकर्षा, चित्तवृ-त्तिर्यस्य तथोकः । चित्तभुवा, कामेन स्त्रीपरः, स्त्रेगः । शठः, धूर्तः, (वञ्चक इत्यर्थः) काष्टामुनिः, उत्कर्षवान् तपसः, ( काष्टोत्कर्षे स्थितौ दिशि इत्यमरः ) नेयः, परवशः, कर्म्भकरः, भृत्यः । सुसहायः, सुष्ठु-सहायसम्पन्नः, शत्रुयोधैः, शत्रुवीरैः, श्रनेकधा, वहुधा, गृद्यमागां,

नेंय इति सुहृद्धिः कर्मकर इति विष्ठैः सुसहाय इति शत्रुयोधेरैक-मप्यनेकथा गृह्यमाण्म् , शन्तनोर्महावाहिनीपतिम् , भीष्माज्ञि-तकाशिनम् , द्रोणाञ्चापलालसम् , गुरुपुत्रादमोघमार्गण्म् , कर्णान्मित्रप्रियम् ,गुधिष्ठिराद्वहुत्तमम् ,भीमादनेकनागायुतबलम् , धनंजयान्महाभारतरणयोग्यम् ,कारणमिव कृतयुगस्य, बीजमिव

ज्ञायमानम् । शन्तनोः, तदाख्यात् कुरुवंशीयराजात् । महेति — महत्यः, वाहिन्यः, चम्वः, तासां, पतिः, तम्, (पन्ने) शन्तनुस्तु महती एकैव वाहिनी, गङ्गा, तस्याः पतिरिति व्यतिरेकः । भीष्मात् , भीष्म-मपेच्यजितकाशी, जितेन, जयेन, काशते, राजते, इति तथोक्तं तं भोष्मेनाऽपि काशिराजदृहितृस्वयंवरे काशीजिता । द्रोग्गात्, धनुर्वे-दाचार्यात्, चापे, धनुषि लालसा, यस्य तम्। वा च इति समुचये, अपगता लालसा यस्य तम्। वा चापले, चपल कर्मणि, अलसः, मन्दञ्यापारः तं, द्रोगास्तु द्रञ्यलोभताया द्रपदेन सह विरोधं कृतवान् पुनरयं न इति व्यतिरंकः । गुरुपुत्रात् , द्रोगाचार्यतनयात् , (त्रश्वस्था-मात् ) श्रमोघाः, श्रव्यर्थाः, मार्गगाः, शराः यस्य तथोक्तम् । कर्गात् , राधेयात् , मित्रप्रियं, मित्रस्य, सूर्यस्य, सुहृदा**ञ्च**, प्रियः, तम् । युधिष्ठि-रात्, धर्मराजात्, बहुत्तमं, त्तमागुर्णबहुलं (पत्ते) वह्वी, त्तमा, पृथ्वी यस्य तथोक्तम्। भीमात् । स्रनेकेति--श्रनेकनागायुतवत्, नास्ति एकः श्रेष्टः येभ्यः ते च ते नागाः, हस्तिनः तेषा मायुतवत् महाबल हस्तिसमृहवत् बलं सामर्थ्यम् । (पत्ते ) श्रनेकानि, बहूनि नागानां, हस्तिनां त्रायुतानि, दशसहस्राणि, बलानि सैन्यानि यस्य तथोक्तम् । धनञ्जयात् , ऋर्जुनात् । महाभारते यो रगाः, संप्रामः (पत्ते) 🕈 महान् भारः ( पृथिव्या इति भावः ) तस्य तरगां वहनम्। बीजम्, त्रांकुरोत्पादकचुद्रवस्तुविशेषः । विव्धधर्सास्य, देवसृष्टेः । उत्पत्ति-

विबुधसर्गस्य,उत्पत्तिद्वीपिमव दर्पस्य, पकागारिमव करुणायाः, प्रातिवेशिकमिव पुरुषोत्तमस्य, खनिपर्वतमिव पराक्रमस्य, सर्वविद्यासंगीतगृहमिव सरस्वत्याः,द्वितीयामृतमथनिद्वसिमव लक्ष्मीसमुत्थानस्य बलदर्शनिमव वैद्य्यस्य, एकस्थानिमव स्थितीनाम, सर्वस्वकथनिमव कान्तेः, अपवर्गमिव रूपपरमाणुसर्गस्य, सकलदुश्चरितप्रायश्चित्तमिव राज्यस्य, सर्वबलसंदोहावस्कन्दिमिव कन्दर्पस्य, उपायमिव पुरंदरदर्शनस्य, आवर्तनिमव धर्मस्य, कन्यान्तःपुरिमव कलानाम्, परमप्राण्मिव सौभाग्यस्य, राजसर्गसमाप्त्यवभृथस्नानिद्वसिमव सर्वप्रजापतीनाम्, गम्भीरं च, प्रसन्नं च, बासजननं च, रमणीयं च, कौतुकजननं च, पुर्यं च, चक्रवर्तिनं हर्षमद्रात्तीत्।

द्वीपिमव, प्रभवस्थानिमव । एकागारिमव, श्रद्वितीयं गृह्मिव । प्रातिवेशकिमव, प्रतिविश्वमिव, पुरुषोत्तमस्य, विप्याः । खनि-पर्वतिमव, श्राकरिगिरिमिव, सर्वविद्यासंगीतगृह्भिव, सर्वशास्त्र-संगीतालयिमवः द्वितीयासृतमथनिद्वसिमव, श्रपरपीयूषोत्तलनवासरिमव । वलदर्शिमव, शक्त्युत्कर्षप्रदर्शनिमव, एकस्थानिमव, श्रद्वितीयगृह्मिव, सर्वस्वकथनिमव, निधिभूत्रत्विव्ञापनिमव, साफल्यिमव सर्वति सर्वेषां, बलानां, सेन्यानां सामर्थ्यानां वा, सन्दोहः, सङ्घः तस्य, श्रवस्कन्दः, समावेशः,तिमव । पुरन्दर द्शीनस्य,इन्द्रसाचात्का-रस्य, श्रावर्त्तनिव, श्रावर्त्तमिव, कलानां, नृत्यगीतानां चतुःषष्टि विधानां कामविद्यानां, परमप्रायमिव, परमं बलिमव । राजसर्गेति—राझां सर्गः-सृष्टिः, तस्य समाप्तिः, श्रवसानं सेव श्रव-भृतस्नानं, दिचान्तस्नानं, तस्य दिवसः, तिमव । सर्वप्रजापतीनां, गम्भीरेति—गम्भीरस्त्र प्रसन्नं, च श्रासजननक्त्र रमणीयं, कौतुक-

द्यु चातुगृहीत इव निगृहीत इव साभिलाष इव, तृप्त इव, रोमाञ्चमुचा मुखेन मुञ्जानन्दवाष्पवारिविन्दून्दूरादेव विस्म-यस्मेरः समिचन्तयत् 'सोऽयं सुजन्मा, सुगृहीतनामा, तेजसां राशिः, चतुरुद्धिकेदारकुटुम्बी, भोक्ता ब्रह्मस्तम्भफलस्य, सकलादिराजचरितजयज्येष्टमल्लो देवः परमेश्वरो हर्षः । पतेन च खलु राजन्वती पृथ्वी । नास्य हरेरिच वृष्विरोधीनि, बालच-रितानि, न पशुपतेरिच दत्तोद्वेगकारीएयैश्वर्यविलसितानि,

जननं, त्राश्चर्योत्पादकञ्च चक्रवर्तिनं, सार्वभौमम्।

त्रानुगृहीत इव, त्रानुकस्पित इव, निगृहीत इव, त्राभिभूत इव, ( तेजसेतिभावः ) साभिलाष इव, समुत्सुक इव, तृष्त इव,चरितार्थ इव, द्रष्टव्यवस्तुदर्शनेन इति हृद्यम् , ऋथ च यः ऋनुगृहीत, स एव निगृ-हीतः यः साभिलाषः सः कथं तृप्तः-इति विरोधोऽपि अत्रप्रगटः। रोमाञ्चमुचा, पुलकितेन, मुञ्चन् , त्यजन् , विस्मयस्मेरः विस्मयेन, चमत्कारंगा, स्मेरः (विकसितचित्त इत्यर्थः) चतुरुदर्धाति—चतुर्गां, उद्धीनां, सागराणां, यत्केदारं, चेत्रम्, तदेव कुटुम्बं, पोप्यवर्गः, त्र्यस्येति तथोक्तः, भोक्ता, ऋधिकारी, ब्रह्मस्तम्भफलस्य, ब्रह्माएडर्वात्त-सर्वरत्नजातस्य । सकलोति—सकलाः, समस्ताः, त्रादिराजानः, मन्वा-दयः,तेषां, चरितानि, तेषां जये, पराभवविषये, जेष्टमङ्कः, प्रधानवीरः । परमेश्वरः, सम्राट् । इराजन्वती, प्रशस्तराजशालिनी । अस्य, हर्षस्य, हरेहिन, क्रुप्पस्सेन, वृपनिरोधीनि, वृषः,धर्मः, (पत्ते) वृषरूपोऽष्टासुरः, तस्य निरोधीनि । बालचरितानि, शैशवकीडितानि । पशुपतेरिव, हरस्येव । दत्तेति—दत्ताणां, कुशलानां, जनानामितिभावः । (पत्ते ) ं दत्तस्य प्रजापतेः, ( स्वश्वशुरस्येतिभावः ) उद्वेगकारीणि, भीषणानि, ऐश्वर्यविलासितानि, श्रधिपत्यचेष्टितानि, (पत्ते) ईश्वरधर्माः (श्रिग्गिमा-

न शतकतोरिव गोत्रिघनाशिपशुनाः प्रयादाः, न यमस्येवातिब-ल्लभानि दग्डग्रहणानि, न वरुणस्येघ निस्त्रिशन्नाहसहस्ररित्ता रत्नालयाः,न धनदस्येव निष्फलाः सिन्निधिलाभाः,न जिनस्येघा-र्थवादश्रस्यानि दर्शनानि, न चन्द्रमस इव बहुलदोषोपहताः श्रियः। चित्रमिदमत्यमरं राजत्वम्।श्रपि चास्य त्यागस्यार्थिनः,

दय इत्यर्थः) तेषां विलासितानि, विजृम्भितानि । शतकतोरिव, इन्द्र-स्येव, गोत्रविनाशिपशुना। गोत्रागां, वंशानां (पच्चे) पर्वतानां, विनाशपिशुनाः, विध्वंससूचकाः । प्रवादाः, जनश्रुतयः । यमस्येव, श्रातिवल्लभानि, श्रातित्रियाणि, दण्डप्रह्णानि, करप्रह्णानि, ( पत्ते ) शासनयप्टेः प्रह्णानि । वरुणस्येव, निस्त्रिशेति—निस्त्रिशप्रहाणां, खङ्गधारिग्णां सहस्रेः (पत्ते) निस्त्रिशाः, निष्ठुराः, शहाः, जलजीवभेदाः तेषां सहस्रैः रचिताः, पालिताः, रत्नालयाः, रत्नभाण्डागाराणि (पच्चे ) समुद्राः-इत्यर्थः । धनद्स्येव, कुवेरस्येव । न निष्फलाः, न श्रर्थाद्-फलप्राप्तिविरहिताः ( पत्ते ) दानादिव्ययाभावात् , निष्प्रयोजनाः । सिन्निधिलाभाः, समीपप्राप्तयः ( पत्ते ) सन्तः, उत्कृष्टाः, निधयः, पद्म-शङ्काद्यः, तेषां लाभाः । जिनस्येव, बुद्धदेवस्येव । अर्थवादेति— श्रर्थानां, धनानां, वादः, मयेदं ( लब्धमिति ) तेन शून्यानि, रहितानि दर्शनानि, अवलोकनानि, (पत्ते) अर्थवादः, अतिवादः, तेन शून्यानि द्शेनानि, महायानादीनि (तदीयशास्त्राणीतिभावः) चन्द्रमसः-इव, चन्द्रस्येव। बहुलेति-बहुलाः, श्रनेके, दोषाः (रागादय इत्यर्थः) तैरुपहताः, मलिनीकृता (पत्ते ) बहुलस्य, कृष्णपत्तस्य, दोषाभिः, रजनीभिः, उपहताः, नाशिताः, श्रियः, समृद्धयः (पत्ते ) शोभाः । श्रात्यमरं, श्रातीवविनश्वरम्। त्यागस्य, दानस्य, प्राप्तो विषयः, (प्रचुरं-स्थानमित्यर्थः) ऋर्थिनः, याचकाः न इति-स्रन्वयः। प्रज्ञायाः, प्रकृष्ट-

प्रश्नायाः शास्त्राणि, कवित्वस्य वाचः, सत्त्वस्य साहसस्थानानि, उत्साहस्य व्यापाराः, कीर्तेदिङ्मुखानि, अनुरागस्य छोकहद्यानि, गुणगणस्य संख्या, कौशलस्य कलाः, न पर्याप्तो विषयः। अस्मिश्च राजनि यतीनां योगपट्टकाः, पुस्तकर्मणां पार्थिववि- प्रहाः, पट्पदानां दानप्रहणकलहाः, वृत्तानां पादच्छेदाः, अष्टा- पदानां चतुरङ्गकलपना, पन्नगानां द्विजगुरुद्वेषाः, वाक्यविदाम- धिकरणविचाराः, इति समुपस्त्य चोपवीनी स्वस्तिशब्द- मकरोत्।

श्रथोत्तरेण नातिदृरे राजधिष्यस्य गजपरिचारको मधुरम-परवक्रमुश्चैरगायत्—

युद्धेः, कवित्वस्य, काव्यरचियतृत्वस्य, सत्वस्य, वलस्य, उत्साहस्य, वलप्रकटनस्य, कीर्तेः, यशसः, श्रनुरागस्य, प्रीतेः, एवं सर्वेः सह प्राप्तीयं विषयः-इति श्रन्वयः । यतीनां, परमहंसानां, (चतुर्थाश्रमिगाा-मितिभावः) योगपट्टकाः । पुस्तकर्मगां, लेप्यकर्मगां । पार्थिवविष्रहाः, मृष्मयशरीराणा नतु राजविरोधाः । षट्पदानः, मधुकरागां, दानं तस्य प्रह्गो कलहाः नतु दत्तधनस्य । वृत्तानां, छन्दसां, पादमेदाः, चरणविरामाः । न पापविशेषे । श्रष्टापदानां, चतुरङ्गफलकानां, चतु-रङ्गकल्पनाः, चत्वारि, श्रङ्गानि तेषां कल्पनाः, पन्नगानां, सपीगां, द्विजगुरुद्वेषाः, द्विजानां, पित्तगां, गुरुः, गरुड, तस्मिन् द्वेषाः न श्राह्मगोषु, गुरुषु च । वाक्यविदां, वाक्यज्ञानां, श्रिधिकरग्विचाराः, श्रिधकारं, प्रजानां परस्परविरोधे धर्मनिर्णयस्थानं, तत्र विचारो न न प्रजाः (सततं कलहायन्तेस्मेतिभावः) श्रत्र परिसंख्याऽलंकारः । समु-पद्धत्य, उपगम्य, उपवीती, (उद्धृतदित्तगाकर इत्यर्थः) उत्तरेगा, उत्तरस्यां दिशि, राजधिष्यस्यस्य, राजमण्डलस्य, गजपरिचारकः,

'करिकलभ! विमुश्च लोलतां चर विनयव्रतमानताननः । मृगपितनखकोटिभङ्गरो गुरुरुपरि समते न तेऽङ्कुशः'॥॥॥ राजा तु तच्छ्रस्त्वा द्य्या च तं गिरिगुहागर्तासहवृंहितगम्भीरेण स्वरेण पूरयन्निव नभोभागमपृच्छत्—'पष स बाणः' इति । 'यथाज्ञापयति देवः । सोऽयम्' इति विज्ञापितो दौवारिकेण । 'न तावदेनमकृतप्रसादः पश्यामि' इति तिर्यङ्नोलध्वलांशुकर्मारां तिरस्कारिणोमिव भ्रमयन्नपाङ्गनीयमानतरलतारकस्याया-मिनीं चत्तुषः प्रभां परिवृत्य प्रेष्टस्य पृष्ठतो निष्ण्णस्य मालवरा-

हस्तिपालकः अपरवकं, तद्यख्यं वृत्तं । किरक्छभेति-किरक्लभ !, हस्तिशावक !, लोलतां, चंचलतां, विमुद्ध, त्यज । आनतं, नम्रम्, आननं, मुखं, यस्य तथाविधःसन् । विनयत्रतं, शिष्टा-चारं, चर, कुरु । मृगपतः, सिंहस्य, नत्वकोटिः, नखात्रः, तद्वत् भंगुरः कुटिलः, गुरुः, महान् , अंकुशः, किर्ताडनदण्डः, ते उपिर न चमते, तव दोषं न सहतं (अनेन अशिष्टानां दण्डियता राजा इति व्यज्यते ) अत्र हि करिकलभमप्रस्तुत विपयमादाय अशिष्टान् जनान् दण्डियता राजा इति प्रस्तुतविषयः प्रतीयते अतः अप्रस्तुनप्रशंसाऽलंकारः ।

गिरीति—गिरिगुहां, पर्वतकन्दरां गतः सिंहः, तस्य वृहितं, गिर्जितं तद्वत् गम्भीरः तेन । नभोभागं, गगनम् । अकृतप्रसादः, नकृतः, प्रसादः, प्रसन्नता येन सः (अप्रसन्न इत्यर्थः) नोलेति—नीलाः, धवलाः, अंशव एव अंशुकाः (स्वार्थेकन्) (पत्ते) तथा वियानि, वस्नािणा, तैः शारा, शवला, ताम् । तिरस्करिणोिमव, जवनिकािमव । अपांगिति—आपाङ्गं, नेत्रपान्तं, नीयमाना, प्रचाल्यमाना, तरला, चपला, तारका, कनीनिका, यस्य तथाविधस्य, चज्जुषः, आयािमर्नीं, प्रसारिणीं, प्रभां, कान्ति अमयन, परिवृत्य प्राङ्मुखीभूय । प्रेष्ठस्य,

जस्नोरकथयत्—'महानयं भुजङ्गः' इति । तूर्णींभावेन त्वग-मितनरेन्द्रवचसि तस्मिन्मूके च राजलोके, मुहुर्तामिव तूर्णीं स्थित्वा बाणो व्यक्षापयत्—'देव, श्रविक्षाततत्त्व इव, श्रश्रद-धान इव, नेय इव, श्रविदितलोकवृत्तान्त इव, च कस्मादेवमा-क्षापयसि । स्वैरिणो विचित्राश्र लोकस्य स्वभावाः प्रवादाश्च । महद्भिन्तु यथार्थदिशिभिर्भवितव्यम् । नार्हसि मामन्यथा संभा-वितुमविशिष्टमिव । ब्राह्मणोऽस्मि जातः सोमपायिनां वंशे वातस्यायनानाम् । यथाकालमुपनयनादयः कृताः संस्काराः । सम्यक्पठितः साङ्गो वेदः । श्रुतानि यथाशक्ति शास्त्राणि । दार-परिश्रहादभ्यागारिकोऽस्मि । का मे भुजङ्गता । लोकद्वयाविरो-

श्रतिप्रियस्य, पृष्ठतः, निषरणस्य, उपविष्टस्य, मालवराजसूनोः, मालवराजपुत्रस्य, भुजङ्ग, विटः, धूर्तः लम्पटो वा (भुजङ्गो विटस्पर्योः "इत्यमरः) तृष्णीभावेन, मौनभावेन । श्रगमितेति—श्रगमिनतम्, श्रबुद्धम्, नरेन्द्रस्य वचः तिस्मन् श्रविज्ञाततत्व इव, श्रनवगमितयथार्थ इव, श्रश्रद्धान इव, श्रविश्वसन्निव, श्रविदितलोकवृन्तान्त-इव, श्रजानितजनचिरत इव । स्वैरिणः—स्वेच्छाचारिणः, लोकस्य, स्वभावाः, मनोवृत्तयः, प्रवादाश्च, विचित्राः, विपमाः । यथार्थदर्शिभिः, तत्वज्ञैः, महद्भिः, गुरुभिः, भवितव्यम् । श्रविशिष्टं, साधारणं, सोमपायिनां, सोमरसपानकर्तृणाम्, वात्स्यायनानाम्, वत्समुनिसन्तती नाम् । यथाकालं, समयानुसारंः, उपनयनादयः, उपनयनं, यज्ञोपवीत श्रादि, मुख्यं येपां ते संस्काराः । श्रंगेनसहितः सांगः, व्याकरणादीनि वेदस्य पडङ्गानि तैः सहितः वेदः । श्रभ्यगारिकः, गृहस्थी । का मे भुजङ्गता, भुजंगता, लम्पटता, विसता वा मे सम का । केचित्तु का मे,मदने भुजंगता,शङ्गारित्वं, श्रपरे, मे मम,का (वास्ता) भुजं, बाहं

धि भिस्तु चापलैः शैशवमश्रन्यमासीत् । श्रत्रानपलापोऽस्मि । श्रनेनैव च गृहीतविप्रतीसारमिय मे हृद्यम् । इदानीं तु सुगत इव शान्तमनसि, मनाविव कर्तरि वर्णाश्रमव्यवस्थानां समवर्तिनीव च साह्माह् गृङ्गाते देवे शासित सप्ताम्बुराशिरशनामशेष-द्वीपमालिनीं महीं क इवाविशङ्कः सर्वव्यसनबन्धोरिवनयस्य मनसाप्यभिनयं कल्पयिष्यति । श्रासतां तावन्मानुष्यकोपेताः । त्वत्प्रभावाद्लयोऽपि भीता इव मधु पिषन्ति । रथाङ्गनामानो-ऽपि लज्जन्त इवाभ्युनुवृत्तव्यसनैः प्रियाणाम् । कपयोऽपि चिकता इव चपलायन्ते । शरारवोऽपि सानुकोशा इव श्वाप-

गता प्राप्तेति (विक्रोक्तिः) लोकेति-लोकयोः, स्वर्गमर्ययोः, तस्य श्रविरोधिनी,श्रविरोधकराणि तैः। चापलैः,चपलकर्मभिः,शेशवं,बाल्यं, श्रशून्यं, श्ररिहतम्। श्रनपलापः, निरपह्नवः। गृहीतेति—गृहीतः, विप्रतीसारः, श्रनुतापो येन तथा भूतिमव। सुगत इव बुद्धदेव इव। मनाविव, वेवश्वते इव। वर्णेति—वर्णानां, ब्राह्मण् चत्रीयवैश्यशूद्राग्णाम्, श्राश्रमाणाम्, ब्रह्मचर्यगृहस्थवानप्रस्थसंन्यासाणाम्। व्यवस्थानां कर्तरि। समोति— समंवर्तते इति समवर्तीं, यमः, तिस्निन्निव। दण्डशृति, दण्डधरे। सप्ताम्बुराशीनां, सप्त श्रम्बुराशयः, सागराः रशना, मेखला यस्याः ताम्। श्रशेषेति—श्रशेषाणां, समस्तानां, द्विपानां, मालिनीं, महीं, पृथ्वीं, शासयित, पालयित, श्रविशंकः, निर्मोकः। सर्वति—सर्वेषां व्यसनानां, दुश्चरितानां, बन्धोः, मित्रस्य, श्रविनयस्य, श्रभिनयं, कल्पयिष्यन्ति, करिष्यति। मानुष्यकोपेताः, मनुष्यस्यभावः, मानुष्यकस्तेनोपेताः। श्रलयः, श्रमराः, श्रभ्यनुवृत्तिव्यसनैः, श्रतिशया शक्तिभः, प्रियाणां, चक्रवाकीणाम्। कपयः, वानराः, चित्रता इव, शिक्कता इव, श्रावताः, चपलाइवाचरन्ति।

दगणाः पिशितानि भुञ्जते । सर्वथा कालेन मां ज्ञास्यति स्वामी स्वयमेव । श्रनपाचीनचित्तवृत्तिप्राहिएयो हि भवन्ति प्रज्ञावतां प्रकृतयः' इत्यभिधाय तृष्णीमभूत् ।

भूपतिरपि 'एवमस्मामिः श्रुतम्' इत्यभिधाय तृष्णीमेवाभ-वत् । संभाषणासनदानादिना तु प्रसादेन नैनमन्वप्रहीत्। केवलममृतवृष्टिभिः स्नपयन्निव स्नेहगर्भेण दृष्टिपातमात्रेणान्त-र्गतां प्रोतिमकथयत् । अस्ताभिलापिणि च लम्बमाने सवितरि विसर्जितराजलोकोऽभ्यन्तरं प्राविशत् । बागोऽपि निर्गत्य धौतारकृटकोमलातपत्विपि निर्वाति वासरे, अस्ताचलकृटिक-रीटे निचुलमञ्जरीमांसि तेजांसि मुञ्जति वियन्मुचि मरीविमा-शराखः, हिं,त्राः, श्वापर्गगाः, व्यावसमृहाः, सद्याः, पिशितानि, मांसानि । सानुकोशाः । अनपाचनेति — अनपाचिनां, अविपरीताम् , चित्तर्वृत्ति, गृह्णन्ति इति तथाभूता । सम्भाषणिति—संभाषणां, संलापः, त्रासनदानञ्च त्रादिर्यस्य तथोकंन, प्रसादेन, त्रनुप्रहेगा, त्रान्वप्रहीत्, श्रनुचकम्पं, स्नपयन्निव, श्रभिषिञ्चन्निव । श्रस्ताभिलापिणि, श्रस्ता-चल गमनोद्यते, लम्बमाने, पश्चिमां दिशमवतरित, विशक्तितराजलोकः, स्वस्थानगमनाय, त्यक्तनृपमण्डलः । बागोऽपि निवासस्थानमगादिति दरेगान्वयः। धौतंति -धौतं, निर्मलं, यत् त्रारकृटं, पित्तलं तद्वत् कोमलाः, त्रातपस्य, त्विषः, प्रभाः, यस्य तादृशे । निर्वाति—त्राव-सानं प्राप्ते दिवसे, दिने । श्रस्ताचलेति—श्रस्ताचलस्य, श्रस्तिगरेः, कृदं, शृङ्गं ( कृदोऽस्त्री शिखरं शृङ्गं "इत्यमरः ) तस्यिकरीटं, मुकुटं तस्मिन् । निचुलेति-निचुलस्य, स्थलवेतस्य, इज्जलवृतस्य ( निच-🎙 लोऽम्बुजइज्जलः "इत्यमरः ) मञ्जरी, नूतनवल्लरी तस्याः भास इव भासः, कान्त्यः येषां तथावियानि तेजांसि, किरणान् , मुञ्जति, विक-

लिनि रोमन्थमन्थरकुरङ्गकुटम्बाध्यास्यमानम्रदिष्टगौष्ठीन पृष्टास्वरण्यस्थलीषु, शोकाकुलकोककामिनीकृजितकरुणासु, तरंगिणीतटीषु, वासविटपोपविष्टवाचाटचटकचकवालेष्वाल-वालावर्जितसेकजलकुटेषु निष्कुटेषु, दिवसविद्वतिप्रत्यागतं प्रस्नुतस्तनं स्तनं यये भ्रयति भ्रेनुवर्गमुद्रतत्तीरं चृधिततर्णकवाते, कमणे चास्तभराभरभातुभुनीपूरमावित इव लोहितायमानम-

रति । वियन्मुञ्जति, गगनपरित्यागिनि । मरीचिमालिनि सूर्ये । रोमन्थेति रोमन्थेन, उद्गीर्यचर्वगोन मन्थराः, ऋलसाः, कुरङ्गागाां, हरिगानां, कुटुम्बाः, वर्गाः, तैः ऋध्यास्यमानम्, ऋधिष्ठीयमानम्, त्रातएव म्रदिष्टम् , त्रातिमृदुकोमलं वा, गौष्टीनं, कृतगोष्ठं, तस्य पृष्ठं, उपरिभागम् , यासां तासु, ऋरण्यस्थलीषु, वनभूमियु । शोकेति— शोकाकुलानां, को ककामिनीनां, चक्रवाकीगां कृजितैः, करुगाः कारुएयजनन्यः, तासु तरङ्गिग्गीतटीषु, नदीतीरेषु । वासेति – वास विटपेपु, त्राश्रयवृत्तशाखासु, उपविष्टं वाच टानां, रवतां चटकानां, पिच्चाम्, चक्रवालं, मण्डलं येषु ताहरोषु । आलेति— त्र्यालवालानि, तरुतलेषु, मण्डलाकारेण रचिना जलाधारविशेषाः तेषु, श्रावर्जितानि, रचितानि, सेकजलकुटानि, सेचनार्थे जलघटाः येषु तथा भूतेषु, निष्कुटेषु गृहारामेषु। दिवसेति—दिवसे विहृतिः, विहारः तस्याप्रत्यागतं, प्रतिनिवृत्तं, प्रस्तुतस्तनं, प्रस्तुताः, ज्ञरिताः, स्तनाः यस्य तथोक्तम् । धेनुवर्गं, गोयृथं स्तनंधये, स्तनपायिनि । उद्गतेति —उद्गतेन, उच्छलितेन, चीरेगा, दुग्धेन, चुभितं, व्यस्तं, तर्णकानां, वत्सानां (सद्योजातस्तुतर्णकः'' इति 'श्रमरः') ब्रातं, समृदः, तस्मिन् । धयति, पित्रति । श्रस्तेति —श्रस्तधराधरः, श्रम्ताचलः, तत्र ये धातवः, गैरिक मनः शिलादयः तेषु या धुन्यः,

हिंस मज्जित संध्यासिन्धुपानपात्रे पातंगे मण्डले, कमण्डलुज-स्म स्मान्य करणेषु चैत्यप्रणतिपरेषु, पाराशिषु, यक्षपात्रपवित्र पाणौप्रकीर्णबर्हिष्युत्तेजिस जातवेदिस,हर्वीषि वषट्कुर्वति याय-जूकजने, निद्राविद्राणद्रोणकुरुकालिलकुरुायेषु, कापेयविकरूक-पिकुलेष्वारामतरुषु, निर्जिगमियति जग्त्तरकोटरकुटीकुटुम्बिनि

तस्संसृष्टा निर्फरिण्यः तासां पृरैः,प्रवाहैः सावितं सिक्तं इव। छोहितेति — लोहितायमानानि, रक्तायमानानि, महांसि, तेजांनि यस्य तथोकं। मजाति, तिरोभवति । सन्ध्येति—सन्ध्या एव सिन्धुः, नदी तस्याः पानपात्रं, जलपात्रं, तस्मिन् । पानंगं, पतंगः सूर्यः तस्य इदं तस्मिन् । कमग्डिखाते - कमण्डलुः, यतीनां जलपात्रं, तस्य जलेन शुचयः, पवित्राः, शयाः, कराः, चरगाश्च येषां तेषु । चेत्यति—चैत्यं, स्त्राय-🔻 तनविशेषः, तस्य प्रगातिः, ऋभिवन्दनं तत्र पराः तेषु । पाराशस्पि, भिच्चुपु पराशरमनानुवर्त्तपु द्विजेषु वा। यज्ञेनि यज्ञपात्रेः, स्तुक् स्त्रवादिभिः, पवित्राः, पारायो यस्य तथोक्ते, प्रकीर्गावर्हिषि, प्रकीरााः, विकीर्गाः वर्हिपः, कुशाः येन नस्मिन्। स्रोजसि, ज्वलनीत्यर्थः, जातवेद्सि ऋग्नौ ह्वींपि ह्वनीय द्रव्यागि, वपट् कुर्वति । यायजूकजने श्रत्यर्थे यजनशीललोके । निद्रोति—निद्रया, स्वप्नेन, विद्राणानि, श्राकुलानि, द्रोगाकुलानि, काकबृन्दानि तैः कलिलाः, व्याप्ताः, कुलायाः, नीडाः, येषां तेषु । कापेयेति—कपीनामिदं कापेयं तेन विकलानि, कपिकुलानि, बानरवृन्दानि येषु तादशेषु । श्रारामतरुषु, उपवनवृत्तेषु निर्जिगमिषति, गन्तुमिच्छति । जरदिति जरन्तः, जीर्गा:, ये तरवः, वृज्ञाः तेषां कोटराग्णि एव गह्नराणि तान्येव कुट्यः 🕈 ज्ञुद्रगृहाग्रिः, तत्र कुटुम्बी, परिवारवान् तस्मिन् । कौशिककुने, बुलुकवर्गे । मुनि-इति — मुनीनां, करसहस्त्रेः, प्रकीर्गाः, प्रचिप्ताः, कौशिककुले, मुनिकरसहस्त्रप्रकीर्णसंध्यावन्दनोदिबन्दुनिकरे इव दन्तुरयित तारापथस्थली स्थवीयिस तारकानिकुरम्बे, ग्रम्ब-राश्रियिणि शर्वरीशवरीशिखएडे, खएडपरशुकएठकाले कवलयिति बाले ज्योतिःशेषं सांध्यमन्धकारावतारे, तिमिरतर्जननिर्गतासु, दहनप्रविष्टिदनकरकरशाखास्विच स्फुरन्तीषु दीपलेखासु, श्रर-रसंपुटसंकीडनकथितावृत्तििष्वच गोपुरेषु, शयनोपजोषज्यि जरतीकथितकथे शिशयियमाणे शिशुजने, जरन्महिषमसीमली-

सन्ध्यावंदनस्य ये उद्विन्दवः, जलविन्दवः, तेषां निकरेइव दन्तुरयति, दन्तरां कुर्वति । नारापथस्थलीं, नारापथं, ऋन्तरीचमेव स्थली तां, स्थवीयसि, स्थूलतरं । तारकानिकुरम्बे, नारागगो । अम्बराश्रयिगि, त्र्याकाशसंचारिणि । शर्वरीति—शर्वरी, रात्रिः एव शवरी, शवर-नारी, तस्याः शिखण्डः चृडा तस्मिन्। खग्डेति—खण्डपरशुः, शिवः, तस्य करठ इव कालः, श्यामः तस्मिन् कवलयति, ग्रसति । वाले, ऋभिनवे, ज्योतिः शेषं, कान्तिमात्रावशिष्टम् , सान्ध्यं, सन्ध्या-कालीनम्, अन्धकारावनारं, निमिरोद्गमे। तिमिरेति—निमिराणां तमसां तर्जनाय, श्रपसारणाय, निर्गताः, प्रसृताः तासु । दहनेति — दहनम् , विह्नं, प्रविष्टाः, गताः, दिनकरस्य, सूर्यस्य, करशाखाः, कराः, किरगाः एव शाखा करांगुल्यः तासु इव । स्कुरन्तीपु, ज्वल्लन्तीपु, दीपलेखासु, दीपराजिषु । ऋररेति—श्ररराः, कवाटाः, ( कवाटमररं तुल्ये इत्यमरः ) तेषां सम्पुटस्य, युगलस्य, संक्रीडनेन, शब्देन, कथिता सूचिता त्रावृत्तिः, स्रवरोधनं येषां तथा भूतेषु गोपुरेषु, पुर-द्वारेषु (पुरद्वारं तु गोपुरम् इत्यमरः) शयनेति-शयने यः, उपज्ञोषः, मौनभावः, तज्जुषि, तच्छालिनी । जरतीति—जरतीभिः, वृद्धाभिः, कथिता, उक्ता, कथा, यस्य यस्मै वा तादृशे शिशयिषमग्रि, शयित-

मसतमिस जिनतपुर्यजनप्रजागरे विज्ञृम्भमार्थ भीषण्तमे तमी-मुखे, मुखरितवितत्व्यधमुषि वर्षति शरिनकरमनवरतमशेषसं-सारशेमुपीमुपि मकरभ्वजे,रताकल्पारम्भशोभिनि शम्भलीभाषि-तभाजि भजति भूपां भुजिष्याजने,सैरिन्ध्रीबभ्यमानरशनाजालज-ल्पाकजघनासु जनीपु, वशिकविशिखाविहारिणीष्वनन्यजानु-

मिच्छतीत्यर्थः । जरदिति - जरन्तः, महिपा एव मस्यः, लेखनसाध-नानि द्रवद्रव्याणि तद्वत् मलीमसानि, मलिनानि, तमांसि, निमिराणि यस्मिन् तथोके । जनितेति— जनिताः, प्रसृताः, पुण्यअनानां, यज्ञागाां (पुण्यजनो यज्ञे राज्ञसं सज्जनेऽपिच इत्यमरः) प्रजागरः, प्रकर्पेगा जागरगां, यस्मिन् तथोक्ते । विजन्भमागो, त्राविर्भूते, तमी-मुखं, रजनीमुखं (रजनीयामिनीतमी "इत्यमरः) मुखरितेति— मुखरिता, शब्दिता, वितता, विस्तृता, ज्यायस्य तादृशं धनुः यस्य तथा भूते । वर्षति, मुद्धति । शरनिकरं, शरवृन्दम । ऋशेषेति— त्र्रशेषाग्गां, समस्तानां, संसारागाम्, शेमुषी, बुद्धिः (धीः प्रज्ञा रोमुषीमतिः इत्यमरः ) तां मुष्णाति, ऋपहरति तस्मिन् मकरध्वजे, कामे । रतेति-- रतस्य, निधुवनस्य, श्राकल्पाः, वेशरचनाः, तेषां, त्रारम्भेगा, समुद्योगेन, शोभते इति तथोक्ते । शम्भलीति— शम्भल्याः, कुहिन्याः (कुहिनी शम्भली समे इत्यमरः) भाषितं, वचनं, भजते तथा भूते। भुजिप्याजने, दासीजने। सैरिन्ध्रीति—सैरि-न्ध्रीभिः, प्रसाधनोपचाराभिः, नारीभिः । बध्यमानानां, परिधीयमा-नानां, रशनानां, कांब्र्वीनां जालैः, संघैः, जल्पाकं, मुखरं जघनं, कटिपुरोभागो यासां तथा विधासु, जनीषु, वधुषु, ( जनीसीमन्तनी-🎙 वध्वो:—इति मेदिनी ) वशिकोति—वशिकाजनशृन्या ( शन्यन्तु वशिकं इत्यमरः) या विशिखा, रथ्या, तासु विहरन्तीति तथोक्तासु ।

सवासु प्रचितास्वभिसारिकासु, विरलीभवित वरटानां वेश-न्तशायिनीनां मञ्जुनि मञ्जोरिशिञ्जितजडे जिएते, निद्राविद्रा-णद्राघीयसि द्रावयतीव च विरिहृहृदयानि सारसरिसते, भावि वासरबीजाङ्कुरिनकर इव च विकीर्यमाणे जगित प्रदीपप्रकरे निवासस्थानमगात्। श्रकरोच्च चेतिस —'श्रितिद्त्तिणः खलु देवो हर्षः,यदेवमनेकबाललरितचापलोचितकौलीनकोपितोऽपि मनसा स्निह्यत्येव मिय। यद्यहमिज्ञगतः स्याम्, न मे दर्शनेन प्रसादं कुर्यात्। इच्छिति तु मां गुणवन्तम्। उपदिशन्ति हि विनयमनु-

**त्र्यनन्यजे**ति— ऋनन्यजः, मनसिजः, श्रनुस्रवः, श्रनुचरः यासां तथा विधासु । प्रचलितासु, प्रस्थितासु, त्रभिसारिकासु, ( कान्तार्थिनीतु या पति संकतं साऽभिसारिका ) तासु नारीषु, ( विरत्तीभवतीत्यर्थः ) वरटानां, हंसीनां ( हंसस्य योपित वरटा इत्यमरः ) वेशन्तशायिनां, पल्वल शायिनाम्, (वंशन्तः पल्वलश्चाल्पसरः इत्यमरः) मञ्जुनि, मनोज्ञे । मर्आरेति मञ्जीरस्य, नूपुरस्य, शिञ्जितं, रिण्तं तद्वत् जडं, गम्भीरं मन्थरं वा तस्मिन् जल्पितं, रवे। निद्रेति—निद्रया, स्वपनेन, विद्राराम् , त्रालसं, द्राघीयः, त्रातिदीर्घं च तस्मिन् । द्राव-यति, द्रवीकुर्वति इव । सारसरसिते—सारसानां, पत्तिविरोषाग्णाम्, रसितं, रुतं तस्मिन् । भावीति—भाविनः, भविष्यतः, वासरस्य, दिवसस्य बीजांकुरागाां निकर इव सञ्चय इव । विकीर्यमागो, प्रसार्य-मार्गे । श्रतिद्त्तिगाः, श्रत्युदारः । श्रनेकेति श्रनेकेषां, बहूनां, बालचरितानां, चापलं, तस्य उचितं यत् कौलीनम्, ऋपवादः, ( स्यात्कौलीनं लोकवादं - इत्यमरः ) तेन कोपितोऽपि ऋचिगतः, द्वेष्यः ( द्वेप्येत्वाच्चिगतः-इत्यमरः ) उपदिशन्ति, शिच्चयन्ति, विनयं, शिष्टाचारं । ऋनुरूपेति—ऋनुरूपा, योग्या, प्रतिपत्तिः, सम्भावना

\* रूपप्रतिपत्त्युपपादनेन वाचं विनापि भर्तव्यानां स्वामिनः । श्रिपं च धिङ्मां स्वदोषान्ध्रमानसमनाद्रपीडितमेवमितगुण्वित राजन्यथा चान्यथा च चिन्तयन्तम् । सर्वथा करोमि तथा, यथा यथावस्थितं जानाति मामयं कालेन' इत्येवमवधार्य चापरं युनिष्क्रम्य कटकात्सुहृदां बान्ध्रवानां च भवनेषु तावदित्र , यावद्स्य स्वयमेव गृहीतस्वभावः पृथिवीपितः प्रसाद्वानभूत् । श्रविशच पुनरिप नरपितभवनम् । स्वल्पैरेव चाहोभिः परमप्रीतेन प्रसादजन्मनो मानस्य प्रेम्णो विस्नम्भस्य, द्रविण्स्य, नर्मणः प्रभावस्य च परां कोटिमानीयत नरेन्द्रेणेति ।

तस्या उपपादनं, योजनं तेन वाचं विनाऽपि भत्तेव्यानां, प्रतिपाल्यानां, स्वाम्निनः, प्रभवः। स्वदोपेति—स्वदोपेगा, श्रन्धं मानसं यस्य

तथोक्तम् । त्रानादरपीडितम् । त्रानादरेगा, त्रावज्ञाया, पीडितं, त्र्राभिम्तं राजिन, नृपं । निर्गत्य, निष्क्रम्य, कटकात्, शिविरात् । गृहीत-स्वभावः, विदितचरितः, त्र्राहोभिः, दिवसैः, प्रसादजन्मनः, प्रसाद्जनस्य, विश्रासस्य, द्रविगास्य, धनस्य, प्रभावस्य, प्रतापस्य, परां कोटिं, परमोत्कर्षम् ।

इति श्रीबाणभदृकृत हर्षचरित व्याख्यायां ''आञ्जोषिण्यां'' द्वितीय उच्छवासः ।



## श्रीहर्पचित्तम्तृतीय उच्छ्वासः

निजवर्षाहितस्नेहा बहुभक्तजनान्विताः। सुकाला ६व जायन्ते प्रजापुरुयेन भूभुजः॥१॥ साधूनामुपकर्तुं लक्ष्मीं द्रष्टुंविहायसा गन्तुम्। न कुतृहलि कस्य मनश्चरितं च महात्मनां श्रोतुम्॥२॥

निजेति—निजम्, स्वकीयम्, वर्षम्, जम्बुद्वीपदेशः, तस्मिन् आहितः, स्थापितः, स्नेह, प्रेम, यैः ते । जम्बुद्वीपः, सर्ववस्तुसिद्धिद् , (अतःनृपास्तत्र स्नेहं प्रकुर्वन्ति-इति भावः) (पत्ते) वर्षम्, वृष्टिः तेन आहितः, उत्पादितः, स्नेहः,आर्द्रता, यैस्तथा विधाः (सुकालाःहि वर्षया स्नेहं जनयन्ति) बह्वीति—वहवः ये भक्तजना आमात्यप्रभृतयः, तैः, अन्विताः, युक्ताः, (पत्ते) बहूनि, अनन्तानि, भक्तानि शालीगोधूमा-दीनि अन्नानि तेषाम्, जननेन, उत्पादनेन, अन्विता इति भूभुजः, महीपालाः, सुकाला इव सुसमया इव प्रजेति—प्रजाः, प्रकृतयः, तासां पुरुयेन शुभकार्यकर्णान (प्रजायाः पुरुयेनैव सोराज्यं सुकालश्च भवनितिभावः) जायन्तं, प्रादुर्भवन्ति ''जनिप्रादुर्भावे धातोः, लिट, भि, ''ज्ञाजनोर्जा' इत्यनेन जादेशः।' अत्र हि श्रिष्टार्थत्वात् स्रेषः, सुकालैः, सह नृपां साधभ्यादुपमालंकारश्च ॥१॥

साध्रनामिति—कस्य, मनुष्यस्य इति शेषः। मनः, चित्तम्, साधवः, सज्जनास्तेषामुपकर्तुमनुकूलम् वियातुम्, लच्मीं, श्रियम्, द्रष्टुम्, साचात् कर्तुम्, (लब्धुमिति भावः) विहायसा गगनमार्गेण गन्तुं चिलतुम् महात्मनां महांश्चासौ श्रात्मा येषाम्, तेषाम्। महाशयानां चिरतं, चिरत्रम्, त्रोतुम्। कुत्हृत्लि कुत्हृत्लं कौतुकं तदस्ति यस्यतत् न उत्किष्ठतम् (श्रर्थात् सर्वेषां जनानां मनः महाशयानां-

श्रथ कदाचिद्विरिष्ठतबलाहके, चातकातङ्ककारिणि,कणत्का-दम्बे, दर्दुरद्विषि,मयूरमदमुषि,हंसपिथकसार्थसर्वातिथौ, घौता-सिनिभनमसि, भास्वरभास्वति, श्रुचिशशिनि, तरुणतारागणे, गलत्सुनासीरशरासने, सीदत्सौदामनीदाम्नि, दामोदरनिद्रा-द्रुहि, द्रुतवैदूर्यवर्णाणीस, घूर्णमानमिहिकालघुमेघमोघमघवति,

चरितम, श्रोतुम भवतीति रोषः) त्रात्र एकस्य मनसः, उपकर्तुम् गन्तुं श्रोतुम श्रादिभिः, क्रियाभिः, सह सम्बंधत्वात् कारकदीपकालं-कारः।।२।। ऋथेतिक-दाचित् बागो वन्धून् द्रप्टुम् पुनरपि ब्राह्मगाधि-वासमगादिति दुरेगान्वयः । किदृशेशरत्समयारम्भे विरत्तिताः, श्रनि-विड़ाः, बलाहकाः, जलदाः, यस्मिन्, तथा विधे। चातकेति — चातकाः, पत्तिविशेषाः तेषाम् त्रातङ्कः तापः तं करोति, तस्मिन्। कणदिति—कण्-तः, नद्न्तः, काद्म्बाः हंसविशेषाः, यस्मिन् तस्मिन् । दुर्दु रोति—दुर्दु राः, मण्डूकाः, तान् द्वेष्टीति तस्मिन् । मयूरेति - मयूराः, वर्हिण्सतेषाम् मदम्, गर्व, मुज्याति अपनयति तस्मिन् । हंसेति—हंसाः पत्तिविशेषा त एव पथिकाः, पान्थाः, तेषां सार्थाः, समूहाः, त एव सर्वे त्र्यतिथयः यस्य तथा विधे । धौतेति--धौतः, निर्मलीकृतः, यः त्र्यसिः, खङ्गः तन्निमं तत् सदृशं, नभः, त्र्याकाशं, यस्मिन् तथोक्ते । भास्वरेति—भास्वरः, प्रोज्वलः, भास्वान् , सूर्यः यस्मिन् । शुर्चोति—शुन्तिः, विमलः शशी, चन्द्रः, यस्मिन् । तरुणेति — तरुणः, वृद्धिगतः तारागणः, उडुसमृहः, यस्मिन् । गळदिति--गलत्, चयंगतं, सुनासीरस्य, धनुः, चापं यस्मिन्। सीददिति सीदन्ती, नश्यन्ती सौदामनी, विद्युदेव, दाम स्नक् यस्मिन् । दामोदरेति—दामोदरः, विष्णुः, तस्य निद्रा, शयनं, तां दुह्मति हरति यः तस्मिन् । दुतेति--दूतं, गलितं यद् वैदूर्यं, रत्नं

निमीलन्नीपे, निष्कुसुमकुटजे, निर्मुकुलकन्दले, कोमलकमले, मधुस्यन्दीन्दीवरे, कह्लाराह्वादिनि, शेफालिकाशीतलीस्तनिशे, यूथिकामोदिनि, मोदमानकुमुदावदातदशदिशि, सप्तच्छदधूलि-धूसरितसमीरे, स्तबिकतवन्धुरवन्धूकवध्यमान।काएडसंध्ये,

तस्य वर्ण इव वर्णो यस्य तथावियः, ऋर्णः, जलं यस्मिन् तथाविधे । धूर्णमानेति-- घूर्णमानाः, सर्वतो वर्षिताः, याः मिहिकाः, अवश्यायाः, तद्वल्लाववः, जलाभावात्, त्र्यल्पीभूताः, ये मेघाः, पयोमुचः, तैः, मोघः, निष्फलः, मयवा, इन्द्रः, यस्मिन्। निर्माछदिति निर्मीलन्तः, विकसनाभावात्, संकुचन्तः, ये, नीपाः, बालबकुलाः, निष्कुसुमेति--निष्कुसुमाः, पुष्परहिताः, कुटजाः, वृत्तविशेपाः, यस्मिन्। निर्मुकुलेति—निर्मुकुलाः, कुसुमरहिताः, कन्दलाः, तरु-विशेषाः, यस्मिन्। कोमलेति—कोमलानि, मृदृनि, कमलानि, पद्मानि, यस्मिन् । मध्यिति - मधुस्यन्दीति, मकरन्दवर्षीणि, इन्दी-वराणि, नीलोत्पलानि, यस्मिन्। कल्हाराल्हादिनि, सौगन्धिकाप-राख्यश्वेतोत्पलविकासिनी । शेफालिकेति-शेफालिकाभिः, तदाख्य पुष्पविशेषेः, शीतलीकृता, शीरारीकृता, निशारात्रि, यस्मिन् । यृथिकामोदिनी, यृथिकापुष्पोद्भेदंन,त्र्यानन्दकारिगाी । **मोदमानेति**— मोदमानैः, विकसद्भिः, कुमुदैः, केरवैः, श्रवदाताः, सिताः, दशदिशः, यस्मिन् । सप्तच्छेदति सप्तच्छदाः, तरुविशेषाः, तेषां धूलयः परागाः, तैः धूसरिताः, पाण्डुराः, समीराः, श्रनिलाः, यस्मिन्। स्तबकेति - स्तबिकताः, पुञ्जभूताः, ये वन्धुराः, मनोहराः, बन्धूकाः, तरुविशेषाः, तैः, वध्यमानाः, क्रियमाग्गाः, श्रकाण्डे, श्रनवसरे, सन्ध्याः, निशामुखाः, यस्मिन् । नीराजितेति—नीराजिताः, स्मर-यात्रायै सम्पादितनीराजननाम्नीशान्तिः, यैः, तथाविधाः, वाजिनः, गे नोराजितवाजिनि, उदामदन्तिनि, दर्पज्ञीबौज्ञके, ज्ञीयमाण्पङ्क-चक्रवाले, वालपुलिनपङ्गवितिसिन्धुरोधिस, परिणामाश्यानश्या माके, जिनतिपयङ्गमञ्जरीरजिस, कठोरित्रपुषत्विच, कुसुमस्मेर शरे, शरत्समयारम्भे राज्ञः समीपाद्वाणो बन्धून्द्रष्टुं पुनरि तं ब्राह्मणाधिवासमगात्।

समुपलब्धभूपालसंमानातिशयपरितुष्टास्तस्य ज्ञातयः क्षा-घमाना निर्ययुः । क्रमेण च कांश्चिद्भिवादयमानः, कैश्चिद्भिवा-

तुरगाः, यस्मिन् । उद्दामेति—उत्, उत्कटं, दाम, मदं येषां, तं ( चीवा इत्यर्थ: ) दन्तिनः, करिगाः, यस्मिन । दर्पेति दर्पः, श्रहं-कारः, तेन, चीवािंग, उन्मत्तािन, ख्रोत्तकािंग, उत्ताः, विलवर्दाः, तेषां समूहाः त्रोचिकाणि, ( वृपभवृन्दानीतिभावः ) यस्मिन् । र्ज्ञाय-माणेति -पङ्काः, कर्दमाः, तेपां, चकवालं, समूहः, तत्, चीयमाणां, नश्यमानं, यस्मिन् । वालेति - वालपुलिनं, नूतनसैकतं, तत्र पल्लवि-तानि, प्रवाहरूपेण प्रसृतानि, यानि, सिन्धुनां, सरितां, रोधांसि, तटानि, यस्मिन् । जनितेति जनितानि, उत्पन्नानि, प्रियंगूनां, तृगा-भेदानां, मंजर्य, तासां, रजांसि, परागाः, यस्मिन्। कठोरेति--कडोरिनाः, कठिनाः, त्रपूषां, कर्कटीनां, त्वचः, वल्कलानि यस्मिन्। कुसुमेति कुसुमानि, पुष्पािया, तैः, स्मेराः, विकासंगताः, शराः, यस्मिन्। शरत्समयारम्भे, शरत्काले, इति पूर्वेग्गान्वयः। समुप-ळञ्चेति—सम्, सम्यक्, उपलब्धः, प्राप्तः, भूपालात्, महीपालात्, सम्मानातिशयः, श्रादरविशेषः, तेन परितुष्टाः, प्रसन्नाः । तस्य श्रीहर्ष-राज्ञः, ज्ञातयः, बान्धवाः, भ्राघमानाः, श्राघनीयाः, निर्येयुः, निर्ज-ंग्मुः । क्रमेगा च कांचित् श्रमिवाद्यमानः प्रगामं कुर्वन् । कैश्चि-दिति — कैश्चित् , पूजनीयैः, पिताप्रपितामह प्रभृतिभिः, शिरसि.

द्यमानः, कैश्चिच्छिरसि चुम्ब्यमानः, कांश्चिन्मूर्ध्न समाजिन्नन्, कैश्चिदालिङ्गयमानः, कांश्चिदालिङ्गन्, अन्यैराशिषानुगृह्यमाणः, पराननुगृह्वन्, बहुबन्धुमध्यवर्ती परं मुमुदे। संभ्रान्तपरिजनोप-नीतं चासनमासीनेषु भेजे। भजमानश्चार्चादिसत्कारं नितरां ननन्द। प्रीयमाणेन च मनसा सर्वांस्तान्पर्यपृच्छत्—'कचि-देतावतो दिवसान्सुखिनो यूयम्। अप्रत्यूहा वा सम्यक्करणपरि-तोषितद्विजचका कातवी कियते किया। यथावद्विकलमन्त्र-

मस्तके, चुम्बमानः, कृतचुम्बनः, कांश्चित्, बान्धवपुत्राद्दीन्, समा-जिञ्चन्, शिरसि चुम्बयन्, कैश्चित् पूजनीयैः, श्रालिङ्गथमानः, स्पर्शनांगतः, कांचिन्, लघुवान्धवान्, त्र्यालिङ्गयन्,स्पर्शयन्, त्र्यन्यः, त्राशिषा, त्राशीर्वादेन, त्रनुगृह्यमागाः, त्र्रनुगृहीतः । परान् , लघून् , त्र्यनुगृहीतान् , कुर्वन् । वह्वीति—वहवः, त्र्यनेकाः, बान्धवः, ज्ञातयः, तेपां मध्यवर्ती, मध्येस्थितः, परमत्यन्तं, मुमुदं, पिप्रिये । सम्भ्रा-न्तेति—सम्भ्रान्तः, त्वरायुक्तः, परिजनः, परिवारः, तेन, उपनीतं, समीपे त्र्यानितं, यत् , त्र्यासनम् , विष्टरं, समासीनेषु, त्र्यासनान्युप-स्थितेषु, गुरुषु, पुज्येषु, भेजे, सिपेवे, उपविष्टवान् । भजमानेति— त्रर्चाद्यः, पूजाप्रभृतयः, तैः, यत् सत्कारं श्राद्रम् तद् भजमानः, सेवमानः, नितरां श्रत्यर्थे, ननन्द । प्रीयमागोन, प्रसन्नभूतेन, मनसा, तान्, ज्ञातिवर्गान्, सर्वान्, समस्तान्, पर्यप्रच्छत्। किश्चदिति— इष्टप्रश्ने, एतावतोऽद्यावधीन्, दिवसान्, दिनान्, यूयं, सुखिनः, सुखोपेताः । श्रप्रत्यृहाः, निर्विन्नाः । सम्यगिति सम्यकरगोन, शास्त्रविहितेन, परितोषितानि, परितुष्टानि द्विजचकािया, ब्राह्मया-समृहाः, यस्यां, सा. क्रातवी, यागसम्बन्धिनी क्रिया, क्रियते । यथा-वदिति-अविकलानि, वैकल्यरहितानि, मन्त्राणि, भजन्ते, येषु,

भाक्षि भुक्षते हर्वाषि हुतभुजः। यथाकालमधीयते वा बटवः। प्रतिदिनमविच्छिक्षो वा वेदाभ्यासः। किश्चत्स एव चिरंतनो-यक्षविद्याकर्मण्यभियोगः,तान्येव व्याकरणे परस्परस्पर्धानुबन्धा-वन्ध्यदिवसद्शितानि व्याख्यानमण्डलानि, सैव वा पुरा-तनी परित्यक्तान्यकर्तव्या प्रमाणगोष्टी, स एव वा मन्दी इतेतर-शास्त्ररसो मीमांसायामतिरसः। किश्चत्ते एव वाभिनवसुभाषि-तसुधावर्षिणः काव्यालापाः' इति।

तादृशानि, ह्वींपि, ह्व्यानि, हुतभुजः, श्रम्नयः, भुञ्जते । यथेति— वटवः, विगार्थिनः, यथाकालं, निश्चितसमयं, त्राधीयते, त्राध्ययनं. कुर्वते । प्रतिदिनं, नित्यं, वेदाभ्यासः, श्रृतेरध्ययनम्, स्रविच्छिन्नाः, विच्छित्तिरहितः । (भवतीतिशेषः) कश्चित् , स एव, चिरन्तनः, पृर्व-काल्तिनः, श्रभियोगः, यत्रविशेषः । तानि एव व्याकरग्रो, शब्दशास्त्रे । परस्परेति परस्परं, मिथः, तस्य, स्पर्धा, जिगीषा, तस्याः, अनु-बन्धेन, निबन्धेन, श्रवन्ध्याः, फलदातारः, (सर्वदा शास्त्रपठनेन ज्ञान-वर्धिनः-इति भावः) दिवसाः, दिनाः, तेपु, दर्शितानि, प्रकटिकृतानि, व्याख्यानानां, मण्डलानि, समूहाः, स एव, पूर्वसिद्ध एव, पुरातनी, पराचीनानि, परित्यक्तानि, विमुंचितानि, (उपेज्ञितानीत्यर्थः) अकर्त-व्यानि, यस्यां तथाविधा, प्रमाण्गोष्ठी, प्रमाण्सभा, (इतिभावः) स एव, पूर्वसिद्धएव । मन्दीकृतेति—मन्दीकृतः, इतरेषु, शास्त्रेषु, रसो, रागो येन, मिमांसायाम्, स्रातिरसः, श्रनन्तरागः। कचिदिति— प्रश्ने त एव वा । श्रमिनवेति-श्रमिनवानि, नूतनानि, यानि सुभा-षितानि, तेषां सुधा, श्रमृतं तद्, वर्षिगाः, निष्यन्दिनः, काव्यकलापाः, सन्ति न वा (इति शेषः)।

अथेति — श्रथ उक्तप्रश्न करगानन्तरम्, ते ज्ञातयः तं बागाम्,

अथ ते तम् चुः—'तात, संतोषजुषां सततसंनिहितविद्या-विनोदानां वैतानविद्यान्रसहायानां कियन्मात्रं नः छत्यं सुखि-तया सकलभुवनभुजि भुजङ्गराजदेहदीधें रज्ञति ज्ञिति ज्ञितिभुजो भुजे। सर्वथा सुखिन एव वयम्, विशेषेण तु त्विय विमुक्त्कौ सीद्ये परमेश्वरपार्श्ववितिने वेत्रासनमधितिष्ठति। सर्वे च यथाशक्ति यथाविभवं यथाकालं च संपाद्यन्ते विप्रजनोचिताः कियाकलापाः' इत्येवमादिभिरालापैः स्कन्धावारवार्ताभिश्च शैशवातिकान्तकीडानुस्मरणैः पूर्वजकथाभिश्च विनोदितमनास्तैः

ऊचुः। नान, (इति त्र्यादरसूचकम्) सननेति सननं, निरन्तरम्, सन्निहिता, कएठस्थिता, या, विद्या. तया, विनोदः, येपां ते । वैता-नेति—वितानः, यागः, तस्यायं वैतानः, यज्ञसम्बन्धी, स चासौबह्नः, श्रप्निः । तन्मात्रमेव, सहायः, सहायकः, येषां तेषाम् , सन्तोषज्ञुषाम् , सन्तोषधनानाम्, नः, त्र्यस्माकम्, कियन्, मात्रम्, स्रतिलघुः, कृत्यं, कर्नव्यम् त्र्यस्तीतिराषः । सुखितया सुखेन । सकलेति सकलानि, समप्राणि, भुवनानि, लोकाः । भुञ्जते, यः, तस्मिन् । भुजंगेति-भुजङ्गाः, सर्पाः, तेषां, राजा, नृपः, तस्य, देहवन्, कायावन्, दीर्घे, गुरौ, चितिः, पृथ्वी, तां, भुनक्ति, इति तस्य, राज्ञः, श्रीहर्षस्य, भुजे, करे, चितिं, भूमिं, रचति, श्रवतिसति । विशेषेगा, प्रायेगा । विमु-क्तेति- विमुक्तं, कौसीद्यम् , त्र्यालस्यं, येन तस्मिन् । परमेश्वरः, सार्व-भौमः, तस्य पार्श्ववर्तिनि, समीपवर्तिनि, वैत्रासनम्, वेत्रविष्टरम्, श्रिधितिष्ठति, त्विय, सित, वयम , सुखिन, एव । सर्वे, सकलाः, यथा-शक्तिः, यथा सामर्थ्यम् , यथाविभवं, यथाधनं, यथाकालं, यथा समयम् च विप्रजनोचिताः, ब्राह्मग्गोचिताः क्रियाकलापाः, सम्पाद्यन्ते इत्येवं मादिभिः, त्र्रालापैः, स्कन्धावारवार्ताभिः । शैशवाति कान्तेति—

सह सुचिरमतिष्ठत् । उत्थाय च मध्यंदिने यथाकियमाणाः
 स्थितीरकरोत् । भुक्तवन्तं च तं सर्वं ज्ञातयः पर्यवारयन् ।

श्रत्रान्तरे दुक्लणप्टप्रभवे सिखण्डयपाङ्गपाण्डुनी पौण्ड्रे वाससी वसानः स्नानावसानसमये बन्दितया तीर्थमृदा गोरोच-नया च रचिततिलकः, तैलामलकमस्रणितमौलिः, श्रनुश्चचूडा-चुम्बिना निबिड़ेन कुसुमापीड़केन समुद्रासमनः, श्रससृद्रप-युक्तताम्बूलविमलाधरकान्तिः,पकशलाकाञ्जनजनितलोचनस्चिः,

शेशवं, वालभावः, तेनानिकान्तः, त्रानिकमितः या कीडा, केली, तामनु स्मर्णैः । पूर्वेति- पूर्वजनातां, वृद्धानां कथाभिः, च, विनो-दितं मतः,यस्य,सः, तैः, ज्ञातिभिः, सह सुचिरं, बहुकालम्, त्र्यतिष्ठत् । उत्तथाय च यथा कियमागां, यथा सम्पाद्यमानं, स्थितं, वासं, स्रकरोत् , भुक्तवन्तं, खादयन्तं, तं,सर्वे, सक्रलाः, ज्ञातयः,पर्यवारयन्, न्यवारयन्, श्रजान्तरेति—इत्यादी पुस्तकवाचकः, सुदृष्टिः, त्राजगाम इत्यनेना न्वयः । दुक्लपट्टः चोमतन्तुः तस्मात् प्रभवे, जाते शिखण्डी, मयूरः, तस्य ऋपाङ्गः, नयनप्रान्तः, तद्वत् , पारबुनी, श्वेते,पौरङ्गे, पुरुड्रदेशो-द्भवे, वाससी, वस्त्रे वसानः परिधारयन् । स्नानं, मज्जनं तदवसान-समये, ऋन्तकाले, तीर्थमृदा, पुष्यचेत्रमृतिकया, गोरोचना, तन्नाम द्रज्यम्, तया रचितम्, तिलकं येन । तेन, आमलकेन, तच्चूर्र्णनेन, मसृणितः, चिकणीकृतः मौलिः येन सः अनुच्चेति - अनुचा, निम्ना, या चूडा, शिखा, तांचुम्बती, निविड़ेन, सघनेन, कुसुमानाम्। श्रापीड-केन समृहेन समुद्रासमानः, प्रदीप्यमानः, श्रसकृदिति—श्रसकृत्, वारंबारं, उपयुक्तम्, चर्वितं, यत्ताम्बूलं, तेन, विमला, श्रथरस्य, म् कान्तिः, यस्य सः । पकेति — एकं यत् शलाकाञ्जनं तेन जनिता, लोचनयोः, रुचिः यस्य, सः, श्रविरभुक्तः, सद्यः भोजनकृतः। नाति अविरभुक्तः, विनीतामार्यं च वेषं दधानः, पुस्तकवाचकः सुद्द-ष्टिराजगाम । नातिदृरवर्तिन्यां चासन्द्यां निषसाद । स्थित्वा च मुहूर्तिमेव तत्कालापनीतसूत्रवेष्टनमपि नखिकरणैर्मृदुमृणाल-सूत्रैरिव वेष्टितं पुस्तकं पुरोनिहितशरशलाकायन्त्रके निधाय, पृष्टतः सनीडसंनिविष्टाभ्यां मधुकरपारावताभ्यां दत्ते स्थानके प्रामातिकप्रपाठकच्छेदचिह्नीकृतमन्तरपत्रमुत्त्विष्य, गृहीत्वा च कतिपयपत्रलच्वीं कपाटिकाम्, चालयित्रव मसीमलिनान्यच्च-राणि दन्तकान्तिभः, अर्चयित्रव सितकुसुममुक्तिभिर्ग्रन्थम्, मुखसंत्रिहितसरस्वतीनृपुरस्वैरिव गमकैर्मधुरैराचिपन्मनांसि

दूरवर्त्तन्यां, श्रासन्यां, वंत्रनिर्मितासने । ततिति— 'तत्कालं श्रध्य-यनकाले, श्रपनीतं, दूरीकृतं, सूत्रवेष्टनमि, नख किरगुः, करामभा-गमयूखेः मृदुमृगालसूत्रेरिव, कोमलकमलतन्तुभिरिव । पुर-इति— पुरः, श्रयं, निहितं, स्थापितं यन् शरशलाकायन्त्रकम् (पुस्तकारोप-गाय शक्रागाविशेषाणां निर्मितयंत्रकम्) तस्मिन् ,पुस्तकं,निधाय,स्थाप्य सनीडसन्, समीपं, निविष्टाभ्याम्, उपविष्टाभ्याम्, मधुकरपारावता-भ्याम्, भ्रमरकपोताभ्याम् । प्रभातिकेति— प्रभातः, प्रभातकालः, नस्यायं प्राभातिकः, यः प्रपाठः, तस्यच्छेदः, विरामः, तस्य, चिह्नीकृतं, दत्तचिह्नम् । (इयन्मात्रं पठितं नान्यदिति सूचकं पत्रम्) श्रन्तर-पत्रम्, उत्चिप्य । कितपयेति— कतिपयेः, पत्रेः, लघ्वी, स्वल्पतरा तां कपाटिकां, पुस्तकावरणपट्टकम् । चालयित्रव, मसीमिलिनानि, लेखनद्रव्यरसः, मसी, तया मिलनानि, श्रचराणि, दन्तकान्तिभिः, दशनज्योतस्नाभिः, श्रच्चयित्रव । सितेति—सितानां, धवलानां, कुसुमानां, मुक्तिभिः, वृष्टिभिः । मुखेति— मुखे, संनिहिता, स्थिता या सरस्वती तस्याः नूपुरागांरवैरिव शब्दैरिव । गमकैः, श्रथंबोधकै, श्रोतृणां गीत्या पवमानप्रोक्तं पुराणं पपाठ ।

तिसंमश्च तथा श्रुतिसुभगगीतिगर्भं पठित सुदृष्टौ नातिदूर वर्ती बन्दीसूचीबाणस्तारमधुरेण गीतिध्वनिमनुवर्तमानः स्वरे-णेदमार्यायुगलमपठत्—

'तद्दपि मुनिगीतमतिपृथु तद्दांपे जगद्ववापि पावनं तद्दपि । हर्षचरितादभिन्नं प्रतिभाति हि मे पुराणमिद्म् ॥ ३ ॥ वंशानुगमविवादि स्फुटकरणं भरतमार्गभजनगुरु । श्रीकग्ठविनिर्यातं गीतमिदं हर्षराज्यमिव ॥ ४ ॥

मधुरैः, मधुरसस्यिन्दिभः, श्रोतृग्गां मनांसि, चित्तानि, श्राचिपन्, श्राक्षेयन्। श्रुतिः, वेदः, तया सुभगा या, गीतिः, सा गर्भे यस्य तं पठित सित । नातिदृरवर्ती, समीपस्थायी यः, बन्दी, चारगाः सूचिवागः, तदाख्यः चारगाः। गीतांति—गीत्याः, गीतिकायाः, ध्विन शब्दमनुवर्तमानः, सन, स्वरेगा उच्चेः, इदमार्यायुगलमपठत्। तद्पीति—तन्मुनिना, द्वेपायनेन, गीतं, कीर्तितमिप, तन् श्रातिष्रथः, श्रातिकत्वापः, द्वेपायनेन, गीतं, कीर्तितमिप, तन् श्रातिष्रथः, श्रातिकत्वापः, प्रायीत्यर्थः) तत् जगद्व्यापि, जगत्प्रसिद्धम्, पावनं, पवित्रमिप, इदं पुरागां, वाक्यमितिशेषः, हि, निश्चितम्, हर्षचरितात् श्राभन्नं, भेदहीनम् मे मनः, प्रतिभाति। श्रात्र तादशात्, पुरागात् हर्षचरितस्य भेदेऽपि श्रभेदकथनं भेदेऽप्यभेद प्रतिपत्तिरूपा श्रातिशयोक्तिः, स्रार्यावृत्तम्॥३॥

वंशानुगमेति—वंशं, वेगुवाद्यं तदनुगच्छतीति तं (पत्ते ) वंशं, कुलं तदनुगच्छतीति तम् । अविवादीति—न भवतः विवादिनौ, विकद्भवक्तारौ स्वरौ यस्मिन् (पत्ते) न सन्ति विवादिनः, द्वेष्टारः यस्य तत् । स्फुटेति-स्फुटं, स्पब्टं, करगां, लयं (स्वरागा।मारोह।वरोहगाम्)

तच्छ्रकत्वा बाणस्य चत्वारः पितामहमुखपद्मा ६व वेदाभ्यासप-वित्रितमूर्तयः, उपाया ६व सामप्रयोगललितमुखाः, गणपितः, ऋधिपितः, तारापितिः, श्यामल इति पितृच्यपुत्रा भ्रातरः, प्रस-श्रवृत्तयः, गृहीतवाक्याः, कृतगुरुपदन्यासाः, न्यायवादिनः,

यस्मिन् तत् ( पत्ते ) स्फुटानि, प्रकटीकृतानि, कारगानि, धर्मविद्या-दीनि, प्रजासुखार्थमुपायाः, यस्मिन् तत् । भरतेति— भरतः, संगीत-शास्त्रकारः, मुनिः, तस्य मार्गः, पन्था, तद्नुशरगोन, गुरुः, महत् , ( पत्ते ) भरतः, पूर्वभूतनृपः तस्य मार्गः, नीतिः, तद्भजनेन, श्रनु-चलनेन गुरुः । श्रीनीलकग्ठेति—श्रीनीलकग्ठः, महादेवः, तस्माद् विनिर्यानं, विशेषेगा निःसृतम् ( पत्ते ) श्रीनीलकग्ठः, देशविशेषः, तस्मान्, निःसृतम् । हपंति—हपंस्य, प्रमोदस्य, राज्यभिव ( पत्ते ) एतन्नः स्नः, श्रीहर्षस्य राज्यम् । स्रत्र हि हपंगीतयोर्थिशिष्टत्वात् , श्रेषः, तद्वाच्यत्वाद्-उपमा ॥ ४॥

तन् त्रार्यायुगलं श्रुत्वा वाणस्य,नन्नामकवेः,चत्वारः,पितामहमुख-पद्मा इव परस्परस्य,मुखानि, व्यलोक्यन इति दृरेगान्वयः । पितामहः, ब्रह्मा, तस्य मुखानि पद्म इव, पितामहमुखपद्माः, तं इव । वेदेति—वेदानाम्, श्रभ्यासेन, पुनः, पुनः, श्रनुशीलनेन, पवित्रिता, पूता, मूर्तिः, येषां, ते, उपाया इव, सामादयः, इव । सामेति—साम्नां, सामवेदानां, प्रयोगेगा, लिलतानि, सुनदराणि, मुखानि, श्रारम्भाश्च येषां ते । प्रसन्नेति—प्रसन्नाः, विशुद्धाः,सुबोधाः, च, वृत्तयः, जीविकाः, सुत्रविवरणाश्च, येषां ते । गृहीतिति—गृहीतानि, वाक्यानि, येषां ते (पत्ते ) गृहीतं, ज्ञातं वाक्यविवरणां येः ते । कृतेति—कृतः, गृहीतः, पृर्वज्ञानां, पित्रादीनां, पदे न्यासः, येः, (श्रर्थात् महाशयानां पद्धित मनुसरन्तः ) (पत्ते ) कृताः, सम्पादिताः, गुरवः, वहवः, पदानां,

सुकृतसंत्रहाभ्यासगुरवो लब्धसाधुशब्दाः,लोक इव व्याकरणेऽपि, सकलपुराणराजिवचिरताभिक्षाः, महाभारतभावितात्मानः, वि-दितसकलेतिहासाः, महाविद्वांसः, महाकवयः,महापुरुपवृत्तान्त-कुत्हलिनः, सुभाषितश्रवणरसरसायनाः, वितृष्णाः, वयसि वचसि यशसि तपसि सदसि महसि वपुपि यज्जपि च प्रथमाः, पूर्वमेव कृतसंगराः, विवत्तवः, स्मितसुश्राध्यलितकपोलोदराः, परस्परस्य मुखानि व्यलोकयन्।

सुप्तिङ्तानाम् न्यासः यः । न्यायेति-- न्यायम् , उपपत्तिमद्वचनं, न्यायशास्त्रं वा नद्वादिनः । सुक्रतेति—सुकृतानां, पुण्यानां, संग्रहः, समूहः, तद्भ्यासेन ( पत्ते ) सुप्ठुकृतः, यः, संप्रहः, व्याकरणसन्दर्भः तस्याभ्यासेन गुरवः, महान्तः, उपाध्यायाः, च । लब्धेति— व्याकरणे लब्यः, स्वीकृतः साधुशब्दानां, त्र्यालोकः यः ते । सकलेति—सकलाः, समग्राः, पुरागाराजपयः, पूर्वकालिकमन्वादयः, तेषां चरितानि, श्राचरणानि तत्र श्रभिज्ञाः, ज्ञातारः। महाभारतेति—महाभारते भावितः, त्र्रतुशीलितः, त्र्रातम यैः, तथोक्ताः । विदिनेति — विदिताः, विज्ञाताः, सकलाः, समस्ताः, इतिहासाः, यैः तथोक्ताः । महाविद्वांसः, प्रख्यातमतयः । महोति महापुरुपाणां, गुरुजनानां, वृत्तान्तानि, उदन्तानि, तत्र कुतुहलिनः । सुभाषितेति —सुभाषितानां, काञ्यानां, श्रालापानां च श्रवणे श्राकर्णने, यो, रसः, तस्य रसायनाः, निकपाः । वितृप्गा, विगतयानाभिलाषः । वयसि, त्र्रवस्थायाम् । कृतसङ्गराः (श्रीहर्षचरितं कथयितुं वाग्मनुरून्ध्य इति श्रन्योऽन्यं कृताङ्गीकाराः। विवत्तवः, वक्तुमिच्छवः । स्मितेति—स्मितं, ईपद् हसनं, तदेवसुधा श्रमृतं, तया, धत्रलितं, यत्, कपोलं, गण्डस्थलम्, तस्य उदरं, मध्यभाग, येषां ते । कमलेति-कमलद्रलवत्, पद्मपत्रवत्, दीर्घ-

श्रथ तेषां कनीयान्कमलदलदीर्घलोचनः श्यामलो नाम बाणस्य प्रेयान्प्राणानामपि वश्यीता दत्तसंक्षस्तैः सप्रण्यं दशन-ज्योत्स्नास्निपतककुभामुखेन्दुना बभाषे-'तात!, बाण!, द्विजानां राजा गुरुद्दारप्रहण्मकार्थीत्। पुरूरवा ब्राह्मण्धनतृष्ण्या दयि-तेनायुषा व्ययुज्यत । नहुषः परकलत्राभिलाषी महाभुजङ्ग श्रासीत्। ययातिराहितब्राह्मणीपाणित्रहणः पपात । सुयुद्धः स्त्रीमय प्वाभवत् । सोमकस्य प्रख्याता जन्तुवधनिर्घृणता। मांधाता मार्गणव्यसनेन सपुत्रपौत्रो रसातलमगात्। पुरुकुत्सः कुत्सितं कर्म तपस्यन्निप मेकलकन्यकायामकरोत्। कुवलयाश्रो

लोचनः, श्रायतनेत्रः । प्रेयान् श्रिधिकप्रियः, वशियता, वशीकर्तुं ममर्थः, दत्तमंज्ञः, कृतसंकेतः । दशनेति—दशनानां, दन्तानां, या ज्योत्स्ना, कान्तिः, तया, स्नापिताः, प्रचालिताः, ककुभाः, दिशाः येन तत् मुखेन्दुना, वभापे । द्विज्ञानां राजा, चन्द्रः, गुरोः, वृहस्पतेः, दारप्रह्गां, स्त्रीहरणम् । पुरुरवा, एतन्नाम राजा, ब्राह्मणस्य, चनानि, द्रव्याणि, तेषु, तृष्णा, प्रह्णोच्छा, दिवतेन, प्रियेण, श्रायुपा, जीवितेन, तन्नामपुत्रेण च । नहुषः, श्रायुपो तनयः, परस्य, श्रन्यस्य, कलन्नाभिलापी, नारीच्छुकः, महाभुजङ्गः, महासर्पः, । ययातिः, एतन्नामराजा, श्रिहितिन-श्रिहितः, कृतः, ब्राह्मण्याः, ब्राह्मणकन्यायाः, पाणिप्रह्णः, येन नथोक्तः । सुसुष्रः,सुष्टु, सुम्नं धनं वलं च यस्य सः, स्त्रीमयः, स्त्रीरूपः, सोमकस्य, तन्नानृपस्य प्रख्याता, प्रसिद्धा, जन्तुः, जन्तुनाम तत्पुत्रः, प्राणिः च तस्य वधेन, हत्यया, निर्वृणता, निष्ठुरता । मान्धाता, नृपः, मार्गणेति-मार्गणेषु, शरेषु, व्यसनं,समासक्तिः, यांचा सातत्यं च तेन रसातलं, पातालं, श्रगात्, गतवान् , पुरुकृत्सः, तन्नामराजा तपस्यन् , तपस्यांकुर्वन्, मेकलकन्यकायां, नर्मदायां

 भुजङ्गलोकपरिष्रहादश्वतरकन्यामि न परिजहार । पृथः प्रथम-पुरुषकः परिभूतवान्पृथिवीम् । नृगस्य कृकलासभावे वर्णसंकरः समदृश्यत । सौदासेन नरिचता पर्याकुलीकृता चितिः । नलम-वशाचहृद्यं कलिरिभभूतवान् । संवरणो मित्रदुहितरि विङ्का-वतामगात् । दशरथ इष्टरामोन्मादेन मृत्युमवाप । कार्तवीयो गोबाह्मणातिपीडनेन निधनमयासीत् । मरुच इष्टबहुसुवर्णको-ऽपि देवद्विजबहुमतो न बभूव । शंतनुरपिव्यसनादेकाकी

(रेवा तु नर्मदा सोमोद्भवा मेकल कन्या "इत्यमरः) कुत्सितं कर्म श्रकरोत् । कुवलयाश्वः,राजा,भुजङ्गलोकः परिग्रहात् ,नागलोकगमनात् , त्राश्वतरकन्या, त्राश्वतरः, कश्चिन्नागः, तस्यकन्यां न परिजहारः, न तत्याजः । पृथुः त्रादिराजः, वेगा तनयः, प्रथमेति-प्रथमः त्राद्यः , मुख्यश्च, पुरुष एव पुरुषकः कदुर्घ्यपुरुषश्च, पृथ्वीं, परिभूतवान् । नृगस्य, एतदारुयस्य नृपस्य, कृकलासभावे कृकलासः (सरटः जुरप्रा-ग्यिभेदः)तद्भावे तत्स्वरूपे वर्णेति-वर्णानां शुक्रादीनां संकरः संमिश्रणम्, समदृश्यत, सौदानेन, एतन्नाम्नाराज्ञा, नरिचता, नपालिता, पर्याकुलीकृता, समन्तात्, श्राकुलतां, प्राप्ता, ज्ञितिः, पृथ्वी । स्रवशाचहृद्यं, नवशं, अनायतम्, अज्ञाणि, इन्द्रियाणि, हृद्यं, मनश्च, अज्ञहृद्यं, अज्ञ-ज्ञानश्च यस्य तथा भूतम् नलम् । सत्ररगाः, नामनृपः, मित्रस्य, सुहृदः, दुहितरि, कन्यायां, विक्कवतां, विद्वलतां, त्र्यगात्, कार्तवीर्यः, नाम-गोब्राह्मणेति-गवे, गोनिमित्तम् ब्राह्मणस्य, जमदग्नेः, गवां ब्राह्मग्यानां च श्रातिपीडनेन, वधेन, निधनं, नाशं, श्रयासीत्, श्रगात्, मरुतः, इण्टेति—इष्टः, श्रनुष्ठितः, वहूनि, सुवर्णानि यस्मिन् ं तथाभृतः, इष्टः, श्रभिमतः, बहु, श्रितिशयेन, सु-शोभनं, वर्णः, गौर-स्वरूपः यस्य तथाभूतः, देवद्विजः, वृहस्पतिः, देवाः, द्विजाः, विप्राश्च

वियुक्तो वाहिन्या विपिने विललाप। पाग्डुर्वनमध्यगतो मत्स्य इव मदन रसाविष्टः प्राग्णान्मुमोच। युधिष्ठिरो गुरुभयविषग्ण-हृद्यः समरशिरसि सत्यमुत्सृष्ट्यान्। इत्थं नास्ति राजत्वमप-कलङ्कमृते देवदेवादमुतः सर्वद्वीपभुजो हर्णात्। श्रस्य हि बहू-न्याश्चर्याणि श्रूयन्ते। तथा हि—श्रत्र बलजिता निश्चलीकृता-श्चलन्तः कृतपत्ताः चितिभृतः। अत्र प्रजापतिना शेषभोगिमग्ड-लस्योपरि त्वमा कृता। अत्र पुरुषोत्तमेन सिन्धुराजं प्रमथ्य

तेषां वहुमतः, वह्वादृतः । त्र्यतिव्यसनान् , त्र्यत्यासंगान् , वाहिन्या, नद्या, गङ्गादंग्या, संनया च, वियुक्तः, एकाकी,विपिने, वने विललाप। पारुडुः, नामराजा, वनमध्यगतः, श्ररुयगतः, जलमध्यगश्च, मद्नः, कामः, फलभेदश्च तस्य रसाविष्टः मत्स्य इव, मीन इव, प्राग्णान् मुमाच । युविष्ठिरः, पाएडोः ज्येष्टतनयः । गुर्वाति-गुरोः, महतः, त्र्याचार्यात् च भयः तंन विषएणां, खिन्नं हृद्यं यस्य तथोक्तः, समर-शिरसि सत्यं ऋतं, उत्सृष्टवान् , ऋत्यजत् । इत्त्यं, एवम्प्रकारं, ऋप-कलङ्कं, निर्दोषं, देवदेवात , राजाबिराजात् । सर्वद्वीपभुजः, सर्वान् , समग्रान्, द्वीपान् भुनक्ति इति तस्मात् हर्षात्, एतन्नाम नृपात्। श्रत्र, जगति, वलं, शत्र्सेन्यं, वलाख्यं श्रसुरं च, जितवान् तेन (ह्पेंग्रेतिशेषः) चलन्तः, विरोधितया व्यवहरन्तः, ( पत्ते ) शालितया उड्ढीयमानाश्च, कृताः, पत्ताः, सहायाः यैः (पत्ते) घृताः, पत्ताः, पत्रास्मि, यै:, तथोक्ताः । चितिभृतः, राजानः, पर्वताश्च निश्चलीकृताः, निजि-तत्वान्, वशीकृताः, पत्तछेदनान् स्थावरतां नीताश्च। प्रजापितना, राज्ञा, ब्रह्मणा च। शेषेति-शेषस्य, निह्तावशिष्टस्य, भोगिनां, नानाभोगरतां (राज्ञामितिभावः) मण्डलस्य, चक्रस्य (पत्ते) शेषस्य, भोगिनः, नागस्य मण्डलस्य फणस्य च उपरि त्तमा, शान्तिः, पृथ्वी,

लक्ष्मीरात्मीकृता । अत्र बलिना मोचितभूभृद्वेष्टनो मुक्तो महा-नागः । अत्र देवेनाभिषिकः कुमारः । अत्र स्वामिनैकप्रहारपाति-तारातिना प्रख्यापिता शक्तिः । अत्र नरसिंहेन स्वहस्तविशसि-तारातिना प्रकटीकृतो विक्रमः । अत्र परमेश्वरेण तुषारशैलभुवो दुर्गाया गृहीतः करः । अत्र लोकनाथेन दिशां मुखेषु परिकल्पिता

च कृता, विहिता, निहिता, च । पुरुपेति -पुरुपेषु, उत्तमः, श्रेष्ठः तेन राज्ञा नारायगान च सिन्धुराजं, सिन्धुदंशाधिपति जीरसागरख्च प्रमथ्य, निर्जित्य, विलोड्य च लच्मी:, राजश्री:, कमला च, त्रात्मी-कृता, स्वीकृता । बलिना, बलवता, ब्रसुरराजेन, च महानागः, महान् रणहस्ती, वासुकिश्च । मोचितंति—मोचितम् , दूरीकृतम् भूभृद्भिः, श्ररिनृपै:, वेष्टनम्, श्रवरोधनम्, यस्य सः ( पत्ते ) भूभृतः, मन्द्रस्य वेष्टनं, यस्य, सः, मुक्तः, परित्रातः, सागरमन्थनात् त्यक्तश्च । देवेन, राज्ञा, देवराजेन, च कुमारः, निजतनयः, गुड्श्च, त्र्राभिषक्तः, प्रतिष्ठा-पितः, योवराज्ये, सेनापत्ये च, (इति शेषः) स्वामिना, प्रभुगा सेना-पतिना गुहेन च । एकेति-एकेन प्रहारेण, शरावातेन, प्रकर्पेण च पातिता श्वरातयः, शत्रवः राजानः तारकादयोऽसुराश्च येन तथा भूतेन । शक्तिः, सामर्थ्यं, तदाख्यमस्त्रं च, नरसिंहेन, राज्ञा नृहरिगा च। स्वहस्तेति—स्वहस्तंन न तु सैन्यसहायेन, चक्रादिनिजास्त्रेण च, विशसिताः, निहताः, विदारिताश्च श्ररातयः, शत्रवः, हिरएय-कशिपुप्रभृतयश्च । येन तथोक्तेन । परमेश्वरेण, सार्वभौमेन, हरेण च, तुषारशैलभुवः, हिमालयप्रदंशभूमेः, हिमगिरिजातायाश्च, दुर्गायाः, दुर्गमायाः, गौर्य्याश्च, गृहीतः करः, बलिः, पाणिश्च। लोकनाथेन, नरपतिना, विधात्रा, च, दिशां मुखेषु, दिशि दिशि इति यावत् ( पत्ते ) दिशां मुखेषु नि:सरगामार्गेषु च (सीमान्तदेशेषु इति यावत्) परि-

लोकपालाः सकलभुवनकोशश्चाग्यजन्मनां विभक्तः, इत्येवमा-दयः प्रथमकृतयुगस्येव दृश्यन्ते महासमारम्भाः। श्रतोऽस्य सुगृ-होतनाम्नः पुर्यराशेः पूर्वपुरुपवंशानुक्रमेणादितः प्रभृति चरि-तमिच्छामः श्रोतुम्। सुमहान्कालो नः शुश्रूषमाणानाम्। श्रय-स्कान्तमण्य इव लोहानि नीरसनिष्ठुराणि जुल्लकानामप्याक-र्षन्ति मनांसि महतां गुणाः, किमुत स्वभावसरसमृदृनीतरेषाम्। कस्य न द्वितीयमहाभारते भवेदस्य चरिते कुत्हलम्। श्राचष्टां भवान्। भवपु भार्गवोऽयं वंशः शुचिनानेन राजर्षिचरितश्रवणेन सुतरां शुचितरः' इत्येवमभिघाय तृष्णीमभूत्।

बागस्तु विहस्याव्रवीत्—'श्रार्य, न युक्त्यनुरूपमभिहितम्। अधटमानमनोरथमित्र भवतां कुतृहलमवकल्पयामि। शक्याश-

कल्पिताः, नियोजिताः, लोकपालाः, प्रजापालाः, इन्द्राद्यश्च । सकल-भुवनकोशः, सर्वजगतां धनं, सकलभुवनमेवकोशः, धनभण्डारश्च अप्रजन्मनां, ब्राह्मणानां, आदिनृपाणां, अमणानाञ्च विभक्तः, विभ-ज्यद्त्तः । प्रथमयुगस्येव, सत्ययुगस्येव, महारम्भाः, महान्ति कार्याणि अचलपचच्छेदनाद्य व्यापारा इति यावत्, तेषामारम्भाः । शुश्रुषमा-णानां, श्रोतुमिच्छताम् । आयस्कान्तमण्यः, लोह्कान्तमण्यः । नीरसनिष्ठुराणि, नीरसात्, रसशून्यत्वात्, निष्ठुराणि, कठोराणि, जुल्लकानां, खलानां, ( जुल्लकिष्ठु नीचेऽल्पं इति मेदिनी ) द्वितीय-महाभारते, द्वितीयमहाभारत सदृशे, आच्छां, कथयतु । भार्गवः, भृगु-गोत्रजातः । सुतराम्, अतिशयेन, शुच्तितरः, पूत्ततरः ।

युक्त्यनुरूपं, युक्त्यनुकूलं, श्रिभिहितम्, कथितम्। श्रघटमा-नेति—श्रघटमानः, श्रसम्पन्नतां गच्छन्, मनोरथः, यस्य तथाभूतम्, श्रवकल्पयामि, श्रवधारयामि । शक्येति—शक्यं, साध्यं, श्रशक्यं, क्यपिरसंख्यानग्रन्थाः प्रायेण स्वार्थतृषः । परगुणानुरागिणी प्रियजनकथाश्रवण्रसरभसमोहिता च मन्ये महतामि मितर-पहरित प्रविवेकम् । पश्यत्वार्यः क परमाणुपिरमाणं वटुहृदयम् , क समस्तब्रह्मस्तम्भव्यापि देवस्य चिरतम् । क परिमितवर्ण-वृत्तयः कितपये शब्दाः, क संख्यातिगास्तद्गुणाः । सर्वेकस्याप्य-यमविषयः, वाचस्पतेरप्यगोचरः, सरस्वत्या अप्यतिभारः, किमु-तास्मिद्वधस्य । कः खलु पुरुषायुषशतेनापि शक्नुयादिवकल-मस्य चिरतं वर्णयितुम् । पकदेशे तु यदि कुत्हलं वः, सज्जा वयम् । इयमधिगतकतिपयात्तरलवल्यीयसी जिह्वा कोपयोगं

श्रसाध्यम्, तयोः, परिसंख्यानं, परिगणनं, तेन शून्याः, रहिताः । स्वार्थतृषः, स्वार्थकार्यतृषिताः । प्रियेति—प्रियजनस्य कथाश्रवणे यो रसः. रागः तस्य रभसेन, श्रातिशयेन, मोहिता । प्रविवेकम्, प्रकृष्ट-ज्ञानम् । परमाणुपरिमाण्यम्, श्रातिज्ञुद्रम् । वटुदृद्यम्, द्विजिशिशु-मानसम् । समस्तेति—समस्तः, सकलः, ब्रह्मस्तम्भः, ब्रह्मखण्डं तद्वयापि, देवस्य, हर्षस्य । परिमिनेति—परिमितानां, परिगणितानां, वर्णानां, श्रज्ञराणां, वृत्तयः रचनानि यत्र तथा भूणाः । संख्यातिगाः, संख्याः, एकादिपरार्द्धपर्यन्ताः, ताः, श्रातिगच्छन्ति, श्रातिशेरते इति तथोक्ताः, तद्गुणाः देवस्य, हर्षस्य, गुणाः । श्रयं, हर्षचरितरूपः, सर्वज्ञस्य, परमेश्वरस्य, श्रविषयः, वृहस्पतेः, देवगुरोः, श्रापि, श्रागोचरः, सरस्वत्या, भारत्या, वाण्या श्रापि श्रातिभारः । पुरुषेति—पुरुषस्य, श्रायुः,जीवितकालः, तस्य शतं, (शतवर्षाणीत्यर्थः) तेषां शतेन । श्रविकलं, सम्यक् । वर्णयतुं, कथितुं । सज्ञाः, प्रस्तुताः । श्रिधिगतेति— 'श्रिधगतः, ज्ञातः, कतिपयानां, श्रज्ञराणां, लवः, लेशः, तेन, लघी-यसी, (यत्किक्चित् वर्णियतुं ज्ञागिःइति भावः) जिह्ना, रसना, कः,

गमिष्यति । भवन्तः श्रोतारः, वर्ण्यते हर्षचरितम् , किमन्यत् । श्रयः तु परिण्तप्रायो दिवसः । पश्चान्नम्बमानकपिलकिरण्जटा-भार भास्वरो भगवान्भार्गवो राम इव समन्तपञ्चकष्ठियमहा-हदे निमज्जति संध्यारागपटले पूषा । श्रो निवेदयितास्मि' इति । सर्वे च ते 'तथा' इति प्रत्यपद्यन्त । नातिचिरादुत्थाय संध्यामु-पासितुं शोणमयासीत् ।

त्रथ मघुमदपल्लिवतमालवीकपोलकोमलातपे मुकुलितेऽिह, कमिलनोमलनादिव लोहिततमे तमोलिहि रवौ लम्बमाने, रवि-रथतुरगमार्गानुसारेण यममहिष इव धावति नमसि तमसि,

उपयोगं, उपकारितां गिमण्यति । न कुत्रापि इति भावः । परिणतप्रायः, प्रायेण परिण्तः, अवसितः । पश्चादिति—पश्चात्, पश्चिमायां दिशि, पृष्टदंशं च । रुम्बमानेति—लम्बमानः, पतन्, किपलः,
पिङ्गलः, किरणः, मयूरवः, एव जटाभारः, इव, केशसमृह इव, तेन
भास्वरः, दीप्यमानः, राम इव, परशुराम इव । समन्तेति—समन्तपश्चकं, कुरुन्तेत्रं, तत्र यन् रुधिरं (कौरवादीनां रक्तम्) तेन यः महान्
हदः तस्मिन् । सन्ध्येति—सन्ध्यायाः, रागाः, लौहित्यानि, तेणां
पटलं, समृहः तस्मिन् , पूषा, सूर्यः (विकर्त्तनार्कमार्तण्डमिहिरारुणपूषणः "इत्यमरः) प्रत्यपद्यन्तः, स्वीकृतवन्तः । अथेत्यारम्भ गोष्ट्या
तस्थौ इत्यनेनान्वयः । मिष्विति— मधुमदेन, मद्यपनजनितेन,
ब्रह्मासेन, पह्मवितः, प्रकुङ्कः, मालव्याः, मालवदेशीयनार्याः, कपोलः,
गण्डः, तद्वत् कोमलः, आत्रपः, प्रभा यस्य तथाभूते । मुकुलिते, अविकसितं, कमिलिनी, मलनादिव, पद्मनीमालिन्यदर्शनादिव, लोहिततमे,
आत्रिरुके, तमोलिहि, तिमिरध्वंसिनि, रवौ, सूर्ये लम्बमाने। रवीति—
रविरथः, सूर्यरथः, तस्य, गुरुनाः तेषां मार्गानुसारेण, यममहिष इव

क्रमेण च गृहतापसकुटीरकपटलावलिम्बषु रक्तातपच्छेदैः सह संहतेषु वल्कलेषु, कलिकल्मपमुषि पुष्णित गगनमग्निहोत्रधाम-धूमे, सनियमे यजमानजने मौनव्रतिनि, विहारवेलाविलोले पर्यटित पत्नीजने, विकीर्यमाणहरितश्यामाकशालिपूलिकासु दुग्धासु होमकपिलासु, हूयमाने वैतानतनूनपाति, पूतविष्टरोप-विष्टे छप्णाजिनजटिले जटिनि जपित घटुजने, ब्रह्मासनाध्या-सिनि ध्यायित योगिगणे, तालध्वनिधावमानान्तान्तेवासिनि

नभिस, त्राकाशे, तमिस, त्रान्धकारे, धावति, सित । गृह-इति-गृह-तापसानां, गृहस्थतपस्विनां, कुटीरंकाणां, जुद्रगृहाणां, पटलानि, छदींषि, ( श्रथ पटलं छदिः "इत्यमरः ) श्रालम्बन्ते इति तथोक्तेषु । रक्तातपञ्जेदै:, रक्तवर्णसूर्यमयूरवखरडै:, सह संहतेषु, त्राकृप्यनीतेषु, वल्कलेषु, तरुत्वचु । कलिकल्मपमुपि, कलिकालजनिनपापहारिणि, पुष्णाति, व्याप्नुवति, त्राग्निहोत्रधामधूमे, होमगृहधूमे, सनियमे, सुसं-यते, यजमानजने, याज्ञिकवर्गे, मौनत्रतिनि, तुष्णित्रतधारिणि। विहारेति विहारस्य, वेला तेन विलोसे,चंचले। विकीर्यमाणेति-विकीर्यमाणाः, प्रचिप्यमाणाः, हरिताः, श्यामलाः श्यामाकशालीनां, श्यामाख्यत्रीहिभेदानां, पूलिकाः, गुच्छाः, याभ्यः, तासु, दोहनकाले, होमकपिलासु, यज्ञधेनुषु, दुग्धासु, ऋतदोहासु, हूयमाने, हविषा-सन्तर्प्यमागो, वैतानतनूनपाति,यज्ञीयाम्रो, ( जातवेदास्तनूनपात् "इत्य-मरः) पूर्तेति—पूर्ते, पवित्रे, विष्टरे, श्रासने, उपविष्टः तस्मिन् । कृष्णाजिनजटिले, कृष्णमृगचर्मावृते, जटिनि, जटाधारिणि, जपति, वद्रजने, द्विजजने । ब्रह्मेति-ब्रह्मासनं, श्रासनविशेषः, तत् श्रध्यासते 🕆 इति तथोक्ते । ध्यायति, चिन्तयति । तालेति—तालध्वनिः, संकेतार्थ-मंगुलिशब्दविशेषः, तेन धावमानाः, सत्वरमापतन्तः, श्रनन्ताः,

त्राठसबृद्धश्रोत्रियानुमतेन गलद्ग्रन्थद्ग्रह्यकोद्गारिणि संध्यां समवधारयित वठरविटवटुसमाजे, समुन्मज्जित च ज्योतिषि तारकाख्ये खे, प्राप्ते प्रदोषारम्भे भवनमागत्योपविष्टः स्निग्धैर्वन्धुभिश्च सार्धं तयैव गोष्ठचा तस्थो। नीतप्रथमयामश्च गणपते-भेवने परिकल्पितं शयनीयमसेवत। इतरेषां तु सर्वेषां निमीलि तद्दशामप्यनुपजातिनद्राणां कमलवनानामिव सूर्योद्यं प्रतिपालयतां कुत्हलेन कथमपि सा चपा चयमगच्छत्।

श्रथ यामिन्यास्तुर्ये यामे प्रतिबुद्धः स एव वन्दी श्रोकद्वय-मगायत्—

'पश्चादिं च प्रसार्य त्रिकनितिवततं द्राघितवाङ्गमुचै-

श्रशेषाः, सर्वे, श्रन्तेवासिनः, छ।त्राः, यस्य तथाभूतं । श्राळसंति—
श्रलसः, मन्थरः, वृद्धः, स्थविरः, श्रोत्रियः, छान्दसः, वेदोपाध्यायः,
इत्यर्थः, तस्यानुमतं तेन । गळिदितिः—गलतः, स्खलतः, प्रन्थदंण्डकान्, ऋग्विशेषान्, उद्विरितः, उच्चारयित, इति तथोकं, सन्ध्यां,
सन्ध्याकालिकोपासनाविशेषं, समवधारयित, समालोचयित, वठरेति—
वठराः, श्रवोधाः, विटाः, दुर्युत्ताः ये वटवः, द्विजिशिशवः, तेषां समाजः,
सङ्घः तिस्मन् । समुन्मज्ञिते, समुन्मीलिते, तारकारव्ये, नच्चत्रनािन्न,
खं, श्राकाशे, प्राप्ते, उपस्थिते, प्रदोपारम्भे, गोष्ट्या, समाजेन, तस्थे।
नीतप्रथमयामः, श्रवतीतपूर्वप्रहरः, परिकल्पितं, रचितम् । निमोछितेति—निमीलिता, दक्, लोचनं येः, तेषाम् । श्रानुपजाता,
नप्रादुर्भूता, निद्रा, येषां, तेषाम्, प्रतिपालयतां, प्रतीचांकुर्वताम्, चपा,
रात्रिः, चयं, नाशम्। तुर्ये, चतुर्थे, यामे, प्रहरे, प्रबुद्धः, त्यक्तिद्रः।
पश्चादिति—शयनादुत्त्थितः, प्रबुद्धः, तुरङ्गः, श्रश्वः, प्रश्चादंिन्न,
प्रप्रभागस्थितपद्वयम्, त्रिकस्य, पृष्ठवंशघरस्य, (पृष्ठवंशघरेत्रिकम्,

रासज्याभुग्नकगठो मुखमुरसि सटा धूलिधूम्रा विधूय। घासग्रासाभिलापादनवरतचलत्प्रोथतुन्डस्तुरंगो मन्दं शब्दायमानो विलिखति शयनादुत्थितः ६मां खुरेण ॥४॥ कुर्वन्नाभुग्नगृष्ठो मुखनिकटकटिः कंघरामातिरश्चीं लोलेनाहन्यमानं तुहिनकणमुचा चञ्चता केसरेण। निद्राकगङ्कपायं कपति निविडितश्चोत्रशुक्तिस्तुरङ्गः

त्वङ्गत्पदमात्रलक्षप्रतनुवुसकणं कोगामदणः खुरेण ॥ ६॥

इत्यमरः) नत्या विननं, विस्तृनं, यथा नथा प्रसार्य, विस्तार्य, ऋंगं, अवयवम्, उच्चेः, द्रावियत्वा, दीर्घीकृत्य, ऋामुग्नकण्ठः, निमनगलः, सन्, मुखं, उरिस, बच्चिस्, ऋासज्य, स्पर्श्य, धूलिभिः, रजोभिः, धूम्राः, धूसराः, सटाः, जटाः, विथूय, प्रकम्प्य, घासानां, शप्पाणां, मासे, कवलने, ऋभिलापः, तस्मान्, ऋनवरतं, निरन्तरं, चलत्, स्पुरत्, प्रोथं नासिका यस्य तादृशम् (प्रोथोऽस्त्री ह्यघोणायां "इतिमिद्दिनी" घोणानासा च नासिका "इत्यमरः) तुण्डं, वद्मं यस्य तथोक्तः ( तुण्डमाननंलपनंमुख्यम् "इत्यमरः) मन्दं, शब्दायमानः, शब्दं कुर्वन् खुरेण चमां, भुवं, विलिखति, कुट्टयति, ऋत्र प्रातरुचियतस्याधस्य-स्वभावकथनात् स्वभावोक्तिः, स्राधरा वृत्तं ॥ ४॥

कुर्विश्विति—तुरङ्गः, ऋश्वः, निविडिते, कुञ्चिते, श्रोत्रे, कर्णों, शुक्ती इव मुक्तास्फोट।विव येन यस्य वा तथोक्तः, तथा, आभुग्नं, आकुञ्चितं पृष्ठं येन तथोकः, मुखस्य निकटे, सन्निवी, कटिः, मध्य-भागः, यस्य तथाभूतः, कन्धरां, प्रीवां, आतिरश्चीम्, आभंगुरां, कुर्वन्, लोलेन, चपलेन, तुहिनकण्मुचा, शिशिरविन्दुवर्षिणा, चञ्च-क्षता, स्फुरता, केसरेण, जटाजालेन, आहिन्यमानं, सन्ताङ्यमानं, निद्राकण्ड्यः, निद्राऽऽवेशावशेषः, तया, कपायः, आवितः, तम्, अच्णः, बाणस्तु तच्छ्रुत्वा समुत्खुज्य निद्रामुत्थाय प्रज्ञाल्य वदनमुपा- ' स्य भगवतीं संध्यामुदिते भगवति सवितरि गृहीतताम्बूलस्तत्रै-वातिष्ठत् । श्रत्रान्तरे सर्वेऽस्य ज्ञातयः समाजग्मुः, परिवार्य चासांचक्रुः। श्रसावपि पूर्वोद्धातेन विदिताभिप्रायस्तेषां पुरो हर्पचरितं कथयितुमारेभे—

श्रूयताम्—ग्रस्ति पुर्यकृतामाधिवासो वासवावास इव वसुधामवतीर्णः सततमसंकीर्णवर्णव्यवहारस्थितिः, कृतयुग-व्यवस्थः, स्थळकमळवहळतया पोत्रोन्म्र्यमानमृणाळैकद्गीत-

नेत्रस्य, कोर्गां, प्रान्तं त्वङ्गत्सु, पचमात्रेषु, लोमात्रेषु, लग्नाः, संसक्ताः, प्रतनवः,स्वल्पाः,वुसकगाः,कडङ्गरांशाः,(सारहीनचुग्राधान्यानीइत्यर्थः) यत्र तत् यथा तथा खुरेगा कषित, घर्षयति (श्रलङ्कारवृत्ते पूर्वे) ॥६॥ समुत्सृच्य, त्यक्त्वा, प्रचाल्य, निर्मलीकृत्य । गृहीतेति-गृहीतं,नीतंः, 🗻 ताम्बूलं येन सः। विदितेति—विदितः, विज्ञातः, त्र्यभिप्रायः, त्र्याशयः, येन सः । पूरयेत्यारभ्य श्रीकरुठोनाम जनपदः,इत्यनेनान्वयः । पुरुयकृतां, सुकृतचरतां, देवानां, च, श्रिधवासः, गृह्म्,वासवावास, इव, इन्द्रालय इव, वसुधां, भूमिं, श्रवतीर्गाःं, श्रवतरितः । सततं, निरन्तरं । श्रसं-र्कार्णति—असंकीर्गाः, सङ्करदोषरहिताः, वर्गानां, ब्राह्मग्रचित्रवैश्य-शुद्राणां, व्यवहाराः, श्राचाराः, स्थितयः, मर्यादाश्च यत्र तथोक्तः। क्रनेति— कृतयुगस्येव, सत्ययुगस्येव, व्यवस्था, नियमः, यत्र तथोकः । स्थलकमलबहलतया, स्थलपद्मप्राचुर्येगा । पोत्रेति—पोत्रेगा, मुखा-प्रे**गा (पोत्रं वज्र**े मुखाप्रे च शूकरस्य ह्यस्य च ''इति मेदिनी) उन्मूल्य-मानानि, विकाश्यमानानि, मृग्णालानि, कमलानि, यैः तथोक्तैः । उद्गीतेति---उद्गीताः, उचैः, कीर्तिताः, मेदिन्याः, सराः, उत्कृष्टाः ' गुणाः यैः तथाभूतैः । कृतेति —कृताः, मधुकराणां, कोलाहलाः, यैः,

भेदिनीसारगुणैरिव कतमधुकरकोलाहलैईलैक्टिख्यमानसेत्रः, स्त्रीरोदपयः पायिपयोदसिकाभिरिव पुग्ड्रेसुवाटसंतिभिर्निर-न्तरः, प्रतिदिशमपूर्वपर्वतकैरिव खलधानधामभिर्विभज्यमानैः सस्यकृटैः संकटसीमान्तः, समन्तादुद्धातघटीसिच्यमानैर्जारक-जूटैर्जटिलितभूमिः, उर्वरावरीयोभिः शालीयैरलंकतः, पाकवि-शराकराजमाषनिकरिकमीरितैश्च स्फुटितमुद्दफलकोशीकिपिशि-तैर्गोधूमधामभिः स्थलीपृष्टैरिघिष्ठतः, महिषपृष्टप्रतिष्ठितगायद्रो-

ताहरी: । हतै:, लाङ्गतै:, उल्लिख्यमानानि, उत्खन्यमानानि, चेत्राणि यस्य तथोकः। चीरोदेति चीरोदस्य, चीरसागरस्य, पयांसि, जलानि, पिवन्तीति तथाविधाः, पयोदाः, मेयाः, तैः, सिस्ताः, श्रमिसिश्चिताः, ताभिरिव । पुराङ्गेति—पुराङ्गेत्तृगां, इत्तुविशेषागाः, ,वाटसन्ततयः, वृत्तिनिचयाः, (वेष्टनसमूहा "इत्यर्थः) ताभिः ( वाटोमार्गे वृत्तिस्थाने स्यात् कुटीवास्तुनोः स्त्रियाम् "इत्यमरः ) निरन्तरः, स्त्रवि-च्छिन्नः । ऋपूर्वेपर्वतकैरिव, श्रिभनवलघुगिरिभिरिव । खलेति— खलेषु, सस्यसमाहरगाभूमिषु, धानस्थापनाय, धाम, स्थानं येषां तैः । विभज्यमानैः. विभागेन स्थाप्यमानैः, शस्यकूटैः, धान्यादितृग्।-राशिभिः, संकटसीमन्तः, व्याप्तसीमाभागः । उद्घानेति—उद्घात घटिभिः, यन्त्रकलरौः, सीच्यमानानि, त्र्राद्रीकियमागानि तैः, जीरक-जूटै:, जटिलिता, समाकीर्गा, भूमि:, यत्र तथोक्तः। उर्घरेति - उर्वरा, सर्वसस्याट्या भूः तथा वरीयांसि श्रेष्ठानि तैः, शालियैः, धान्यविशेष-संबैः शालिचेत्रैः, त्र्यलंकृतः, परिशोभितः । पाकेति—पाकेन, विशरा-रुगां, स्फुरतां, राजमाषागां, निकरैः, संवैः, किमीरितानि, शवलि-ेतानि तै: । स्फुटितेति—स्फुटितानां, पकानां, मुद्गफलानां, तदाख्य-कलायभेदानां, कोशीभिः, शिम्बिकाभिः, कपिशितानि, पिङ्गलानि पालपालितेश्च कीटपटललम्पटचटकानुस्तैरवटुघटितघरटाघटी-रिटतरमणीथैरटिद्धरटवीं हरवृषभषीतमामयशङ्कया बहुविभक्तं सोरोदिमिव सीरं दरिद्धवाष्पच्छेयतृणतृष्तैर्गोधनैर्धवलितविपिनः, विविधमखहोमधूमान्धशतमन्युमुक्तैर्लोचनैरिव सहस्रसंख्यैः कृष्णशारैः शारीकृतोद्देशः, धवलधूलीमुचां केतकीवनानां रजोभिः

तैः । गोधूमधामाभिः, गोधूमशालिभिः, स्थलीपृष्ठैः, ऋकृत्रिमभूतलैः, श्रिधिष्ठतः, स्थितः । महिषेति—महिषागाां, पृष्ठेषु, प्रतिप्रिताः, श्रारूढाः, गायन्तः, गोपालाः, तैः, पालितानि, रिज्ञनानि तैः। कीटेति—कीटानां, चुद्रपाणिभेदानां, पटलेषु, वृन्देषु, गोधनानां, श्रङ्गलग्नेषु इति भावः, लम्पटाः, लुब्धाः, ये चटकाः, चुद्र पित्तभेदाः, तैः, श्रनुसृतानि, श्रनुगतानि तैः । श्रवद्विवति—श्रवद्वः, घटा (श्रवद्व-र्घाटा कृकाटिका इत्यमरः ) तत्र घटिता, संयोजिता, या घण्टाघटी, घण्टारूपः, ज्ञुद्रघण्टः, तस्याः रिटतेन, निनादेन रमणीयानि, मनो-ज्ञानि तै:, अरङि:, चरङि:, अरबीं, वनम् । हरेति—हरस्य, शिवस्य, वृपमेगा, पीतम्, त्रामयशंकया, त्राजीर्गारोगसम्भावनया, ज्ञीरोदमिव, चीरसागरमिव, वहविभक्तम् , बहुधा विभज्यस्थापितम् । वाष्पेति— वाष्पेरा, उष्मराा, छेद्यानि, नाश्यानि, यानि तृराानि, तैः तृप्नानि, सन्तुष्टानि तैः । गोधनैः, गाव एव धनानि येषां तैः । धविछतेति— धवलितानि, श्वेतानि, विपिनानि यस्य तथोकः । विविधेति-विवि-धानां, नानाप्रकाराणां, मखानां, यागानां, होमधूमै:, ऋन्धानि, ऋत-एव शतमन्युना, इन्द्रेगा, मुक्तानि, परित्यक्तानि तैः लोचनैः, नयनैरिव, सहस्रसंख्ये, ( पत्ते ) सहस्रसंख्येः, प्रभूतेः, कृष्णसारेः, शवलवर्णवि-चित्रैः, शारीकृतोदेशः, विचित्रितप्रदेशः । धवलधूलिमुचां, श्वेतरजो-मुवां, केतकीवनानां रजोभिः, परागैः, पांण्डुरीकृतैः, पाण्डुरतांनीतैः,

त्र पाग्डुरीकृतैः प्रथमोद्धू लनधूसरैः शिवपुरस्येव प्रवेशैः प्रदेशैरुपशो-भितः,शाककन्दलश्यामलितग्रामोपकग्रकाश्यपी पृष्ठः,पदे पदे कर-भपालीभिः पीलुपल्लवप्रस्फोटितैः करपुटपीडितमातुलुंगीदलरसो-पलिप्तैः स्वेच्छाविचितकुङ्कुमकेसरकृतपुष्पप्रकरैः प्रत्यप्रफल-रसपानसुखसुप्तपथिकैर्वनदेवतादीयमानामृतरसप्रपागृहैरिव द्राचामग्डपैः स्फुरत्फलानां च बीजलग्रश्चकच्च्चरागागामिव समाह्यदकपिकुलकपोलसंदिद्यमानकुसुमानां दाडिमीनां वनैविं-

त्रातप्व प्रमथानां, शिवपारिषदां, भूतवर्गाणाम, उद्धूलनेन, लुग्ठनेन, धूसराः, ईवत्पायडुवर्गाः तैः शिवपुरस्येव, शिवालयस्येव, प्रवेशाः, मार्गाः तैः। शाकेति –शाकानां, कन्दलेन, श्रभिनवेन, श्रंकुरेण श्यामितता, प्रामाणां, उपरुषठाः, प्रान्तभागाः यस्य तथोक्तम्, काश्यपीपृष्ठं, भूतलं यस्य तथाभूतः । करभपालिभिः, उष्ट्रशिशुत्रुन्दैः, पीलुपल्लवेन, पीलूबिः, (श्राखरोट) तेषां पल्लवेन, किसलयेन, तैः स्फोटितैः, सुशोभितैः । करपुटेति—करपुटैः, पीडितानां, मर्दितानां, मातुलुङ्गीदलानां, एतदाख्यस्य वृत्तस्य पत्राणां रसैः, द्रवैः, उपलि-प्रानि तै:। स्वेच्छ्रेति—स्वेच्छया, विचिताः, उचिताः, कुंकुमानां केसराः, किञ्चलकाः, तैः कृतः, रचितः, पुष्पाग्गां, प्रकरः, माल्यं येपां तैः । प्रत्यग्रेति--प्रत्यप्राणि, त्रभिनवानि, यानि, फलानि, तेषां रस-पानेन, सुखसुप्ताः, पथिकाः, ऋध्वगाः, येषु तथोक्तैः । वनेति—वन-देवताभिः, दीयमानानि, श्रमृतरसानां, प्रपागृहाणि, पानीयशालाः, तैरिव । द्राज्ञामण्डपैः, द्राज्ञालतानिकुञ्जैः । स्फुरन्ति, विकसन्ति, फलानि यासां तासाम् । वोजेति —वीजेषु, लग्नाः, संसक्ताः, शुकानां, (तोता) पत्तिगां, चञ्चुरागाः, चञ्चुलौहित्यानि येषां तथा भूताना-मिव । समारूढेति—समारूढानां, कपिकुलानां, वानरवृन्दानां,

लोभनीयोपनिर्गमः, वनपालपीयमाननारिकेलरसासवैश्व पथि-कलोकलुप्यमानपिरडखर्जूरैगोंलांगूललिह्यमानमधुरामोदपिरडी-रसेश्वकोरचञ्चुजर्जरिताहकैहपवनैरभिरामः, तुङ्गार्जुनपालीप-रिवृतैश्व गोकुलावतारकलुषितकूलकोलालैरध्वगशतशरर्थेर-रस्यधराबन्धेरवन्ध्यवनरन्धः, करभीयकुमारकपाल्यमानैरीष्ट्रकै-

कपोलैः, गण्डस्थलैः, सन्दिद्यमानानि, संशयमानानि, कुसुमानि यासां तथोक्तानाम् । विलोभनीयोपनिर्गमः, विलोभनीयाः, विशेषेण दर्शनीयाः, उपनिर्गमाः, निर्गमन मार्गाः यस्य तथाभूतः । वनेति-वनपालैः, वन-रिज्ञिभिः, पीयमानाः, श्रस्वाद्यमानाः, नारिकेलानां रसाः, जलान्येव, त्र्यासवाः, मद्यानि, येपु तथोक्तैः । पथिकेति—पथिकलौकैः, पान्थ-समूहै:, लुप्यमानानि, भन्तगोन, श्रदृश्यतांगतानि, पिण्डखर्जूराणि येभ्यः तथोक्तैः । गोळांगूलेति—गोलांगृलैः, कृष्णामुखकपिभिः ( लंगूर ) लिह्यमानः, श्रास्त्राद्यमानः, मधुरः, स्त्रादुः, श्रामोदपिग्डी-रसः, सुरभिषिरङीखर्जूररसः येषु तैः । चकोरेति—चकोराणां, पिन-भेदानां, चञ्चुभिः, जर्जरितानि, त्रारुकाणि, त्रारुकनामवृत्तफलानि, येपु तथोक्तेः, उपवनैः, उद्यानैः, श्रमिरामः, मनोहरः। तुङ्गेति-तुङ्गाभिः, उन्नताभिः, त्र्यर्जुनपालिभिः, कुकुभारव्य वृत्तश्रेगिमिः, परि-वृताः, परिवेष्टिताः तैः । गोकुलेति—गोकुलानां, गोसमृहानां, श्रव-तारेगा, त्रवतरगोन, कलुपितानि, त्रविलीकृतानि, कूलकीलालानि, तीरस्थितजलानि, येषां तैः । ( सलिलं कमलं जलं । पयः कोलालम् ''इत्यमरः) श्रध्वगशतशर्एयैः,पथिकशतपरित्रायिभिः,श्ररस्यधराबन्धैः, वनजलाशयैः । स्रवन्ध्यानि, फलवन्ति, वनरन्ध्राणि, वनाभ्यन्तर-भागाः यस्य तथाभूतः । करभीयेति करमेभ्यः, उष्ट्रशावकेभ्यः हिता:, करभीयाः, ये कुमाराः, पशुपालशिशवः तैः पाल्यमानाः, रज्ञ-

 रौरभ्रेश्च इतसंबाधः,दिशि दिशि रिचरथतुरगिवलोभनायैच वि-लोडनमृदितकुङ्कुमस्थलोरससमालब्धानामुत्प्रोथपुटैरुन्मुखैरद-रशायिकिशोरकजवजननाय प्रभञ्जनिमव चापिबन्तीनां वातहरि-णीनामिव स्वच्छन्दचारिणीनां वडवानां वृन्दैर्विचरिद्धराचितः, ग्रानवरतकतुधूमान्धकारप्रवृत्तैर्दैसयूथैरिव बाणैर्धवलितभुवनः, संगीगतमुरजरवमत्तैर्मयूरैरिव विभवेर्मुखरितजीवलोकः,

मागाः, तैः । ऋौष्ट्रकैः, उष्ट्रगां समृहैः । ऋौरभ्रैः, मेपनिचयैः, कृत-सम्बाधः, समाकीर्गाः। रवीति—रवेः, सूर्यस्य, रथे ये तुरगाः, ऋश्वाः, तेपां विलोभनम्, त्र्यनुरागप्रकटनेन, लोभप्रदर्शनम् तस्मै इव । विळोडनेति --विलोडनेन, विलोठनेन, दलनेन, मृदिता, मर्दनंनीता, या कुंकुमस्थली, कुंकुमोत्पत्तिभूमिः, तस्याः, रसेन, द्रवेशा, समालब्धाः, त्रानुलिप्ताः, तासाम् । उत्प्रोथपुटैः, उत्, उद्गतानि, प्रोथपुटानि, नासा-पुटानि, येपां तादृशानि तैः, उन्मुखैः, ऊर्द्धमुखैः। उद्रशायाति— उद्रशायिनां, गर्भस्थितानां, किशोरकाणां, शावकानां, जवजननाय, वेगवर्द्धनाय, प्रभञ्जनमिव, वायुमिव, त्रापिवन्तीनां, भन्नयन्तीनां, (संपीतवतीनामिति यावत्) वातहरिग्गीनामिव, वातमृगीग्गामिव, समीराभिमुखधाविनीनां, स्वच्छन्दचारिग्गीनां, स्वेच्छयाचरन्तीनां, वडवानां, ऋश्वानां, ऋाचितः, श्राकीर्गः। अनवरतेति-अनवरताः, त्रविरताः, कतूनां, यज्ञानां,धूमा एव त्र्यन्धकाराः, तेषु प्रवृत्ताः, जाताः, तैः, ( पत्ते ) धूमेन श्रन्धकारः, तस्मात् , प्रवृत्तेः, पलायितैः, बागैः, शरैः । धवलितेति-धवलितानि, श्वेतीकृतानि, भुवनानि, श्रवयवाः । संगीतेति सङ्गीतेषु, निषादादि सप्तस्वरालपनेषु, गतानां, स्थितानां, मुरजानां, वाद्यानां, रवेग्य, नादेन, मत्ताः, मादकजनकाः, उल्लासिताश्च तै: । विभवै:, सम्पद्भिः, मुखरितः, शब्दितः, जीवलोकः यस्य । शशि- शशिकरावदातवृत्तेर्मुकाफलैरिव गुणिभिः प्रसाधितः, पथिकशत-विलुप्यमानस्फीतफलैर्महातरुभिरिव सर्वातिथिभिरभिगमनीयः, मृगमद्परिमलवाहिसृगरोमाच्छादितैहिंमवत्पादैरिव महत्तरैः स्थिरीकृतः, प्रोद्दण्डसहस्रपत्रोपविष्टक्रिजोत्तमैर्नारायणनाभिम-एडलैरिव तोयाशयैर्मणिडतः, मथितपयः प्रवाहप्रचालितिचितिभिः

करेति- शशिनः, चन्द्रस्य, कराः, किरगाः, तद्वत्, श्रवदातानि, विशदानि, वृत्तानि, चरितानि, येषाम् , (पत्ते) शशिकरवत् श्रवदातानि, स्वच्छानि, वृत्तानि, वर्तुलानि, तैः, गुणिभिः, विद्याविनयशालिभिः, सूत्रवद्भिश्च, प्रसाधितः, अलंकृतः । पथिकेति-पथिकशतैः, पान्थैः, विलुष्कमानानि, चौर्य्यमाणानि, स्फीतानि फलानि, धनानि येषां, ( पत्ते ) पथिकानां, ऋध्वगानां, शतेः, विलुप्यमानानि, गृह्यमाणानि, भन्नगोन, स्फीतानि, प्रभूतानि, फलानि येषां तैः, त्र्राभिगमनीयः, त्राश्रथणीयः । मृगेति—मृगमद्स्य, कस्तूरिकायाः, परिमल-वाहिभिः, सौरभशालिभिः, मृगरोमभिः, राङ्कवितसंज्ञान्तरैः, (राङ्कवं मृगरोमजम्) श्राच्छादितैः, कृतगात्रावरगैः, (पत्ते) तथाविधमृगरोमावृतैः, हिमपाद्पैरिव, हिमाद्रेः प्रत्यन्तपर्वतैरिव, मह-त्तरैः, त्र्यतिमहद्भिः, लोकैः, वृद्धैर्वा (पत्ते ) प्रकार्ण्डैः, स्थिरीकृतः, त्रावासितः । **प्रोद्द**रखेति—प्रकर्षेगा, उद्गताः, दण्डाः, नालाः, येषां तानि सहस्रपत्राणि कमलानि तेषु उपविष्टा द्विजोत्तमाः, उत्कृष्टा, पित्तगाः, ब्राह्मग्रश्च, येषु, तथाभूतैः, तोयाशयैः, जलाशयैः, ( पत्ते ) तोयमेव, त्र्याशयः, त्र्याधारः (स्थानमित्यर्थः) येषां तैः नारायगामण्डलै-रिव, मरिडतः, सुशोभितः । मथितेति— मथितानां, निर्जेलतकाणां, पयसां, दुग्धानां च, प्रवाहेन, निवहेन, ( पत्ते ) मथितेन, विलोडितेन, पयसां दुग्धानां, प्रवाहेगा, स्रोतसा, प्रज्ञालिता, धौता, ज्ञितिः, भूभागो,

त्तीरोदमथनारम्भैरिव महाघोपैः पूरिताशः श्रीकराठो नाम जनपदः।

यत्र त्रेताग्निधूमाश्रुपातजलज्ञालिता इवाज्ञीयन्त कुदृएयः।
पच्यमानचयनेएकादहनदग्धानीव नादृश्यन्त दुरितानि। छिचमानयूपदारुपरशुपाटित इव व्यदीर्घताधर्मः। मखशिखिधूमजलधरधाराधीत इव ननाश वर्णसंकरः । दीयमानानेकगोसहस्रश्टङ्गखण्डयमान इवापलायत कलिः। सुरालयशिलाघट्टनटङ्कनिकरनिकृत्ता इव व्यदीर्यन्त विपदः। महादानविधानकलकलाभि-

यैः, तथोक्तैः । महाघोषैः, महद्भिः, घोषैः, गोपपल्लीभिः, (घोषः ऋभीर-पह्लीस्यात् ''इत्यमरः) (पत्ते) महाघोपैः, महारावैश्च पूरिताः, व्याप्ताः, त्राशाः, त्राकांचाः, दिशश्च यत्र तथोक्तः । त्रेता, त्राग्नित्रयम् , प्रच-एडाग्निबोधाय त्रेताशब्दः प्रयुक्तः तस्य, धूमेन योऽश्रुपातः तस्य, जलेन, चालिता इव, धौता इव, कुटप्टयः, ऋचीयन्तः, चयमगच्छन्। पच्यमानेति—पच्यमानं, दह्यमानं, चमनं, चित्या यासां तथा भूतानां, इष्टकानां, दहनेन, सन्तापेन, दग्धानीव भस्मीकृतानीव, दुरितानि' पापानि, न श्रदृश्यन्तः । छिद्यमानेति—छिद्यमानानि, कृत्यमानानि, यूपायदारुग्ति, यैः तथाभूतैः, परशुभिः, कुठारैः, पाटित इव, कित्तत इव, अधर्मः, पापं, व्यदीर्यत, विदीर्गः, अभूत्। मखेति-मखानां, यागानां,शिखिनः,श्रम्रयः,तेषां धूमाः, तैः ये जलधराः, मेघाः, तेषां धाराभिः,वर्षाभिः, धौत इव, चालिल इव वर्णसंकरः (प्रातिलोम्येन संतानोत्पादनम् ) ननाश । दीयमानेति दीयमानानां, श्रानेकेषां, गोसहस्राणां, शृङ्गेः, खण्डयमान इव कलिः। सुरेति—सुरालयेषु, देवमन्दिरेषु, याः, शिलाः, तासां घटने, योजने ये टङ्कनिकराः, शिला-विदारणास्त्रसमृहाः, तैः निकृत्ता इव व्यदीर्यन्त, व्यचूर्णयन्त । महा-

द्रुता इच प्राद्रवन्तुपद्रवाः। दोप्यमानसत्रमहानससहस्रसंतापिता इच व्यलीयन्त व्याधयः । वृपविवाहप्रहतपुर्यपटहपटुरचत्रा-सिता इच नोपासपन्नपमृत्यवः। सततब्रह्मघोषबधिरीकृता इचा-पजग्मुरीतयः। धर्माधिकारपरिभूतमिव न प्राभवदुर्दैवम्।

तत्र चैवंविधे नानारामाभिरामकुसुमगन्धपरिमळाभोगसुभगो यौवनारम्भ इव भुवनस्य, कुङ्कुममलनपिअरितबहुमहिपीसह-स्रशोभितोऽन्तःपुरनिवेश इव धर्मस्य,महदुद्भूयमानचमरीवालव्य-

दानेति—महादानानां, विधानं, यः कलकलः, तेन श्रभिद्रुता इव, ताडिता इव, उपद्रवाः, श्रानिष्टपाताः, प्रादुवन्, पलायन्तः। दीप्य-मानेति—दीप्यमानानां, राजमानानां, सत्राणां, महानसानां, रन्धन-शालानां, सहस्रोः, सन्तापिता इव, श्रभिभूता इव, व्याधयः, रोगाः। वृषेति—वृषस्य विवाहः तत्र प्रहतस्य, वादिनस्य, पुण्यपटहस्य, पदुना, तारेगा, रवेगा, नादेन, त्रासिता इव, भीपिता इव, श्रपमृत्यवः, न उपा-सर्पन्, नापतन्। सततेति—सततेन, श्रविरतेन, श्रह्मघोपेगा, वेद-ध्वनिना,विधरीकृता इव,श्रवण्यातिकराः जन्तवः, श्रपज्यमुः। धर्मति—धर्माधिकारः, धर्मविचारालयः, तेन परिभृतम् इव निराकृतम् इव दुर्दैवं न प्राभवत्।

तत्र इत्यादी स्थाण्वीश्वराख्यो जननिवेशः-इत्युत्तरेणान्वयः । नानेनि-नाना, त्रारामाणां, वहूनां उद्यानानां, त्र्रभिरामाणि, मनोह-राणि, कुसुमानि, (पत्ते ) नाना रामाः, महिलाः, श्रभिरामकुसुमानि, इव, तेषां गन्धस्य, सौरभस्य, परिमलः, सम्मर्दनामोदः,तस्य त्राभोगः, त्रानुभवः, तेन सुभगः रम्यः । कुंकुमेति—कुंकुमानां, मलनेन, कर्दमेन, पिक्षरिता, रक्षिता, वहवः, महिष्यः क्रताभिषेकाः, राजभार्याः, उत्तमाः, महिलाश्च तासां सहस्रेण शोभितः। मरुदिति—मरुतः,वायवः,

जनधवित्रप्रान्तः, एकदेश इच सुरराज्यस्य, ज्वलन्मखिशिखिसहस्रद्गित्यमानदशिदगन्तः शिविरसंनिवेश इच कृतयुगस्य, पद्मा
सनस्थितब्रह्मिष्यानाधीयमानसकलाकुशलप्रशमः प्रथमोऽवतार इव ब्रह्मलोकस्य, कलकलमुखरमहावाहिनीशतसंकुलो
विपन्न इवोत्तरकुरूणाम्, ईश्वरमार्गणसंतापानभिश्चसकलजनो
विजिगीषुरिव त्रिपुरस्य, सुधारसिक्ष्यवलगृहपंकिपाग्डुरः
प्रतिनिधिरिव चन्द्रलोकस्य, मधुरमत्तमक्तकाशिनीभूपण्रवमरि-

देवाश्च तैः उद्धयमानाः, संचाल्यमानाः, चमरीग्यां वालाः, पुच्छलो-मानि, नै धवलिताः, प्रान्ताः यस्य तथोक्तः । ज्वलदिति — ज्वलतां, मुखशिखिनां, यज्ञाग्रीनां सहस्त्रेः, दीप्यमानाः, दशानांदिशामन्ताः, यस्य तथा भूतः । शिविर सन्निवेश इव कटक वन्ध इव कृतयुग-स्य, सत्ययुगस्य । पद्मेति—पद्मासनेषु स्थिताः ये ब्रह्मर्पयः,तैः,ध्यानेन, त्र्याधीयमानः, सकलानां,समप्राग्गां, श्रकुशलानां, श्रमङ्गलानां,प्रशमः, शान्तिः यस्मिन् तथा भूतः । कलकलेति-कलकलेः मुखराः, नदन्त्यः, महत्यः,वाहिन्यः नद्यः,सेनाश्च तासां शतेन संकलः,त्र्याकीर्गः, उत्तरकुरूगां, उत्तराः कुरवः मेरुसमीप देशवासिनः तेषां, विज्ञेष, इव । **ई**श्वरेति—ईश्वरस्य, हरस्य, राज्ञश्च मार्गगैः, शरैः, बहुधाछलेनार्थ-प्रार्थनैश्च यः सन्तापः, क्लेशः तस्य, त्र्यनभिज्ञाः, सकलाः, जनाः, यस्मिन् तथाभूतः । त्रिपुरस्य तिसृगां पुरां समाहारः त्रिपुरं, मयदा-नवनिर्मितम् तस्य । सुधेति—सुधारसैः, लेपनद्रवैः, ऋमृतैश्च,सिक्तानां, लिप्तानां, धवलगृहागाां, पङ्क्तिभिः, राजिभिः पाण्डुरः, धवलः । प्रति-निधिरिव, प्रतिकृतिरिव, चन्द्रलोकस्य। मध्विति—मधुमदेन, मद्य-पानजनितेनोल्लासेन, मत्ताः, याः, मत्तकाशिन्यः, उत्तमाङ्गनाः, यन्नि-ण्यश्च, तासां भूषगारवैः, भरितं, श्रापूरितम्, भुवनं यत्र तथाभूतः । तभुवनो नामाभिहार इव कुवेरनगरस्य, स्थाग्वीश्वराख्यो जननिवेशः।

यस्तपोवनमिति मुनिभिः, कामायतनिमिति वेश्याभिः, संगीतशालेति लासकैः, यमनगरिमिति शत्रुभिः, चिन्तामिणभूमि
रित्यिधिभिः, वीरद्वेत्रमिति शस्त्रोपजीविभिः, गुरुकुलिमिति
विद्याधिभिः, गन्धर्वनगरिमिति गायनैः, विश्वकर्ममन्दिरिमिति
विक्वानिभिः,लामभूमिरिति वैदेहकैः,यूतस्थानिमिति भागाधिभिः,
साधुसमागम इति सद्धिः, वज्रपञ्जरिमिति शरणागतैः, विद्रगोछीति विद्रग्धैः, सुकृतपरिणाम इति पथिकैः, श्रसुरविवरिमिति
वातिकैः, शाक्याश्रम इति शिमिभिः, श्रम्सरःपुरिमिति कामिभिः,

स्थारवीश्वराख्यः (थानेसर) जननिवंशः । दंशः, मुनिभिः,तपोवनं, तपः कर्तुं,गृहं, वेश्याभिः,वारविलासिनीभिः,कामस्य,श्रायतनं गृहम् । लासकैः, नर्तकैः, संगीतशाला, शत्रुभिः, श्रारिभः, यमनगरम्, प्राण्हन्तृपुरम् । श्रार्थिभः, याचकैः, चिन्तामिणः, विचारितवस्तुद्रस्त्रविशेषः, तस्याः, भूमिः, चेत्रम् । शस्त्रोप नीविभिः, वीरसैनिकैः, वीरचेत्रम्, वीरोत्पत्ति-भूमिः । विद्यार्थिभः, श्रन्तेवासिभिः, गृरुकुलम् । गायनैः, गायनाचार्यः, गन्धवनगरम् । विज्ञानिभिः, शिल्पादिकलाज्ञानृभिः, विश्वकर्मामन्दिरम्, शिल्पविद्यानिधिगृहम् । वैदेहिकैः, बिणिगः, लाभभूमिः, धनोप्भिः, शृतस्थानः, भागः थिभिः, मागः, सौभाग्यन्, तद्थिभिः, तद्भिलापिभः, शृतस्थानम्, दृतं, देवनं, कीडेति यावत्, तत्स्थानम् । शरणागतैः, शरणप्राप्तैः, वन्नपंत्रसम्, वन्ननिर्मतपंत्रदं विद्रग्धैः, विलासिभिः, विदगोष्ठी, विलाससमाजः । पथिकैः, श्रध्वगैः सुकृतानां, पुरयानां, परिणामः, परिण्तिः । वातिकैः, वायुरोगिभिः, श्रसुरविवरं, पानाचलम् । शमिभः, बौद्धैः, शाक्याश्रमः, बुद्धसन्यासिमठः । कामिभिः,

🤈 महोत्सवसमाज इति चारगैः, वासुधारेति विप्रैरगृह्यत ।

यत्र च मातंगगामिन्यः शींत्रधत्यश्च, गौर्यो विभवरताश्च, श्यामाः पद्मरागिण्यश्च, धवलद्विजशुचिवद्दनाः मदिरामोदिश्वस-नाश्च, चन्द्रकान्तवपुषः शिरीपकोमलाङ्गयश्च, श्रभुजंगगम्याः कञ्चुकिन्यश्च, पृथुकलत्रश्चियो दिनद्रमध्यकलिताश्च, लावण्य-

विलासिभिः,त्र्यप्सरःपुरम् । चारणैः,स्तुतिगायकैः, महोत्सवस्य,समाजः, गोष्टी । विष्ठः, त्राह्मणैः, वसुधारा, धनप्रवाहः, मानङ्गरामिन्यः, श्वपच-गामिन्यः, शीलवत्यः, सुशीलाः, याः चरडालान गच्छन्ति कथं सा शीलवती इति विरोधः गजवत्, गामिन्य इति परिहारः। गोर्याः, पार्वत्याः, विभवरताः, विगतः, भवे, हंग, रतः यासां ताः, इति विरोधः, गोर्यः, गौराङ्गयः, विभवे, धने रताः, इति परिहारः । श्यामाः, रात्रयः, ्पद्मरागिन्यः, पद्मेषु, कमलेषु रागवत्यः, इति विरोधः। पद्मानां निर्मलनान् श्यामाः, श्यामलाङ्गयः, पद्मरागिण्यः, पद्मरागरवालंकृताः। थवलेति--धवलानि, विशदानि, द्विजस्येव शुचीनि, पवित्राणि, वद-नानि यासां नाः । मदिरेति—मदिरया, सुरया, आमोदिनः, शौरभ-वन्तः, श्रमनाः, श्रामवायवः, यासां ताः, याः पवित्र त्राह्मगावन् पवित्र-वदनाः तासां मद्यपानन कथं मुखपवित्रता, इति विरोधः । धवतैः स्वच्छै:, द्विजै:, दन्तै:, शुचिनि, उज्वलानि वदनानि, यासां ता:। चन्द्रकान्तेति—चन्द्रकान्तः, मिर्गाविशेषः, तद्वत् वपुः यासां ताः, श्रथ च शिरीपकोमलाङ्गयः, शिरीषपुष्पवत्, कोमलं, सुकुमारं श्रङ्गं यासां ताः। याः चन्द्रकान्तप्रस्तरविशेषवत् कठिनाङ्गयः कथं ताः कोमलाङ्गथः-इति विरोधः । चन्द्रकान्तमिणवन् रमग्गीयं वपुः यासां ्ताः-इतिपरिहारः । ऋभुजंगेति—भुजङ्गेः, संपैः, नगम्या श्रभुङ्ग-गम्याः, कंचुकिन्यः, भुजंग्यः, इति विरोधः, भुजंगैः, विटैः, न गम्याः

वत्यो मधुरभाषिगयश्च, अप्रमत्ताः प्रसन्नोज्ज्वलरागाश्च, अकौतु-काः प्रौढाश्च प्रमदाः ।

यत्र च प्रमदानां चत्तुरेव सहजं मुग्डमालामग्डनं, भारः कुवलयदलदामानि । श्रलकप्रतिबिम्बान्येव कपोलतलगतान्यक्कि-ष्टाः श्रवणावतंसाः,पुनरुक्तानि तमालकिसलयानि । प्रियजनकथा

कंचुकं स्त्रीगां स्तनावरम् चोलकं तद्वत्यः। पृथ्विति-पृथुः, त्रादि-राजः, वेरापुत्रः, तस्य कलत्राराां, श्रियः, इव, सम्पदः, यासां ताः, श्रथ च, दरिद्रमध्यकलिताः, दरिद्रागां, मध्ये, कलिताः, संख्याताः, याः खलुराजमहिष्य इव संपच्छालिन्यः कथं ताः द्ररिद्राः इति विरोधः पृथवी महती कलत्रस्य, श्रोगोः ( जघनस्येत्यर्थः ) श्रीः शोभा यासां ताः द्ररिद्रं, ज्ञीगां मध्यः, कटिदेशः तेन कलिताः, इति परिहारः। लावण्यवत्यः, लावण्यरसशालिन्यः, श्रथ च, मधुरभाविण्यः **मधुरा** उक्ति यासां ताः याः लावएयरमवहालाः कथं ताः मधुरोक्तिवत्यः-इति विरोधः, लावण्यवत्यः, सौन्दर्यवत्यः, मधुरभाषिण्यः, प्रियवादिन्यः इति परिहारः । प्रसन्ना, सुराभेदः तया उज्वलः रागः श्रनुरागः यासां ताः, त्रथ च, त्रप्रमत्ताः त्रज्ञीवाः याः मद्यपायिन्यः कथं सा त्रप्रमत्ताः, प्रसन्नः, सौम्यः उज्वलः, विशदः, रागः वर्गः, यासां ताः, इति परि-परिहारः । अकौतुकाः, विवाह कालिकहस्तसूत्रं तद्रहिताः अथ च प्रोढाः, पूर्गायोवनाः, याहि पूर्गायोवना कथं त्र्यविवाहिनाः, इति विरोधः कौतुकं, त्र्यौत्सुक्यं तद्रहिताः, इति परिहारः। सहजं, त्र्रकृत्रिमम्। मुण्डमालामण्डनं, मुण्डमाला, नीलोत्पलमाला एव मण्डनं भूषर्या । कुवलयद्लदामानिनीलोत्पलपत्रमालिकाः भारः ( वाह्यवस्तुमात्रम् , इत्यर्थः ) अरुकेति अलकानां, चूर्गकुन्तलानां, प्रतिबिम्बानि, छाया एव, त्रक्तिष्टाः, श्रवणावतन्साः, श्रोत्रभूषणानि । तमालिकस-

एक सुभगाः कर्णालंकाराः, श्राडम्बरः कुएडलादिः । कपोला एव सततमालोककारकाः, विभवो निशासु मिणप्रदीपाः । निःश्वासा-रूप्टमधुकरकुलान्येव रमणीयं मुखावरणं, कुलस्त्रीजनाचारो जालिका । वाण्येव मधुरा वीणा, बाह्यविज्ञानं तन्त्रीताडनम् । हासा प्वातिशयसुरभयः प्रवासाः, निर्धकाः कर्पूर्पांशवः । श्रधरकान्तिविस्तर प्वोज्ज्वलतगेऽङ्ग रागो निर्गुणो लावण्यक-लङ्कः कुङ्कुमपङ्कः । बाह्य प्व कोमलतमाः परिहासप्रहारवेत्र-लताः, निष्प्रयोजनानि मृणालानि । योवनोष्मस्वेद्विन्द्व प्व विद्ग्धाः कुचालंकृतयो हारास्तु भाराः । श्रोण्य एव वि-

लयानि, तन्नामवृत्तपत्राणि पुनरुक्तानि (निरर्थकानि इति भावः) प्रियजनकथा, कान्तासम्बन्द्रालापाः, सुभगाः, रमणीयाः, श्राडम्बरः, संरम्भः, श्रालोककारकाः, कान्तिकर्तारः, विभवाः, ऐश्वर्यम् । निश्वा-सेति—निश्वासंन, श्राकृष्टानां, मधुकराणां, श्रमराणां, कुलानि, सङ्घाः । मुखावरणाम्, मुखाच्छादनम् । जालिका, श्रवगुण्ठनपटम्, तन्त्रीताडनम्, वीणागुणायानम् । वाद्यविज्ञानम्, वाद्यं, विश्रिणाः, विद्योजनाः, कर्यरपांसवः, कर्यररजांसि, श्रथरस्य, श्रोष्टस्य, कान्तिविस्तारः, लावण्यविस्तारः, निर्णुणः, निष्प्रयोजनाः, कर्यरपांसवः, कर्यररजांसि, श्रथरस्य, श्रोष्टस्य, कान्तिविस्तारः, लावण्यविस्तारः, निर्णुणः, निष्प्रतः । कोमलतमाः, श्रातिकोमलाः । परिद्वासेति—परिद्वासे, क्रीडाकाले, यः प्रहारः ताडनं, तद्र्थं वेत्रलताः, वेत्राणि । निष्प्रयोजनानि, प्रयोजनरित्ति, मृणालानि, कमलानि । यौवनेति—यौवनेन, तारुण्येन, यः, उप्मा, उप्मता, तेन ये स्वेदिनन्दवः, धर्मजलकणाः, विद्रधाः, मनोज्ञाः । श्रोण्यः, नितम्बाः । विशालेति—विशालं, वृहन्, यन्

शालस्फाटिकशिलातलचतुरस्रा रागिणां विश्रामकारणमनिमित्तं भवनमिण्वेदिकाः। कमललोभनिलीनान्यलिकुलान्येच मुखराणि पद्माभरणकानि, निष्फलानीन्द्रनीलनुपुराणि । नृपुररवाहृता भवनकलहंसा एव समुचिताः संचरणसहायाः, ऐश्वर्यप्रपञ्चाः परिजनाः।

तत्र च साज्ञात्सहस्राज्ञ इव सर्ववर्णधरं धनुर्दधानः, मेरु-मय इव कल्याण्यकृतित्वे, मन्दरमय इव छन्नीसमाकर्षेणे, जल-निधिमय इव मर्यादायाम्, आकाशमय इव शब्दपादुर्भावे,

स्फटिकशिलानलं, स्फटिकमिगामयशिलापर्म, तद्वन चतुरस्राः, चतृष्कोरााः, रागिगाां, विलामिनां, विश्रामकारगां, विश्रान्तिस्थानम्, श्रनिमित्तं, श्रकारसम्। कमलेति -कमललोमेन, निलीनानि, सं**ल**-ग्नानि । मुख्यरागाि, निस्वनन्ति, इन्द्रनीलनृपुरागिः, नीलकान्तमगिः-निर्मितानि, मर्ज्जीरागि । सञ्चरणमहायःः विचरण्मङ्गिन्यः, ऐश्वर्य-प्रपद्धाः, विभवविस्तराः । तत्र इत्यादावारभ्य, पृष्पभूतिरितिनाम्नावभूव इत्येननान्वयः । सर्वेति सर्वे, वर्गाः, त्राह्मग्रादयः, शुक्राद्यश्च तान् धरनीति, धारयति, पालयति, वा तथोक्तम, धनुः कामुर्के, दधानः, धारयन । कल्यागाप्रकृतित्वे, कल्यागां, मङ्गलं, स्वर्गाञ्च प्रकृतिः यस्य तथात्वे । मन्दरमयः, नदारुयपर्वेतकः, ज्ञीरोदमन्थने, मन्दराचलस्य, मन्थनद्ग्डरूपतया, तेनैव तत्र स्थितायाः, लच्म्याः, समुद्धरग्।म्। मर्यादायां, स्थितौ, सदाचाररचर्गे, सीमायां च जलनिधिः, श्रसीमा, तथा ऽयमपि अविचलितसदाचारः, शब्दप्रादुर्भावे, शब्दानां, यशो-विनयादिरूपाणां, घटपटादिरूपाणां च, प्रादुर्भावः, प्रकाशनं, यस्मिन् त्र्याकामय इव । कलासंप्रहे, कलाः, चतुषष्टिप्रकाराः विद्या षोडश-भागाश्च, तासां, संप्रह:, तस्मिन् , शशिमय इव । ऋकृत्रिमालापत्वे,

शशिमय इव कलासंप्रहे, वेदमय इवाक्तत्रिमालापत्वे, धरिणमय इव लोकधृतिकरणे, पवनमय इव सर्वपार्थिवरजोविकारहरणे, गुरुर्वचित्ति, पृथुरुरित, विशालो मनित, जनकरतपित, सुया-त्रस्तेजसि, सुमन्त्रो रहिस, बुधः सदिस, अर्जुनो यशिस,मीष्मो धनुषि, निषधो वपुषि,शत्रुघः समरे,शूरः शूरसेनाऽऽक्रमणे, द्वः प्रजाकमीणे, सर्वादिराजतंजः पुञ्जनिर्मित इव राजा पुष्पभूति-रिति नाम्ना वभूव ।

पृथुना गाँरियं कृतंति यः स्पर्धमान इच महीं महिषीं चकार।

श्रकृतिमः, श्रकपटः, सत्यमित्यर्थः, अपोरुपयश्च आलापः वचनं यस्य तथात्वे वेदमय इव। लोकपृतिकरगे, लोकानां, जनानां, जगतांश्च धृति:, धारगां, धैर्यश्च तस्याः करगां, सम्पाद्ने धरिगामय इव । सर्विति - सर्वेषां, पार्थिवानां, राज्ञां, रजाविकारस्य, रजागुण्-विकृते: ( पत्ते ) पार्थिवानां, १थिवीसम्बन्धिनां रजसां, घूलीनां विका-रस्य हरगा, त्रपनयनं । वचिस गुरुः, महान् , उरिस, वचिस, पृथुः, विशालः, मनसि, हृद्ये, विशालः, विस्तीर्गः, तपसि, तपस्यायां, जनकः, उत्पादकः, तंजसि, सुयात्रः, सुशोभना यात्रा यस्यसः रहसि एकान्ते, सुमन्त्रः, सुशोभनः मन्त्रः यस्य तथोकः, सदसि, सभायां. बुध:, परिडतः । धनुषि, कार्मुकं, भीष्मः, कठिनः, वपुषि, निषधः, कठिनः । समरे, युद्धे, शत्रुत्रः, शत्रुन् हन्तीति सः । शूरः, वीरः । शूरेति शूरागां, शौर्यशालिनीनां, सनानां, शूरसनस्य, देशविशे-पस्य त्राक्रमणं तस्मिन्। प्रजाकर्मणि, प्रजापालनं, द्वः, चतुरः। सर्वेति सर्वेषां स्रादिराजानां तेजसः, पुञ्जेन निर्मितः, रचित इव 🌯 राजा, नृपतिः, पुष्पभूतिः नाम्नावभूव । पृथुनेत्यादि इयं, मही, गौः । कृतेति . स्पर्धमान इव, इर्प्यमागा इव महीं, महिषीं, कृताभिपेकां, निसर्गस्वैरिण्। स्वरुच्यनुरोधिनी च भवति हि महतां मितः । यतस्तरम् केनिचदनुपदिष्टा सहजैव शैशवादारस्यान्यदेवतावि-मुखी भगवति, भक्तिमुळसे, भुवनभृति, भूतभावने, भवचिछदि, भवे भूयसी भक्तिम् त्। अकृतवृषभध्वजपूजाविधिनं स्वप्नेऽप्या हारमकरोत् । अजम्, अजरम्, अमरगुरुम्, असुरपुरिपुम्, अपरिमितगणपतिम्, अचळदुहित्पतिम्, अखिळभुवनकृतचर-णनतिम्, पशुपति प्रपन्नोऽन्यदेवताश्रत्यममन्यत त्रैळोक्यम् । भर्तृचित्तानुवित्तन्यश्चानुजीविनां प्रकृतयः । तथा हि । गृहे गृहे भगवानपूज्यत खएडपरशुः। वषुरस्य होमानळज्वाळाविळीयमान-बहळगुग्गुलुगन्धगर्माः स्नपनद्यीरशीकरद्योदद्यारिणो विल्वप-

प्रधानपत्रि चकार । निसर्गस्वैरिग्रा, स्वभावतः स्वेच्छाचारिग्रा, स्वरूच्यानुरोधिनी, स्वाभिमनानुर्वातनी, अनुपदिष्टा, अशिक्ति। । भुवनेति—भुवनानि, जगन्ति, विश्रति, धारयति तस्मिन् । भूनेति — भूनान्, प्राग्गानः भावयति मनः, स्थिनत्वेन, विषयेषु, प्रवनेयति यः तस्मिन् । भवच्छिदि, संसारध्वंसिनि । भवे, हरे । अजं, जन्मरिहतं, अजरं, जराश्न्यम्, अमरगुरुम्, देवदेवम्, असुर पुरिपुम्, त्रिपुर्गारिम्, अपरिमितगग्पतिम्, अपरिमितानां, असंख्यकानां, गणानां, प्रमथानां, पतिः, तम् । अचलेति—अचलस्य, नगस्य, हिमवतः, दुहितुः, कन्यायाः, पतिः, तम् । अखिलेति—अखिलैः, समग्रः, भुवनैः, कृता, चरग्योः, निः, प्रगामः,यस्य तम् । प्रपन्नः, आश्रितः । खण्डपरशुः, शिवः, (शंकरश्चन्द्रशेखरः,भूतंशः खण्डपरशुः "इत्यमरः) ववुः, वहन्तिसम् । होमेति—होमानलज्वालायां, होमकुण्डाग्निशिखा-याम्, विलोयमानानां, द्रवतां, वहलानां, वहूनां, गुग्गुलानां, गन्योन् गर्भे, मध्ये येषां ते । स्नपनेति—स्नपनं, स्तानोपकरग्राम्, यन् चीरं,

त्तवद्दामदलोद्वाहिनः पुर्वालयेषु वायवः । शिवसवर्यासमुचितै-रुपायनैः प्राभृतैश्च पौराः,पादोवजीविनः सचिवाः,भुजबलिजि-ताश्च करदीछता महासान्तास्तं सिपेविरे । तथा हि । कैलास-कृटश्रयलैः कनकपत्रलतालंकतिवपाणकोटिभिर्महाप्रमाणैः सं-ध्वायलिवृषैः सौवर्णैश्च स्नपनकलशैर्ष्यभाजनैश्च, धूपपात्रैश्च, पुष्पपटैश्च, मिण्यिष्टप्रदीपैश्च,ब्रह्मसूत्रैश्च, महाईमाणिक्यखर्ड-खचितैश्च मुखकोपैः परितोषमस्य मनसि चकुः । श्चन्तःपुरा-रुपपि स्वयमारब्धवालेयतरहुलकराडनानि, देवगृहोपलेपनलोहि-

दुग्धम् , तस्य शीकराः, विन्दवः एव चोदाः, चूर्णमदृशाः, तान् च्चरन्तीति तथोक्ताः । विख्वेति न्विल्वपल्लवानां, दामानि, माल्यानि, तेषां दलानि, निचयानि, उद्वहन्तीनि तथाविधाः, पुण्यालयेषु, पुण्य-स्थानेषु । शिवेति-शिवस्य, सपर्या, पूजा, तत्समुचितानि, तैः, उपायनैः, उपढोकनैः, प्राभृतकैः, सुहत्येषितैः, करदीकृताः, द्रण्डजाः कृताः, महासामन्ताः, श्रेष्ठनृपतयः । कैलासस्य, रज्ञतगिरः, कूटानि, शिखराग्रि तद्वन धवलाः तैः । कनकति - कनकपत्रलताभिः, स्वर्ग-रचितपत्रभंगैः, त्र्यलंकृताः, विपागाकोटयः, शृङ्गाप्रागाः, येषां तैः । महाप्रमार्गी:, बृहदाकारैं:, सन्ध्यावलिवृषेः, सन्ध्याकालिकपूजार्थवृषभैः, सोत्रगों:, काञ्चनमर्येः, स्नपनकलसेः, स्नानकुम्भेः, श्रर्घ्यभाजनैः, <del>त्र्र</del>ार्घ्यपात्रेः, पुष्पपट्टेः, कुसुमवसनैः । मिंग्यष्टिप्रदीपाः, ज्वलन्मिग्-शिखा तै:, ब्रह्मपुत्रै:, यज्ञोपवीतै: । महाहेति- महाहेंगा, महामूल्येन, माणिक्यखण्डेन, रत्नशकलेन, खिचतैः, निवद्धेः, मुखकोषैः, मुख-युकाः कोषाः तैः, शिवलिङ्गाच्छादनैः, अस्य पुष्पभूतेः। अन्तः पुरागाि अवरोधवर्गाः । स्रारब्धेति - स्रारब्धानि, वालेयानां, तरडु-लानां, कण्डनानि, यैः तथा भूतानि । देवेति — देवगृहस्य, शिव- ततरकरिक्सलयानि,कुसुमग्रथनव्यग्रसमस्तपरिजनानि तस्या-भिलिषितमन्ववर्तन्त । तथा च । परममाहेश्वरः स भूपालो लोकतः शुश्राव, भृवि भगवन्तमपर्गमेव साद्वादद्वमस्वमथनं दान्तिणात्यं बहुविधविद्याप्रभावप्रस्थात्रेगुँगौः शिष्यैरिवानेकसह-स्रसंस्यैर्व्याप्तमर्त्यलोकं भैरवाचार्यनामानं महाशैवम् । उपनयन्ति हि हृद्यमदृष्टमपि जनं शीलसंवादाः । यतः स राजा श्रवणसम-कालमेव तस्मिन्भैरवाचार्यं भगवति द्वितीय इव कपर्दिनि दूरगतेऽपि गरीयसी ववन्ध भिक्तम् । श्राचकाङ्त् च मनोरथै-रप्यस्य सर्वथा दर्शनम् ।

श्रथ कदाचित्पर्यस्तेऽस्ताचलचुम्बिनि वासरेऽन्तः पुरवर्तिनं राजानमुपस्त्य प्रतीहारी विद्यापितवती--'देव, द्वारि परिवा-डास्ते कथयति च भैरवाचार्यवचनाद्देवमनुप्राप्तोऽस्मि' इति ।

मिन्दरस्य, उपनेपनेन, गोमयादिनां संशोधनेन लोहितनराः, श्रिति-लोहिताः, करिकसलयाः, येपां तथोकानि । कुसुमेति –कुगुमानां, प्रथनं, गुम्कनं, व्यथाः, लग्नाः, परिवाराः, येपां तानि, श्रत्ववर्त्तन्तः, श्रान्वस्मर्य । परममाहेश्वरः, महेश्वरस्य परमभकः, भृवि वसुधायाम् । दत्तमग्यमथनम्, दत्तप्रजापतेः ( यज्ञध्वंसनित्यर्थः ) दात्तिग्यात्यम्, दित्तगादेशप्रभवम् । बिह्निति बहुविधा, या विद्या, तस्याः, प्रभावेन, प्रस्थातेः, प्रसिद्धे , उपनयन्ति, उपस्थापयन्ति, शीलसंवादाः, चारित्र-सादृश्यानि । कपर्दिनि, शिवि, गरीयसीं, गुक्तराम्, श्रान्वकांत्त, इच्छ्यामास ।

पर्यस्ते, श्रवसिते, वासरे, दिवसे, परित्राट्, सन्न्यासी, श्रनुप्राप्तः, समागतः । श्रथं न चिरात् इत्यादौ मस्करिणमद्राचीत् इत्यनेनान्वयः। प्रांशु, उन्नतकायं, श्राजानु, उरुपर्यन्तं, लम्बौ, भुजौ यस्य तम्।

राजा तु तन्द्भृत्या साद्रम्—'क्कासौ आनयात्रैव। प्रवेशयैनम् इति चाव्रवीत्। तथा चाकरोत्प्रतीहारी। नचिराच प्रविशन्तं प्रांशुम्, आजानुलम्बभुजम् भेज्ञज्ञाममपि स्थूलास्थिभिरवयवैः पीवरमिवीपल्द्यमाण्म्, पृथुत्तमाङ्गम्, उत्तुङ्गबलिभङ्गस्थपुट-ललाटम्, निर्मांसगगडक्रपम्, मधुविन्दुपिङ्गलपिमग्डलाज्ञम्, ईपदावक्रघोण्म्, आतिप्रलम्बैककर्णपाशम्, आलावुबीजविकटो-न्नतद्नतपिङ्क्म्, तुरगान्द्रक्षथाधरलेखम्, लम्बचिवुकायतन्तरलल्पनम्, अंसावलिम्बना कापायण् योगपट्टकेन विरचित-वैक्चकम्, हृद्यमध्यनिबद्धप्रन्थिना च रागेण्व खग्डशः छतेन

भैत्तेति —भित्ता, एव भैत्तं तेन कामं, कीएएम्। स्थूलेति —स्थूलाः, याः, अस्थयः, येवां, तेः, अवयवेः, पीवरम् । स्थूलं । पृथ्कत्तमागम् , वृहन्मस्तकम् । उत्तंगिति उत्तुङ्गा, दीर्घाः, विल्मंगा यत्र ताहरां, स्थपुटं, निम्नोन्नतं, ललाटं, भालं, यस्य तथाक्तम् । निर्मासेति — निर्मासो, मांसगून्यो गण्डो, कपोलो, कृपाविव, यस्य तथाक्तम् । मध्यिति —मधुविन्दुवन्, पिगलं, पिमण्डलं, गोलकं, ययोः तथा भूते, अत्तिणीयस्य तथा भूतम् । ईपदिति —ईपन्, आवका, घोणा नासिकायस्यतम् (घोणानासा च नासिका इत्यमरः ) अतीति — अतीत्र अति, अतिशयेन, प्रलम्बः, लम्बमानः, एकः कर्णपाशः यस्य तथो-क्तम् । अलाविविति —अलावुबीजवन्, तुम्बीबीज इव विकटा, कराला, उन्नता च दन्तपंतिः, दशनावलीयस्य तम् । तुरगेति — तुरगस्य, अन्कः, अधोगतः, अष्टः, तद्वत अधा, शिथिला, अधरलेखा यस्य तम् । उर्वेति — लम्बेन, चितुकेन, अधराधोभागेन, आयत्तरम्, अतिदीघी, लपनं, मुखं यस्य तथोक्तम् । अंसावलिन्वना, स्वन्त्यावलिन्वना, काषायेगा, काषायरक्षितंन, योगपृहकेन, योग-

धातुरसारुणेन कर्पटेन इतोत्तरासङ्गम् । पुनरुक्तबालप्रग्रह्वेष्ट निश्चलमूलेन वद्धमृत्परिशोधनवंशत्वितितउनाकोपोनसनाथ-शिखरेण खर्जूरपुटसमुद्धकगर्भीकृतभित्ताकपालकेन दारवफलक-त्रयत्रिकोणित्रयिनिविष्टकमण्डलुना बहिरुपपादितपादुकाय-स्थानेन स्थूलदशास्त्रनियन्त्रितपुरितकापूलिकेन वामकरधृतेन योगभारकेणाध्यासितस्कन्त्रम्, इतरकरगृहीतवेत्रासनं मस्करि-

साधनेन पट्टबसनखण्डेन विरचितं, वैकत्तकम् । हृदयेति हृदयस्य, वत्तसः, मध्ये, निबद्धः, रचितः, प्रन्थिः, यस्य तथोक्तेन, रागेगीव, धातुरसारुग्वेन, गैरिकरकंन, कर्पटेन, नककेन, कृतोत्तरासंगक्रतः, उत्तरासंगः, उत्तरीयं येन नथोक्तम् । पुनरुक्तेति— पुनरुक्तेन, बालेन, नूतनेन, प्रप्रहेगा, रज्वा, यद्वेष्टनं, तेन निश्चलं, स्थिरं मूलं यस्य तेन । बद्धेति वद्धः, मृदां, मृतकानां, परिशोयनाय, परिमार्जनाय, वंश-त्वचा, वेगुवल्कलेन, नितयः चालनी यत्र तेन (चालनीनितयः पुमान-इत्यमरः ) कौपीनेति कौपीनेन, चीरवस्त्रेगा, सनार्थ, युकम, शिखरं, श्रयभागं, यस्य तेन । खर्जूरेति – खर्ज्रस्य, वृत्त-भेदस्य, पुटै:, ऋष्टे:, समुद्रकः, सम्पुटकः तस्य गर्भीकृतं गर्भेस्थापितं, भिजाकवालकं, (भिज्ञापात्रमित्यर्थः) यस्य तथोक्तेत । दारवेति—दारवं, काष्टसम्बन्धी यत् फलकत्रयम्, पट्टकत्रयम्, तस्मिन्, ये, त्रयः कोगाः तेषु याः, तिस्रो, यष्टयः, दण्डाः, तासु, निविष्टः,कमण्डलुः यस्य तथाविधेन । बहिरिति - बहिः,बाह्यदेशे, उपपादितं, सम्पादितं, पादुक्रयोः, उपानहोः, श्रवस्थानं, स्थापनं यस्य तथाविये । स्थूलेति---स्थृतैः वृद्धैः, पीवरैः, वा, दशसूत्रैः, वसना-ब्बल तन्तुभिः, नियन्त्रितं, निवद्धं, पुस्तिका पूलकं चुद्रपुस्तकसमृहः, यत्र तेन । वाम करधृतेन, वामहस्तगृहीतेन योगमारकेगा, योगसाधन ण्मद्राचीत् । चितिपितरप्युपगतमुचितेन चैनमादरेणान्वग्रहीत् श्रासीनं च पत्रच्छ—'क भैरवाचार्यः' इति । सादरनरपितवच-नमुदितमनास्तु परिवाट् तमुपनगरं सरस्वतीतटवनावलिम्बिनि ग्रन्यायतने स्थितमाचचचे । भूयश्चाबभाषे—'श्चर्चयित हि महा-भागं भगवानाशीर्वचसा' इत्युत्क्वा चोपिनन्ये योगभारकादा-कृष्य भैरवाचार्येप्रहितानि रत्नवन्ति बहलालोकलिप्तान्तःपुराणि पञ्च राजतानि पुण्डरीकाणि ।

नरपतिस्तु प्रियजनप्रणयभङ्गकातरो दाचिण्यमनुरुध्यमानो प्रहण्ळाघवं च छङ्घियतुमसमर्थो दोळायमानेन मनसा स्थित्वा चिरं कथं कथमप्यतिसोजन्यनिष्नस्तानि जप्राह । जगाद च

द्रव्यसञ्चयस्थाल्या, अध्यामितः, संनिवंशितः स्कन्धः यस्य तम् । इतरेति इतरेगा, दिल्योन, करंगा, हस्तेन, गृहीतं, वेत्रासतम् । सस्करिगां सन्यासिनम्, अद्राज्ञीन् । ज्ञितिपतिः, राजा, उपगतम् , उपस्थितम् । उचितेन, अनुकूलेन । उपनगरम् , नगरसमीपम् । सुदितमनाः, प्रसन्नचितः । सरस्वतीति सरस्वत्या, तन्नामनद्याः तेटे, तीरे यद्वनं तप्त्वलम्बतं इति तथोके सरस्वतीतीरस्थवनान्तं, शृन्यायतने, शून्यमित्ररे । स्थितिं, वासं, आचचचते, आवभास । भूयः, पुनः, अर्चयित, पूजयित, महाभागं, भाग्यवन्तम् , उपितन्ये, समर्पितवान् । बहलेति बहलेन, प्रभूतेन, आलोकेन, कान्त्याः, लिप्तम्, अन्तपुरं, यैः तानि, रज्ञवन्ति, मिण्यवचितानि, राजतानि, रोप्यमयानि, पुण्डरीकाणि, कमलानि । प्रियेति प्रयज्ञनस्य, प्रीतिपात्रस्य, प्रण्यमङ्गः तेन कातरः, दान्तिण्यं, चातुर्यं, अनुरुध्यमानः, अनुसरन्, प्रह्णालाघवम्, प्रह्णे, लाघवम्, दोलायमानेन, (किंकर्त्तत्र्यविमूहतया गृहामि नवेति संश्वितेनेत्वर्थः ) अतिसन्नोत्य-

'सर्वफळप्रसवहेतुः शिवभक्तिरियं नः,यया मनोग्थदुर्लभानि फळ-न्ति फळानि। येनैवमस्मासु प्रीयते भगवान्भुवनगुरुर्गेरवाचार्यः । श्रो द्रष्टास्मि भगवन्तम्' इत्युक्त्वा च मस्करिणं व्यसर्जयस् । स्रनया च वार्तया परां मुद्मवाप ।

अपरेयुश्च प्रातरेवोत्थाय वाजिनमधिरुद्य समुच्छितश्वेतात-पत्रः समुद्धृयमानधवल्रचामरयुगलः कतिपयेरेव राजपुत्रैः परि-वृतो भेरवाचार्यं सवितारमिव शशी द्रष्टुं प्रतस्थे। गत्वा च किचिद्न्तरं तदीयमेवाभिमुखमापतन्तमन्यतमं शिष्यमद्राचीत्। अप्रार्चाच —'क भगवानास्ते' इति । सोऽकथयत् —'श्रस्य जीर्णु-

निन्न, अतिस्रो नत्यवंशवरः । सर्वेति संवेपां, समयाणां, फलानां प्रस्तवहृतः, उत्पत्तिकारणाम्, नः, अस्माकम् । मनार्थातं मनारथनाऽपि, दुर्लभानि, दुष्प्राप्याणि । भुवनगुरुः, जनद्दावार्यः, श्वः, पर्दिनं, महरुरिण्णं, परित्राजम्, वार्त्तया, वृत्तान्तेन, वाजिनम्, अश्वम् । समुच्छितेति समुच्छितं, समुद्धृतम्, श्वेतं, धवलं, आतपत्रं, छतं येन सः । समुद्धृत्रमानंति समुद्धृत्रमानं, संवीज्यमानं, धवलं, श्वेतं, चामरगुणलं, येन सः । सवितारमित्र, सूर्यमित्र, शशी, चन्द्रः, द्रप्टुम्, अवलोकियतुम्, अभिमुखम्, सम्मुखम्, आपतन्तं, आगच्छन्तम्, अन्यतमम्, अपरम्, शिष्यम्, अन्तवासिनं, अद्राचीत्, दद्शं । जीर्णामातृगृहस्य, पुराननदेवीमन्दिरस्य, उत्तरेणा, उत्तरस्यां दिशि, विल्ववादिकाम्, विल्ववृत्त्वशोभिनोद्यानम् । अथेत्यादे भेरवाचार्यं दर्शे इत्युत्तरेणान्वयः । कार्पाटेकवृत्दस्य, कर्पटे, चीरवस्त्रम्, परिधारयन्ति इति कार्पाटेकाः, कौ गीनधारिणः, तेषां, वृत्दस्य, समृहस्य । दत्ति —दत्ताः, इष्टर्वायेतिभावः, अष्टो पुष्पिकाः,पद्माद्यः येन तम्। अनुष्ठिताप्रिकार्यं, सम्पाद्दिहवनविधिम् । कृतेति —कृतः, भस्मचय-

मातृगृहस्योत्तरेण विल्ववाटिकामध्यास्तं' इति । गत्वा च तं प्रदेशमवततार तुरङ्गमात् । प्रविवेश च विल्ववाटिकाम् ।

त्रथ महतः कार्पटिकवृन्दस्य मध्ये प्रातरंव स्नातम् ,दत्ताष्ट-पुष्पिकम् , अनुष्ठिताप्तिकार्यम् , कृतभस्मचयपरिहारपरिकरे हरितगोमयोपलिप्तत्तितितलविततं व्यावचर्मग्युपविष्टम् , रुष्ण-कम्बलप्रावरणनिभेनासुरविवरप्रवेशाशङ्कया पातालान्धकारा-वासमिवाभ्यस्यन्तम् , उन्मिषता विद्युन्कपिलेनात्मतेजसा महा-मांसविकयकीतेन मनः शिलापङ्केनेव शिष्यलोकं लिम्पन्तम् , जटीकृतेकदेशलम्बमानस्द्रात्तशङ्कगुटिकेनोध्वयद्वेन शिष्यापा-शंन वधनन्तमिव विद्यावलेपद्विव्यानुपरिसंचरतः सिद्धान्ध-

परिहारम्य, भूतिसमृहसम्मार्जनस्य, परिकरः, प्रक्रिया यस्य तिस्मन । हिनिति हिनित्न, स्यामजेन, गोमयेन, उपलिप्तं, शोभिनं, हितिनलं, भूतलं तिस्मन विततं, विस्तृतं, तिस्मन । रूप्ण्कस्वलेति कृष्ण्यवर्ण्कस्वलम्, एव प्रावरणम्, गात्राछाद्तम्, तस्य निभः, छलं, तेन । असुरेति छ्यसुरविवरम्, पातालं, तत्र प्रवेशः तस्य स्राशंका, वितकीः, तया । पातालेति पातालं यः अस्थकारः, तत्र स्रावास-मित्र, स्थितिमित्र, स्रम्यस्यन्तं, शित्तमाण्म् । उन्मिपता, स्फुरता, विद्युत किष्लंन, तिहित्पङ्गलेन, स्रात्मतंत्रमा, निजतंत्रमा । महामासंति महामासं, नरमांमं, तस्य, विकयः, तेन कीतः, तेन । मन-इति मनः शिला, (मैनशिल) धातुविशेषः तस्य पंकः, द्रवः, तेन, शिष्यलोकम्, स्रन्तेवासिजनम् । जटीति स्रजटा जटासम्पाद्यमानः, जटीकृतः, एकदेशः, एकांशः, तिस्मन्तम्वमानाः, रुद्राज्ञाः, जपमालाः, राख्यपुटिकाः, (शास्वनिर्मितजपसाधना इत्यर्थः) यस्मिन तथोकेन, ऊर्ज्वव्रेन, उस्रम्य नियमितेन, शिखापाशेन वधनतमित्र।

वलकतिपयशिरोरुहेण वयसा पञ्चपञ्चाशतं वर्षाण्यतिकामन्तम् , खालित्यक्तांयमाणशङ्खलोमलेखम् , लोमशकर्णशष्कुलीप्रदेशम् , पृकुललाटतटम् , तिरश्च्या भस्मललाटिकया बहुशः शिरोर्घधृ-तदग्धगुगुलुसंतापस्फुटितकपालास्थिपाण्डुरराजिशङ्कामिव जन्यन्तम् , सहजललाटवलिभङ्गसंकोचितकुर्चभागं बभ्रूभासं भ्रूसंगत्या निरन्तरामायामिनीमेकामिव भ्रूलेखां बिभ्राणम् , ईषत्काचरकनीनिकेन रक्तपाङ्गिनिर्गतांशुप्रतानेन मध्यधवल-

विद्येति—विद्ययायोऽवलेपः, ऋहंकारः तेन दुर्विद्वधाः, दुर्विनीताः तान । उपरि, त्राकारा, संचरतः, परिश्रमतः, सिद्धान देवयोनिविरा-पान्। भवलंति धवलाः, श्वेताः, शिरोक्दाः, वेशाः यस्मिन, तथोक्तन, शिरसा, उत्तमांगेन। खाछित्येति खलतिः, खल्वाटः तस्य भावः खालित्यम् तेन चीयमागाा, शङ्कस्य, लोमलेखा, केश-निचयो यस्य तथोक्तम् । स्टोमशेति लोमशः, लोमाकीर्गा, कर्ग-शष्कुली, कर्माकुहरं तस्या प्रदेशः, यस्य तम् । पृथुलल टनटम्, विशालभालम् । तिरश्च्या, तिर्यग्वर्तिन्या ललाटिकया, मस्तकभूपगोन । शिर इति - शिरसः, ऊद्ध्वै, शिरोद्ध्वै, तस्मिन् घृतानां द्राधानां, गुग्गुलानां, गन्ध्रद्रव्यभेदानां, सन्तापेन, उत्तापेन, स्फुटितानि यानि कपालाम्थीनि, मस्तकास्थीनि तेपां पाण्डुरा, धवला राजिः, पंङ्किः, तस्याः, शङ्का, तामिव, जनयन्तम्, उत्पादयन्तम्। सहजेति-सहजेनः स्वाभाविकेन, ललाटे यो वलिभद्गः, तेन संकोचितः, लघुनां प्रापितः, कूर्चभागः, भृमध्यभागः, यस्य तथोक्तम्, ( कूर्चमस्त्री भ्रवोः, मध्यम् "इत्यमरः" ) वश्रभासं, पिङ्गलकान्तिम् । भ्रूसंगत्येति 🦠 भ्रवोः, संगतिः, सम्मेलनं तया, निरन्तरां, श्रविरलाम्, त्र्यायामिनीम्, श्रायतां । श्रनेखाम् । ईषदिति-ईषत् , काचरा, पीतवर्णाः, कनी-

भासेन्द्रायुधेनेवातिद्धिंग लोचनयुगलेन पिरतो महामण्डलमि-वानेकवर्णरागमालिखन्तम्,सितपीतलोहितपताकावलीशवलम्, शिवबलिमिव दिचु विचिपन्तम्,तार्क्यतुग्डकोटिकुञ्जाप्रघोणम्, दूरविदीर्णस्कसंचिप्तकपोलम्, किचिद्दन्तुरतया सदाहृदयसं-श्रिहितहरमौलिचन्द्रातपेनेव निर्गञ्छता दन्तालेकेन धवलयन्तं दिशां चक्रवालं, जिह्नाग्रस्थितसर्वशैवसंहितातिभारेणेव मनावप्र-

निका, मध्यतारा यस्य तेन । रक्तापांगेन, नेत्रप्रान्तदेशेन । निर्गतेति— निर्गता, त्रंशुनां, किरगानां प्रतानाः, प्रमराः यस्मात्तेन, रक्तान्, रक्तवर्गात्, त्रपाङ्गात्, नेत्रप्रान्तदेशान्, निर्गताः, त्रंशुप्रतानाः यस्य तेन । मध्येति - मध्ये, धवला, भासा, प्रभा, यस्य तेन इन्द्रायुधेन, शकधनुप इव, त्र्रातिदीर्घेगा, त्र्राकर्गाविस्तृतेन, परितः, महामगडलं, ( सर्वतो भद्रादिक्षपं यन्त्रमित्यर्थः ) अनेकाते - अनेकै:, विविधैः, वर्गोः, रागैः, रञ्जनं यत्रतं । सितेति—सिनाः,श्वेताः,पीताः,पीतवर्गाः, लोहिताः, रक्ताः, च याः पताकाः, वैजयन्त्यः तासां त्रावल्यः, श्रेण्यः, नाभिः शवलं, विविधवर्गारञ्जिनम् शिववर्ति, शिवपूजाविधिम्। तार्च्यति - तार्च्यः, गरुडः (गुरुत्मान् गरुडस्तार्च्यः ''इत्यमरः ) तस्य तुरुडकोटिः, चञ्च्वाप्रम् तद्वत् कुञ्जम् , अप्रयोगाम् , अप्रतासि-कम् यस्य तथोक्तम् । दूरेति--दृरं, अत्यन्तं, विदीर्गाभ्याम् , विस्तृ-ताभ्याम्, सृकाभ्यां, ऋोष्टाभ्याम्। संज्ञित्रो, संक्रोचित्रो, कपोलो, गण्डो यस्य तम्। किंचिद्दन्तुरतया, ईपदीर्घदन्तत्वेत, सरा, हृद्ये, चित्तं, सन्निहितस्य, त्रावस्थितस्य, हरस्य मौलौ, शिरसि यः चन्द्रः तस्य त्रातपः त्रालोकः तेन इव, निर्गच्छता, वहिर्गच्छता, दन्तालोकेन, दशनप्रभया, दिशां चक्रवालं, मण्डलम्, धवलयन्त्रम् । जिह्नेति -िनह्वायाः, रसनायाः, श्रय्रेस्थिताः । याः, सर्वाः, शैवसंहिताः, शिव-संहिताः, शिवचरितगाथाः, तासां, ऋतिभारेगोव, मनाक्, ईपत्, लिम्बतोष्ठम् , प्रलम्बश्रवणपालिष्रेक्षिताभ्यां स्फाटिककुण्डलाभ्यां शुक्रबृहस्पतिभ्यामिव सुरासुरविजयविद्यासिद्धिश्रद्धयानुबध्य-मानम् ,बद्ध विविधापिधमन्त्रस्त्रपंक्तिना सलोहवलयेनैकप्रको- छेन शङ्ख्यग्डं पूष्णो दन्तिमिव भगवता भवेन भग्नं भक्त्या भूपणीकृतं कलयन्तम् , अखिलरसकृपोदश्चनघटीयन्त्रमालामिव खद्रात्तमालां दित्रणेन पाणिना भ्रमयन्तम् , उरसि दोलायमाने-नापिङ्गलाग्रेण् कृर्चकलापेन संमार्जयन्तमिवान्तर्गतं निजरजो-

प्रलम्बितः, ध्योष्टः, यस्य तथोक्तम् । प्रत्यस्वेति । प्रलम्बयोः, प्रकर्षेग्। लम्बमानयोः, श्रवगापाल्योः, कर्मागवयोः, प्रेक्किते, श्रान्देशितते. ताभ्याम् । स्फटिककुण्डलाभ्यां, स्वच्छकर्गाभूषणाभ्याम् , शुक्रवृह-स्पितभ्यामित्र । सुरेति – सुरासुरागाां, देवदैत्यानां, या विजयित्रया, तस्याः, सिद्धिः, तस्याः श्रद्धया, श्रनुवश्यमानम्, श्रनुगम्यमानम्, बद्धेति बद्घा विविधानां, श्रोपशीनां, मन्त्र,गांच सृत्रपंक्तिः, यस्मिन् तथोक्तेन मलोहबलयेन, लोहबलयालंकृतेन, एकप्रकोप्टेन, एकेन, कर्परमणिवन्ययोः अन्तरप्रदेशेन ( प्रकोष्टो मणिवन्यस्य कर्प्रस्यान्तरं ऽपि च इति मेदिनी) शंखायण्डम् ,कम्बुशकलम् । पृष्गाः ,सूर्यस्य,दन्त-मित्र, भवेन, हरेगा, भरनं, पाटितं, भक्त्या, भूपगाीकृतम् , कलयन्तं, धारयन्तम् । **त्राखिलं**ति - त्राखिलम्य, समप्रस्य, रसस्य, जलस्य, श्रनुरागस्य च कूपान, जलाधारान, (संसारकूपाच हरंप्रति-इति भावः ) उद्ब्रनाय, उद्धरगाय, घटियंत्रमालामिव, घटियंत्रराजिमिव ( अरहाट ) रुद्राचमालां, जपमालां द्त्रिगानपागिना करंगा भ्रम-यन्तम । उरसि, वज्ञसि, अपिङ्गलाप्रेगा, ईवन् कपिशाप्रेगा, कूर्चकला-पेन, रमश्रुनिचयेन, सम्मार्जयन्तं, संशोधयन्तम्, श्रन्तर्गतं, (हद्स्थ- , निकरम् , श्रितिनिविडनीळळोममण्डळिविचितं च ध्यानळ्थेन ज्योतिषा दग्धिमेव हृदयदेशं द्धानम् , ईपत्प्रशिथिळविळिवळय-बध्यमानतुन्दम् ,उपचीयमानस्पिङ्मांसपिण्डकम् ,पाण्डुरपिव-त्रचौमावृतकौपीनम्,सावष्टम्भपर्यङ्कबन्धमण्डळितेनामृतफेनश्वे-तरुचा योगपट्टकेन वासुकिनेवाप्रतिहृतानेकमन्त्रप्रभाषाविभूतेन-प्रद्विणीकियमाणम् ,श्ररुणतामरससुकुमारतळस्य पाद्युगळस्य निर्मळैनेखमगृखजाळकौर्जर्यन्तमिय महानिधानोद्धरण्रसेन

ऋतिनिविदेत, ऋतिवतेन, नीतेन, ऋष्णेन, लोममण्डलेन, रोमसमृ-हेन, निचितं व्याप्तम्, ज्योतिपा, प्रभया, (ज्ञानरूवेगोतिभाव:)। ईपदिति ईपत् प्रशिथिलेन, बलिबलयेन, बलिबयेगा, बध्यमानं. वेष्टमानं, तुन्दं, उद्दरं, यस्य तथोक्तम् ( पिचिएडकुक्तिज्ञठरोद्दं तुन्द्रम् "इत्यमरः ) उपचीयमानेति उपचीयमानम्, श्राप्यायमानं, हिफ-चयोः, नितम्बयोः (स्त्रियां स्फिन्तो कटिप्रोत्त्र्थो इत्यमरः) मांसपिएड-कम यस्य तम । पाएडुरेति—पाएडुरेगा, धवलेन, पवित्रेगा, शुद्धेन, चौमेगा, पट्टवसनेन, श्रावृतम् , श्राच्छादितं, कौपीनं, श्रन्तर्वस्त्रं यस्य तथा भृतम् । सावष्टमभेति—सावष्टमभं, सगर्वे यः पर्येङ्कवन्धः, त्र्यासन-विशेषः, तेन मण्डलितं, वलयीकृतं, तेन । श्रमृतेति- श्रमृतंफनवत् , श्वेता, धवला, रुक्, कान्ति यस्य तेन योगपट्टकेन । अप्रतिहतेति-अप्रतिहतानां, प्रतिरोद्धमशक्तानां, श्रानेकेषां, मन्त्राणां, प्रभावेण, सामर्थ्येन, त्राविर्भृतः तेन, प्रदक्षिग्गीकियमाग्गम्, समन्तात् वेष्टमान-मित्यर्थः । श्ररुणिति-श्ररुणं, रक्तम्, यत् तामरसम्, पद्मं, तद्वत् सुकुमारम्, सुकोमलं तलं यस्य तथाभूतस्य । नखेति—तखानां, ्मयूरवाः, किरग्गाः, तेषां, जालकैः, जर्जयन्तमिव, विदारयन्तमिव। महानिधानेति महानिधानस्य, महतो निधः, उद्धरणम्, उत्तोलनम् रसातलम् , तोयज्ञालितशुचिना धौतपादुकायुगलेन हंसमिथु-नेनेव भागीरथीतीर्थयात्रापरिचयागतेनामुच्यमानचरणान्तिकम्, शिखरिनखातकुञ्जकालायसकग्रदेन वैण्वेन विशाखिकादग्डेन सर्वविद्यासिद्धिविद्मविनायकापनयनाङ्कुरानेव सततपार्श्ववर्ति-नाविराजमानम् ,श्रवहुभापिणं मन्दहासिनं सर्वोपकारिणं कुमा-रब्रह्मचारिणम् , श्रतितपस्विनम् , महामनस्विनं कृशकोधम् , श्रकशानुरोधम् , महानगरमिवाद्।नष्रकृतिशोभितम् , मेरुमिव

तस्मिन या रसः, रागः तेन रमानलं, पानालम् । तोयति - तायेन, जलन, चालितं, धोतं अतएव शुचि. पवित्रं, तेन. (पर्व ) तेथे, चालितं, ( सर्वदाजलेऽऽवसनात् घोतमित्यर्थः ) ऋाण्व सुचि, सुभ्रम् तेन । भागारथाति –भागीरथी, गंगा एव तीर्थ, पुरयक्त्रम् , तस्मिन यात्रा, गमनं, तत्र यः परिचयः, संगतिः, तेन, ख्रागतं तेन । ख्रामुच्यः मानेति - त्रामुच्यमानं, चरगान्तिकं यस्य तथाक्तम् । शिखरेति --शिखरे, शृङ्गे, निग्वात:, प्रोत्थित:, कुब्जः, (कुब्चित इत्यर्थः) कालायस-कएटकः, कृष्मालोहितकएटकः, यस्य तेन । वैमावन, वेगाः, वंशद्एडः, तस्यायं वैगावः तेन,विशिखाद्रण्डेन, खनित्रलगुडेन। सर्वेति - सर्वासां, विद्यानां, सिद्धों विद्रः, अन्तरायः यो विनायकः, गराएपतिः, तस्य, श्रपनयनाय, श्रपसारगाय, श्रंकुशः, श्रस्त्रविशेषः, तेन इव । सर्वोप-कारिगां, समस्तापकारपरायगाम् । कुमारत्रहाचारिगाम्, नैष्टिकत्रहा-चारिगाम । महामनस्त्रिनं, प्रशस्तचित्तम । कृशकोधम , ब्राल्पकोधम , श्रकुशानुरोधम् , श्रकुशः, श्रनल्पः, श्रनुरोधः, श्राप्रहः यस्यः तथोक्तम् (पत्ते) अकृशानां, स्थृलानां, अनुरोधः, अनुसरगां, यत्र, तथोक्तम् । **ऋदीने**ति—ऋदीना, दैन्यरहिता, या प्रकृतिः, स्वभावः तया शोभितः तम ( पत्तं ) व्यदीनाभिः, दारिद्रविहीनाभिः प्रकृतिभिः, प्रजाभिः,

करणतरुपल्लवराशिसुकुमारच्छायम् ,कैलासमि वपशुपतिचरण-रजःपविधितशिरसम् , शिवलोकिमिव माहेश्वरगणासुयातम् , जलनिधिमिवानेकनद्नद्रांसहस्त्रप्रचालितशरीरम् , जाह्रवीप्रवा-हमिव बहुपुग्यतीर्थस्थानशुचिम् , धाम धर्मस्य, तीर्थं तथ्यस्य, कोशं कुशलस्य, पत्तनं पूततायाः, शाला शीलस्य, देवं द्यमायाः, शालेयं शालीनतायाः, स्थानं स्थितः, आधारं धृतेः, आकरं करुणायाः निकेशनं कौतुकस्य, आरामं रामणीयकस्य, प्रासादं

प्रधानपुरुषे:. वा शोधितम् । करुपेति - कल्पतम्याां, कल्पवृक्षामाम्, पत्नवराशयः, किसलयनिचयाः, तद्वन् तैश्च सकुमारा, योमला. विशर् च छाया । कान्तिः, अनातपश्च यस्य तथोक्तम् (छायासूर्यप्रिया कान्तिः इत्यमरः) चशुपतीति पशुपतेः, हरस्य, चरगारजोभिः, पशित्रितम्, पावितम् , शिरः, सस्तकम् (पद्ये ) पवित्रितानि, शिरांपि, शृङ्गागि यस्य तथोक्तः. तम् । साहेश्वरेति - सहेश्वरो देवता येपां ते साहेश्वराः. (शैवा:-इत्यर्थः) तेषां गगाः, समृहाः (पन्ने) महेश्वरस्य इमे. माहेश्वराः, ये गरा।:, प्रथमवर्गाः ( गराः प्रथम सहोषे-इति सेदिनी ) तैः, अन्-यातः, अनुगतः, तम् । अनेकेति- अनेकेषु, नदनदीनांसहस्त्रेषु, प्रचालितं, स्नातं शरीरं अस्य ( पचे ) त्र्यनेकैः, नद्नदीसहसैः, प्रचा-लितं, शरीरं यत्र तथोक्तः, तम् । चहितिं - बहुपु, पुग्येपु, तीर्थेपु, ( हरिद्वारादिपवित्रसंत्रेषु-इत्यर्थः ) स्थानेन, स्थित्या, शुचिः, पवित्रः तम, उभयं, तुल्यम्। धाम, त्राश्रयम्, तीर्थ, चंत्रम्। तथ्यस्य, मत्यस्य । कंशिं भारडागारम् , कुशलस्य, मंगलस्य पत्तनं, नगरम् , पृत्तायाः, पवित्रतायाः । शालाः गृह्म् , शीलस्य, सुचिन्तस्य, चेत्रं, भ्यूमिम् , चमायाः, शान्तः, शालेयं, शाला एव शालेयं, गृहं, स्थानं, स्थितः, वासस्य, धृतः, धैर्यस्य, छाधारं, छाध्यः, करुणायाः, द्यायाः,

प्रसादस्य, त्र्रागारं गौरवस्य,समाजं सौजनस्य,संभवं सद्भावस्य, कालं कलेः, भगवन्तं साज्ञादिय विरूपाज्ञं भैरवाचार्यं ददर्श ।

भैरवाचार्यस्तु दृरादेव राजानं दृष्ट्या शशिनमिव जलनिधि-श्रवाल । प्रथमतरोत्थितशिष्यलोकश्चोत्थाय प्रत्युज्जगाम सम-पितश्चोफलोपायनश्च जह्नुकर्णसमुद्रीर्यमाणगङ्गाप्रवाहहादग-म्भीरया गिरा स्वस्तिशब्दमकरोत् ।

नरपतिरपि प्रीतिविस्तार्यमाणधविस्ना चचुपा प्रत्यर्पय-न्निवबहुतराणि पुग्डरीकवनानि स्रहाटपट्टपर्यस्तेन चोदंशुनां

त्राकारम्, मूर्तिः, कोतुकस्य, त्राश्चर्यस्य, निकेतनं, गृहम्, रामग्गिय-कस्य, सुन्दरतायाः, त्रारामम्, उपवनम्। प्रसादस्य, प्रसन्नतायाः, प्रासादं, हर्म्य, गोरवस्य, त्रागारम्, गृहम्, सोजन्यस्य, सुजनतायाः, समाजं, गोष्टीम्, सद्भावस्य, सदाचारस्य, सम्भवम्, उत्पत्तिम्। कलः, चतुर्थयुगस्य, कालं, त्रान्तसमयम्, विरूपान्नं, त्रिलोचनं भैरवाचार्य ददर्श।

शशिनमिवः चन्द्रमिवः जलनिधिः समुद्रः । प्रथमतरेति—
प्रथमतरः, पूर्वतरः, उत्त्यितः, उद्गतः, शिष्यलोकः, छात्रसमूहः यस्य
तथाविधः । समिपितेति समिपितानिः प्रदृत्तःनिः श्रीफलान्येवः
विल्वफलान्येवः उपायनानिः उपहाराः यस्य तथोकः । जहन्विति—
जहनुः, नाम ऋषिः तस्य कर्णान् समुद्रीर्यमाणः, उद्यमनिकयमाणः,
यः, गङ्गाप्रवाहः गङ्गास्रोतः, तस्य हादः, श्रस्फुटनादः तद्वत् गम्भीरया
गिरा वाण्या, स्वस्तिशब्दं श्रकरोन् । नरपितः, राजा । प्रीतीति—
प्रीत्या, विस्तार्यमाणः, प्रसार्यमाणः, धविलमा, यस्य तथा भूतेन,
चचुषा, लोचनेन, प्रत्यपैयित्रव प्रतिद्दिद्व, पुण्डरीकवनानि, श्वेतकमलकाननानि । छळाटेति—ललाटपट्टे, मस्तकदेशे, पर्यस्तः,

शिखामणिना महेश्वरप्रसाद्मिव तृतीयनयनोद्गमेन प्रकाशयन्नावर्जितकर्णपत्नवपलायमानमधुकरः शिवसेवासमुन्मूलिताशेषपापलवमुच्यमान इव दृरावनतः प्रणाममभिनवं चकार ।
आचायोंऽपि—'आगच्छ अत्रोपविश' इति शार्ट्लचर्मार्गायमदश्रीयत् । उपदर्शितप्रथयस्तु राजा मत्तहंसकलगद्गद्गस्वरसुभगां
मधुरसमर्थी महानदीमिव प्रवर्तयन्वाचं व्याजहार—'भगवन ,
नार्हिस मामन्यनुपस्बलितैः खलीकर्तुम् । अशेपराजकोपेचिनाया हतलक्ष्म्याः खल्वयं शीलापराधो द्रविणदौरात्म्यं वा
यदेवमाचरित मिथ गुरुः । अभूमिरयमुपचाराणाम् । अलमित

पिततः, तेन । उदंशुना, उन्नतिकरणेन, शिखामिण्ना, मोलिरत्नेन, महेश्वरप्रमादिमिव, शंकरानुप्रहमिव, तृतीयनयनस्य, उद्गमनेन, उद्घटनेन, प्रकाशयन । स्राविजितिति—स्राविजितेन, स्रान्देशितेन, श्रोत्रपत्रेण, पालयमानाः, मधुकराः, भृङ्गाः, यस्मात् सः । शिवेति—शिवस्य, संवया,समुन्मृलिनानां, समुन्पाटिनानां, स्रशंपाणां समस्तानां, पापानां, लवैः, कर्णः, मुन्यमान इव, हीयमान इव, दृराव्यतः, स्रिमिवं, नृतनं । शार्वृलचर्मं, सिहचर्म । उपेति—उपदर्शित-प्रथ्यः, प्रकटिनविनयः । मत्तिति—सत्तस्य, हंसस्य, कलः, मधुरास्तृतः, पद्रदस्वरः, तेन मुभगां, मनोज्ञां, मधुरसमयीम्, इचुरसात्मीकाम्, (स्रितिमधुरामित्यर्थः ) महानदीमिव, वाचं, वाणीं, व्याजहार, उवाच । नृपेति स्रन्येपां, स्रप्यां, नृपाणां, राज्ञां, स्विल्वानि, दोषाः, तैः, खलीकर्तुम्, सदोषं सम्भावियतुम् । स्रशेपेति—स्रशेषाणां, समप्राणां राज्ञां कोपेन ईिन्तायाः, हनलच्च्याः, स्वक्तसम्पदः, शिलापराधः, चरित्रदोषः, द्रविणादौरात्म्यं, धनदुर्वृत्तता, गुरुः, भवान् मिय विषये, एवं, इत्थम् स्राचरित, स्रभूमिः, स्रस्थानम् (स्रपात्र प्राचरित स्रमुमाः, स्रस्थानम् (स्रपात्र स्वाः विषये, एवं, इत्थम् स्राचरित, स्रभूमिः, स्रस्थानम् (स्रपात्र स्वाः स्वाः विषये, एवं, इत्थम् स्राचरित, स्रभूमिः, स्रस्थानम् (स्रपात्र स्वाः स्वाः विषये, एवं, इत्थम् स्राचरित, स्रभूमिः, स्रस्थानम् (स्रपात्र स्वाः स्वाः विषये, एवं, इत्थम् स्राचरित, स्वाः, स्वाः स्व

यन्त्रण्या । दृगस्थितोऽपि मनोरधशिष्योऽयं जनो भवताम् । माननीयं च गुरुवकोल्लङ्खनमहिति गुरोरासनम् । श्रासतां च भवन्त एवात्र' इति व्याहृत्य परिजनोपनीते वाससि निष-साद । भैरवाचार्योऽपि प्रीत्यानतिकमणीयं नृपवचनमनुवर्तमानः पूर्ववत्तदेव व्याद्याजिनमभजत ।

श्रासीने च सराजके परिजने शिष्यजने च समुचितमध्यां-दिकं चके। क्रमेण च नृपमाधुर्यहतान्तःकरणः शशिकरनिकर विमला दशनदाधितोः स्फुरन्ताः शिवभक्तीरिव सालाहर्शयन्तु-वाच--'तात, श्रतिनन्नतेव ते कथयति गुणानां गौरवम्। सक-लसंपत्पात्रमसि। विभवानुरूपास्तु प्रतिपत्तयः। जन्मनः प्रभृ-त्यद्त्वदृष्टिरस्मि स्वापतेयेषु। यतः सकलदोषकलापानलेन्धनैः-

मित्यर्थः ) उपचारागां, संवानाम, अतियन्त्रगाया, अतिवलेशंन, मनोरथशिष्यः (मनोरथेन शिष्यतां गत इत्यर्थः ) माननीयम, सम्मानविम् । अत्वत्तं, पादेनाक्रमगां, मर्यादातिक्रमगाम वा आसतां, तिप्रनतु । अनुवर्तमानः, अनुमोदमानः, व्यावानिनमः, व्यावम्यः सिहस्यः, अनिनं, चर्म यस्य तथोक्तः, तम् महादेवमः । समुचितम्, युक्तम्, अध्यादिकमः, पृजाविधानमः, चक्रं, कृतवःमः । समुचितम्, युक्तमः, अध्यादिकमः, पृजाविधानमः, चक्रं, कृतवःमः । समुचितमः, चर्यय तथा भृतः । शशोति—शशिनः, चन्प्रस्यः करागां, मयुवानां, निकरवतः, समूहवतः, विमलाः, विश्वादानां रज्जनां च । गोरवमः, उत्कर्षमः, भारवत्वन्तः । स्कृतन्तीः, गुगानां, विधाविनयादीनां रज्जनां च । गोरवमः, उत्कर्षमः, भारवत्वन्तः । सकलोति— सकलानां, सम्पदां, ऐश्वर्यागां, पात्रं, भाजनमः, असिः, भवसिः, प्रतिपत्तयः, ज्ञानानिः, विभवानां, सम्पदां, अनुम्हपास्तु, शादश्यः एव यथात्वं

र्घनैरिविकीतं कचिच्छरीरकमस्ति । मैत्ररिक्ताः सन्ति प्राणाः । दुर्गृहीतानि कतिचिद्विद्यन्ते विद्यात्तराणि । भगविच्छवभद्दारक-पादसंवया समुपाजिता कियत्यपि संनिहिता पुरायकणिका । स्वीकियतां यदत्रोपयोगार्हम् । प्रतनुगुणप्राद्याणि कुसुमानीव हि सवन्ति सतां मनांसि । ऋषि च । विद्वत्संमताः श्रुयमाणा ऋषि साधवः शब्दा इव सुर्धारेऽपि हि मनसि यशांसि कुर्वन्ति । विवरं विशतः कुत्हरुख फंनधवर्यः स्रोतोभिरिवापहियमाणो गुण्गाणेगनीतोऽस्मि कह्याणिना' इति ।

राजा तु तं प्रत्यवादीत् - 'भगवन्, अनुरक्तेष्वपि शर्रारा-दिषु साधूनां स्वामिन एव प्रणयिनः । युष्मदर्शनानुपार्जितमेव

सर्वसम्पूर्णः । स्वापतंत्रेषु, धनेषु, छदत्तद्रष्टिर्यस्म । स्पक्तलेति — सकलाः, समग्राः, दोपकलापाः, दोपितव्हाः, एव. छत्रतलाः, छप्रयः, इत्यतानि, काष्ट्रानि, तें. शरीरकं, तुच्छदेहं कचित्, छिविकितम्, विकितं नास्ति । भेकिति-भिक्तयालव्यम् , भेक्तं तेन रिक्तिः, पालिताः । दुर्गृहीतानि, दुःखेनगृहीतानि । भगवदिति — भगवतः, शियभहारकस्य, शिवस्वामिनः, पादसंवया, चरगोशुश्रुमया पुण्य किंगाका, पुस्यविन्दुः प्रतन्विति — प्रतनुता, स्वल्पन, गुणेन, उपकारादिना तन्तुना च प्राद्याणि, गृहीतुं शक्यानि । विद्वदिति विद्वद्धिः, सम्मताः, छभिम्मताः, स्वीकृताश्च साध्यः, सन्ताः, विशुद्धाश्च, शव्दा इव यशांभि कुर्वन्ति (प्रतिपत्ति विस्तारयन्तीत्यर्थः ) विवनं गहरम् । विश्वतः, गच्छतः। फंतधवलेः फंतवत् श्वेतेः, स्रोत्ते।भिरिवः प्रवाहैरिव, छप्पद्धियमागः, स्वाकृत्यमागः। कल्यागिना,कल्यागाभावनेन,(भवताहित ग्रंपः) ।

श्रनुरवतंषु, श्रनुरागभाजनेषु, स्वामिनः,प्रभवः,प्रगायिनः,प्रगायन्तः उपार्जितम् , एकत्रीकृतम् , श्रपरिमितम् , प्रमागारहितम् , कुशलजातम् , चापिरिमितं कुशलजातम् । अनेनैवागमनेन स्पृह्णीयं पदमारी-पितोऽस्मि गुरुणा।' इति विविधाभिश्च कथाभिश्चिरं स्थित्वा गृहमगात्।

अन्यस्मिन्दिवसे भैरवाचार्योऽपि राजानं द्रष्टुं ययौ । तस्मै च राजा सान्तःपुरं सपरिजनं सकोपमात्मानं निवेदितवान् । स च विहस्योवाच—'तात, क विभवः, क च वयं वनविधताः । धनोप्मणा म्हायत्यहं हतेव मनस्विता। खद्योतानामिवास्माक-मियमपरोपतापिनी राजते तेजस्विता। भवादृशा एव भाजनं भूतेः, इति स्थित्वा च कंचित्काहं जगाम।

परिवार् तेनैव क्रमेण पञ्च पञ्च राजतानि पुराडरीकारग्रुपा-यनीचकार । एकदा तु श्वेतकर्पटावृतं किमप्यादाय प्राविशत् । उपविश्य च पूर्वविस्थित्वा मुहूर्तमव्यीत्-'महाभाग ! भवन्तमाह भगवान्यथास्मच्छिप्यः पातालस्वामिनामा व्राह्मणः । तेन ब्रह्म-राज्ञसहस्तादपहृतो सहासिरहृहासनामा । सोऽयं भवज्ज्ञयोभ्यो

मंगलसमृहः, स्वृह्णीयम्, श्रभिलपणीयम्, पदं, स्थानं, सान्तःपुर, स्वीजनानावासेन सहितं, सपरिजनं, परिवारसहितम्, सकोषम्, स्थन-भण्डारम्, निवेदितवान , समर्पयामास् । विभवः, धनानि । वनवर्धिताः, वने, श्ररण्ये, वर्धिताः, वृद्धिगताः, धनोष्मण्णा, द्रव्यद्पेणा, म्लायित, म्लानि प्राप्नोति, श्रलमत्यर्थम्, मनस्विता, प्रशस्तमनस्कृता । स्वोन्तानामिव, कीटमणिविशेपाणामिव, (जुगनं) श्रपरोपतापिनी, न परान् उपतापयतीति तथोक्ता । भूतेः, सम्पदः । परित्राङ् , भिज्ञः । उपायनीचकार, उपहारीकृतवान् । श्वेतकर्पटावृक्तम्, धवलक्सनाच्छा-दितम् । श्रपहति—श्रपहता, दूरीकृता, महाऽसि, खङ्कः, (तलवार) येन सः श्रदृहासनामा । श्रपहतम्, दूरीकृतम्, कपर्टच्छादनं, वस्नाव-

गृह्यताम्' इत्यभिधायापहृतकर्पटावच्छादनात्परिवारादाचकर्प शरद्रगनिमव पिएडतां नीतम्, कालिन्दीप्रवाहिमव स्तिमित-जलम्, नन्दकजिगीपया इष्णकोपितं कालियमिव रूपाणतां गतम्, लोकविनाशाय प्रकाशितधारासारम्, प्रलयकालमेध-खग्डिमव नभस्तलात्पितम्,दश्यमानविकटदन्तमग्डलं हासमिव हिसायाः, हिवाहुदग्डिमव रुतदृद्धमुधिष्रहम्, सकलभुवनजी-वितापहरण चमेण् कालकृटेनेव निर्मितम्, रुतान्तकोपानलन-प्तेनेवायसा घटितम्, स्रतितीक्णतया प्रवनस्पर्शनापि रुपेव

रगां येन, तथोक्तात् , शरहरानमित्र, शरत्कालिकाकाशमित्र, पिएडतां नीतम् , घनत्वं प्रापितम् । कालिन्दीप्रवाहमिव, यमुनाश्रोतमिव. स्तम्भितज्ञलम् , स्थिरीकृततायम् । नन्द्वेति नन्द्कस्य, विष्णां, खङ्गस्य, जिगीपया, जेतुमिच्छया, कृष्णकोपितम्, कृष्णेन कोपितम् (द्मनादितिभावः) कालीयम् , तदाच्यं यमुनावासिनं, नागविशेषम् । लोकविनाशनाय, जगन्नाशाय, प्रकाशितः, प्रकटितः, धारामारः, धारा-सम्पातः, धारायां, निशिताग्रस्य, सारः, तत्वं यस्य तथेक्तश्च प्रलय-कालमेघखण्डमिव, लयकालिकजलदांशमिव । दृश्यमानेति - दृश्य-मानानि, विकटानि, करालानि, दुन्तमण्डलानि, दुशनराजयः, यस्मिन , तथा भूतम् । हिंसत्या हासमिव । छतिति छतः, रचितः हढः, कठिनः, मुष्टियहः, मुष्टिवन्यः, यस्मिन्, तम् ( पत्ते ) कृतः, दृढं यथा तथा पुष्टः मुष्टिकनामासुरस्य श्रहः श्रह्मां येन तथा भूतम् । कृता-न्तेति— कृतान्तस्य, यमस्य कोपानलः, क्रोधाग्निः, तन तप्तं गलितं तेन, अयसालोहेन । श्रतिनिच्यातया, श्रतिनिशितत्वेन, तैच्ययं च तनुत्वाजायते तनु, श्रम्योऽन्यसङ्घर्षेण् कण्ति इति हृद्यं, रुपेव, कोपेनेव, कणन्तं, रणन्तम् । मणीति - मणिसभ कुट्टिमेषु, मणिमय-

कणन्तम् , मिण्सभाकुष्टिमपतत्प्रतिबिम्बच्छद्मनात्मानमपि हि-धेव पाटयन्तम् , अगिशिरश्छेदल्यनैः कचैन्वि किरणैः करालित-धारम् ,मुमुर्मुहुस्तिडिदुन्मेपतरलैः प्रभाचकच्छुन्तिर्जनितातपम् , खगडशश्छिन्दन्तिमेव दिवसम् ,कटाजमिव कालरात्रेः, कर्णोत्प-लिमेव कालस्य, श्रोंकारमिव कौर्यस्य, श्रलंकारमहंकारस्य, कुलिमेत्रं कोपस्य,देहंद्र्पस्य, सुस्रहायं साहसस्य,श्रपत्यं मृत्योः, श्रागमनमार्गं लद्म्याः, निर्गमनमार्गं कीर्तः, कृपाण्म् ।

श्रवनिषतिस्तु तं गृहीत्वा करेगायुधर्घात्या प्रतिमानिभेना-तिङ्गन्निव सुचिरं दद्शी। संदिदेश च - 'वक्तव्यो भगवान्परद्र-व्ययहणावज्ञादुर्विदम्धमपि हि मे मनो सुष्मद्विषये न शक्तीति

सभावतंषु, पतन , यत् प्रतिविभवम् तस्य छद्य, छलं तेन । पाटयन्तं, खण्डयन्तम् , ( अतितेष्ट्य दिनि भाषः) अर्थाति । अर्थागां, रात्र्यां, शिरांमि, तेषां छेदंन, लग्नाः तेः, कर्यदिव, केशेपित्र कृष्णवर्णस्य तस्य किर्योः, मयुर्वेः, करालितधारं, करालिताः, व्याप्नाः धाराः, यस्य तथोक्तम् । तिष्टिति । तिष्टतां, विद्युतां, उन्मेषाः, विकासाः तद्वन तरलाति, चंचलानि तेः, प्रभाचकायाम् , किर्यामण्डलानाम् , छुरितेः, खिचतः, जर्मितः, खण्डस्यण्डीकृतः, आतपः, सूर्यकान्तिः, यन तथोक्तम् , छिद्नतमित्र, पट्यन्तिमित्र । अतिहर, प्रणवं, कार्यस्य, निष्ठुरतायाः, कुलमित्रम् , कुत्रन, वंशपरम्पर्याः मित्रम् , मृहद्म । मृत्योः, अपत्यम् , सन्तानम् , लक्ष्म्याः, सम्बद्धः, राजशोभायाः वा आगमनमार्याम् , कृषाग्यम् , असिम् ।

त्र्यायुधिष्ठत्या, त्र्यायुधे, त्र्यस्त्रे, या प्रीतिः प्रमनया प्रतिमानिभेन प्रतिदिम्बळ्लेन (स्वस्येति रोषः) सुचिरं, बहुकालम् ।

संदिदेश, वाचिकं, कथयामास । परेति—परेपां, शत्रगाां,

विचनव्यतिक्रमव्यभिचारमाचिरितुम्' इति । परिवाट् तु गृहीते तस्मिनपरितुष्टः 'स्वस्ति भवते । साध्ययामः' इत्युक्त्वा निरया-सीत् । नृपश्च प्रकृत्या वीररसानुरागी तेन कृपाण्नामन्यत करतळवर्तिनीं मेदिनीम् ।

श्रथ वज्ञत्सु दिवसेष्वेकद् भैरवाचार्याराजानमुपह्वरे सोप-श्रहमवादीत् 'तात, स्वार्थालमाः परोपकारद्त्ताश्च प्रकृतयो भवन्ति भव्यानाम् । भवादशां चार्थिद्र्शनं महोत्सवः प्रण्यन-माराधनमर्थग्रहणमुपकारः । भूमिरसि सर्वलामनोरथानाम् । यनाभिर्धायसे । श्रुयताम् । भगवतो महाकालहृद्यनाम्नो महा-मन्त्रस्य कृष्णस्त्रगस्वरानुलेपनाकृषेन कल्पकथितेन महाश्म-

द्रव्यागि तेतां बहुगान या खबड़ाः पृताः तया दुर्बि स्वमः दुर्वितीतम्। यसनेति —वचनस्यः खाहायाययस्यः, व्यतिक्रमः, उद्धानिभिवः व्यभिचारः, दोषः तमः परितुष्टः प्रसन्नः, साध्यामः गच्छामः नियामीनः, ययोः प्रकृत्याः स्वभावनः, वीरम्सस्यः, खनुरागीः प्रेमीः कर्तनवर्तनीः वशीभृताः मेदिनीम्, पृथ्वीम्।

उपहरं,रहिन (रहोऽन्तिकप्रुपहृरं "इत्यमरः) सोपक्रम्, सास्यर्थनम् । स्वार्थालमाः, स्वकार्यपर इमुखाः, परोपकारद्काः, अन्यस्य कार्यकर्णा चतुराः, भन्यानां, सज्जनानां प्रकृतयः, स्वभावाः, भवन्ति । अर्थिदर्शनम्, भिचुकदर्शनम्, महोत्सवः, आनन्दजननम्, प्रयाचनं, याख्या आराधनं, पृजनम् । सर्वति सर्वेपां, समप्राणां लोकानां मनोरथाः, मनसंप्तिनानि, तेषां, भूमिः, पात्रमिन । महाकालेति — महाकालस्य, हरस्य, हद्यं, हद्यनिहितं, वस्तिवित, महाकालहृद्यं तक्षाम यस्य तथाक्तस्य । कृष्णिति — कृष्णानि, कृष्ण्वश्लोनि, सृजः, माल्यानि, अस्यराणि, वस्त्राणि, अनुनेपाः, विलेपनप्रव्याणि यस्मिन

शाने जपकोट्या कृतपूर्वसेवोऽस्मि । तस्य वेतालसाधनावसाना सिद्धिः । असहायैश्च सा दुरवापा । त्वं चालमस्मै कर्मणे । त्विथ च गृहीतभरे भविष्यन्त्यपरे सहायास्त्रयः । एकः स पवा-स्माकं टीटिभनामा वालमित्रं मस्करी यो भवन्तमुपतिष्ठते । द्वितीयः स पातालस्वामी । अपरो मांचेळ्य एव कर्णतालनामा द्राविडः । यदि साधु मन्यसे ततो नीयतामयं दिङ्नागहस्त-द्यों गृहीताट्टहासो निशामेकामेकदिङ्मुखार्गलतां बाहुः ।' इति कृतवचिस च तस्मिन्नन्थकारं प्रविष्ट इव दृष्टप्रकाशः प्राप्तोप-कारावकाशः प्रमुदितेनान्तरात्मना नरेन्द्रः समभापत—'भगवन्, प्रमनुगृहीतोऽस्म्यनेन शिष्यजनसामान्येन निदेशेन कृतपरि-ग्रहमिवात्मानमवैमि' इति । ननन्द च तेन नरेन्द्रव्याहतेन

तथा भूतंत, त्राकत्पेत, परिच्छदेत (वेशेनंत्यर्थः) (त्राकत्पेवशो तैपथ्यं, इत्यमरः) कल्पकथितेन, कल्पः, शास्त्रम्, तत्कथितेन। कृतेति — कृतापूर्व सेवायेन तथा भूतः। वेतालेति —वेतालस्य, शिवानुचरस्य-सायनं, वशीकरणम्, त्रवसानं, त्रवनं यस्याः, तथा विधा सिद्धिः। त्र्यसहयः, सहायशून्यः, दुरापा, दुर्लभः। गृहीतभरं, भारं गृहाति सिति। वालिमत्रं, शेशवसुहत्, सस्करी, परित्राट्। द्रविदः, विद्वदंशीयः। दिङ्वागेति—दिङ्नागः, ऐरावतः, तद्वत् द्रीर्घः, त्र्यायतः। ऐकिति—एका दिक्, तस्याः, सुत्वस्य, त्र्यालतां, त्र्यदोधकदण्ड-ताम्। दण्देति— दृष्टः, त्रवलोकितः, दीपस्य, प्रकाशः, त्र्यालोकः, येन सः। प्राप्तेति— प्राप्तः, लब्धः, उपकाराय, त्रवकाशः, समयः, येन सः। सुदितेन, प्रसन्नेन, त्रन्तरात्मना, मनसा। शिष्येति— शिष्य-जनाः, विद्यार्थसङ्घः तैः सह सामान्यं, समानस्य भावं सामान्यं तुल्यम्। निदेशेन त्राङ्गयाः। कृतेति —कृतः, परिष्रहः ग्रह्गम् यस्य

्भैरवाचार्यः । चकार च संकेतम् --'श्रस्यामेवागामिन्यामसित-पत्तचतुर्दशीचपायामियत्यां वेळायाममुष्मिन्महाश्मशानसमी-पभाजि शून्यायतनेशस्त्रद्वितीयेनायुष्मता द्रष्टव्या वयम्' इति ।

अथातिकान्तेष्वहःसु प्राप्तायां च तस्यामेव कृष्णचतुर्दश्यां शैवेन विधिना दीनितः नितिषो नियमवानभूत् । कृताधिवासं च संपादितगन्धधूपमाल्यादिपूजं खङ्गमष्टहासमकरोत् । ततः परिण्ते दिवसे केनापि कर्मसाधनाय कृतक्षिरबलिविधाना-स्विव लोहितायमानासु दिन्तु, कृषिरविल्हम्पटासु च वेताल-जिह्वास्विव लम्बमानासु च रविदीधितिषु,नरेन्द्रानुरागेण गृही-

तथोक्तम् । नरेद्रव्याहतेन, राजवचनेन । संकेतं, इङ्गितम् । स्रास्तिति - स्रास्तितः, कृष्णः, यः, पद्यः तस्य चतुर्दशी, द्यपायां, रात्रो, इयत्यां, एनावत्पिति, वेलायां, समये, महाश्मशानस्य, समीपं, भजते इति तथोक्तं, (श्मशानिकटवर्तिनि-इत्यर्थः) शृन्यायतेन, विजनमनिद्रं ।

त्रातिक्रान्तेषु, त्रावतीतेषु, त्राहःमु, दिवसेषु, शैवेन विधिना, शिव-पृजनप्रकारंगा। दीचितः, संयतः, चितिपः, राजा, नियमवान, व्रत-निष्ठः, कृतः, त्राधिवासः, व्रतदिनान् पृवदिने गन्धादिना संस्कारः, यस्य तथोक्तम्। सम्पादितेति —सम्पादिता, कारिता गन्धपुष्पमाल्या-दिभिः, पूजा यस्य तथोक्तम्। परिगाते त्रावसानं गतं, दिवसं, दिने। कृतेति —कृतम्, त्रानुष्ठितम्, क्षिरंगा, रक्तेन, विलिविधानं, पृजा-प्रकारः, यासां तथोक्तासु, लोहितायमानासु, सन्ध्यारागरिक्षतासु, क्षिरविलपु, रक्तोपहारेषु, लम्पटाः, लुब्धाः, तासु वेतालजिह्वासु इव भूतरसनासु इव, रिवदीधितिषु, सूर्यिकरगोषु, नरेन्द्रानुरागेगा, राजानु-रक्त्या। गृहीतेति —गृहीता, त्रापरा, पश्चिमा दिक्, येन तथोकं, तापरांद्शि स्वयांमेव दिक्पालतां चिकापिते सवितार, यातुधा-नीष्वित्र वर्धमानासु तरुच्छायासु. पातालवासिपु विद्वाय दानवेष्विवोत्तिष्ठतसु तमोमगडलेपु, नमसि पुर्श्वाभवति, रोद्रं कर्म दिद्यमाणे इव नज्ञत्रगणे. विगाढायां शर्वर्थाम्, सुप्तजननिः-शब्दे स्तिमितं निशीथे. राजा सान्तःपुरं परिजनं वञ्चयित्वा वामकरस्पुरत्सर्ह्यत्यण्यरेणोत्स्वातं खङ्गमादृहासमादाय विस-र्पता च खङ्गप्रभाष्टलेन नीलांशुकपटेनेव दर्शनभयाद्वगुणिठत-निखलगावयप्टिरनादिष्ट्याध्यसुगम्यमानो राजलकम्याः पृष्टतः

मिवतिर. सूर्ये. य:तुधानीपु, निशाचरीपु इव ( राज्ञ्म: कीपगा कव्यात यातुवानः, पुग्यजनः ''इत्यमरः ) वर्द्धमानास्, वृद्धिं गच्छन्तीषु । पातालतल्वासिप्, रसातलास्यन्तरक्थितपु, विद्वाय, कार्यव्याघाताय, तमोमण्डलेपु, व्यन्यकारसमृहेपु । नभिन, व्याकारी, पुद्धीभवति, एकत्रीभवति, रोद्रं, दारूणं, दिसत्मागां इव, उपद्रिमच्छतीव । विगा-हायां, वनीभृतायां, शर्ववर्षी, रजन्याम् । सुप्तेति । सुप्ताः, निद्रिताः, जनाः, यस्मिन तथोकः। अतएव निःशब्दः तस्मिन स्तिमितं, निशीथे. श्रद्धरात्रों (श्रद्धरात्रनिशीथों हो इत्यमरः) वामंति - वामं, सब्यं करं इस्तं स्फुरन , दीप्यमानः, त्यकः, खङ्गमुष्टिः, यस्य तथा भृतः । उत्मातम् , निष्कोपितम् । विसर्पता, प्रमरता, म्बङ्गप्रभाषटलेन, स्त्रासि-कान्तिसमूहेन, नीलांशुकपटेन इव, नीलांशुकं, नीलवस्त्रं, एव, पट:, तिरस्करिसो, तेन इव । **अवगु**स्टि**तेति** अवगुस्टिता, आच्छादिना, निखिला, सकला, गात्रयष्टिः, शरीरं, येन यस्य वा तथा भूनः। त्र्यनादिष्ट्याऽपि, त्र्यनुक्तयाऽपि । राजलन्दस्या, राजश्रिया, त्र्यनुगम्य-मानः, अनुश्चियभागः, (सुचितः-लद्दमीलाभः) परिमलेति-परि-मलेन, सुगन्धिना, लग्नानां, सक्तानां, मधुकराणां, द्विरंफानां, वेिगः, .परिमळळग्नमधुकरवेणिव्याजेन केशेष्विव कर्मसिद्धिमाकर्षन्ने-काकी नगरात्रिरगात् । अगाच तमुद्देशम् ।

अथ प्रत्युज्ञग्मुस्ते त्रयोऽपि द्रौणिकृपकृतवर्माण् इत्र सौप्तिके संनद्धाः स्नाताः स्त्राग्विणो गृहीतविकटवेशाः, कुसुमशेष्वर-संचारिभिः कियमाणमन्त्रशिखावन्धा इत्र गुञ्जद्धिः पट्चरणै-स्ण्णीपपट्टकांज्ञलाटमध्यघटितविकटस्वस्तिकाग्रन्थीन्महामुद्रा-वन्धानिव धारयन्त सूर्धभिः, एकश्रवण्विवरविततविमल-दन्तपत्रप्रभालेपववितत्रवितकपोलेर्मुखंगािपवन्त इत्र निशा-

राजि , नम्याः, सेव वा व्याजः, छलं, नेत । कमेसिद्धिः, कार्यसिद्धिः । एकाकी, त्र्यमहायः । देशं, स्थानं । ऋषेति । प्रत्युज्ञरमुः, गतबन्तः, त्रयः ( टिटिभकर्णनालपानालस्त्राभिनः ) द्वार्णानि द्वीगिः, श्रश्च-त्थामा, कृषः, कृषाचार्यः, कृष्वमा, याद्वः, तं इव । सौक्षिकति — मुष्तेपुभवं, सोप्तिकं तिन्मन , ( महाभारतीयसोप्तिकं पर्वाण् भन्नारी दुर्योधने समरपतितं ऋधत्थामा त्यस्त्रयः, प्रभो प्रीत्यै बौधिष्टिरंशि-विरं घृष्टसुम्नाधिष्टितं सुप्तपु सर्वेषु अवशिष्टेषु सैनिकेषु कथमपि प्रवि-रयहताः सर्वेसेनिकाः, ) संनद्धाः, सज्जाः, स्नाताः, कृतस्नानाः, स्रग्विगाः, मालाधारिगः। कुसुमेति--कुसुमशेखरेषु, शिरोभूपग्-भृतपुष्पमालामु, सञ्चरन्तीति तैः । पट् चरगोः, भ्रमरैः, कियमागाः, मन्त्रेगा शिम्बावन्थाः, चूडाः, येषां तं इव । उष्णीपेति—उष्णीपपट्ट-कान , शीर्पावरगाकर्पटान् । ललाटस्य, मस्तकस्य, मध्ये घटितः, रचितः, विकटः, हढः, स्वस्तिकाप्रन्थिः, वन्यविशेषः, येषु तान् । महामुद्रावन्थानिव, महान्तः, मुद्रावन्थाः, वीराचारानुष्ठंयवन्थनाः, ज्ञान इव । मृद्धाभिः, शिरोभिः । एकेति—एकस्मिन, अवस्यविवरं, श्रोत्ररन्ध्रे, वितना, विस्तृता, विमलस्य, स्वन्छस्य, दन्तपत्रस्य, गज-

चरापचयचिकीर्षया शार्वरमन्धकारम्, इतरकर्णावल-म्बिनां रत्नकुण्डलानामच्छाच्छ्रया रुचा गोरोचनयेवमन्त्रपरि-जप्तया समालब्धाः, स्वप्रतिबिम्बगर्भान्कर्मसिद्धये दत्तपुरुषोप-हारानिवोज्ञास्यन्तो निशितान्निस्त्रिशान्, निशित निस्त्रिशांशुसं-तानसीमन्तितितिमिरामान्मीयदिग्भागसंरत्त्रणाय त्रिधेव त्रि-यामां पाटयन्तः, सार्धचद्वै कलधौतयुद्वयुदावलितरलतारागणै-

दुन्तिर्भितपत्राकारस्य, ( कर्गभूषगास्य ) या प्रभा, कान्तिः, तस्याः, लेप:, लेपनं, तैः, यहा, मा एव लेप:, लेपनसुधा, ताभि:, धवलिताः, शुभीकृताः, कपोलाः, गण्डदेशाः, येषां तेः, त्र्यापिवंत इव, पानंकृत-वन्त इव । निशाचरेति - निशाचरागां, पिशाचानां, ऋपचयचिकीर्पा, श्चपकारेच्छा, तया । शार्वरं, शर्वरी, रात्रिः, तत्र भवः शार्वरः तम्, निशाचराः, निशास्, अन्धकारं एव प्रभवन्ति, ( नर्गतेतमसि तेपा प्रभावाभावेन तद्पकारस्य सोक्योदित्यर्थः) इतरकर्णावलस्विनां, च्रपरकर्गालम्बमानानां. श्रच्छाच्छया, **त्रतिनिर्मलया, रुचा, प्रभया,** गोरोचनयेव, गोरोचना, मांगलिकद्रव्यम् , तया ( पीतप्रभयेति यावन् ) मन्त्रपरिजन्नया, मन्त्रेगपपरिजन्ना, विशोधिना, तया। समालब्धाः, लिप्ताः । स्वप्रतिविम्बगर्भान , स्वस्यप्रतिविम्बं, छाया, गर्भे, मध्ये येषां तान्। दत्ते ति --दत्तः, श्रतुष्ठितः, पुरुषोपहारः, नरबल्ञिः, येभ्यः, तानिव । उल्लासयन्तः, सञ्चालयन्तः, निशितान्, तीचगान्, निस्त्रि-शान, खद्भान । निशितेति —निशितनिस्त्रिशानां, शोग्रितखडगा-नाम, त्रंशुसन्तानैः, प्रभापटलैः, सीमन्तिनानि, विभक्तानि, तिमि-राणि, त्र्यत्थकाराणि, यस्याः, ताम्। <mark>त्र्यात्मीयेति</mark>—त्र्यात्मीयः, स्वीयः, दिशांभागः, ( रच्नग्रीयादिगितिभावः ) तस्य संरच्नग्, तस्मै । त्रियामां, रात्रिं, पाटयन्तः, खण्डयन्तः । सार्धचन्द्रेः, ऋर्धचन्द्रालंकृतैः,

' निशाया इय पनपासिधारानिकक्तैः खग्डेर्गृहीतैश्चर्यकळकेरका-ग्डशर्वरीमपरां घटयन्तः, काञ्चनश्टक्षळाकळापनियमितनिबिड-निष्यवाण्यः बद्धासिधेनवः, टोटिभकर्णताळपाताळस्वामिनो निवेदितवन्तश्चारमानम् ।

श्रवनिपतिस्तु—'कोऽत्र कः', इति त्रीनपृच्छत् । श्राचच-विरे च स्वं स्वं नाम त्रयोऽपि ते। तेरेव चानुगम्यमानो जगाम तां बिलदीपालोकजर्जास्तिगुग्गुलुधूपधूमगृह्यमाणदिग्भागतया विविष्यसास्पन्तासर्पपार्धदण्यात्धकरप्यत्ययमाननिशामिव समुः

रात्रो खड्गेषु च व्यर्धचन्द्रस्य संभाव्यमानत्वादृक्षप्रेवं. नतु बास्तव-न्वंन) कृष्णु चतुर्रशी रात्रौ चन्द्रः सम्भवनीति । कत्कधौतेति । कल्घौते, रोज्यं, तस्य बुद्बुद्रावितः, बुद्बुद्राः, जलस्कोटाः, वदाकारवित्द्वः, ्तेपासावलिः, संघः, तद्वत् तस्तः. ताशसगगः, येपु, तैः । परुषेति 🦠 पश्पासिः, निश्तिनाभिः, श्रमिधाराभिः, निकुत्ताः, द्विन्नाः, तैः । चर्म-फलकै: ( ढाल ) अकाण्डशर्वशी. अकालर ननीं, अपगी. दिनीयां. वटयन्तः, जनयन्तः । काञ्चनेति काञ्चनशृङ्खलाकलापेन, स्वर्गा-मंग्वलाहारंगा, नियमितं निवद्धं, निविद्धं, घनं. निष्प्रवागा, नबंबस्त्रं, र्यः. तं (स्त्रनाहतं निष्प्रवाणि तन्त्रकं च नवाम्बरं ''इत्यमरः) बद्धेति बद्धाः, गृहीनाः, श्रासिधेनवः, छुरिकाः, येः, नथा भृताः । निवंदितवन्तः, ( भैरवाचार्याद्यया भवन्तंप्रतीचामः-इति उचः ) विरुद्रापेति व्यलि-दीपस्यः पूजाप्रदीपस्यः ऋलिकेनः प्रभयाः जञ्जेरितानां, नष्टप्रायागाः, (सन्द्रप्रभागगामित्यर्थः) गुरगुलुघुपानां, ( गुरगुलुघुपदानार्थरचिताना-मित्यर्थः ) धूमैः, गृह्यमागः, ज्ञायमानः, दिग्भागां यस्याः, तया । भेवेचिष्यमर्गाते - विचिष्यमार्गाः, प्रसार्यमार्गाः, ( विव्रद्रीकरगाये-रयर्थः) रचासर्वपै:, रचार्थः, विष्नेभ्यः, पूजायनुष्ठानरचर्णार्थः, सर्पपाः, पकितप्रसर्वोपकरणां निःशब्दां च गर्म्भोरां च भीपणां च साधनभूमिम्।

तस्यां च कुमुद्धृलिधवलेन भस्मना लिखितस्य महतो मगड-लस्य मध्ये स्थितं दीप्ततरतंजः प्रसरम्, पृथुपरिवेशपरिक्तिप्तिन शरत्सवितारम् मध्यमानद्धीरोदावर्तमध्यवितनिमव मन्दरम् . रक्तचन्दनानुलेपिनो रक्त्यगम्बराभरणस्योत्तानशयस्य शवस्यो-रस्युपविश्यजातजातवेद्सि मुखकुहरे प्रारब्धाग्निकार्यम् ,छण्णो-

गोरसिद्धार्थाः, ( मन्त्रपृता इति यावत् ) तेः, ऋद्वेद्ग्यं, ऋस्यकारं, यस्या तथोक्ता. व्यतएव पलायमाना निशा यस्याः यस्यां वा तथा भूताम् । समुपकल्पितंति समुपकल्पितानिः त्रायोजितानिः मर्वाणि, उपकरणानि, माधनद्रव्याणि यम्यां नाम्। माधनभृमि, मन्त्रसाधनस्थानम् । नस्याद्धः इत्यतः ''भेरवाचार्यमपश्यतः इत्यनेना-न्वयः । कुमुदेति- कुमुदानां श्वेतोप्रलानां, श्रूलिः, परागः, तद्वन धवलः तेन । लिम्बितस्य, रचितस्य, मण्डलस्य, मण्डलाकाररंग्वायाः। द्राप्तेति -दीप्रतरः, दीष्यमानः, तेजसां प्रमरः, विस्तारः, यस्य तादृशम् । पृथ्विति--पृथुना, विशालेन, परिवेशेन, परिधिना, ( मण्डलविशेषेणेतिभावः ) परिचिन्नः, वेष्टितः, तं, शरत्सवितारं, सूयं इव (स्थितमितिरापः) मध्यमानेति मध्यमानस्य, विलोडयमानस्य, चीरोदस्य, चीरसागरस्य, त्राक्तें, जलश्रमे, वर्तते इति तादृशं, मंदृरं, मंदराचलम् । रक्तेति -रक्तचन्द्नं एव अनुलेपः, लेपनं, तस्य । रकं, रक्तवर्गी, स्रगंबरं, माल्यवसनम् , त्र्याभरगां, यस्य, तथोकस्य । उत्तानशयस्य, उत्तानशायिनः, (ऊर्द्धमुखशयनशीलस्येत्यर्थः) शवस्य, मृतशरीरस्य । जातेति – जातः, प्रादुर्भृतः, (मन्त्रवलेनेत्यर्थः) जात-वेदाः, ऋग्निः, यस्मान् तथोक्ते । मुखकुहरं, वदनगह्नरं । प्रारब्धेति—

प्णापम्, कृष्णाङ्गरागम्, कृष्णप्रतिसरम्, कृष्णवाससम्, कृष्णातिलाहुतिनिभेन विद्याधरत्वतृष्णया मानुपनिर्माणकारण् कालुष्यपरमाण्यनिव चयमुपनयन्तम्, ब्राहुतिदानपर्यस्ताभिः, प्रतमुखस्पर्शदृपितम्, प्रचालयन्तिमवाश्रशुचणि करनस्वदीधि-तिभिः, धूमालोहितेन चच्चपा चतजाहुतिमिव हुतभुजि पात-यन्तम्, ईपद्विवृताधरपुटप्रकटितसितदशनशिखरंण दृश्यमान-

प्रारब्धं, अग्निकार्यः होमः, येन, तथा भृतं । रूप्णेति । कृष्णाः कृष्णा-वर्गा, उष्मीपं, शिरोवेष्टनवसनं यस्य, तथोक्तम् । कृष्माङ्गगगं, कृष्मा-वर्गाविलेपनम् । कृष्गाप्रतिसरं, कृष्णवर्गाहस्तसत्रम्, कृष्णावाससं, कृष्णावसनपरिधायिनम् । कृष्णाति कृष्णातिलानां, स्राहुतिनिसेन, त्राहृतिच्छलेन, विद्याधरत्वतृष्णया, स्पृह्या, (त्रात्मनोविद्याधरत्वला-भेच्छ्येतिभावः ) मानुपेति मानुपस्य, निर्मागां, सृजनं, तस्य कारगानि, उपादानसामप्रयः, कालुष्यपरमागावः, मालिन्य रसागावः, तानिव, (तिलानांकप्रगत्वात परमारगुनामपिकालुप्योत्प्रेत्ता) त्रयं, नाशं, उपनयन्तं. प्रापयन्तम् । ऋाहुर्ताति - ऋाहृतिदानं, हवनीय-द्रव्यनिक्तपसमये, पर्यस्ताः, पतिताः, ताभिः, करनस्वदीधितिभिः, हस्त-नखकिरगौ: । प्रेतेति प्रेतस्य, मृतस्य, मुखरपशेन, इपितं, अपिव-त्रितं, त्राशुशुक्तगिम् , त्रक्षिम् ( त्र्यप्तिर्वेश्वानगविहः, शिखावानाशु-शुचिषाः, इत्यमरः ) प्रचालयन्तं, शोधयन्तं इव । धूमेति - धूमेन, श्रालोहितं,रक्तं,तेन,चचुपा,नेत्रेगा,हुनभुजि,श्रय्नो,चनजाहुति, रक्ताहृति. इव,पानयन्तं,चिपन्तम्। ईपदिति । ईपद्विवृतेन, जपानुरोधादलपव्यात्तेन, त्र्यथरपुटेन, प्रकटिनानि, प्रकाशिनानि, सिनानां, शुभ्राखां, दशनानां, क्तानां, शिखराणि, अवाणि, यस्य तथा भूतेन । **दश्यमाने**ति — मृता, मृतिमती, मन्त्राणां. प्रणवादीनां, श्रज्ञर पंक्तिः, वर्णाविलिः,

मूर्तमन्त्राचरपङ्किनेव मुखेन किमिप जपन्तम् , होमश्रमस्वेद-सिटिलप्रतिविम्बताभिरासन्नदीपिकाभिर्द्हन्तिमेव सिद्धये सर्वा-वयवान् , श्रंसावलिम्बना बहुगुण्न विद्याधरराज्येनेव ब्रह्मसूत्रेण् परिगृहीतं महाभैरवं भैरवाचार्यमपश्यत् । उपसृत्य चाकरोन्नम-स्कारम् । श्रभिनन्दिनश्चतेन स्वव्यापारमन्वतिष्ठत् ।

अञ्चान्तरे पातालस्वामी शातकतवीमाशामङ्गीचकार । कर्ण ताल: कावेरीम् । परिवार् प्राचेतर्साम् । राजाः तुः त्रेशङ्कवेन ज्योतिपाङ्कितां ककुभमलंकतवान् ।

पवं चावस्थितेषु प्रतिदिशं दिक्पालेषु,दिक्पालभुजपञ्जरप्रविष्टे विस्रव्धं कर्म साध्यति भैरवं भैरवाचार्येऽतिचिरं कृतकोलाह्होषु

यत्र तथोक्तेन । होमेति होमेन, यः, श्रमः, श्रान्तः, तेन, स्वेद्सिल्लानि, घमेदिकानि, तेषु प्रतिविन्तिताः, प्रतिफिल्ताः, ताभिः, श्रामत्र-दीपिकाभिः, पार्श्वप्रदीवः, सिद्ध्ये, विद्याधरत्वलाभाय, श्रंमावलिन्वनाः स्कन्धलिन्वनाः, बहुगुगोन, बहुनन्तुना, रुक्षपतिशयेन च । विद्याधर-राज्येन, इव. श्रद्धसृत्रेगः, यद्धोपवीतेन । श्रामिनन्दितः, श्रनुमतः । स्वव्यापारं, (भेग्वाचार्योक्तिमितियावन्) श्रन्वित्रपत्, श्रन्वपालयन् । शानक्रतवीं, ऐदीं, (पृत्रं) श्राप्तां, दिशं, श्रंगीचकार, स्वीचकार । शानक्रतवीं, ऐदीं, (पृत्रं) श्राप्तां, दिशं, श्रंगीचकार, स्वीचकार । क्रोवेरों, उदीचीं, प्राचेत्रमीं, प्रनीचीं । त्रेशङ्कवेन, त्रिशंकुनीमराजाः तस्य इदं, त्रेशङ्कवं, तेन, ज्योनिषा, तेजसा, श्राङ्किना, चिह्निता, नां (दिक्गां) ककुमं, दिशम् , (पुरागावोध्याचपावानीत्रिशंकोः) प्रविमाति— प्रतिदिशं, सर्वामु, दिखु, दिक्पालेषु, दिशांरचकेषुः (पातालस्वामित्रभृतिय्वीतिभावः) । दिक्पालेति— दिक्पालानां (एपां) भुजाः, बाह्वः, एव, पञ्चरं, तस्मिन, प्रविष्टः, तस्मिन, (श्रकुतोभये इत्यर्थः) विद्यक्षं, निःशङ्कं, यथा तथा, साध्यति, श्रनुतिप्टिन ।

निष्फलप्रयत्नेषु प्रत्यूहकारिषु शान्तेषु काँग्पेषु, गलस्यर्धरात्र-समय मगडलस्य नातिद्वीयस्युत्तरेणाकस्मात्प्रलयमहावगह-दंष्ट्राविवगमिव दर्शयन्ती चितिग्दीर्यत । सहस्रैव च तस्माद्विव-रादाशावारगोत्चिप्त इवालानलोहस्तम्भः, महावराहपीवरस्क-न्थ्रपीठो नरकासुग इव भुवो गर्भावुङ्गतः, बलिदानव इव भिन्न्वो-त्थितः पातालम् , इन्द्रनीलप्रासाद इवोपरि ज्वलितरत्नप्रदीपः, स्निग्धनीलधननिविडकुटिलकुन्तलकान्तमौलिक्नमीलन्मालती-

श्रातिचिरं, समयं, प्रत्यृहकारिषु, चित्रकारिषु, शान्तेषु, शान्तिगतेषु, कोगापेषु, राज्ञमेषु, (राज्ञमः कोगापः कव्यादित्यमरः) गलति, ऋति-क्रासित । सण्डलस्य ( प्रागुक्तस्य ) नातिद्वीयमी, नातिदृरविती, उत्तरंगा, उत्तरस्यां, दिशि । प्रस्वयेति-प्रत्वयं, प्रत्वयसमयं, महा-वगहः, शुकरावतारः, जलमग्रायाः, पृथिव्याः, उद्घारकः (नारायसाव-तार इति यावन्) तस्य दंष्ट्रा, दशनः, तस्याः, विवरं, दर्शयन्ती, प्रकट-यन्ती । व्यदीर्यत, ( स्वयमेबद्धियाभवदितिभावः ) विवरात , रन्धात , पुरुषः, उज्जगाम इत्यनेनान्वयः । ऋाशावरग्ः, दिग्गजः, ( पानालस्थ इतिभावः ) तेन उत्चिप्त इव, उपरिचिप्त इव, त्र्यालानलोहस्तम्भः, ष्प्रालानं, गजवन्थनं, तद्यै लोहण्तम्भः, कीलः। महाबगहेति— महाबराहस्य इव पीवरं, स्थलं, स्कन्यपीठं, खंसपीठं, नरकासुर इव, गर्भान् , उदरान् , (श्रभयन्तरादिनिभावः) इन्द्रनील प्रासाद इव, मिए। हर्म्यम इव । उपरीति - उपरि, ऊर्व्वभागे, ज्वलितो, प्रदीप्तो, रत्रप्रदीपो. मिण्मयदीपो, (नेत्रं इति भावः) यस्य तथा भृतः। स्तिग्घेति स्मिग्वैः, चिक्कणैः, नीलेः, कृष्णवर्षेः, वनैः, श्रविरर्लेः, निविडै:, संकीर्गें:, कुटिलें:, भिक्तमद्भिः, कुन्तलें:, केशें:, कान्तः, मनोज्ञः, मोलिः, किरीटं, यस्य तादृशः। उन्मारुदिति—उन्मीलन्ती, मुग्डमालः, गद्भद्तया स्वरस्य स्वभावपाटलतया च चन्नुषः, न्नीव इच योवनमद्न चलगद्दलदामकः करसंपुटसृद्दितया सृदा दिङ्नागकुम्भाभावंसकृटी पुनः पुनः पङ्कयन्सान्द्रचन्द्दनकर्द्मद्त्ते रव्यवस्थास्थासकैरतिसिनजलधरशकलशारित इय शारदाका-शेकदेशः, केतकोगर्भपत्रपागडुरस्य चगडातकस्योपरि न्नामनरी-कृतकुत्तिः कन्यावन्धं विधाय विलासिविन्नितन धयलव्याया-

स्पुर्न्तीः मालतीमुण्डमालाः मालतीः पुष्पहारः, यस्य तथाभृतः। गद्भदनया, श्रर्हस्फटनया, स्वभावपाटलनया, सङ्जरक्ततया, चीव इव, मत्त इव । वल्गदिति वलात , चलत , गले, कगंठ, दास, माल्यं, यस्य, ताहशस्य । करेति करयोः, हस्तयोः, सम्प्टेन, योगेन, (सम्मेलनेनेत्यर्थः) मृदिना, दलिना, तथा, मृदा, मृत्तिकया । दिङ्नागेति - दिङ्नागकुस्भाभोः एरावतकुस्भतिभोः, त्रंसकृटोःस्कन्ध-शृङ्गे, पङ्कयन , कर्दमयन , (मलिनयब्रितिभावः) सान्द्रेति । मान्द्रेगाः घनेन, चन्द्नपङ्केन, ( घृष्टचन्द्नेनेत्यर्थः ) दत्तानि गचिनानि. तेः, ख्रव्यवस्थास्थासकै:, ख्रयथाव्यवस्थ्या इतियावन , स्थासका:, चन्द्रका. ( बुद्बुद्दाकाराविन्द्ब:-इतिभाव: ) अथवा, स्थासकै:, चार्चिक्यै:. (अचातुर्यानुलिप्त चन्द्नादिभिरितियावन् ) स्थासकः पुंसि चार्चिवये जलादरपि बुद्बद्ं इति मेदिनी । अतीति— अतिमितन, विमलेन, जलधारागाां, मेघानां, शकलेन, खण्डेन, शारित इव, चित्रित इव। शारदा कारीकदंशः, शरुटकालिक गरानेकभागः । केनकानि-केनक्याः, गर्भपत्रं, त्र्यस्यन्तरच्छद्ः, तद्वत् पारुड्रं, श्वेतं, तस्य, चराडातकस्य, षरिधानवस्त्रस्य ! ज्ञामतरीकृतकुज्ञिः, त्र्यतितरेग्युज्ञीगातांनीतोद्रः ! कच्यावन्धं, कटिवन्धं । विलामविचिष्तेन, लीलानिचिष्तेन 🖟 घचलेति धवल:. १वेत: व्यायाम:, (विशेषेगा आयत- मफाळाँपटान्तेन धरणितलगतेन धार्यमाण इव पृष्ठतः शेषेण स्थिरस्थूलोकदण्डः, भूमिमङ्गभयेनेव मन्थराणि स्थापयन्पदानि निर्भरगर्वगुरु कथमपि शैलमिव गात्रमुद्धहन्दर्पेण मुहुर्मुहुरुरिस द्विगुणिते दोष्णि वामे निर्यगुत्तिप्ते च दक्षिणे जङ्घाकाणेडे कुण्डलिते चण्डस्कोटनटांकारैः कर्मविद्यनिर्यातानिय पातयन्ने-केन्द्रियविकलमिव जोवलोकं कुर्वन्कुवलयश्यामलः पुरुष उज्ज-गाम। जगाद च विहस्य नरसिंहनादनिर्योपधोरया भारत्या-

इति भावः ) दीर्घोवा, फालीफ्टान्तः, कटिवन्धवस्त्रान्तः, तेन । थरागितलगतेन. भूतललुण्ठितेन । धार्यमागा:, गृह्यमागा इव शेषेगा, त्र्यनन्त, नारोन ( शेपस्य ध्वन्यान व्यायनत्वाच्चोरंप्रेचिनम् ) स्थिरेति स्थिरो, दृढो, स्थुलो, उम्द्रगडो. यस्य, भूमीति भूमेः, पृथिव्याः, भङ्गभयेन, नाशभयेन, रसातलगमना-शङ्कया इति यावत् ) मन्थगारिम, सन्दर्भचागारिमावः । स्थापयन , व्यर्पयन । निर्भरंति निर्भरंगा, निरतिशयन, गर्वेगा, व्यहङ्कारंगा, गुरुः, (भारविद्त्यर्थः) द्पेंगा. अभिमानेन, द्विगुगिनं. द्विगवृत्ते, वामे, सञ्ये, दोष्गि, भुजं । निर्यक्, बक्रं, यथा, नथा, उतिज्ञात, ऊर्हे म्थापितं । जङ्घाकारुडे. जङ्घाक्रपेम्तम्भे । कुरुड़ित्तते, कुञ्चिते । चग्डेति चग्डम् , उत्कटं यन् . श्रास्फोटनं, श्राधानः ( बाह्वोरिनि भावः ) येन, ये टाङ्काराः, शब्द्विशेषाः तैः। कर्मेनि कर्मणि, भेरवाचार्यसिद्धिकार्ये, विब्राय, (अन्तरायार्थमित्यर्थः) निर्घाताः, वाय-जनिनाः, शब्दाः, तानिव । एकेन्द्रियविकलमिव, एकेन, इन्द्रियेगा ( श्रवगोनंतियावत् ) विकलः, शक्तिहीनः, तमिव, ( वधिगमिवेत्यर्थः ) कुवजयद्लश्यामलः, (नीलपद्म) तद्वच्छ्यामलः, उज्जगाम, उद्तिष्ठत् । नरंति नरसिंहः, नृसिंह।वतारः, तस्य नादः शब्दः, निर्घोषः, हङ्कारः,

भो विद्याधर्यश्रद्धाकामुक !, किमयं विद्यावलेपः सहायमदा वा यद्स्मै जनायाविधाय बलि वालिश इय सिद्धिमभिल्यसि । का ते दुर्वुद्धिरियम् । पतावता कालेन चंत्राविषितरस्य मन्नाम्नैव लब्धव्यपदृशस्य देशस्य नागतस्ते श्रोत्रोषकग्ठं श्रीकग्ठनामा नागोऽहम् । श्रानिच्छिति मिय का शिक्ष्रिहगणस्यापि मन्तुं गमने । मूनाथोऽप्ययमनाथस्तपस्वी यस्त्वादशैः शैवापसदृष्टप करणीकियते । सहस्वेदानीं सहामुना दुनिग्द्रेण दुनियस्यफलम् इत्यभिधाय च निष्ठुगैः प्रकोष्ठप्रहार्गर्श्वानपि टोटिनप्रभृतीनिम् मुखं प्रधावितान्सशर्मात्वरगण्डपाणानपातयत् ।

तहन , योग. गम्भीश तया भागत्या काचा । ज्याद, उवाच । विद्याधर्गति विद्याधर्यो, देविश्वयां. श्रह्या, गगेगा, कामुकः इच्छुकः । विद्याद्रकेतपः विद्यानितः, श्रहङ्कारः महायमदः, सहकारि सङ्गव जनितौद्धत्यम् । श्रम्मे (महामितिभावः) वित्तं पृत्तम्, श्रिक्ष्याय, श्रद्वाय वालिश इवः मृत्यं इवः । मन्नाम्तेव, मदीयेननाम्तेवः लब्धव्यपदेशस्य , प्राप्ताभिधानस्यः (सङ्कृतितस्येतियावन्) श्रस्य देशस्य (श्रीकण्टाख्यस्य ) चेत्राधिपतिः, चेत्रस्वामी । श्रीत्रोपकण्ठं, श्रोत्रयोः, उपगतः कण्ठं, उपकण्ठं, (श्रव्याण्तावताऽपि समयेन न श्रुतः ?) श्रहगणस्यापि, श्रहाः, स्व्याद्यः, तेषां गर्णः तस्य, (नको-ध्यत्र उत्पत्तिनुंशक्तः इतिभावः) भृनाथः, भूपतिः (श्र्यंपुष्पभूतिः) श्रवाथः, श्रस्वामिकः (भविता) तपस्वी, वराकः, त्वादशैः, त्वत्स-दशैः । श्रीवापसदैः, श्रीवतीचैः, उपकरणीकियते, प्रलोभ्यसहायीकियते । दुर्नरेन्द्रेणं, कुराज्ञा, दुर्नयस्य, दुश्चिष्टितस्य, निष्ठुरैः, निर्देषैः, प्रको-प्रणहारैः, प्रकोष्टस्य, हस्तावयवस्य, प्रहारैः, सुष्टिकावातेः । श्रीभुग्वं,

अथापूर्वाधित्तेपश्रवणादशस्त्रवणैरप्यमर्पस्वेदच्छलेनानेकसमरपीतमसिधाराजलिमय वमद्भिरवयवेरिष रोमाञ्चिनिमेन मुक्तशरशतशल्यनिकरभरलघुमियात्मानं रणाय कुर्वद्भिरहहासेनापि
प्रतिविभिवततारागणेन स्पष्टदृष्ट्धचलद्ग्तमालमवज्ञया हसतेवकथ्यमानस्त्रवावटम्भः,परिकरवन्धविश्वमिश्रमितकरनखिकरण्चक्रवालेन व्यपगमनाशङ्कया नागद्मनमन्त्रमण्डलबन्देनेव रुन्ध-

सम्मुखं, प्रवावितान् , प्रचलितान् । स्मश्रार्गरेति -- शरीरावरगां, वर्म्म, कृपास्:, खङ्ग:, ताभ्यां, सह, वर्त्तमानान्। ऋथेति – ऋथ इत्यत: "नरनाथः, सावज्ञमवादीत्" इत्यनेन.न्वयः । ऋ<mark>पूर्वा</mark>ते ऋपूर्वः, नवः, यः, अधिक्तपः. निर्भर्त्सनं, तस्य अवर्षां, आकर्णनं, तस्मातः, श्रशस्त्रत्रणैः, न शस्त्रेण त्रगां, चतं, येषां तैः । श्रमपेण, कोपेन, यः, स्वेदः, धर्मजलं, तस्य, छलेन, च्याजेन । ऋनेकेति – ऋनेकेषु, सम-रेषु, युद्धेषु, पीतम् , अस्वादिनं, असिधाराजलं, खड्गजलं, इव, ( बहुशत्र हननात् ) वमद्भिः, उद्गिरक्षिः, अवयवैः, स्रङ्गः, रोमाख्न-निभेन, लामच्छलेन, मुक्तः, निःसारितः, शर शतानि, वाण्यसमूहानि, शल्यनिकराः, शल्यसमूहाः, एव भागेयेन, तथाक्तः। ऋतः, लघः, भाररहित:, तमिव। रणाय, युद्धाय। श्रद्धहासेन, तन्नाम खङ्गन. प्रतिविभ्वितः, प्रतिफल्तिः, तारायगः, नचत्रवृत्दं, यस्मिन्, तेन । रपण्डेति—स्पप्टं, स्फुटं, दृष्टा, धवला, शुश्रा, दन्तमाला, दशनश्रेगी यत्र, तद् यथा तथा, हमतेव, हामं, कुवतव । कथ्यमानेति- कथ्य-मानः, ऋभियोयमानः, मत्वस्य, उद्योगस्य, श्रवष्टम्भः, वंगः यस्य, तथोक्तः । परिकरेति-परिकरबन्धः, कटिबन्धः, तस्य, विभ्रमेगा, चेष्ट्या, भ्रमितयो, चलितयो:, करयोः, हस्तयो:, नखिकरणानां, चक्रवालं, मण्डलं, तेन । व्यपगमनाशङ्ख्या, ( शत्रोः पलायनाशङ्क-

न्दश दिशो नरनाथः सावश्वमवादीत् 'श्ररे काकोदर! काकः, मिथ स्थितं राजहंसे न जिहेषि बिल याचितुम्। श्रमीमिः किं वा परुपभाषितैः। भुजे वीर्यं निवसित, न वाचि। प्रतिपद्यस्य शस्त्रम्। श्रयं न भवसि। श्रगृहीतहितिष्वाशिक्षितो मे भुजः प्रहर्नुम्' इति। नागस्त्वनादततरम् 'एहि। किं शस्त्रेण्। भुजा-भ्यामेव भनिवम्भवतो दर्पम्' इत्यमिधायारफोटयामास । नरपितरिप निरायुधमायुधेन युधि लज्जमानो जेतुमुत्सुज्य सन्धर्म फलकमदृहास्मसिमधौरकस्थोपरि ववन्ध वाहुयुद्धाय कत्याम्। युयुधातं च निर्दयारफोटनस्फुटितभुजरुधिरशीकरसिच्यमानो

येतिभावः ) नागेति—नागानां, सर्पागां, द्मनमन्त्रः, शायनमन्त्रः, (गाम्डादीतियावत् ) तेन, यः, मण्डलवन्धः, मण्डलाकारः, तेनेवः मन्धनः, अवरोधयनः । सावज्ञं, सावहेलमः । काकोद्रः ! भुजङ्गः काकस्य, वायसस्य, उद्रं, अथवा, काकं, ईपद्गतिमहुद्रं यस्य । काकः ! निर्ले ! राजहंसे, राजअप्ठे, मराले च, न जिहेपि, लज्जमः । र्वालं, पृजां, याचितुं । पम्प्रभापितेः, कट्टिकिसः । प्रतिपद्यस्व, नयः । अयमः (ईट्ट्राः-इतिभावः ) अगृहीतहितिषु, अगृहीतशस्त्रेषु, अशिच्तः, अनभ्यस्तः । अनाहत्रतरं, सावज्ञं । एहि, आगच्छः । कि शस्त्रेणः ? (निक्रमपि प्रयोजनं शस्त्रस्येतिभावः) भनिम्म, नाशयामि । आस्कोट्यामास, आस्फःलयामासः । (वाहोकराधातमकरोदितिभावः ) निरायुधमः, अशस्त्रमः । आयुपेन, शस्त्रेणः, उत्पृज्यः, परित्यज्यः । अष्ट्रहासं, भैरवाचार्यद्त्तरवज्ञं । अद्धीक्रस्य, उवीरधरपर्यन्ताङ्गाच्छा-दनवस्य । कद्मां, कटिवन्धं । निर्देषितः - निर्देषं, निष्ठुरं, यतः, आस्कोटनम्, प्रहर्गं, (तालिका शब्दकरग्रमितिभावः) तेन, स्फुटिनस्य, विद्यतस्य, भुजस्य रुधिराग्रां, रक्तानां, शीकरैः, विन्दुभिः,

शिलास्तम्भैरिव पतद्भिर्बाहुद्ग्ष्डैः शब्दमयमिव कुर्वाणौ भुवनं तौ । न चिराच पातयामास भूतले भुजंगं भूपितः । जग्राह च केशेषु । उच्चखान च शिरश्छेचुमट्टहासम् । अपश्यच वैकत्तकमा-लान्तरेणास्य यक्षोपवीतम् । उपसंहतशस्त्रव्यापारश्चावादीत्— 'दुर्विनीत !, अस्ति ते दुर्नयनिर्वाहवीजमिद्म् । यतो विश्रव्धमे-वाच्यरिस चापलानि' इत्युक्त्वोत्ससर्जे तम् । अनन्तरं च सह-सेवातिबहलां ज्योत्स्नां दृद्शं । शरिद विकस्ततां कमलवनाना-मिव च व्राणावलेपिनमामोदमिजव्रत् । कटित च नृपुरशब्दम-श्यणोत् । व्यापारयामास च शब्दानुसारेण दृष्टम् ।

श्रथं करतलस्थितस्याष्ट्रहासस्य मध्ये तडितमिव नीलजन्धरोदरे स्फुरन्तीं प्रभया पिवन्तीमिव वियामाम् तामरसह-स्ताम्, कोमलाङ्गुलिरागराजिजालकानि च चरणलग्नानि वेला-

सिच्यमानो, कृतसेचनको । उच्चयान, उत्तोलयामास, वेकत्तकमालां, नियंक्वत्तावलियहार, श्रन्तरंगा, मध्ये । दुर्नयनि च दुर्नयम्य, दुर्चे- छितस्य, निर्वाहः, सम्पादनं, तस्यवी मं, कारगां ( ब्रह्महत्याभयान्नदगड्यमं इतिभावः) विश्रब्धं, निःशङ्ककम् । चापलानि, चाञ्चल्यानि । उत्मर्जः त्यत्याम । श्रानिवहलां, श्रानिवम्गाम । वागाविलेपिनं (नामारन्ध्रपृरक- मितियावन् ) श्रामोदम् , सोरभं । व्यापारयामास, प्रसारितवान । दृष्टि, नेत्रं । श्रथ इत्यतः "श्रियमपश्यन्" इत्यनेनान्वयः । श्रदृहा- सस्य, तन्नामवङ्गस्य । तद्दिनं, दामिनीं इव, स्कुरन्तों, शोभमानाम् । पिवन्तीं, पानंकुर्वन्तीं, इव । व्रियामां, रात्रं । तामरसहस्तां, पद्मक्राम् । कोमलेति कोमलानां, श्रंगुलीनां, रागराजिः, लोहित्य- धारा । तस्या, जालकानि, समृहानि । वेलेति वेलायां, तटभूमो, वालानि, नृतनानि, यानि, विद्रमलनावनानि, प्रवाललना उद्यानानि ।

वालांबद्धमलतावनानावाकपंनताम्, करपङ्कासकाचाशङ्कया शशाङ्कमण्डलमिव खण्डशः कृतं निर्मलचरण्नखनिवहनिभेन विभ्रताम्, गुल्फावलभ्विनृपुरपुरतया स्थितनिविङ्करकावलि-बन्धनादिव पिन्ध्रश्यागताम्। बहुविध्रकुग्तमशकुनिशतशोभि-तालप्वनचलिततनुतर्भाद्तिस्वच्छादंशुकादुद्धिसलिलादिवो-चरन्तीम्, उद्धिजन्मप्रमण् त्रिवलिच्छलेन त्रिपथणयेव परि-ष्वक्तमध्याम्, अल्युचतस्तनमण्डलाम्, दश्यमानदिङ्काणकुम्भा-मिव ककुभम्, मदलक्तरावतकरशीकरनिकरमिव शरक्ताग-

तानि, इव । करें ति-कर एव, पङ्कनं, कमलं, तस्य, सङ्कोचः, निर्मा-लनं, ( चन्द्रोदयादितियावत् ) तस्य त्र्याशङ्का, भयं, तथा शशाङ्क-मगडलं. चन्द्रमगडलं. इव । स्वगडशः, कृतं, शकलीकृतम् । निर्म-लेति निर्मलानां, स्वच्छानां, चर्गानखानां, निवहः, समृहः, नीवन भेन, तत्मदृरोन । गुल्फेति गुल्फं, पाद्यन्थि, स्रवलम्बते, तं, नृपुरपुटं, नृपुरमन्धिः, यस्याः, तया । स्थितंतिः स्थितं, निविद्यं, हढं, कटकावल्यां, सेनिकसमृहं, वन्धनं, तस्मात्, परिश्रह्य, निर्गत्य, त्रागतां, प्राप्ताम् । बह्निति बहुवियेः, नानाप्रकारैः, कुसुमानां, पुष्पानां, शक्कतीनां, पित्तरमां, च शतैः, तन्तुनिर्मितैः ( पत्ते ) उपरि-पतिनै: । शोभितं, तस्मात् । पवनेति पवनेन, वायुना, चलिनाः, चिप्राः, तनवः, सृद्धमाः, तरङ्गाः, यस्य, तस्मात्, त्रातस्वच्छात्, निर्मेलान , श्रशुकान् , वसनान , उत्तरन्तीं, उत्तिष्ठन्तीम । उर्धिजन्म-प्रेमगा, मागरोप्तत्तिस्तंहेन, त्रिवलिच्छलेन, त्रिवलिब्याजेन । त्रिपथ-गयेव, त्रिधारयागङ्गयेव, परिष्वक्तमध्यां, त्र्रालिङ्गितमध्यभागाम्। दृश्यमानेति -दृश्यमानो, दिङ्नागस्य, एरावतस्य, कुम्भो यस्यां, तथा भूतां, इव । ककुमं, दिशम् । मदेति—मदं, दानवारिणि, लग्नः, गणतारं हारमुरसा द्धानाम्, ध्वलचामरैग्वि च मन्द्मन्द्निः श्वासदोलाबितैर्हारिकरणैरुपबीज्यमानम्,स्वभावलोहितन मदा-न्ध्रगन्ध्रेभकुम्भास्कालनसंक्रान्तसिन्दृरंणेव करद्वयेन द्योतमा-नाम्, हरशिखण्डेन्दुद्वितीयखण्डेनेव कुण्डलीकृतेन ज्योत्स्ना-मुचा दन्तपत्रेण विश्वाजमानाम्, कौस्तुभगभस्तिस्तवकेनेव च श्रवण्लग्नेनाशोकिकस्लयेनालंकृताम्, महता मातङ्कमद्मयेन तिलकेनादृश्यच्छ्वच्छायामग्डलेनेवाविरहितललादाम्,श्रा पाद-

संसकः, यः, ऐरावतः, तस्य, करः, शुल्डः, तस्य, शीकरःगाां, जल-विन्दृनोः निकरः, सम<u>ुहः, निमेत्र । शरदिनि – शरदि, यः, नारागगः,</u> नज्ञबृन्दं, तहत् तारः, उज्बलः, तम् , उरमा, वज्ञा । मन्देति — मन्दमन्द्रेन, ईवन्मन्द्रेन, निश्चामन, दोलायिताः, चब्बलिताः, नैः, उपवीज्यमानाः संवीज्यमाना नाम् । स्वभावलोहिनेनः सहजरकेन । मदान्धेति मदान्यः, मद्मत्तः, य , गन्धेमः, गन्धहस्तां, ( स्वंदं मुत्रं पुरीपं च मजाञ्चेव मनङ्गजाः, यस्याद्यत्य विभाद्यन्ति तं विद्याद्भन्य हम्तिनम् ) तस्य, कुम्मास्कालनं, व्यवमर्शः, तेन, संकान्तं, संसक्तं, सिन्द्रं, यस्मिन् , नेत्, इव । लव्ह्यः, कर्द्रयेत, हस्तयुग-लेन, दोलमानां, शोधमानाम् । हरेति हरस्य, शिखरुड', चडा. तत्र, यः, इन्दुद्वितीयस्वएडः, ऋद्भंचन्द्रः, तेन इव. कुएडलीकृतेन, वर्तुलाकारेगा, ज्योतस्नामुचा, कान्तिवर्षिगा, दन्तपत्रेगा, गजदन्त-रचितकर्णभूषणेन, विश्राजमानां, द्यातमानाम् । कौस्तुभेति—कोस्तु-भस्य, मगोः, गभस्तीनां, किरणानां, स्तवकः, गुन्छः, तेन, इव, श्रवणालुप्तेत. श्रीव्रगतेन । मातङ्गमर्मयेत, गजराननिर्मितेन । ग्रदृश्येति - त्रप्रदृश्यस्य, निरोहिनस्य, छत्रस्य, छायामण्डलं, छाया-वकं तेन, इव। ऋविरहितः, ऋशून्यः, ललःटः, यस्याः, ताम्। तलादासीमन्ताच चन्द्रातपथवलेन चन्द्रनेनादिराजयशसेव थवलीकृताम् ,धरिणतलचुम्बिनीभिः कर्रुकुमुममालाभिः सरि-द्भिरिच सागराधिष्ठात्रीभिरिधष्ठिताम् , मृणालकोमलैरवयवैः कमलसंभवत्वमनचरमाचचाणां स्त्रियमपश्यत् । असंभ्रान्तश्च प्रपच्छ — 'भद्रे, कासि । किमर्थं चा दर्शनपथमागतासि' इति । सा तु स्त्रीजनविरुद्धेनावयम्भेनाभिभवन्तीवाभापत तम् — 'वीर,सिद्धि मां नारायणोरःस्थलीलीलाविहारहरिणीम् ,पृथुभर-तमगीरथादिराजवंशपताकाम् , सुभयभुजजयस्तम्भविलासशा-

त्रापादनलान् , त्रामीमन्तान् , मीमन्तपर्यन्तं, चन्द्रातपधवलेन, कोमुदीवत् रवेतेन. स्वभावशुभ्रेगा वा। स्रादिराजयशसा, स्रादिरा-जस्य, मनोः वैवस्वतस्य, पृथुनृपतेर्वा, यशः तेन, इव । धराणि-तलेति । धरिगातलं, भूतलं, चुम्बन्ति सपृशन्ति, इति नाद्रशाभिः। सागराधिष्ठाभिः, सागरं त्र्राधि, त्र्राधिकृत्य निष्ठन्ति, याः, नाभिः। कमलसम्भवत्वं, कमलाढ्त्पत्तिम् , ऋथवा, सम्भूयतं, स्थीयतं, ऋम्मि-न्निति, ऋधिष्ठानस्थानं, यस्याः ( कमलवासिन्यालच्न्याः-इतिभावः ) अनवरं. अवररहितं, (तृष्णामितियावत्) आचक्ताणां, कथयन्तीं, श्रमम्श्रान्तः, श्रचिकतः, (श्रात्वरएवेतिभावः) श्रवष्टमभेन, गर्वेगा। श्रभिभवन्तीव, तिरम्कुर्वन्तीव, (अवरुन्धतीव तद्वाक्यभितिभाव:) नारायरेगृति - नारायरास्य, विष्योः, उरः, वत्तःस्थलम् , एव, स्थली, त्रकृत्रिमामृः, (वनमितियावन्) तत्र, लीलया, स्वेच्छया, यः, विहारः, विहरगां, क्रीडनं वा तत्र हरिगा्, मृगी, ताम् ( स्वेच्छयारण्य-स्थल्यां हरिएया विहारः प्रसिद्धः ) पृथ्विति -पृथुप्रभृतीनां, राज्ञां, वंशस्य, कुलस्य, वंगाद्रण्डस्य च, पताकां, ध्वजां, ऋौज्वल्यकारिग्रीं, कीर्तिविस्तारात् , (पन्ने) वेगुद्गडस्योपरि श्रवस्थानात् । सुभदेति—

'लभिक्षेत्राम् , रण्रुष्धिरतरिङ्गणीतरङ्गत्रीडादोहददुर्ललितराज-हंसीम् , सितनृपच्छत्रपण्डशिखणिडनीम् , अतिनिशितशस्त्रधा-रावनभ्रमणविभ्रमसिंहीम् , असिधाराजलकमिलनी श्रियम् । अपहृतास्मि तवामुना शौर्यरसेन । याचस्व, ददामि ते वरम-भिलपितम्' इति ।

वीराणां त्वपुनस्वताः परोपकाराः । यतो राजा तां प्रणम्य स्वार्थविमुखोभैरवाचार्यस्य सिद्धिं ययाचे । ठक्ष्मीस्तु देवी प्रीततरहृद्या विस्तीर्यमाणेन चत्तपा त्तीरोदेनेवोपरि पर्यस्तेना

सुभटानां, सुवीर।ग्गां, भूजाः, बाह्वः, एव, जयस्तम्भाः, तेपु, विलास-शालभिक्षका शोभार्थनिहितपुत्तिका. ताम् ( सुभटपदेनास्याः वीरानु-रागित्वं, सृचितं ) रेंग्वेति रागेषु, युद्धेषु, या, रुविरतरङ्गिण्यः. रक्तनद्यः, तासां, तरंगेषु, उर्मिमपु, क्रीडा, केली, तत्र दोहदेन, अभि-लापेगा. दुर्लेलिना, दुर्विनीता. राजहंसी नाम । सितंति—सिनानि, शुभ्राणि, नृपाणां, राज्ञां, छत्रपण्डानि, त्र्यातपत्रसमृहानि, तत्र शिख-एडनी, मयूरी, ताम, ( अनानपंसञ्चरग्रशीलत्वाद् मयूरीगाां ) **अतीति** — अतिनिशितानां, सुतीचणानां, शस्त्राणां, धारा एव, वनानिः तेषु, भ्रमणं एव, विभ्रमः, विलामः, तत्र, सिंही, नाम् । ऋसाति---त्रसीनां, खङ्गानां, धारा एव, जलानि, ( तनुत्वादितिभावः ) तत्र कम-लिनी, पद्मिनी ताम । अपहतेति - अपहता, आकृष्टा, शौर्ध्यरसेन, उत्साहेन । त्र्राभिलपितं, इच्छितम्। <mark>त्र्रापुनरुक्त</mark>ेति त्र्रापुनरुकाः, पुनरुक्तिदोपरहिनाः, परोपकाराः, परपामुपकृतयः, अथवा, अपुनरुक्ताः, त्र्यनिष्ठकाः । तां, लच्मीम् । स्वार्थविमुखः, निःस्वार्थः । सिद्धिं, इच्छतसाफल्यं । प्रीततरेति प्रीतनरं, अतिशयेन, प्रीतं, (राज्ञः, स्वार्थनिःस्पृहत्वेनेति यावन् ) हृद्यं, यस्याः, सा । विस्तीर्यमःगान, भिषिञ्चन्तो भूपालम् 'पवमस्तु' इत्यव्रवीत् । अवादं अपुनः 'अनेन सत्त्वोत्कपंण् भगवन्छिवभद्दारकभक्त्या चासाधारणया भवान्भुवि सूर्याचन्द्रमसोस्तृताय इवाविन्छिन्नस्य प्रतिदिनमुपचीयमानवृद्धेः शुचिखभगसत्यत्यागधेर्यशौण्डपुरुपप्रकाण्डपायस्य
महतो राजवंशस्य कर्ता भविष्यति । यस्मिन्नुत्पत्स्यते सर्वद्वीपानां भोका हरिश्चन्द्र इव हर्पनामा चक्रवर्ती विभुवनविविजिगीपुद्धितीयो मांधातेव यस्थायं करः स्वयमेव कमलमपहाय
अहीष्यति चामरम्' इति वचसोऽन्तं तिरोवभूव ।

भूमिपालस्तु तदाकर्ण्य हृद्येनातिमात्रमप्रीयत । भैरवाचा-योऽपि तस्या देव्यास्तेन वचसा कर्मणा च सम्यगुपपादितेन सद्य एव कुन्तली किरीटी कुण्डली हारी केयूरी मेखली मुद्रगी

विस्फार्यमागानः (निःस्पृहत्व दर्शनेन विस्सयागमादिनि यावन्) सीरो-देनेव, दुर्थसमुद्रेगाव (प्रसन्नत्वादित्यर्थः) उपिष्पर्यस्तेनः पितनेन । एवं, स्रस्तु (पूर्णा त प्राथना) सत्वात्कपेगाः, सहमातिशयेन, स्रसाध्याग्याः निरूपस्या । स्र्येचन्द्रससोः, रिविनिशाकरयोः, तृतीय इव, भिन्न इवः (तेनस्त्वान्) स्रविद्धिन्नस्य, स्रत्नृदितस्य, उपचीयमानवृद्धः, तिरन्तरवर्द्धमानास्युद्यस्य । (समयप्रभावेगा उन्नितं, स्रवनितं च गच्छतः, प्रतिमासं, एवं वृद्धिमद्दंशस्य नृपस्यत्पर्थः 'व्यतिरेकः) शुर्चाति शुन्तः, पृतं, शुद्धाचरगं वा सुभगं, सु-शोभनं, भगं, वीर्यं, यशो वा, सन्यं, यथार्थकथनं,त्यागः, दानं, धेर्यं, धीरत्वं, तेषु, शोरहाः, दत्ताः (सर्वगुगासम्पन्नाः-इत्यर्थः) पुरुपप्रकारहाः पुरुपश्चेष्टाः, प्रायेगाः, वाहुल्येन, यत्र, तथा भूतस्य, कर्नाः जनकः । यस्मिन (राजवंशे-इति यावन्) द्वितीयः, स्रपरः, मान्धातेव, नृप इव । कर्मणाः, (शव-साधनहप्रवित्ते। सम्यगनुष्ठितेन ।

खड्गी च भूत्वावाप विद्याधरत्वम् । प्रोवाच च 'राजन् , अदू-रव्यापिनः फल्गुचेतसामलसानां मनोरथाः । सतां तु भुवि विस्तारवृत्यः स्वभावेनैवोपकृतयः । स्वप्नेऽप्यसंभावितां दातु-मिमां द्विणां चमः कोऽन्यो भवन्तमपहाय । संपत्किणिकामपि प्राप्य तुलेव लघुप्रकृतिरुन्नतिमायाति । त्वदीयैर्गुणैरुपकरणीकृत-स्य त्वच पव च ल्रष्ट्यात्मलाभस्य निर्लज्जतेयमस्य मूढहृद्ययस्य । निद्वज्ञामि येन केनचित्कार्यल्वोपपादनोपयोगेन स्मारियतुमा-त्मानम्' इति प्रत्युपकारदृष्प्रवेशास्तु भवन्ति धीराणां हृदया-

सद्य एव, तरुचगामेव, कुन्तली, सुकेशः, किरीटी, मुकुधारी, कुण्डली, कुण्डलयुकः। हारी, हारवान । कंयूरी, ऋद्गदी, मेखली, तद्यागीधारी। मुद्गरी, मुद्गरः, दण्डः, तद्वान् । विद्याधरत्वं, विद्याधरभावम् । ऋदर-च्यापिनः, समीपप्रसारिगः, फल्गुचंतसाम्, श्रसारहृदयानाम्। श्रल-सानां, उद्यमरहितानां, मनोरथाः, इष्सितानि । विस्तारवत्यः, प्रसारगा-शीलाः । उपकृतयः, उपकाराः । इमां, द्त्तिर्णाः, (विद्याधरत्वलाभ-रूपाम ) ज्ञमः, समर्थः । अपहाय, त्यक्त्वा । सम्पदिति - सम्पदः, धनस्य, करिएकां, करएमात्रं, (लेशमपीतिभावः) लघुप्रकृतिः, नीच-स्वभावः । उन्नतिम् । च्रोन्नत्यं, विपथ्गमनं च । उपकरणीकृतस्य, कृतउपकारस्य । स्टब्धंति लब्धः, प्राप्तः, त्रात्मनो, लाभः, त्रभीष्टरूपः, येन तथा भूतस्य, ऋस्य (मदीयस्येति यावत्) कार्यति कार्यस्य, लव , लेशः, (किञ्चिन्मात्रमितिभावः) तस्य उपपा ,दनं, करगां, तेन, यः, उपयोगः, ( उपकाररूपः ) तेन । स्मारयितुं, स्मरणतां नेतुं। प्रस्युपकारंति प्रत्युपकारेण, उपकारप्रतिदानेन, वप्टम्भाः, त्र्रतस्तं राजा 'भवत्सिद्धयैव परिसमाप्तकृत्योऽस्मि । साधयतु मान्यो यथासमोहितं स्थानम्' इति प्रत्याचचचे ।

तथोक्श्च भूभुजा जिगमिषुः सुदृढं समालिङ्गय टीटिभादी-न्कुवलयवनेनेवावश्यायशीकरस्राविणा सास्रेण चलुषा वील-माणः चितिपति पुनरुवाच—'तात, व्रवीमि यामीति न स्नेह-सदशम्। त्वदीयाः प्राणा इति पुनरुक्तम्। गृह्यतामिदं शरीर-कमिति व्यतिरेकेणार्थकरणम्। तिलशः क्रीता वयमिति नोप-

दुष्प्रवेशाः, प्रवेष्टुमशक्याः, हृदयावष्टम्भाः, हृदयगाम्भीयांगिः, ( निह् धीराः प्रत्युपकारं अर्थयन्तं ) भवित्सध्या, इष्मिनपूर्गानेतिभावः । परिसमाप्तं, पूर्णातांनीतम् । कृत्यं, कर्म. यस्य, तथोक्तः । साध्यतु-व्रज्ञतु, मान्यः । ( भवानितियावत् ) यथा समीहितं, चेष्टितानुरूपं, (यथेष्सितमितिभावः) स्थानं, (विद्याधरलोकं) इति, एवं प्रत्याचचने. अकथयत् ।

भूभुना, राज्ञा, जिगमिपु:, गन्तुमिच्छु:, (भैरवाचायें-इतिभावः) वकुलयवनेन नीलोत्पलकाननेन, इव। अवश्यायति—अवश्यायानां तुपाराणां, शीकरान, विन्दृन् स्रवित इति तादृशेन। सास्त्रेण, सन्नलेन। स्रेहशदृशं, स्रेहसमुचितम्। प्राणाः, (मदीया इत्यर्थः) त्वदीयाः, (त्वं मत्तः अभिन्न इत्यर्थः) पुनस्कं, (कथितपूर्वमितिभावः) व्यतिरेकेण, पृथ्मभावेन, अर्थकरणं, अर्थसाधनम् (आवांखलु अभिन्नो, कथने तु विपर्ययः-एवेति भावः) तिलशः, खण्डशः, कीता वयमिति (वह उपकार करणात्) निहं प्रत्युपकार कर्तुं समर्थाः वयमितिभावः) दूरीकरणं, दूरे निच्तेप, इव। अप्रत्यचं, वचनमात्रं (दृष्टेरविषयत्वाद्धृ

कारानुरूपम् । बान्धवोऽसीति दूरीकरणमिव । त्विथ स्थितं हृद्यमित्यप्रत्यक्तम् । त्विद्विरहकारिणी कारणेयं न सिद्धिरित्यश्रद्धे-यम् । निष्कारणस्तवोपकार इत्यनुवादः । स्मर्तव्या वयमित्याक्षा । सर्वथा कृतन्नालापेष्वसज्जनकथासु च चेतिस कर्तव्योऽयं स्वार्थ-निष्ठुरो जनः' इत्यमिधाय वेगच्छिन्नहारोच्छिलतमुक्ताफलनि-करताडिततारागणं गगनतलमुत्पपात । यथौ च सीमन्तितम्रह-

द्यस्येतिभावः ) त्वद्विरह कारिग्गी, तवविच्छेद्जननी, श्रातण्त्र नः, त्र्यस्माकं, इयं सिद्धिः, कारगा, यातना, (क्रंश एवेतियावत्) निष्कारगाः, कारगारहितः, निरर्थको वा ) इति, एतत्कथनं, श्रनुवादः, कथितस्यार्थस्य प्रकारान्तरंगाकथनम्। स्राज्ञा, स्रादेशः। कृतन्नाला-पंपु, कृतं, ( कार्यं ) ब्रन्ति-इति कृतव्राः, तेपां, श्रालापाः, भाषसानि, तेषु, त्र्यसज्जनकथासु, दुर्जनविपयकालापप्रम्नावेषु, भवतां प्रत्युपकारा-करणात्, त्र्यहमपिकृतन्नः, त्र्यतः, स्वार्थनिष्टुरः स्वकार्यसाधनपरायणः, श्रतएव निर्देयः। वेगेति-वेगेन, रंहस्रा, छिन्नान् , त्रुटितान् , हारान् , उच्छलितानां, निर्गलितानां, मुक्ताफलानां, मौक्तिकानां, निकरैं:, समूहै:,नाडितः, त्र्राहतः, तारागग्ः,नत्तत्रत्रृन्दं, यस्य, यत्र वा, तन् (विष-यागां मौक्तिकानां,निगरगोन श्रसंख्यतारागगानाडनम् ,त्र्यतः, श्रसम्बन्धे सम्बन्धम्पा त्र्रातिशयोक्तिः ) सीमन्तितंति—सीमन्तितः, द्विधाकृतः, ब्रहाणां, दिग्चारिणां, सूर्यादीनां, ब्रामः, समृहः, येन. तथोक्तः। ' सिध्युचितं, (विद्याधरत्वा योग्यं) धाम, स्थानम् । श्रीकरठोऽपि, तन्नामनागोऽपि । पराक्रमक्रीतः, बलक्रीतः । कर्तव्येषु, कार्येषु, (भवतः,

ग्रामः सिद्धयुचितं धाम । श्रीकरठोऽपि—'राजन्, पराक्रमकीतः कर्तव्येषु नियोगेनानुत्राह्यो ग्राहितविनयोऽयं जनः' इत्यभिधाय राजानुमोदितस्तदेव भूयो भूविवरं विवेश ।

नरपतिस्तु चीणभूयिष्टायां चपायां, प्रवातुमारब्धे प्रवुष्य-मानकमिलनीनिःश्वाससुरभौ, वददेवताकुचांशुकापहरणपरिहा-सस्वेदिनीव सावश्यायशीकरे, परिमलाकृष्टमधुकृति कुमुदनिद्रा-वाहिनि निशापरिणतिजडे तुपारलेशिनि वनानिले, विरहिवधु-

इतियावत् ) नियोगंन, आदेशंन । ब्राहितविनयः, शिचितविनयः, (पराजयेनेत्यर्थः) भूविवरं, पातालम्। नरपितः "इत्यतः नगरं विवेश'' इत्यनेनान्वयः । चीसाभूयिष्ठायां, (प्रायेगाव्यतीतायामिति-भावः ) चपायां, रजन्याम् । प्रवातुं, सब्बरितुम् । प्रवुद्ध्यमानेति— प्रबुद्धथमानानां, ( सूर्योदयान् ) विकाशं गतानां, कमलिनीनां, निश्वा-संन ( तत्स्पर्शवायुनेनिभावः ) सुरभिः, सुगन्यः, तस्मिन । वनेति— वनदेवनानां, कुचयोः, स्तनयोः, त्रांशुकस्य, वस्त्रस्य, त्रापहरणमेव परिहासः, हास्यं, (क्रीडनिमतियावत्) तंन यः, स्वेदः, धर्मजलं, तद्वति इव, सावश्यायशीकरं, तुषारविन्दुयुक्तं (समासोक्तिः) परि-मलेति- परिमलः, पुष्पविमदीद्गन्धः, तंन, त्राकृष्टाः, त्राकर्षिताः, मधुकृतः, द्विरंफाः ( पत्ते ) ( तदाबायोन्मादिताः-विटाः-इति यावत् ) येन ताहरो । कुमुदेति कुमुदानां, निद्रानिमीलनं, तां वाहयति, उत्पाद्यति, इति तस्मिन् (दिज्ञिण्नायकत्वंव्यज्यतेऽत्रप्रेमगर्भव्यव-हारेगोतिभावः ) निशेति—निशायाः, रात्रेः, परिणातिः, परिणामः, तया जडः, मन्थरः, शिशिरभारेगा, (पत्ते) सर्वासां निशां, विलासात्,

रचक्रवाकचक्रानि:श्रसितसंतापितायामिवापरजलनिधिमवतर-न्त्यां त्रियामायां, साज्ञादागतलदमीविलोकनकुतृहलिनीिष्वव समुन्मीलन्तीषु नलिनीषु, उन्निद्रपन्निणि चरति कुसुमविसर-मिव तुहिनकणनिकरं मृदुपवनलासितलते कानने, कमललक्मी प्रबोधमंलशंखेष्विव रसत्स्वन्तर्वद्धध्वनन्मधुक्ररेषु मुकुलायमा-प्रजागरालसः, इत्यर्थः-नस्मिन् । तुपारलेशिनि, शिशिरविन्दु वाहिनि, ( ईपत्शीतलेतियावन् ) (पचे) रतिश्रमस्वेदवतीतिभावः । विरहेति— विरहेस, वियोगेन, विधुरासां, व्याकुलानां, चक्रवाकासां, रथाङ्ग-पचिगाां, चक्रस्य, समूहस्य, निश्वसितंन, निश्वासमरुता ( उप्गोनेनि-यावन् ) सन्तापितायां, इव, ( उत्प्रेचा ) ऋपरजलनिधि, ऋपरं समुद्रं, त्रियामायां, रजन्यां । सात्तादिति—सात्तादागनायाः, प्राप्तायाः, लच्म्याः, श्रियाः, विलोकने, दर्शने, कुतृह्लिन्यः, कौतुकवत्यः, तासु-इव । समुन्मीलन्तीपु, विकसन्तीपु, निलनीपु, पिद्मनीपु, ( मुग्धनायि-कात्वं, व्यज्यते एतेन कमलिनीनां ) । उन्निद्देति— उन्निद्राः, विगत-निद्राः, ( प्रातः पित्तगां, जागरगास्वभावः ) पित्तगाः, यत्र, तस्मिन् ( शृङ्गारसहायाः पत्तिगः:-विटानां ध्वन्यते श्रनेन ) चरति, वर्षति । कुसुमविसरमिव, पुष्पनिकरमिव, (पत्ते) विरहतापोपशान्तये रति-सुखोपभुक्तये वा । मृद्विति मृदुना त्रिविधेन, पवनेन, वायुना, लासिताः, नर्त्तिताः, (कम्पिताः-इतिभावः) लताः, त्रतत्यः, यत्र तादृशे । कमलेति कमलानां, पद्मानां, लच्मीः, श्रीः, तस्याः, प्रबोधाय, जागरणाय, मङ्गलशङ्खाः, तेषु इव, ( उत्प्रेचा ) रसत्सु, ध्वनत्सु । अन्तरिति - अन्तः, अभ्यन्तरे, बद्धाः, रुद्धाः, (पद्मनिमीलनादित्यर्थः)

नेषु कुमुदेषु, उज्जिहानरविरथवाजिविस्रप्टैः प्रोथपवनैः प्रोत्सा- <sup>'</sup> र्यमाणास्विव वारुण्यां कक्भि पुञ्जीभवन्तीषु श्यामालताकलि-कासु तारकासु, मन्दरशिखराश्रयिणि मन्दानिललुलितकल्पल-तावनकुसुमधूलिविच्छुरित इव धृसरीभवति सप्तर्षिमएडले,सुर-वारणाङ्कुश इव च्युर्ने गलति तारामये मृगे, त्रीनपिटीटिभादी-न्गृहीत्वा नागयुद्धव्यतिकरमङीमसानि शुचिनि वनवापीपयसि ध्वनन्तः, गुञ्जन्तः, मधुकराः, भ्रमराः, येपां, तेषु । मुकुलायमानेषु, मुकुलभावंगच्छत्सु । उज्जिहानेति - उज्जिहानैः, उद्गच्छद्भिः, प्रवुद्धैः, वा, रवे:, सूर्यस्य, रथवाजिभि:, रथाश्वै:, विसृष्टा:, त्यक्ताः, तै:। प्राथपवनैः, नासामारुतैः। प्रोत्सार्यमागामु, श्रपसार्यमागासु, इव । वारुएयां ककुभि, पश्चिमायांदिशि पुञ्जीभवन्तीपु, संहती भवन्तिषु । श्यामेति--श्यामा, रात्रिः, एव लता, व्रतिः, त्र्रथवा, श्यामालता, प्रियंगुलतिका, मकरिका वा तस्याः, कलिकाः, कुसुममुकुलानि, तासु । तारकामु, नच्चत्रेषु (रूपकम्) मन्दरेति मन्दरस्य, पर्वतस्य, शिखरं, शृङ्गम्, त्राश्रयतीनि तथा भूते। मन्दानिलेति—मन्देन, श्रत्पेन. (मृदुप्रवाह्वतेतिभाव:) श्रनिलेन, वायुना, लुलितं, ईपदान्दो-लितम्। यत्, कल्पलतावनं, देवतरु काननं, तस्य, कुसुमानां, पुष्पागाां, धूलिभिः, परागैः, विच्छुरितं इव, विलिप्तं इव, धूसरा, भवति, धूसरवर्णतांगच्छति । सप्तर्पिमण्डले, मरीच्यादिमहर्षिसमूहे । सुरेति—सुरवारणस्य, ऐरावतस्य, त्रांकुरो इव। च्युते, स्वस्थानात् श्रष्ट, गलति, सरित । तारामये, नत्तत्रमये, मृगे, मृगशीर्पनामनत्त्रंत्र, ग स हि, ऋंकुशाकारः, (ऋतः) कोराह्रय युक्तेनांकुशेन, ( उपमा ) टीटि-

्प्रचाल्याङ्गानि नगरं विवेश । श्रन्यस्मिन्नहनि तेषामान्मशरीरा-नन्तरं स्नानभोजनाच्छादनादिना प्रीतिमकरोत् ।

कतिपयदिवसापगमे च परिवाट भूभुजा वार्यमाणोऽपि वनं ययो। पातालस्वामिकर्णतालो तु शौर्यानुरक्तो तमेव सिषे-वाते। संपादितमनोरथातिरिक्तविभवौ च सुभटमण्डलमध्ये निष्कृष्टमण्डलाग्रौ समरमुखेषु प्रथममुपयुज्यमानौ कथान्तरेषु

भादीन् । नागेति-- नागेन, ( श्रीकर्एंटन ) सह, यन् , युद्धं, तस्यः व्यतिकरः, सम्पर्कः, तंन, मलीमसानि, म्लानानि । शुचिनि, पवित्रे, वनवापीपयसि, श्ररण्यसरसीजले । श्रन्यस्मिन् श्रहिन, श्रपरिदनं । तेषां ( टीटिभादीनां ) श्रात्मेति श्रात्मशरीरं, स्वदेहं । श्रनन्तरं, पश्चात् (पूर्व समाधाय स्नानादि न्यापारं तेषां, पश्चात्स्वयमपि कृतवा-नितिभावः ) परित्राट् , परित्राजकः, ( टीटिभः ) भूभुजा, राज्ञा, वार्य-मागाः, निपेधितः, वनं, ऋरण्यं, ययो, ऋगमत् ( वानप्रस्थमवललम्बे-तिभावः )। शौर्येति –शौर्येग्ग, पराक्रमेग्ग, अनुरक्तो, जातस्नेहो, ( न भोगाकांच्रयेत्यर्थः ) सम्पादितेति सम्पादितः, जनितः, मनो-रथस्य, त्राशायाः, त्रातिरिक्तः, त्राधिकः, विभवः, सम्पद्, ययौ तौ । सुभट मण्डलमध्ये, सुवीरसंघे । निष्कुष्टेति निष्कुष्टं, उत्कृष्टम् । मण्डलाप्रं, खड्गः, (खड्गं तु निम्निशचन्द्रहासासिरिष्ट्यः। कोन्नेयको मण्डलाग्रः ''इत्यमरः'') ययोः, तो, श्रथवा निष्कृष्टं, प्रसिद्धं, यन्, मण्डलं, वीरसमूहः, तस्य, श्रयों, श्रयगणनीयों, श्रतण्व, समरमुखेपु, ्युद्धंषु, प्रथमम्, पूर्वे, (सेनापत्यत्वेनेतिभावः) उपयुज्यमानौ, नियुक्तौ । कथाऽन्तरेषु, श्राजापप्रसंगेषु । श्रन्तरान्तरा, मध्ये मध्ये । चान्तरान्तरा समादिष्टौ विचित्राणि भैरवाचार्यचरितानि शैशव-वृत्तान्तांश्च कथयन्तौ तेनैव सार्धं जराामजग्मतुरिति।

इति श्रांबाणभदृक्तते हर्षचरिते भैरवाचार्यसिद्धिमाधनं नाम तृतीय उच्छवासः ।

समादिष्टों, स्राज्ञप्तों, ( राज्ञा इति यावत् ) शैशववृत्तान्तान्, वाल्य-क्रीड़ादिव्यापारान् (भैरवाचार्यस्यैवेत्यर्थः) कथयन्तो । जरां, वृद्धत्वम्। इति श्रावणमङ्कारहर्षवरितव्याख्यायां "आधुतोषिण्यां"

नृतीय उच्छवामः ।



पं॰ रघुनाथचन्द्र श.स्त्री के प्रबन्ध से द्वितीय, तृतीय उच्छवाय घी॰ घी॰ आर॰ आई॰ प्रेस लाहीर में छपा ।

## श्रीहर्षचरितम् ।

## चतुर्थ उच्छासः ।

योगं स्वप्नेऽपि नेच्छन्ति कुर्वते त करग्रहम् । महान्तो नाममात्रेण भवन्ति पतयो भुवः॥१॥ सकलमहीभृत्कम्पकृदुत्पद्यत एक एव नृपवंशे । विपुलेऽपि वृथुप्रतिमो दन्त इव गणाधिपस्य मुखे ॥२॥

त्र्ययं कविवरो भट्टयागश्चरित्रनायकजनमङ्गान्तप्रस्तावपुषकम-माण त्र्यादो महतां भुत्रः पतित्वमितरवंज्ञच्चयेन वर्ण्यति ।

योगमिति । रहान्तो नाममात्रेण नाम्नैत्र भुतः पतयो भवन्ति । नामैत महतां भुतः पतित्वे अयो तकं नत्वन्ये पराक्रमादयो गुणाः । योगं संवधं युवितं वा स्वप्निषि नेच्छन्ति । भूपतीनां युक्त्यपेचिन्द्रमेतेषां तु नेत्यर्थः । करगृह्णां पाणिपीडनं विलस्वीकारं वा न कुर्वते । पतित्वे हि पार्थिपीडनमपंचितं नृपत्वे च बिलस्वीकारस्त- दुभयमप्येते नाचरन्त्यतो वेलच्चर्यम् । अत्र प्रतिपाद्येन वस्तुना साधारस्यात्पत्युभूपतेश्च महत् मुत्वर्षस्य द्यातनाच्छद्वशक्तिमूलानु-सर्थास्पो व्यतिरेकःलंकारः ॥ १ ॥

वर्ष्ये श्रीहर्षं सकलनृषवंशललामभूतं मनसिकृत्य ताहशस्य महतो जनेदु प्राप्यत्वं वर्ण्यति—सक्तंत्रति । विवृत्तेषि विशालेषि नृपवशे पृथुप्रतिमः पृथुन मकराजसहशः सकलानां महीभृतां नृपाणां कपकृद् भीतिद् एक एव विरत्न इति तात्पर्याः जनपद्धते प्रादुर्भवति । गणाधिरस्य राजाननस्य भुस्ने पृथुर्महती प्रतिमा आकारो यस्य ताहश एको दन्त इव । यथा राजाननमुखस्थ एको दन्तः सर्वेषां भूधरःणां भीतिद्स्तहद्यमण्यखिलानां नृपाणां कम्प

१ अय तस्मात्पुष्पभूतिक्रिजवरस्वेच्छागृहीतकीयो नामि-पद्म इय पुण्डरीकेक्षणात्, लक्ष्मीपुरःसरो रत्नसंचय इय गत्ना-करात्, गुरुष्ठ्यकविकछावत्तेजस्विभूनन्दनप्रायो ग्रहगण इयो-छत्। अत्या चोषमयाऽशतेनसहश एव गणाधियो देवतात्वेन तदास्वीकृत आसीदिति गम्यते। अपि च कुलस्योत्रमक एक एव भवति वंश इति प्रतिद्वमेव। गणाधियो हि परिण्यागजलीजामनुकु-वन् पीडयामास निविलान् भूषरानिति पौराणिक्षी सिटिमनुसृत्ये यमुषमा । पृथुनीमसक्रजनृष्यं षठो मध्यम नाद्वनानशरी सञ्चातस्त्रा दिनुगो भुवःसमीकरण्याकाले पर्वतानक प्यामासेति विष्णुपुर।स्मे ॥शा

अयेति । अथेत्यादौ राजवंशो नृपान्वयो निर्जगाम इति अंबंधः कस्मात, पुष्प भूतेस्तन्नामकान्नुपान् । पुंडरीके इव कमले इवेच्छा नयने यस्य तस्मात् । द्विजवरैर्त्रोद्धाणुश्रेष्ठेः स्वेच्छया गृङ्गीतः स्वीक्टन तः कोषोऽर्थसंचयो यस्य सन्तृपवंशः । पुंडरी ह्वाणाद्विष्योद्धिनवरेगा ब्रह्मणा स्वेच्छया गृहीतः कोषः कुडमला यस्य स नाभिषद्म इव । सर्ववेद- प्रवर्तकत्वाद् द्विजश्रेष्ठत्वं ब्रह्मगाः । 'कोषोऽस्त्री कुडमले । जातिकोशेऽथैसंघाते, इति मंदिनी । साधारगायम् रच द्विजवरस्वे-च्छागृहीतकोपत्वम् । रत्नानां स्वनातिकोष्ठानामाकरात्वनेनृ-पात् (पद्ये) रत्नाकरात्सागरात् लक्ष्मीः पुरः सराग्रगामिना यस्य स नुपान्त्रयो लच्च्यालंकृत इत्यर्थः (पच्चे) लच्मीः पुरःसरा प्रथममुहःग्ना । श्राहिताग्न्यादित्वात्पर्रानपातः । गत्नानां स्वजाति-श्रेष्टानां संचयः ( पद्मे ) रत्नसंचयश्चतुर्देश रत्नानीव । 'रत्नं स्वजातिश्रेष्ठेऽपि' इति मेदिनी। 'पुरःसर' इति रूपं पुरःपूर्वकात्सरतेः, 'पुरोमेतोयेषु सर्तेः' इत्यनेन टप्रयये निष्पन्नम् । 'संचय' इति सपूर्व काश्व एरज्इत्यननाच् देवाशसुरैमध्यमानात्सागर।बहुर्दश

दयस्थानात्, महाभारवाउनयोग्यः सागरः इव सगरप्रभावा त्, दुर्जयवलसनाथो हरिवेश इव शृगःव्रिजेगाम गाजवँसः । यष्माद्विनष्टधर्मधवलाः प्रजासर्गाडव कृतमुखात् प्रतःपाकान्त-

रत्नानि प्रादुर्वभृवुरिति भागवते । उद्यस्थानात्समुन्नते: स्थानात्यु-ब्पमृते: (पन्ने) पूर्वपर्वताद् । 'उदयस्तु पुमान्पूवपवते च समुन्नतो' इति मेदिनी । गुरव उपदेष्टारः दुधा विद्वांसः व वयः काव्यतिमीतारः **६लावन्तोः नृत्यादिकला**प्रवीगास्तेजस्विनः शुगाः भूनन्दना राजानः प्राया बहुला यस्मिन स नृपवंशः । (पत्ते) गुर्म्रवृहस्पतिः बुधः सौम्यः कविः शुक्रः कलावंश्चन्द्रो तेजस्वी सूर्यः भृतन्तः मंगलः प्राया बहुला यस्थिन् 🕣 प्रश्नगा इव तारका समूद इव । सागर इव प्रभा-ें व:सामर्थ्य यस्य तस्मात्पुष्पभूते: (पत्ते) सगरस्यापत्यानि पुमांसः सगराः तेषां प्रभावात्सामर्थ्यात् । सगरशहाद् ''जनपदशहात्त्त्रत्रि-यादञ्' ऋनेन सूर्वेगााञ्चि" तद्राजकत्वाद्रहत्वे लुक । ऋग्य जनपद-वाचकन्वं कल्प्यमत्यथा सगरेगा सागग्म्यानिर्मितत्वादसंगतेयमुपमा स्यादः। कपिलाभ्रहतःश्वैः सगरपुत्रैकत्यातः सागर इति महाभारते वनपविशा । महाभारते भुव: पालनमुद्यमार्थं गतागतं विद्धतीनांनावां भारश्च तस्थव हनस्य धारसाम्य योग्यः।शूगद्गीरात्(पत्ते । तत्राम कारादु ंशपृर्वेजात् । दुर्जयं जेतुमशक्यमऊर्यं यहुलं सामर्थ्ये तेन युक्तः (पत्ते) दुर्जयेन दुर भभवेनार्थाद्रगवता श्रीकृष्णोन बलेन वलरामेगा च सनाथो हरिवंशो याद्ववंश इव । यस्मादिति । यस्मादाजानोऽजा-, यन्तेत्यन्वयः । ऋतमुखास्कुशलाद्यामान् । ऋतु उखः ऋती कुशल इत्यपि' इत्यमरः । ऋविनष्टो धर्मीयेषां तादृशान् धव न् धूर्तान् लान्ति स्वीकुवन्ति ते धर्मनिरतधूर्तप्रहरा बद्धादरा इत्यर्थः । 'धवः जीर्गापुमान्तरे धूर्ते इति मेदिनी। अथवाऽ वनष्टधर्मेगा धवलाः

भुवनाः किरगा इव नेजोनियः विष्रहत्याप्तदिङ्मुखा गिरय इव भृभृत्प्रभवात्, घरणियारणत्तमा दिग्गजा इव ब्रह्मकरान्, उद्धीन्पातुमुखना जलधरा इव घनागमात्, इच्छाफल्दायिनः कल्पनरव इव नन्द्नात्, सर्वभूनाश्रया विश्वरूपप्रकारा इव श्रीवराद्जायन्त राजानः।

शुभ्राः यशम्बन्त इतियावत् । कृतमुःबात्कृतयुगारंभाद्विनष्टेन पूर्णेन धर्मेगा धवलाः प्रजासर्गा इव। धर्मो हि चतुष्पात् स च कृतयुगे परिपूर्ग आ गीत्तद्नुरोधनाविनष्टति विशेषग्रम् । अत्र च प्रतिग्रं तस्यैकेकः पादो नष्टः। धर्मस्य च्हब्पात्वं श्रीहर्पेग् नलवराने प्रदर्शितम् । 'पदैश्चतुर्मिः सुकृते स्थिरीकृते कृतेऽमुना के न तपः प्रपेदिरे इति । तेजमां निधेर्यस्माद्राज्ञः (पन्ते) तेजोनिधेः सूर्यात् । प्रनापेन तंजसा (पराक्रमेग्गेत्यर्थः) आक्रान्तभुक्तत्तं येस्ते राजानः (पद्मे) प्रतापेन तापेनाकान्तं भुवनतलं येस्ते किरयाः। 'व्रतापस्तापतेजसो:'इति मेदिनी । भूभृतांर ज्ञां भूषराणां च प्रभवा-ज्जनममूलाद् । विषद्देगा समरेगा देहन च व्यामानि दिङ्मुखानि यैस्ते राजानो गिरयश्च । ब्रह्मकरात्परब्रह्मचिन्तकात्(पत्ते प्रजापतेः । धरएयाः पृथ्व्या धारगो वहने ज्ञमाः समर्थाः दिग्गजा इव । नृप-पत्तेप्येवमेव । 'सूर्यस्याएडकपाने हे समानीय प्रजापतिः । हम्ताभ्यां परिगृह्याथ सप्त सामान्यगायत । गायतो ब्रह्मग्रस्तरमात्समुत्पेतुर्भतं-गजाः इति पालकाव्यः । धनो दृढ् श्रागमः शास्त्रं यस्य तस्माद्य-स्मात्पचे वपाकालात् । उत्थीन् पातुं त्रारचितुः पाशितुः च । वर्पाकाले हि भेघाः समुद्रोपरि लंबमाना जलपानायागता इति तकयित्वयमुपमा नन्दयति सन्तोषयति सुदृद्ः स नन्दनस्तम्मान्(पन्ने) तन्नामका त्स्वर्षोद्यानात् । नन्दनेत्यत्र 'नन्दि महिपचादिभ्य०' इत्यनेनल्युः ।

२ तेषु चैत्रमुत्यच पानेषु क्रमेणोइ गादि ह गहरिणके सरी सिन्धुराजज्यरो गुर्नरप्रजागरो गान्धाराधियगन्धिह्न-पक्तुरपाकळी लाट गट ग्याटचरो मालत्र रह गोलना गर छु:-प्रतापशील इति प्रथितामरना श्री प्रभाकरवर्धतो नाम राजाधिराजः । यो राज्याङ्गसङ्गीन्यभिष्टियमान एव

इन्छाय फलं द्रात ते कल्पतस्य इव । सुप्यजाना गिर्मानस्याच्छीलय' इत्यनेन गिनि। श्रीधरा अजलद्रम्या स्थानस्ति (पद्ये:बिष्मो: । सर्वेषां भृतानां प्राणिनामा श्रया अथवा सर्वेषां भृतानां पंचमहाभृतानामा-अया विश्वक्षपत्रकारा इव । सीतायों हि विश्वक्षपद्शनवेतायामजु नेन सवभृतानि तत्र दृष्टानि तदनुरोधन,

नः प्रवितः। हृणा र ज वशेषा एव हरिणा सृगास्तेषां केसरी नद्भातको सृगराजः लिखुराजस्य जवरः संतापकः गुरुराणां तहुश सृपाणां प्रजागरो निद्रानाशः। गान्धारा ग्रामधुना 'कं ग्रहार' इति प्रसिद्धानां देशानामधिष एव गंधिष्ठेषो मक्तगणस्तस्य कूटपाकलः, बिद्रोषजो जवरः। पित्तक्वरः पाकलोऽस्य कूटपूर्विविद्रोपज्ञ' इति जिकार्ष्डशेषः। यद्यपि कूटपाकलशब्दो हिन्तिज्वर-वाची तथापि गन्धिष्ठपपदसंनिधानः ज्जवर मात्रवाच्येव। 'विशिष्टवाचकानां सित पृथ्यः विशेषण्यत्व विशिष्टयान्त्रपरत्वम्' इति न्यायात्। ल'टानां पाटवस्य कौशलस्य पाटच्चरश्चोरः। पाटवशब्दः पटुशब्दाद् गन्ताच्य लखुपूर्वाद् 'इत्यनेन भावेऽिण निष्यन्तः । पाटच्चर इति पाटयन् नाशयंश्चोरयतीति पाटच्चर इति पृष्योद्गादित्वात्साधुः मालवस्य भाजवाधिपस्य लच्चमीरेव लता तस्याः परशुः कुटारः। 'थितं प्रसिद्धमपरमन्यन्नाम यस्य सः। राज्यांगस्य राज्यशरीरस्य संगः संबन्धो विद्यते येषां तानि धनानि मलानीव मुभो व । स्नानेन

मलानीव मुमोच धनानि । यः परकीयम्भेषि कत्रकः

लुभेन रणमुखे तृणेतेच धृतेनारुज्ञत जीवितन । यः कर-धृतधातासिप्रतिविभिवतेनात्मनाप्यदृयतः समितिषु सहायेन, रिपूणा पुरः प्रधनेषु धनुषापि नमता । यो मानी मानसेना-खिद्यतः ः यश्चान्तगेनापरिभिनरिपुशस्यशङ्कुकीलितामिव निश्चलामुबाह राजलक्सीम । यश्च सर्वामु दिच्च समीकृत<sup>त</sup>-मलनाशो भवति तद्वदनेनापि राज्याभिषे वेलायां मलभुतानि येगा शत्रुसंदंधिना रगापुत्वे समराग्रभागे घृतेन कातरत्य भीरोर्वल-भेन तृगोनेव जीवितेनालज्जत । रगो भीरु, शभ्गां गच्छंस्तृगां मुख धत्ते । स्रस्य तु तृगाम्बीकारेगा सहैव नाहशं जीवितं लजाकरमा-भात्। करं हस्ते भूते धौते सुभ्रोऽसौ सङ्गे प्रतिविविदेनातमना स्व-प्रतिबिबेनापि प्रधनेषु युद्धेषु सहायेन । समितिषु स्वप्रतिबिद्माप सहायं नैच्छदित्यर्थः । मानी सगर्वो मानसेऽन्त करणे नाखिद्यतः खिन्नो न बभूव। अथवा मानी यो मानसेन उच्चपदाकांकारूप-मनोविकारेगाचियत । यथा राज्याः कर्नव्याभावं परयन्नस्विद्यत तद्वदिति वा । तथा च प्रसन्नराघेव 'लंकेश्वरः खिद्यतं' इति । अथ वा ''समितिषु सहायेन'' इत्यतः ''श्राखिशत'' इत्यंतमेकं वाक्यम् । यो मानी सगर्वो रिपूर्णा पुरो नमता सहायेन धटुषापि कररणन मानसेन 'अधिकरगो'तृतीया मनस्यखिद्यत । अन्तर्गतान्यपरिमितानि श्रसंख्येकानि विपुशल्यानि शहबाणा एव कीलिकास्तैः कीलतामिव रुद्धामिव राज्यलक्षीम्। शत्रुवाणा अस्यापकार हा आसन् येन चांचल्यचंचू राज्यलद्मीस्तस्मिन्दढम्थितासीदिति भावः । संख्या-

कीलकयोःशंकुः इति शाश्वतः कादंबर्या तु राज्यलद्दम्याः शुद्रके

टावटविटपाटवीतकतृषगुरुभवीक्तगिरिगहर्नर्ग्डय।त्रापयै:पृथु-े भिर्मृत्योपयोगाय व्यमजनेच वसुधां वहुधा । यं. चालव्ययुद्ध दोहद्मार्त्मीयोऽपिसकलरिषुसमुत्सारकःपरकीयइवततापप्रतापः प्रतापः । यस्य च वह्निमयो दृद्येषु, जलमयो लोचनपुरेषु, मा-रुतमयो निः श्वसिनेषु, क्षमामयोऽङ्गेषु, आकाशमयः शून्यतायां, पञ्चमहाभूतमयो मुर्ते इवारण्यत निहतव तिमामन्तान्तः पुरेषु चिरस्थितरनेनेत्थं वर्णिता । ' ऋतिचिरकाललप्रमनेककु-नृपतिमहस्र अपर्के कर्तक मिव चालयन्ती यस्य कृपागा धाराजन चिर्मुवान राज्यलच्मीः' पुनश्च राजानं विशिनष्टि। यक्षेति । समीकृतानि, समस्थलीकृषानि, तटानि, ीराणि, गर्ना विटपाः शाखा ऋटवीतरवा वनवृत्ता तृर्णा गुरुमानि चुद्रवृत्ता बल्भीकानि सृत्कृटा गिरयःपर्वता गहनानि वनानि च येषु तै:। ं गमनिबन्नकारिया विध्वंसकेन कृता मार्गी इति तात्पर्यम् । विभन्न-नाय सर्वेषां पदार्थानां समीकरगामावश्यकम् । यं वेति । ऋलव्घोऽ त्राप्ती युद्धस्य रगास्य दोहदोऽभिजाषो येन सः । 'दोहदो गर्भलच्यो । त्र्याभलापे तथा गर्भ, इति हैमः । सकालानां रिपूणां समत्वारको नाशकः । 'शेषे' षष्ठी । श्रन्यथा तजकाभ्यां कर्तरीति समासनिषेवः स्यात् । याजकादिगर्यो च समुत्सारकशब्दाभावात् । यस्य चेति-हद्यपु बन्हिमया वन्हिल्पः संताप हत्त्रान, लोचन-पुटेपु, नेत्रयुगेषु, जलमयो रोदनाशुप्रवर्तकत्यात्, निःश्वसितेषु, दुः-खतेषु दीर्घेषु श्वार पु मारुतमयः, त्र गेषु त्रवयवेषु त्तमामयः पृथ्न्या उपरीतस्ततो लुएटनेन धूलिव्याप्तत्वात्प्रस्तरकठिन कायत्वाद्वा, ुशून्य तायामाकाशमयः अन्यकार्याभावाच्छून्यत्वम्, पंचमहाभूतमयः पृथ्न्यप्येजोवाय्यकाशमयः । मूर्तिमानिव । प्रतिसामन्तानां

प्रतापः। यस्य चामन्नेषु भृत्यरतेषु प्रतिविभ्यतेव तुल्यरूपा समलक्ष्यत लक्ष्मीः। तथा च यस्य प्रतापाग्निना भूतिः शौर्यो-भ्मणा सिद्धिरसिधाराजलेन वंशवृद्धिः शस्त्रवणमुखेः पुरुष कारोक्तिर्धनुगुणिकस्तान करगृहीतिरभवत्। यश्च वेरमुपायनं वि-अहमनुत्रहं समरागमं महोत्सवं शत्रु निधिद्शीनमरिवाहुल्यम-भ्युद्यमाहवाहानं वरप्रदानमवस्कन्द्रपातं दिष्टवृद्धिशस्त्रप्रहार-

शत्रपत्तीयामां नृपागामन्तः पुरष्ववरोधेषु । यस्य चेति-त्र्यासन्तेषु समीपस्थेषु भृत्यरत्नेषु सेवकश्रष्टेषु प्रतिबिन्वितेव संजातप्रिविन्वेव तुल्यानि सदृशानि रूपाणि यस्याः स्न लच्मीः समलच्यत । श्रत्रासन्नपदेन विस्वप्रहरायोग्यत्वं रत्नपदेन योग्यानामेव सत्कारश्र व्यज्येते । तथेति । प्रतापः पराक्रम एवाग्निस्तेन भूतिः कल्या**गां** भरम वा । शौर्योद्य ग्रासि योग निष्पत्ति: । उपस्ता च पाकसिद्धः-'सिद्धिः स्त्री योगनिष्पत्तिः' इति मेदिनी । श्रसिधाराजलेन खड्ग-धारोदकेन वंशस्य कुलस्यः वृद्धिरभ्युद्यः। जलेन च वंशानां वराानां वृद्धिः । खडगार्रेसा हि स्वान्वयस्य संपद्नेन संपादितेति भ.व: । 'वृद्धिग्रुवर्जने । कालांतरे चाभ्युद्येस्त्रियामुत्तमयोषिति' इति मेदिना । शस्त्रत्रसानां, शस्त्रत्ननानां मुखैरप्रभागै: पुरुषकारस्य पराक्रमस्योक्तिर्भापितम् । पराक्रनकथनेनान्य।पेद्या त्रणा एव तत्कथ का इत्यर्थः । भाषितमपि मुखैर्भवति । धनुर्गुग्रस्य धनुष्यज्यायाः कि गोन प्रथितेन त्रणाजिन्हेन करगृहीतिईस्तरवीकार: । अनेन हि तस्य धनुर्विद्यातत्परत्वं अद्यते । तदासक्तस्य हि हस्ते कियो भवउति (पत्ते ) करगृहीतिर्व्यहमहण्यम् । यश्चेति । वैरं विरोधम् । 'वीर' शब्दाद्यवादित्वाद्या कर्मार्थे । उपायनम्पहारम् । विष्रहं समरम् । सरस्य युद्धस्यारमं प्राप्तिम् निधिद्शं नंद्रव्यसंग्रहदर्शनम्। अरीगां

्पतंन वसुधारारसममन्यत । यस्मिश्च राजनि निरन्तरर्यूपनि-करेरङ्करितमिव कृतयुगेन, दिङ्मुखविसर्पिभिरध्वरधृप्तैः पलायितमित्र कलिना ससुधः सुरालयैरवर्तार्शमित स्वर्गेस सुरालयशिखरोद्ध्यमानर्थवलभ्वजः पञ्चवितमित्र धर्मण, वहिरुपरंचितविकटसमासत्रप्रपापाग्यंशमगर्डपः प्रसृतमिय शत्रृणां वाहुरुयमाधिक्यमभ्युद्यमुर हर्षम् । आह्वाय समरायाव्हा-नंबरप्रदानम् । अबस्कन्द्पातमज्ञाताभिगमनं दिष्टस्य भाग्यस्य वृद्धिम्। शस्त्रप्रहारस्य पतनं वसुवारायाः सुवर्णप्रवाहस्य रसममन्यत । यस्मित्रिति । निरंतरर्घनर्युपनिकरेर्यज्ञस्तमेः करणेः छुत्युगेन सत्ययुगेनांकु रतिमव । यूपा भूमेर्निर्गताः कदल्यंकुरा इव सत्ययु-गांकुरा इति कल्पनययमुक्तिः । अतो यूपस्य पत्नवरूपत्वाभावादसं-. गतमिद्मिति करुपना परास्ता । यथा कद्ल्यंकुरा भूमिमुद्भिद्य बहिरागच्छन्ति तद्वदिमे कृतयुगांकुरा इति भावः । दिशां हरितां मुखंषु विसर्पन्ति प्रसरन्ति तच्छीलेरधूमेः करणेः कलिना । किल्युगेन पलायितमित्र । यथा पिशाचादयो मन्त्रपृतधूमसंपर्कभीत्या पलायन्ते तद्वद्यमपि यज्ञश्रूमभीत्या पलायित:। अथवा कृष्णवर्णा दिग्वसर्पिणो धूमा एव पलायमानानि कलिस्त्ररूपाणीति कल्पना सुधायाऽमृतेन शुभ्रवण्चूर्णेन 'चुना' इति प्रसिद्धेन वा सहितेः सुरालयेर्देत्रगृहैः स्वर्गेण स्वर्लोकेनावतीर्णमिवाध आगतमिव । स्वर्ण ससुधानि सामृतानि देवगृहाएयत्रापि शुभ्रचूर्णापरपर्यायसुधालिप्ता-न्यतः स्वर्गो महीमागतन्त्रितिकल्पना । सुरालयाना देवगृहाएगां शिखरेपूर्ध्वभागेपूद्धूयमानै:कम्पमानेधेवलै:शुश्रेध्वजे:पताकाभिधर्मेण पञ्जवितमिव । पञ्जवितेत्ययं शब्दोंऽकुरितवज्ज्ञातव्यः । वहिव हिर्भाग उपरचिताः कृता विकटाविशाला सभाधर्मशाला सत्रंसदानं सदेवान्नदानं ब्राप्तैः, काञ्चनमयसर्वोपकरणैर्विभवैर्बिशीर्णमिव मेरुणा, द्विज-दीयमनिर्थकल्थैःफल्तिमिव भाग्यसपदा

तस्य च जन्मान्तरेऽपि सती पार्वतीव शंकरस्य ग्रहीतपरह-इया लक्सीरिय लोकगुरोः स्फुरक्तरलतारका रोहिणीय कलावतः सर्वजनजननी बुद्धिरिय प्रजापतेः महाभूभृत्कुलोहता गङ्गेय वाहि नीनायकस्य,मानसानुयर्तनचतुरा हंसीय राजहंमस्य सकल्लोक

प्रपा पानीयशाला प्राग्वंशमंडपो हिवःशालायाः पूर्वभागे यज्ञमानादोनां निवासार्थं निर्मितो मण्डपस्तैः करणेप्रीमेः प्रसृतिमव ।
एतेपां बाहुल्याद्विभागेऽन्ये प्रामा उत्पन्नान्विति कल्पना ।
काञ्चनमयानि सुवर्णमयानि सर्वोपकरणानि येषां नैर्विभवेः संपद्भिः
करणेर्मकणा विशीर्णमिव विदीर्णि मिव । द्विजेभ्यो बाह्यणे भ्यो
दीयमानैरर्थकलशेर्धनपूर्ण घटेः फलितमिव । घटाकाराणि नारिकेलसदृशानि फलानि भाग्यसंप्रः संजातानाति तात्पर्यार्थः ।

तस्येति । जन्मान्तरं प्यन्यस्मिञ्जन्मन्यपि सतीव पार्वतीव । द्वस्य प्रजापतेर्दु हिता सती पितृभवने यज्ञावलोकनायागता । तत्राव-मानिताऽऽत्मानमग्निसाचकारपावनीरूपेगोदियायशंकरं वत्रे (पचे) सती पितृत्राव । गृहीतमाकपितं परहृदयमन्यमानसं वत्सलतया यया सा । लद्मीपचे गृहीतपरहृद्येति सुलभम् । लोकगुरोलोकाधिपस्यविष्णो-गोश्च स्फुरन्त्यौ तरले तारके कनीनिके यस्याः । (पक्षे)म्फुरन्ती तरला चंचला तारका नच्चत्रं यस्याः सा रोहिग्गीव । कलावतः कलानि-पुगास्य (पचे) चन्द्रस्य । सर्वलोकजननी सर्वा तां प्रजानां वात्सल्यान्माता । (पचे) जन्यतेऽनया जननी उत्पादनसाधनं करगो ल्युट् सर्वलोकानां जनन्युत्पादिका । वाहिनीनायकस्य सेनाध्यचस्य समुद्रस्य च । महामूख्द महानृपो हिमालयश्च तस्य कुल उद्गतोत्प-

चितचरणा त्रयीव धर्मस्य, दिवानिशममुक्तपार्श्वस्थितिरहृन्ध तीव महामुनेः, हसमयीव गतिषु, परपुष्टमयीवालापेषुचकवा-कीमयीव पनिप्रेम्णि, प्रावृत्तमयीव पयोधरोन्नतौ, मदिरामयीव विलासप् निधिमयीवार्थसंचयेषु, वसुधारामयीव प्रसादेषु, कमलमयीव कोषमंत्रेहपु, कुसुममयीव फलदानेपु, संध्याम-यीव वन्यत्वे, चन्द्रमयीव निरुष्मत्वे, दर्पणमयीव प्रतिप्राणि-न्ना । मानसमन्तः करणां तदारुयं सरश्च तस्यानुवर्तने श्रनुकृला-चरणे तत्र स्थितो च चतुरा कुशला राजहं धस्य नृपश्रेष्टस्य पद्मिण्ध त्रयीव वेदत्रयीव । 'श्रुतिः स्त्री वेद् श्राम्नायस्त्रयी' इत्यमरः। सकत्तेलोंकैरचिंतौ पूजितो चरग्यो पादौ (पन्) चरग्याःशाखा यस्याः सा। दिवानिशं रात्रिदिवममुक्ता पार्श्व समीपे स्थितियेया सा। महामुनेमननान्मुनिर्विचारवांस्तस्याथवा राजर्षः (पन्ने) बशिष्ठस्य। श्राकाशे हि वांशष्टमपरित्यजन्त्यरून्धती तिष्ठति तद्तुरोधत इदम् । हंसमयीव हंसीव । स्त्रालापेषु भाषायां पु । प्रावृष्मयीव वर्षाकालमिव पयोधरयोः स्तनयोः पयोधराणां मेघानां चोन्नतौ । मदिरामयीव मद्यमिव विलासेषु शृंगारजेषु विकारेषु । 'यानस्थानासनादीनां मुखनेत्रादिकर्मणाम् । विशेषस्तु विलासः स्यादिष्टसंदर्शनादिना' इति विश्वनाथः। मदिरा चाकस्मात्क्रोधादीन् विकाराञ्जनयतीति प्रसिद्धमेव, श्रर्थानां धनानां संचयेषु संग्रहेषु । वसुधारामयीव सुवर्गोधारेव प्रसादेष्वनुद्रहेषु । कोषाग्यामर्थसंचयानां कुडमलानां वा । पुष्पकलिकासु स्वाभाविकी प्रीतिस्ते युज्यत इदं स्त्रीगां वर्णानम् । कुसुममयीव पुष्पायीव फलानां दानेषु । कुसुमेभ्यो यथा ें फलानि जायन्ते तद्वद्स्याः सकाशद्भत्यानां सेवाफललाभः । वन्यत्वे नमस्कार्यत्वे । निरुष्मत्वे उष्मा गर्वे श्रीष्एयं च । दर्पणमयीव ब्रह्णेषु, सामुद्रमयीव परिचत्तज्ञानेषु, परमात्ममयीव व्याप्तिषु, ममृतिमयीव पुग्यवृत्तिषु, मधुमयीव सम्भाषणेषु अमृतमयी-वतृष्यत्मु,वृष्टिमयीवभृत्येषु, निवृतिमयीव सखीषु वेतसमयीव गुरुषु, गोववृद्धिरेव विलासःनाम, प्रायश्चितशुद्धिरिव स्त्री-व्यस्य, आज्ञासिद्धिरिव मकरध्यजस्य, व्युत्थानवुद्धिरिव रूपस्य दिष्टवृद्धिरिव रतेः, मनोरथिसिद्धिरिव रामणीयकस्य, देव-संपत्तिरिव लावण्यस्य, वंशोत्पत्तिरिवानुरागस्य, वरप्राप्तिरिव

मुकुर इव प्राणिनि प्राणिनीति प्रतिप्राणि प्रतिप्राणिबहरण स्वीकारः प्रतिविस्वोत्पादनं च । सामुद्रमयीव सामुद्रशास्त्रमिव परेपां चित्तस्य मनसो ज्ञानेषु । सामृद्रविद्यातोऽन्यदीयस्वभावज्ञानं जाय : इति प्रथितम् । 'वेत्ता स्त्रीपु मयोश्चिन्हं सामुद्रिक उदाहृतः' इति हारावली । परमात्मसयीव ब्रह्मत्र ब्यादिषु ब्रह्मसर्वेब्यापीति वेदान्तराक्षान्तः । स्त्रस्या त्र्रापि कार्यार्थे सर्वत्र स्मनेन सर्वत्र व्याप्तिः तृष्यत्सु तृष्यापीडितेषु त्रमृतमयीव सधेव । जलादिदानेन तेषां तृष्गाशिमकत्वात् । वृष्टिमथीव वृष्टिश्वि सेवः पु सदैव धनवषेगात् । निईतिमयीव चित्तस्थास्थमिव सर्खापु वयस्यासु तन्मानसमोदजन-कःवात् । वेतसमयीव नम्रत्वाट् गुरुषु श्वश्त्रादिवृद्धेषु । विलासानां गोत्रम्य कुलस्य वृद्धिरिव । प्रायश्चित्तशुद्धिरिव पवित्रीकरणमिव स्त्रीत्वस्य स्त्रीकाते: । अनया निष्यिला स्त्रीजाति: पवित्रिता । आज्ञा-सिद्धिरिव । अभोघसस्त्रं नु मदनस्येति त.त्पर्यार्थः । व्युत्थान्युद्धि-स्विति । व्येयुरथानं समाधेश्रलनम् । स्वाधिक्यसंपादनाय समाधि-माश्रितस्य रूपस्य समाधेरवनरणावेलायां जायमानं ज्ञानित्यर्थः। रतेर्मदनभार्यायाः, दिष्टस्य <mark>भागधेयस्य वृद्धिस्व । सृतो मदनः</mark> कदाचिद्नया साधनभूतयोज्जीवेतेति रतेर्भाग्यवृद्धिः। रामग्री-

कान्तः, सगैसमाप्तिरिय सौन्दर्यस्य, ग्रायतिरिय यौवनस्य, अनभ्रतृष्टिरिय वैदंग्ध्यस्य, ग्रयदाः प्रमृष्टिरिय लक्ष्म्याः, यदाः पुष्टिरिय चारित्रस्य, हृद्यनुष्टिरिय चमस्य, सौभाग्यपरमाणु- सृष्टिरिय प्रजापतेः, श्रमस्यापि शान्तिरिय, विनयस्यापि विन्नीतिरिय, आभिज्ञान्यस्याप्यभिज्ञातिरिय, स्थमस्यापि संयतिरिय, धेर्यस्यापि ष्टृतिरियः विभ्रमस्यापि विभ्रान्ति- रिय यशोधती नाम महादेवी प्राणानां प्रणयस्य विस्नम्भस्य धमस्य सुखस्य च भूमिरभूत्। यस्य वक्षसि नरकजितो लक्ष्मीरिय ललास ।

यकस्य रमगाीयशहाद् 'योषघाहुरूपोत्तमाहुञ्' इत्यनेन भावे बुञ् । त्र्यतुगगस्य प्रेस्स्यो वंशोत्पत्तिरन्वपसं मृतिः । सर्ग समाप्तिः,उत्पत्ते:-समाप्तिः पराकाष्टेत्यर्थः स्रायतिकत्तरकाल इव यौवनस्य तारुण्यस्य । युवादित्वाद्ग् भारं । अनभ्रवृष्टिः अभ्रेग् सहिता वृष्टिरभ्रदृष्टिने तथाऽनभ्रवृष्टिः सा चाश्चयंजनिका पुरुवबह्मभ्या च । वैद्रुव्येनेयं पुरुवतो लब्धाश्चर्यकारिखो । वैद्रुव्यं तस्यामतीवेति तात्पर्यम् । लद्म्या अयशसः 'यः सुन्द्रस्तद्वनिता श्रपकीर्तेः पृमृष्टिः शाधिका नाशिका । त्रानुरूपभर्तृगामिन्यपि लद्मीयृतेत्वर्थः । चारित्र्यं पातित्रत्यः । सोभाग्यस्य परमाग्रानां सूचमावयवानां सृष्टिरुत्पत्तिः (प्रथमतो ब्रह्मणा सौभाग्यमुहिपप-त्सुनेयमेव निर्मितेति भावः ) द्याभिजात्यं कुलोनत्वम् । विश्रमस्य द्यितागमने बाहुमूलादीनां व्यक्तीकरण्रु प्रभावत्य विभ्रान्तिस्त्वरा विश्रम्भस्य विश्वासस्य । नरकान् कुंभीनवादोन् जयित सः। 'किप ंच' इत्यनेन किप् । (पत्ते) नरकासुरं जितवतो नारायणस्य । ललास शुशुभे आलिलिंग वा।

निर्सगत एव च स नृपतिरादित्यभक्तो वभूव । प्रतिदिनमु-दंय दिनकृतः स्नातः सितदुक्क्लधारी धवलकर्षट्याङ्विष्ठराः-प्राङ्मुखः क्षितौ जानुभ्यां स्थित्व। कुङ्कुमपङ्कानुलिप्ते मगडलके पवित्रपद्मरागपात्रीनिहितेन स्वहृदयेनेव सूर्यानुरक्तेन रक्तक मलपगडेनार्चा ददौ। अजपच्च जप्यं सुचिरतः प्रत्युपिस मध्यदिने दिनान्ते चापत्यहेतोःप्राध्वं प्रयतेन मनसा जञ्जपूको मत्रमादित्यहृदयम्।

भक्तजनानुरोधिवधियानि तु भवन्ति देवतानां मनांसि । यतः । स राजा कदाचिग्द्रीष्मसमये यदच्छया सितकरकरसि-तसुधाधवछस्य हर्म्यस्य पृष्ठे सुष्वाप । पार्श्वे चाम्य द्विती-

निर्सग इति । निसर्गत एव । दिनकृतः सूर्यस्योदये सिते शुश्रे दुकूले चौमजे वसने धरित सः । धवलेन शुश्रेण कर्पटेन शिरोवेष्टनवस्त्रेण प्रावृतं शिरो येन सः । रागाणां माणिक्यानां पात्र्यां भाजने निहितेन स्थापितेन स्वमानसेनेव यथा मनः सूर्यानु-रक्तं तद्वद्नुरक्तेन रक्तकमलसमूहेनाचीं पूजां ददौ । प्रत्यृपसि प्रभाते मध्यदिने मध्यानहे दिनानते सायंकाळे। एतेन तदा त्रिः संध्या वंदनपद्धतिरासीदिति ज्ञायते । प्राध्वं सनम्रं प्रयतेन पवित्रेण मनसा स्त्रादित्यहृदयमिति मंत्रनाम ।

भक्तेति । अर्थान्तरन्यासः श्रीष्मसमय इत्यनेन वहिः स्वाप-कारग्रामूष्मातिशयरूपं व्यंजितम् यहच्छया । 'यहच्छा स्वेरिता ' इत्यमरः । सितकरस्य चंद्रस्य करैं: किरग्रोः सुधया चूर्णविशेषेग् च धवतः शुभ्रः । स्वयं शुभ्रोपि चद्र किरग्रोविशेषतो धवत इत्यर्थः । पार्श्वे च समीपे द्वितीयशय्यायां पृथक् शय्या हि नारीग्रां स्वापे योग्या । नाश्नीयाद्रार्थया साधी न च स्वप्यात्तया सह ' इतिवच- ं यशयने देवी यशोवती शिश्ये । परिणतप्रायां तु श्यामाया-म, आसन्नप्रभातवेळाविळुण्यमानळावण्ये ळिळम्बिषमाणे सी-दत्तेजसि तारकेश्वरे, कराग्रस्षृष्टकुमुदिनीप्रमोदजन्मिन शश-धरस्वेद इव गळत्यतिशीतळेऽवश्यायपयिन, मधुमदमत्तप्रसु-प्रसीमन्तिनीनि श्यासाहतेषु संकान्तमदेष्विव धूर्णमाने-ष्वन्तः पुरप्रदीपेषु, राजनि च विमळनखप्रतिबिम्बिताभिः सवाद्य मानचरण इव तारकाभिः, विस्रब्धप्रसारितैर्दिगङ्ग-

नान् । श्यामायां रात्रौ । 'श्यामा स्थाच्छारिवा निशा ' इत्यमरः । श्रासन्नया समीपागतया प्रभातवेलया विलुप्यमानं नाशितं लाव-एयं कान्तियंस्य तस्मिन् लिलम्बिपमाणे दूरं जिगमिषौ सीदन्न-स्यत्तेजो यस्य तस्मिस्तारकेश्वरे चन्द्रे सति । राज्यास्तुरीययामा-्वसान इति तानर्यार्थ: । कराग्रैः किरणापैः स्पृष्टायाः कुमिदिन्याः प्रमोदस्यानंदस्य जन्मयस्मादितिचन्द्र विशेणं, अथवा कराम्रख्ष्ट्रायाः कुमुदिन्याः प्रमोदाजनम यस्य तस्मिन्नेवायपयसीत्यर्थः। परं चद्रो गन्तकामे कुमुदिन्याः प्रमोदवर्णनमसंगतमतः पूर्वोक्तार्थ एव पुन रुक्तः। शशधरस्य चप्रमसः स्वेद इव श्रवश्यायपयसि नीहारोदके गलति स्रति।शिशिरस्वेद इतिपाठःनमनोरमः । गीष्मतौ रवेदोत्पत्यो-प्माधिकयस्येवानुभवसिद्धत्वात् । मधुनो मद्यस्य मदेन मत्तानां <u>प्रस</u>ु-प्तानां निद्रितानां सीमन्तिनीनां प्रमदानां निश्वासेराहतेषु ताडितेष्वत एव संक्रान्तः समागतो मदो येषां तेषु । मद्यमत्तकामिनीश्वास-संपर्कान्मदोपि दीपेष्वागत इति भावः । घूर्यामानेषु भ्रममागतेषु । प्रदीपा त्र्यपि मदामत्तविन्हानि प्रकटयामासुरिति तात्पर्यार्थ: । . श्वेमछेपु स्वच्छेपु नखेपु प्रतिविम्बिताभिस्तारकाभिर्ने चलैः संवाह्य-मानो चरगो यस्य तस्मिन् । विस्नब्धं निर्भयं प्रसारितैविस्तारितैः,

तानामिवार्षितरङ्गमंशुसुगन्धिमः स्वहस्तकमलतालहन्तवा-तिरव श्वसितमुंखिश्रया वीज्यमाने, विमलकपोलस्थलस्थितन सितकुसुमशेखरेणेव रतिकेलिकचश्रदल्यितेन प्रतिमाशिश-विम्वन विराजिते स्वपित, देवी यशोवती सहंसव 'आर्यपुत्र, परिवायस्व परिवायस्व इति अत्यमाणा सूरण्रदेण व्याहर-न्तीव परिजनमुक्कम्पमानाङ्गयष्टिम्दितिष्ठत् ।

श्रथ तेन सर्वस्यामिष पृथिव्यामध्रुतपूर्वेण किमृत देवीमुखं परि दिगंगनानामिव दिग्नायाभ्य इवार्षित देत्तरंगैरवयवैहप तित्ते । इत्थं भृतलक्षां वित्ताया । मुखिश्या मुखकान्या कतृ भृतया मधुना सद्येन सुरिमिनः, सुगिन्यिनः, श्वसितः, श्रासः, स्वस्यातमना हस्तकमलं इस्तिस्थतमरिवन्द्रमेव व्यवनं तस्य वातैरिव वीज्यमाना विमले स्वच्छे कपोलस्थले गण्डस्थिते स्विनाशिशासः प्रतिविम्बर्शाशिनो विम्वेन । विमलपदं विम्बप्रदृश् नामर्थ्यं द्यातयित कथं भूतेन रितकेतिः सुरतकोडा तथ्यां कचप्रदृश् लिम्बतो गण्ड-भ्योपर्यागतस्तेन कुसुमशेखरेणेव पुष्पगुच्छेनेव विराजन्ती शोभ-माना । विराजित इति-राज्ञो विशेषणां वा । सहस्त वातिर्कतमेव । परित्रायस्य रच । भूषणारवेणालंकारशब्देन संभ्रमचलनादलंकार-रब्दः व्याहरन्तीवाव्हयन्तीव । उत्कर्ममाना वेषमाना श्रांगयिष्टः शरीरयर्थिष्टर्ययाः सा ।

श्रथ नेनेति । पूर्व श्रुतः श्रुतपूर्वो न तथा श्रुतपूर्वस्तेन । 'सुप्सुपा' इत्यनेन समासः । दग्ध इव ज्वलित इव । एकपदे मदिति । गार्डानद्रः केनचिदंगारादिना दह्येत चेत्तूर्णभुत्तिष्ठति । कोपेन क्रोधेन कम्पमानेन वेपमानेन दित्त्याकरेणापसन्यहस्तेनाक्रप्टेन कर्णोत्।-केनेव कर्णोपरिस्थापितेन कमलेनेव । एतेन तस्य खड्गनिष्कोषणे त्रायस्वेति ध्विता दग्ध इवश्रवणयोरेकपद एव निद्रां तत्याज राजा। शिरोभागाच्च कोपकम्पमानदक्षिणकराकृष्टेन कर्णोत्प-लेनेव निर्गच्छताच्छधारेण धौतासिना सीमन्तयित्रय निशाम, अन्तरालव्यवधायकमाकाद्यामिवोत्तरीयांशुकं विक्षिपन्वामकर-पल्लवेन करविक्षेपवेगगलितेन हृद्येनेव भयनिमित्तान्वेषिणा भ्रमता दिश्च कनकवर्येन विराजमानः, सत्वरावतारितवाम-चरणाकान्तिकम्पितप्रासादः, पुरःपितितेनासिधारागोचरगतेन शशिमयूखखण्डेनेव खिडतेन हारेण राजमानः, लक्ष्मीचुम्बन-लग्नताम्बूलरसरञ्जिताभ्यामिवनिद्रयाकोपेन चातिलोहिताभ्यां

निरायासत्वं दर्शितम् । श्रच्छा स्वच्छा धारा निशिताप्रभागो यस्य तेन । धारा० । खड्गादेनिशिते मुखे इति मेदिनी । सीमन्तयन् द्विधा हुर्वन् । खड्गचालनेन तत्ते जता तमो द्विधा भूतिमवाभान् , श्रम्तरालेऽभ्यन्तरे व्यवधायकमपवारकमाकाश्वामव । एतेन वस्नस्य सीद्मयं द्योतितम् । वामेनि । दिल्लाह्स्ते खड्गस्य सत्वाद्यामेन वस्नस्येग्याम् । करस्य वित्तेपस्य प्रेरणाया वेगाद् गलितेन पतितेन हृदयेनेव भयस्य, भीतेनिमित्तानि, कारणान्यन्विष्यति मार्गयिति तेन दिल्ल, श्राशासु, श्रमता, कनकवलयेन सुवर्णकं कणोन विराजमानः शोभमानः । वर्जुलो भूमी पदार्थः पतित इतस्ततो श्रमतीति हि प्रत्यत्तम् । सत्वर् तृण मवतारित याद्योनिवेशितस्य वामचरणस्य सव्यपादस्याकान्त्या कम्पितः, प्रासादो, राजगृहं, येन सः । श्रमिधारायाः खड्गाप्रभागस्य गोचरं वशं गतेन खण्डितेन श्रदितेन हारेण सुक्ताहारेण शिरामयूखमण्डलेन च द्रकिरणसमूहेनेव राजमानः । लद्दम्यारचुम्बनं तया, कृतं चुम्बनं तेन लग्नः, संलग्नस्याम्यूलरसस्तेन रिश्वताभ्यामिव रक्ताभ्यामिव । चुम्बनस्थानेषु नेत्रस्य

लोचनाभ्यां पाटलयन्पर्यन्तानाशानाम्, बद्धान्धकारया त्रिपता-कया भ्रकुट्या पुनरिव त्रियामः परिवर्तयन्, 'देवि, न भेतव्यं न भेतव्यम्' इत्यभिद्धानो वेगेनोत्पपात । सर्वासु च दिश्च विक्षि-मचश्चर्यद्म नाद्राक्षीरिकचिद्पि तद्म प्रव्छ तां भयकारणम् ।

अथ गृहदेवतास्विव प्रधावितासु यामिकिनीपु प्रवुद्धे च समीपशायिन परिजन,शान्ते च हृदयोत्कम्पकारिणि साध्वसे सा समभापत—'आर्यपुत्र, जानामि स्वप्ने भगवतः सवितुर्मण्ड लाम्निगत्य द्वौ कुमारकौ, तेजोमयौ, बालातपेनेव पूरयन्तौ दिग्भागान, वैद्युतमिव जीवलोकं कुर्वाणौ, मुकुटिनौ, कुण्डलिनौ अङ्गदिनौ, कविचनौ, गृहीतशस्त्रौ, इन्द्रगोपकरुचा रुधिरेण स्नातौ, उन्मुखेनोत्तमाङ्गघटमानाञ्जलिना जगता निखिलेन प्रणम्यमानौ, कन्ययैकया च चन्द्रमृत्येव सुपुम्णरिहमिनिगत-

द्ययेति । यामिकिनीपु जागरिकासु । रात्रौ नृपप्रासादे जायतो जनाः संरत्त्रणाय नियुक्ताः सन्ति । समीपं निकटत्रर्थादन्तःपुरस्य बहिद्वीरे शेते तस्मिन् प्रबुद्धे जागरिते । हृदयस्य मनस उत्कर्मः वेपनं करोति तच्छीले साध्वसं भये शान्ते नष्टे सित । सिवतुः सूर्यस्य मण्डलात्परिधेर्निगीत्य बहिरागत्य । बालातपेन कोमल-किरगौदिरभागान्दिशां प्रदेशान् पूरयन्तौ व्याप्नुवन्तौ वैद्युतिमव विद्युत्संबंधिनिमव । श्रंगदिनौ केयूरवन्तौ । इन्द्रगोपक इव तास्रवर्ण मृगकीटक इव रुक् कान्तिर्यस्य तेनोन्मुखेनोध्विवलोकिना । सुपुम्पारश्मेरमृतमयिकरणान्निगीतया बहिरागतया। विलयन्त्याः

ब्रह्यां प्रसिद्धमेव । तिस्रः पताकाः ध्वजाः यस्यास्तया । श्रुकुटेस्निधा परिवर्तनेन त्रियामां रात्रि पुनरिव परिवर्तयन् श्रानयन् ।

यानुगम्यमानौ, क्षितितलमवतीणी । तौ च मे विलपन्त्याः
 शास्त्रेणोदरं विदार्य प्रवेण्टुमारब्धौ । प्रतिवुद्धास्मि चार्यपुत्रं
 विकोशयन्ती वेपमानहृद्या' इति ।

एतस्मिन्नेव च कालक्रमे राजलक्ष्म्याः प्रथमालापः
प्रथयन्निव स्वप्तकलमुपतोरणं रराण प्रभातराङ्कः। भाविनीं
भ्िनेवानिद्वाना द्ध्वनुरमन्दं दृन्दुभयः। चकाण कोणाहतानन्दादिव प्रत्यूपनान्दी। जयजयेति प्रबोधमणलपाठकाना
मुद्यवाचोऽश्रूयन्त, पुरुपश्च वल्लभनुरङ्गमन्दुरामन्दिरेमन्दमन्दं

मे विजयन्तीं (मामनादृत्येत्यर्थः ) 'षष्ठी चानाद्रे' इत्यनेनानाद्रे षष्टी । विदार्थे भित्वा ।

एनिस्तिने वेति स्वप्रफलं प्रथयित्र स्वप्नोऽवश्वं भावीति सूचयन्तिन उपतारणं बिहर्द्वारोपिर । विभन्त्यनेनाव्ययीभावः । प्राव्छः स्वप्नः सद्यः फजद इति धर्म शास्त्रमतश्च स्वप्नोऽयमवश्य सफज भवेदित सूचियतुमिदं वर्णा नम् । अमन्दमुचः । कोग्णो वादनदण्डस्तेन आहतं ताडनं तस्यानन्दात् । प्रत्यूषनान्दी प्राभातिको भेरी । प्रबोयमं गलपाठकाः प्रात्तनेरपितप्रबोधनार्थं गायन्तो बन्दिनः । वह्नभः, प्रियो, यश्तुरंगस्तस्य मन्दुरामंदिरं शाला । मन्दुराशब्दः एव वाजिशालावाच्यपि तुरंगपदसान्निध्याच्छःला मात्रवाचकः । वाचकानां पदानां सित पृथिवशेष्यतिनेव्याच्यात् । सुप्तं निद्रा । 'नंपुसकेभावेक्तः । तस्मादुत्थितः । अथवादौ सुप्तः पश्चादुत्थितः । अस्मिन्पचऽकमकत्वात्कर्तरि कः स्वर्थनां ह्यानाम् , च्योतचुषाराणां पतिद्वमानां मिलिलेः शीकरमार्दं मरकतिमव गारुत्मतिमव हरितं हरिद्वर्णं यवसं तृण्ं किरन । वक्त्रापरवक्ते । वक्त्रं भाव्यर्थसूचकः छंदोविशेषः

सुप्तीत्थितः सप्तानां कृतमधुरेहषारवाणां पुरश्च्योतसुषारसिललशीकरं किरन्मरकतहरिनं यवसं वक्तापरवक्त्रेषपाठ—
निधिस्तरुविकारेण सन्मिणः स्फुरता धास्ना ।
जुभागमो निमित्तेन स्पष्टमाख्यायते लोके । ३॥
श्ररुण इव पुरःसरो रिवं पवन इवातिज्ञवो जलागमम् ।
जुभमजुभमथापि वा नृग्गां कथयित पूर्वनिदर्शनोदयः' ॥॥
नरपतिस्तु तच्च्छुत्वा प्रीयमाणनान्तःकरणन तामवादीत्—
'देवि, मुद्गेऽत्रसरे विषीद्सि । समृद्धास्ते गुरुजनाशिषः । पूर्णा
नो मनोरथाः । परिगृहीतासि कुलदेवताभिः । प्रसन्नस्ते

त्रपरवक्त्रम् तन्नामकं मात्रावृत्तम् । 'वक्त्रमास्ये छंदसि च' हेमचंद्रः । उभयोरारूपायिकायामत्यावश्यकत्वम् । तथा वाग्निपुरागो, उच्छुासैश्च परिच्छेदो यत्र सा चूर्गिकोत्तरा । वक्त्रं चापरवक्त्रं च यत्र साऽऽरूपायिका मृता' ।

निधिरिति । निधिर्भूमिगतो धनसंचयस्तरविकारेण वृत्तस्य विशिष्टावस्थानेन सन्मणिः समीचोनं रत्नं स्फुरता विकसता धाम्ना तेजसा शुभगमः शुभस्य प्राप्तिर्निमित्तेन शकुनेन लोके जने स्पष्टमाख्याते कथ्यते । दीपकालंकारः॥३॥

अरुण इति । पुरःसरोऽययायी ऋष्यो रिविमवातिजवो वेगवान् पवनो वायुर्जलागमं वर्षाकाल्मिव पूर्व प्राग् निद्शंनस्य दृष्टांतस्योदयः प्राप्तिनृ गां शुभमशुभं वा कल्याग्यमकल्याग्यम् वा कथयति । भाविनावर्थानयौ पृवेमेव शकुनादिना ज्ञायेते इति तात्पर्यार्थः ॥४॥

नरपतिरिति । प्रीयमारोन संतुष्टेन । स्वमनोरथसृचकवाक्य-

निचिरेगींवातिगुणबद्पत्यत्रयलाभेनानन्दयिष्यति भवतीम्' इति । ग्रवतीर्य च यथाकियमाणाः कियाश्चकार । यशोवत्यपि तुनोष तेन पत्युर्भाषितेन ।

ततः समितकान्ते किस्मश्चित्कः छारो देव्यां च यशोवत्यां देवो राज्यवर्धतः प्रथममेव संबभूव गर्भे । गर्भस्थितस्येव च यस्य यशमेव पाण्डुतामाद्त्त जनती । गुणगौरवक्कान्तेव गात्रमुद्रोढुं न शशाक । कान्तिविसरामृतरसतृप्तेवाहारं प्रति पराङमुखीवभूव । शनैः शनैकपवीयमानगर्भभराछसा च

अवगात्तस्यानंदः । मुदोऽवसरे त्र्यानन्दस्य समये विषीदिति खिद्यसे त्र्यंशूनो किरगानां माला पंक्ति विद्यते यस्य स भगवान् सूर्यः । 'ब्रह्मादिभ्यश्च' इत्यनेन मत्वर्थीय इनिः । त्रवतीर्य चन्द्रशालाया, .इति शेपः

तत इति । क'लांशे स्वलंगे काले । स्वप्नः सफन इति सूचियतुमिदम । गर्भे स्थितस्य विद्यमानस्य यस्य राज्यवर्धनस्य । यशसा
कीर्स्येव । यशमः पाण्डुत्ववर्णनं किवसंप्रदायानुरूपम् । अतएव
विश्वनाथेनोक्तं किवसमय 'यशिस धवनता' इति । गुणानां
गौरवेण जाड्येन क्लान्ता पीडितेव गात्रं शरीरमुद्रोद्धं धारियतुम् ।
भारेण पीडितः स्वशरीरधारणेऽप्यसमर्थो भवति । कान्तीनां
तेजसां विसरः समूद् एवामृतरसस्तेन तृप्तेव । तृप्ताय च पानादि न
रोचते । उक्तं च श्रीहर्षेण 'अपां हि तृप्ताय न वारिधारा स्वादुः
सुगंधिः स्वदते तृपारा' । उपचीयमानस्य वधमानस्य गर्भस्य भरेण
भारेणालसामन्दा गुरुभिर्नृद्ध ननेवीरितापि निषिद्धापि। कथमपिकष्टेन
पतेन तस्या जनेष्वादरातिशयो व्यज्यते । विश्राम्यन्ती श्रान्ता
विश्रमाय यत्रकुत्रापि तिप्रन्ती सालभिक्षकेव पुत्तिकवेव कमस्तेति ।

गुरुभिर्चारितापि वन्दनायकथमिपस्कीभिर्हस्तावलम्बेनानीयतः विश्राम्यन्ती सालभिञ्जेव समीपगतस्तमभित्तिष्वलक्ष्यतः। कमललोभिनलीनरिजिभिरिव वृतावृद्धतुं नाशकचरणौ । सृणाललोभेन च चरणनखमयू वलग्नेभैवनहंसैरिव संवार्यमाणा मन्दमन्दंबभ्रामः मिलिभित्तिपातिनीपु प्रतिमास्यपि हस्तावलम्बनलोभेन प्रसारयामास करकमलम्, किमुत सखीपु । माणिक्यस्तमभदीधितीरप्यालम्बितुमाचकाङ्क्षः कि पुनर्भवनलताः। समादेपुमण्यसमर्थासीद्गृहकार्याणि केव कथाकर्तुमः। स्राह्मां नूपुरभारखेदितं चरण्युगलं मनसापि नोदसहत

गभपाडिता चरणाबुद्धतुं नाशकत्परं श्रमरेः कमलश्रान्त्या व्याप्ती तावतोऽसमर्थेति कल्पितम्। मृणाललोभन विमलाभन चरणनवाना मयूखेषु किरणेषु लग्नेः संमक्तेहँसमेरालेः संचायमाणा गमनाय प्रेयमाणा मन्दं मन्दं शनैः शनै ब्रामः। हंससहशीं गतिमाचरन्ता मन्दं भगम हंसलग्रत्वं कारणं कथितमः। मिणिमित्तिषु पर्तान्त तासु प्रतिमासु स्वप्नतिविम्बेष्विषः। श्रान्ता यस्य कस्यारि सहायं पदीतुमुत्किष्ठता भवित तद्वदियमपि स्वप्नतिमाधारमपै सतिति तात्पयं म्। माणिक्यानां पद्मरागाणां दीवितोरिष किरणान्यप्या लंबितुमः श्रयितुमाच कांत् इयषः। भवनलता गृहमध्य स्थापिता लताः। नृपूरयोर्मजारयोर्मारेण खेदितं पीडितम्। पादावसमर्थान्वत्यत्र नाश्चर्यमपि तु सौधारोहण कल्पनामपि नःसहतः। तस्तान। दीर्घ श्वमितवती । प्रत्युत्थानेष्विति । उभयोर्जान्वोक्षरपर्वणाः शिखरयोरप्रयोनिहितो स्थापितो करिकसलयो यया सा। दिवस-मित्यत्यन्तसंयोगे द्विताया। स्तनयोः वृष्ठे संकान्तेन पतितेनापत्य-दर्शनस्यौरसुक्यादिच्छयः तः प्रविष्टेनेव । स्तनयोः पृष्टयान्याः पृष्टयान्वस्य प्रवित्तेनापत्य-दर्शनस्यौरसुक्यादिच्छयः तः प्रविष्टेनेव । स्तनयोः पृष्टयान्याः पृष्टयान्याः प्रवित्तेनापत्यन्तसंयौरस्वयादिच्छयः तः प्रविष्टेनेव । स्तनयोः पृष्टयान्याः प्रवित्तेनापत्यन्तसंयौरस्वयादिच्छयः तः प्रविष्टेनेव । स्तनयोः प्रवित्तेनापत्यन्तसंयौरस्वयादिच्छयः तः प्रविष्टेनेव । स्तनयोः प्रवित्रो प्रवित्तेनापत्यन्तसंयोत्स्वयादिच्छयः तः प्रविष्टेनेव । स्तनयोः प्रवित्तेनापत्यन्तस्यौरस्वयादिच्छयः तः प्रवित्तेनेव । स्तनयोः प्रवित्तेनापत्यन्तिः

सीधमारोदुम् । अङ्गान्यपि नाशक्रोद्धारियतु दूरे भूषणानि । विन्नयिन्वापि कोडापर्वनाधिरोहणमुरुक्षिपतस्तनी तस्तान । प्रत्युःथानेपृभयक्रानुशिखरिवनिहितकरिकसलयापि गर्वादिव गर्भेणाधार्यत । दिवसं चाधोमुखी स्तनपृष्ठसंकान्तेनापत्यदर्श-नौत्सुक्यादन्तः प्रविष्टेनेव मुखकमलेनेवं प्रीयमाणा ददर्श गर्भम् । उदरेतनयेन हृद्ये च भर्जा तिष्ठता द्विगुणितामिवलद्मीमुवाह। सख्युत्सङ्गमुक्तशरीराचशरीरपरिचारिकाणामङ्केषुसपत्नीनान्तु शिरःसु पादौ चकार। अवतीर्णो च दशमे मासि सर्वोर्धी-भृत्यक्षपानाय वज्रपरमाणुभिरिव निर्मितम्, त्रिभुवनभारधार-

धिक्यात्म्ब्रच्यामस्थितिस्तेन च तत्र प्रतिविक्यं युज्यते । अन्यथा साप्ट्मीकृत चालिकेति तक्यं स्यात् । सत्यानां सहचरीणामुत्संगेष्वं केषु मुक्तं त्यक्तं शरीरं यया सा सपत्नीनां समानपतीनां शिरः-सृत्तमांगेषु । अवतीणं इति । पर्वेष मुर्जभृतां नृपाणां पर्वतानां च पत्तपाताय नृपाणां सहायनाशाय पर्वतानां पतत्रान्मूलनाय च । बलं सिखसहाययोः । चूलिरन्ध्रे पतत्रे च इति मिदिनी । वज्रस्येन्द्रायुधस्य परमाणुभिः सूद्मेरवयवेरिव । इन्द्रे णोत्पातिनां पर्वतानां पत्ताः स्ववज्रेण ब्रिज्ञास्तद्वयमप्युर्वीभृतां पत्तपाताय वज्रमय इव निर्मित इति तात्पर्यम् । त्रिभुवनस्य त्रिलोक्या धारण वहने समर्थं शेषस्य तन्नःमकस्य सर्पराजस्य फणामण्डलस्य फणासमूहस्योपकरणोः साधनैरिव किपतम् । सकलानां भूभृतां राज्ञां पर्वतानां च कम्पं करोति तच्छीलमत्यव दिग्गजानामवयवै-रिव विहितं कृतम् दिग्गजाः स्वदन्तैः पर्वतानकम्पयन्ति तद्दनु-रीधेनेनम् । नृत्वमय्यः । पूरितेति । पूरितानां शंखाना शद्धै-र्विभिर्म्थरम् । प्रहृतानां ताडितानां पटहुरतानां ढकाशतानां पटुः

णसमर्थं शेषफणामण्डलोपकरणेरिव कलिपतम्, सकलभूभृत्क-म्पकारिणं दिग्गजावयवंरिव विहितमसूत देवं राजवधनम्। यस्मिञ्जाते जातप्रमोदा नृत्यमय्यद्दवाजायन्त प्रजाः। पूरितासं-ख्यशङ्खण्डद्रमुखरं प्रहतण्यहरातपटुरवं गम्भीरभेरीनिनाद-निर्भरभरितभुवनं प्रमोदोन्मत्तमर्थलोकमनोहरं मासमेकं दिवसमिव महोत्सवमकरोन्नरपतिः।

श्रथान्यस्मिन्नतिकान्ते किस्मिश्चित्काले कन्दलिनि कुड्मिलिनकद्म्यनरौ तोक्मतृणस्तम्ये स्तम्भिनतामरमे विक-सितचातकचेतिस मुक्तमानसौकिस नभिस देव्या देवक्या द्व्यच्या चक्रपाणियशोवत्या दृद्ये गर्भे च संबभूव हर्षः । शनैः श्रोनश्चास्या सर्वप्रजा पुण्येरिव परिगृहीना भूयोऽप्यापाण्डुना-मङ्गयष्टिजंगाम। गर्भारम्भेण इयामायमानचारुच्चकच्चिकौ चक्रवर्तिनः पातुं मुद्धिनाविव पयोधरकलशौ बभार।सनन्या-

सम्यग् रवो ध्वनिर्यस्मिस्तम् । गं नीरेण दुंदुभीनां भेरीणां निनादेन शद्वेन निभेरमत्यंतं भरितं व्याप्तं भुवन येन तम् । प्रमोदेनानं-देनोन्मत्तेन मत्तेन मर्त्यतोकेन मनुज लोकेन मनोहरस्तम् । मासम् त्रिंशदहोरात्रम् । अत्यन्तसंयोगे द्वितोया । एक दिवसमिवनि । वत्सवनिमग्रानामचेतिनः का नो यात इति ज्ञायतेऽनेन ।

अथित । कस्मिश्चिन्काले द्वित्रवर्षात्मक इत्यर्थः । कन्द्लिनि नवांकुरवित कुद्मलितः संज्ञातकारकः कदंवनक्येस्मिस्तस्मिन् । तोक्मा हरितारतृणस्तम्बा यवससमुहा यस्मिन् । स्तम्भितानि कद्धानि (नष्टानीत्यर्थः) तामरसानि कमलानि यस्मिन् । पजेन्याधि-क्येन कमलध्वंसः । विकसितं प्रफुल्लं चातकचेतश्चातकमानमं यस्मिन्। एतादृशे नभसि श्रावर्णो मासि । मेघागमनेन चातकानंदः । े र्थमानननिहिता दुग्धनदीव दीर्घस्निग्धधवला माधुर्यमधत्त हष्टिः । सक्तलभङ्गलगणाधिष्ठितगात्रगरिम्गोव गतिरमन्दा-यत । मन्दंमन्दं संचरन्त्या निर्मलकुद्दिमनिमग्नप्रतिबिम्बनिभेन गृहीतपादपल्लवा पूर्वसेवामिवारेभे पृथिब्यस्याः । दिवसमधि शयानायाः शयनीयमपाश्रयपत्रभङ्गपुत्रिकाप्रतिमा विमलक्षेपो-

मुका श्रशद्वा मानसौ हसो हंसाः यस्मिन् । हंसानं। तदाऽत्रास्थित्या म्कद्रवम् । तथा च विश्वनाथः 'जलधरसमये मानसं यान्ति हंसाः, इति । देव्या देवक्याः कृष्णमातुः तस्या ऋषि भगवंतंध्यायन्त्या-हृद्ये गर्भे च सममेव हरिः प्रादुरासीत् । भगवद्धयाननिमग्ना सा गः भेवत्यासीदि ितारपर्यार्थः,नभसीत्यस्योपमा गां न संबन्धः, देव की गर्भस्य श्रावगोऽ वंभवादिति दिक प्रजापुरुयैरिव परिगृहीता स्वीकृता श्रापा-ण्डुतां पाण्डुरत्वम् ।श्यामायमा ।ो कृष्णाश्याौं चृत्निकं हस्तिनः कर्णा-मूले इव चूचुको स्तनाग्रीयस्याः सा चूचुकस्य चूलिकोपमा काठिन्य-कार्ष्यमृत्तिवं त्यवधेवम् रज्ञागार्थेभुद्रांविधाय किमपि स्थाप्यते तद्वदिद्-मि । गर्भकाने च कुचाप्रयोः श्यामत्वं वर्षितं वाग्भटेन अम्जेष्टता म्तनौ भीनौ' श्रेतान्तौ कृष्णचूचुकौ' इति । चक्रवर्तिनो भाविनः पाना-येत्यर्थः, स्तन्यार्थे दुग्धार्थे स्तने भद्धं स्तन्यं दिगादित्वाद्भवार्थे यत् । सकलमंगजग**र्गा**नार्था दिक्पालसमूहेनाधिष्ठितानां गात्ना<mark>गामवयवानां</mark> गरिम्या गौरवेण गतिगैननममदायत । नृपश्च द्वतांशोभवति। मन्द्रमन्दं शनैः शनैः संचरंत्या श्रम्या निर्मले हीरकादिरत्नमयेऽ-तएत स्वच्छे कुट्टिमे निबद्धायां सुवि निमग्नस्य पतितस्य प्रति-बिबस्य, निमेन, मिषेगा, पूर्वसेवां प्रथमधेवामिव । दिवसम् शयनं शय्यामधिशयानाया अधितिष्ठंत्याः । 'अपाश्रयः शय्यास्त-रणं तस्य पत्रगर्भपुत्रिका तदुपरि लिखिता पुत्रिका तस्याः प्रतिमा।

लोद्रगता प्रसवसमयं प्रतिपालयन्ती लक्ष्मीरिवालक्ष्यत । क्षपा-सु सौधिशिखराप्रगताया गर्मोन्माधमुक्तांशुके स्तनमण्डे हेः संक्रान्तमुडुपितमगडलमुपिर गर्भस्य हेतातपत्रमिव केनापि धार्यमाणमद्दयत । सुप्तया वासभवते चित्रभित्तिचामरप्राहि-एयोऽपि चामराणि चालयांचकः स्वप्नेषु करविधृतकमिलनीपला-राषुटसलिलेश्चर्तुर्भरपि दिक्करिभिरिक्रयताभिषेकः।प्रतिबुध्यमा-नायाश्च चन्द्रशालिकासालमिञ्जकापरिजनो जयशब्दमसकृदज-नयत्।परिजनाह्नानेष्यादिहोत्यशरीरा वाचो निश्चेकः।क्रीडाया मिषनासहताज्ञाभङ्गम्। श्रिष च चतुर्णामिष महाणंवानामेकी

विमले स्वच्छे कपोलोदरे गल्लमध्ये गता, विमलेत्यनेन विवप्रहणसामध्यम् । प्रसवसमयं प्रसृतिकालं प्रतिपालयंती प्रत्यवेसमाणा लद्दमीरिव जीवन्ती' इति प्रतिद्धा प्रसृतिदेवनेव ।
सपासु रात्रिषु सौधशिखरं चं शालां गताया गर्भस्य अभिकस्योनमाथेन परिष्कुरणेन मुक्तं त्यक्तमंशुकं वसनं यस्य तिस्मन् ।
संकांतं प्रतिविधितमुडुपितमंडलं चद्रमंडलं गर्भस्योद्रस्थितार्भकस्योपिर केनापि धार्यमाणं श्वेतं शुभ्रमातपत्रं छत्रमिव । अत्र
सौधाप्रगमनं तु लघुना शिविकादिना, वःसभवने, शय्यागृहे ।
स्वप्नेष्विति । चतुर्मिरिय दिक्करिमिर्दिग्गजेः करे शुंडादंडे
विश्वतस्य कमिलन्याः, पल्लाशस्य, पत्रस्य, पुटस्य, पर्णपात्रस्य,
सिललेरुदकेरिमिपेको मंत्रपूतं जलिमचनम् । सालभंजिकापिरजनः सौधे स्थापताः मृत्यः । अशरीया वाचः अमानुष्यो वाचः ।
चतुर्णामिति । चतुः समुद्रोदकानि सम्राडिभिषेकोपयुक्तानि तत्र
वाञ्छा भाविनीं साम्राज्यसिद्धि शशंस । देलालता समुद्रतीरस्था
लता तस्या गृहोदरस्य गृहमध्यस्य पुलिनपरिसरेषु वालुकाप्रदेशेषु,

कृतेनाम्भसास्नातुं वाञ्का वभूव । वेलालतागृहोदरपुलिन-परिसरेषु पर्यटितुं हृद्यमभिललाय । आत्यियिकेष्विप कार्येषु-स्विभ्रमं भूलता चवाल संनिहितेष्विप मणिद्पंणेषु मुखमु-खाते खड्गपट्टं वीक्षितुं व्यसनमासीत् । उत्सारितवीणाः स्वीजनविरुद्धा धनुर्ध्वनयः श्रुनावसुखायन्त । पञ्जरकेसरिषु चत्तुररमत । गुरुप्रणामेष्विप स्तम्भतमिव शिरः कथमपि ननाम । सख्यश्चाम्याः अमोद्विस्फारितेर्लोचनपुटेरासन्न-प्रस्वमहोत्सविधयेव धवलयन्त्यो भवनं विकचकुमुद्कमल-कुवलयपलाशवृष्टिमयं रक्षाविविविमिवानवरतं विद्धाना दिन्नु क्षणमिप न मुमुद्धः पार्थ्वम ।

एतेनापःबस्यासमुद्रज्ञितीशस्यं सूचितम् । त्र्यास्ययिकेष्ववश्यकर्तं व्यष्विपि । संहितेष्विति मणिदपेणेषु रत्नमुकरेषु । उत्खाते विकोषे, एतेन गर्भस्य वीरत्वं ज्ञातम् । उत्सारिता नि.सारिता बीणा यस्तेस्वीजनविसद्धा,युवतिज्ञनानुचिता,धनुर्ध्वनयश्चापशब्दाः, श्रुतौ कर्णोऽपुखायन्त सुखं व्यद्धुः । सख्य इति । सख्योऽस्याः

आत्मोचितस्याननिषगपणाश्च महान्तो विविधौषविधरा भिष

पारवन मुचुमुरित्यन्वयः । तान विशिनष्टि । प्रमोदेनानंदेन विन्म्फारितैर्विकसितैर्ज्ञाचनपुटनेयन पुटैः । अत्र पुटशब्दोऽलं हारार्थः । आसन्नस्य समीपागतस्य प्रसवमहोत्सवस्य धियेव बुब्येव । भवनं गृहं धवलयन्त्यः शुश्रीकुर्वन्तयः । महोत्सवेषु गृहशुश्रीकरणं प्रसिद्धमेव, अनवरतं, सतनं, विकचानां, विकसितानां, कमलकुमुद्कुवज्ञयपलाशानां, वृद्धिमयं वृद्धिप्रचुरं, रच्चावितं रच्चणार्थं कियमाणां पूजामिव दिच्चसर्वत्र विद्धानाः कुर्वाणाः । आत्मनः स्वस्योचितेषु योग्येषु स्थानेषु निषण्णा स्थिताः । विविधानामोषधीनां धरा धारका

जो भूघरा इव भुवो धृति चकुः । पयोनिर्धानां हृदयानीव लच्यासहागतानि ब्रीवा पूत्रब्रन्विषु प्रशस्तरत्रान्यवध्यन्त ।

ततश्च प्राप्ते ज्येष्ठामृत्राये मासिः बहुत्रासु बहुत्रपत्तद्धाः दश्यां, व्यतीते प्रदोषसमये, समारुष्त्ति क्षपायौवते । सहसं वान्तःपुरे समुद्रपादि कोलाहतः स्त्रीजनस्य । निर्गत्य च ससंभ्रमं यशोवत्याः स्त्रयमेव हृद्यनिर्विशेषा धाद्याः सुन्य सुयात्रीत नाम्ना राज्ञः पाद्योर्निपत्य 'देव' दिष्ट्या वर्धते द्वितीयसुतजनमना' 'इति व्याहरन्ती पूर्णपातं जहार ।

ग्रस्मिन्नेव च काले राज्ञः परमसंगतः, शतशः संवादि-इत्युभयलापि समानम् । अथश विविधा श्रीषधयो बासु तथाभूता धरा भूमयी येपां ते । भिषको वैद्याः । धृति धैर्ये धारणां च । प्रशस्तानि च तानि रत्नानि (पद्यो प्रशस्तानि रत्नानि येपु तथा-भूतानि हृद्यानि ।

नतश्चेनि ज्येष्टामृत्ये ज्येष्टे 'ज्रेष्टामृतीयमिच्छिति मासमापाढपूर्वजम्' इति हारावली । बहुलासु कृत्तिकासु । 'बहुलाः कृत्तिका' इत्यमरः । लहुलपत्तद्वादश्यां, कृष्णापत्तद्वादश्यां, प्रदोषसमयो रजनीमुखे व्यतितिऽतिकानते, चपाया, रात्रयोविने, प्रानंभादुत्तरे भागे, समाम्बद्धाराते सित । स्त्रीजनस्या, युवतिवर्गस्या, कोलाहलः कलकल उदपादि समभूत् । निर्गर्त्योति । यशोवत्या धात्र्या उपमातुः सुत। हृदयात्रिर्गतो विशेषो यस्यां सा सुयात्रेति नाम्ना स्वयमेव निर्गत्यात्री च्छ्या बहिरागत्या इति व्याहरन्ती इति निवेदयन्ती गृण्यापानकम् ।

अस्मिन्निति । परमसंमतोऽत्यंतमान्यः संवादितः प्रत्यच्चीकृतो-ऽतींद्रियादेशो भविष्यकथनं यस्य सः। संकलितं गणनं विद्यते तानीन्द्रियादेशो, द्शित्यमावः संकलिती ज्योतिषि, सर्वासां ग्रहमंहितानां पारदृथ्यः, सकलगणकमध्ये महितो हितश्च विकालकानभाग्योजकस्तारको नाम गणकः समुपसृत्य विकाषितवान्—'देव, श्रूयताम् । मांधाता किलंबंविधे व्यतीपान नाद्मिवंदोषाभिषङ्गरहितेऽइति सर्वेषू चस्थानस्थितेष्वेवं ग्रहेप्योद्दी लग्ने भेजे जन्म । श्रविक्ततोऽस्मिन्नन्तराले पुनरेवंविधे योगे चक्रवर्तिजनने नाजिन जगित कश्चिद्रपरः । सप्तानां चक्रवर्तिनामग्रणीश्चक्रवर्ति चहानां महारहानां च भाजनं सप्तानां मागराणां पालियता सप्ततन्त्रां सर्वेषां प्रवर्तयता सप्तस्विसमः सुनोऽयं देवस्य जातः' इति ।

अज्ञान्तरे स्वयमेवा गध्नाता ऋषि तारमधुरं शङ्काविरसुः।

यस्य सः। ज्यातिषि ज्योतिःशास्त्रे पारदृश्वा पारंगतः। दृशेः किनिप् '। मिह्तः पूज्यो भोनकः सूर्याराधको गणकितशेषो भागवत, इति प्रिथतो वा। मांधाता सूर्यवंशस्था युवनाश्वस्य पुत्रों ऽबरोषास्त्रस्य नृपतः पिता । त्र्यतीपातादिदोषाणामिषणेन संबंधन रहिते वर्जिते। सर्वेपूचस्थानस्थितेषु प्रहेषु । सर्वेषां प्रहाणामेकदैवोचस्थानत्वमशक्यमिति ज्योतिर्विदोऽतोऽत्र शुभेषु महेष्वित्यर्थो प्राह्यः। चकवितिनः सम्रामो जननमुत्पत्तिर्यस्मिस्तादृशे योगे सुमुहूर्ते नाजिन। दीपजनेत्यनेन वैकल्पिकः कतेरिचिण्। श्रमणीः श्रेष्ठः। 'भागनं पात्रम्। परिनायकः सेनापितः। सप्ततन्तूनां यन्वानां, प्रवर्तयिता प्रवर्तकः। सप्त सप्तयोऽश्वा यस्य स सुर्यस्तेन समस्तुल्यः।

अत्रान्तरे इति । श्रनाध्माता श्रपूरितास्ता (मधुरमुच्चैर्मनोह-रम्। ज्ञुभितस्य संचलितस्य जलिनिधेः, समुद्रस्य, जलस्य, ध्वनिरिव, अताडितोऽपि चुभित तलि चिजलध्वितिधीरं जुगुआभिषेकदु
न्दुभिः। अनाहतान्यपि मङ्गलतूर्याणि रेणुः। सर्वभुवनाभयघोषणापटहइव दिगन्तरेषु बभ्राम, तूर्यप्रतिराद्यः, विधुतकेसरस्
टाश्च साटोपगृहीतहरितदूर्वापल्लवकवलप्रशस्तेमुंखपुटैः समहेपन्त हृष्टा वाजिनः। सलीलमुित्सिर्तहेस्तपल्लवैर्नृत्यन्त इव
श्रवणसुभगं जगर्जुगंजाः। ववौ चाचिराचकायुधमुतस्जन्त्या
लद्म्या निःश्वास इव सुरामोदसुर्भिदिव्यानिकः। यज्वनां
मन्दिरेषु प्रदक्षिणदिखाकलापकथितकल्याणागमाः प्रजज्वलुर-

धीरं यथास्यात्तथा जुगुंज द्ध्वान । मंगलतूर्वाग्या मंगलवादित्राणा । सर्वम्य, सकलस्य, भुवनस्य जगतोऽभयस्य घोषणाया उच्चेर्घु प्रस्य पटहो, ढककेव ा तूयाणा, वाद्यविशेषाणां, प्रतिराब्दः, प्रतिध्वनिः, । विधृताः, कंपिताः,केसरसटाः,सटाग्राग्रि,यैस्ते वाजिनो हयाः,बाटोपं सगर्वे,गृहीनानां,हरितानां,हरिद्वणीनां,दूर्वाणां कवलेत्रां ते: प्रशस्तानि, विस्तृतानि,तेमु खपुटैः,समहेषन्त समहेषन्त । उत्चिप्तेरूर्ध्व घृतेर्हस्त-पल्लवैः, शुं डादंडैर्नृत्यन्त. इव नर्तका, इव गजा, हस्तिनः,ऋवणसुभगं श्रतिमनोहरं, जगर्जुः शब्दं चकुः, ववाविति । चक्रःयुधं नारःयग्र-मचिरात्त्यमुतस्जल्यास्त्यजल्या लद्म्या निश्वास इव । नूतनोत्पन्न हर्षमाश्रिवितुं हिन्तिदम्या त्यक्त इति तात्वर्यम् । सुराया मद्य-स्यामोदेनाति निर्हारिगंधेन, सुरभिः, सुगंधिदिंच्यातिलः, स्वर्गीयो वायुः । यज्ञनां,यज्ञकृतां, मंदिरेषु, गृहेषु, प्रदक्षिणेन, वर्तुः लाकारेगा, शिखाकलापेन,ज्वाजा समृद्देन कथितः सृचितः कल्याणानां मंगला-नामागम उत्पत्तिर्येग्ते वैतानवन्ह्यो यज्ञाम्नयोऽनिधना इंधनरहिता एव । वतानवन्हीनां प्रदक्तिगाशिखावलयेन ज्वलनं मंगलसूचकमिति कविसंप्रदाय: । भुवस्तछादिति । तपनीयशृं खला सुवर्णीन-

निन्धना वतानेवेद्वयः भुवस्तलात्तपनीयश्रङ्खलावन्धवन्धुरकल<sup>्</sup> शीकोशाः समुद्गुर्महानिधयः । प्रहतमङ्गलतूर्यप्रतिशब्द्निभेन दित्तु दिक्यालैरपि प्रमोदादिकयतेव दिष्टबुद्धि कलकलः तत्क्षण एव च शुक्क वासको ब्रह्ममुखाः कृतयुग प्रजा-पतय इव प्रजाबृद्धये समुजिस्थिरे द्विजातयः । साक्षाद्धमै इव शान्त्युदकफलहस्तस्तस्यौ पुरः पुरोधाः। पुरातन्यः स्थितय इवादश्यन्तागता वान्यवृद्धा । प्रत्मवश्मश्रुजालजटिलाननानि बहलमलपङ्कानलङ्कानारकायानि नश्यतः कलिकालस्य वान्ध-वकुळानीवाकुळान्यधावंत मुक्तानि बन्धनबृन्दानि 🦠 तत्काळा-पकान्तस्याधर्मस्य शिविरश्रेणय इवालच्यन्त लोकविलुण्डिता गडस्तस्य बंधेन वंधनेन, बंधुरो, मनोहरः, कलशो<mark>कोशी घटावर</mark>ण ्येषां ते महानिधयो द्रव्यसंचया. भुवस्तलाङ्क्ष्प्रष्टादुदगु<mark>र्वहिरा</mark>जग्**मुः** । प्रहतानां ताडितानां मंगलतृर्याणां प्रतिशब्दस्य निभेन भिषेण दिष्टवृद्धिरानदवर्धनम्, तत्त्त्त्त् । ब्रह्मामुखे येपाते (पत्त)ब्रह्मवेदो मुखे येषां । पुरातन्यः प्राचीनाः । प्रलंबेन लंबमानेन शमश्रुजालेन मुखस्य-केशममृहेनः जटिलानि, व्यःप्तान्याननानि, मुखानि, येषां ते । बहलेन प्रभूतेन मलपंकस्य कलंकन कालाः कृष्णवर्णाः कायाः येषां ते। एतेन तदानीं कारागृहिगां श्मश्रुच्छेदनं स्नानं च प्रतिबद्धमासीदिति गम्यते । त्राकुलान्युत्सुकानि गृहगमनत्वरयौतसुक्यम् । बंधनवृंदानि बंधन कारावासो विद्यते येषां ते बंधनाः तेषां वृंदानि, समूहाः। तत्काले-धर्मस्वरूपस्य, हर्णस्योप्तत्तिकाले ऽपकांतस्य पत्नायितस्या-धर्मस्य शिबरश्रेणयो निवासगृह्पंक्तय इव रिक्ता इत्यर्थः। ें लोकैरानंदमग्नैजंबिर्विलुं ठिताश्चोरिता बलाद गृहीता विपणिवीध्यो बिणिक्पथसमृहाः । एतेन तदानीं पुत्रोत्पत्याद्यभ्युद्यकाले बिपणे-

विपणिवीथ्यः। विलसदुन्मुखवामनकविधरवृन्दवेष्टिताः साक्षा
इज्ञातमातृदेवता इव वहुबालकव्याकुला ननृतृर्द्धधादयः।

प्रावर्तन च विगतराजकुलस्थितिरधः कृतप्रतीहाराकृतिरपनी
तवेत्रिवेद्यो निर्दोषान्तः पुर प्रवेद्याः समस्वामिपरिजनो निर्वि
देशपबालवृद्धः समानिद्याद्याध्यजनो दुर्वेयमत्तामत्तप्रविभाग
स्तुल्यकुलयुवतिवेश्याविलासः प्रनृत्तसकलकटकलोकः पुत्र
जन्मोसवो महान्।

अपरेद्यरारम्य सर्वाम्यो दिग्म्यः स्त्रीराज्यानीवावर्जि-र्विलुंठनपद्धतिरासीदिति गम्यते । प्राया नृपा विशाजां धनदातार इत्याप कलानीयम् । त्रिलिसतां, शाभमानानां, खर्वाणां, विधराणां, श्रोत्रविहीनानां, वृद्धेः, समुहैर्वेष्टिता, वृद्धधात्रयो जरत्य अपमातृकां, बहुभिरनेकैर्बा क्रेबेट्सै र्व्याकुना जातमातृदेवता अपत्यरचकदेवता इव नमृतुः । प्रसूतिगृह बहुवःतारिवृता देवो पापःण**लं**डे तंडुतन मयी रज्ञार्थमधुनापि स्थाप्यते । प्रावर्ततेति-विगता नष्टा राज-कुलम्य नृपगृहस्य स्थितिर्मयादा यस्मिन्सः । अधःकृतः तिरस्कृता-वमानितेत्पर्थः, प्रतीहारस्य दोवारिकस्याकृतिर्यस्मिन्तः । निर्दो-षं।ऽनिवार्ग्ताऽन्तःपुर प्रवेशो यस्मिन् सः । समी स्वामिपरिजनौ सेव्यसेवकौ यस्मिन्सः । निर्मतो विशेषा येभ्यस्ते निर्विशेषास्तथा बालवृद्धा यस्मिन् सः दुर्ज्ञीयो ज्ञातुमशक्यो मतामत्तयाः चीवा-च्चीबयोः प्रविभागो यस्मिन् सः । तुल्यः, समानः, कुलय्वतीनां, वेश्यानां च विलासो यस्मिन् सः । कुलस्त्रियोप प्रमोदप्रमता वेश्या इव वि<mark>लासान प्रकटयामासुरि</mark>त्यर्थः । प्रनृत्ता, नृत्यःसक्तः, सकतः, कटकलाकः, सैनिकवर्गी यस्मिन्सः ।

अपरेचुरिनि । नृत्यन्ति सामन्तान्तः पुरस**इका**एयदृश्यन्तेति-

ानि, ग्रसुरिव तरा गी प्रापावृतानि नारायगावरोधा नीव प्रचितानि, अप्सरसामिव महीमवतीर्गानि कुलानि. परिजनेन पृथुकरण्डपिरगृदीताः स्नानीयचूर्णावकीर्णकुसुमाः सुमनः स्रजः, स्कटिकशिलाशकलशुक्क कर्पूरखण्डपूरिताः पात्रीः, कुङ्कुमाधि-वासमाञ्जि भाजनानि च मिगामयानि, सहकारतैलिनम्यत्तनु-खिर्केसरजालजटिलानि चन्दनधवलपूगफलफालीदन्तुरदन्त-शफरुकाणि, गुञ्जनमधुकरकुलवीयमानपारिजातपरिमलानि पाट

संबंब: सर्वाभ्यो दिग्भ्यो निश्चित्ताभ्य श्राशाभ्य श्रावर्जितान्या-नीतानि स्त्रीराज्यानीव । श्रायावृतानि विमुक्तान्यसुरविवराणीव । पातालविवरात्राग कन्यान्त्रागता इमा इति कल्पना । नारायणस्य श्रीकृष्णस्यावरोधान्यन्तः पुराणि बहुसंख्याकत्वात् । परिजनेनेत्यस्य त्रिभ्राएोनेत्यनेन संबंग, । कि विभ्राएोनेत्याह । पृथुषु महत्सु करंडेषु समद्गेषु परिगृहीताः, स्थापिताः, स्नानीयचूर्णेनावकीर्णानि, व्याप्तानि कुसुमानि यासां ताः सुमनःस्रजः, पुष्पमालाः । स्कटिकस्य शिजाशकलेरिव शिजाखंडेरिव शुक्तैः शुभ्रैः कपूरखंडेः, पूरिताः पात्रीभोजनानि । मिणमयानि रत्तमयाति । कुक्मस्य काश्मीरज-स्याधिवासं संस्कारं भजन्ति तानि भाजनानि, पात्राणि । सहकार-तेलेनाम्रतेलेन तिम्यतामार्द्राणां तनूनां, सूदमाणां, खदिरकेसराणां जालेन समूहेन जटिलानि व्याप्तानि । चन्द्रनमिव,धवलानि,शुभ्राणि, पृगीफलानि फाल्यः कार्पासवस्त्राएय।च्छादनार्थं स्थापितानीत्य-र्थंस्ताभिर्देन्तुराणि नतोन्नतानि दन्तश्यफरुकाणि करिदन्तकृता; समुद्रकाः । गुंजता सशब्देन मधुकरकुलेन भ्रमरसमूहेन पीयमानः प्र.<del>रे</del>यमानः पारिजातस्य सुगन्धिद्रव्यविशेषस्य परिमलो येषां तानि पाटलानीषदक्तानि पटलकामि पिटकानि ।

लानि पोटलकानि (पटलकानि) च, सिन्दूरपात्राणि च, पिष्टातकपात्राणि च, बाललतालम्बमानिवटकवीटकांश्च नाम्बू-लबृक्षान्विभ्राणेनानुगम्यमानानि चरणितकुट्दरणितमणिन्-पुरमुखरितदिङ्मुखानि नृत्यन्ति राजकुलमागच्छन्ति समन्ता-त्सामन्तान्तः पुरसहस्राण्यदृदयन्त ।

शनैः शनैव्यंज्ञम्भत च कचिन्तृत्तानुचितचिरंतनशाली नकुळपुत्रकलोकलास्यप्रियतपार्थिवानुरागः, कचिद्नतः स्मित क्षितिपालोपेक्षितश्चीवश्चद्रदासीसमाकृष्यमाणराजवल्लभः, 'पटलं तिलके नेत्ररोगे छदिपि संचये । पिटके परिवारं च इति' हैमः। सिन्दूरपात्राणि रक्तचूर्णपात्राणि । पिष्टातकस्य कृष्णवर्णस्य सुगंधिद्रव्यस्य, पात्राणि । बाललतासु लंबमाना विटकवीटकाः पंचाशत्पर्णमयास्तांचूला येषां तान् तांचूलवृत्तान् । विश्वाणेन् धारयता परिजनेन सेवकेनानुगम्यमानान्यनुस्रियमाणानि । चरणोः यन्निकुट्टनं ताडनं तेन रिणतैः शब्दं विद्धद्विन्पुरैर्मुखरितानि शद्वीयतानि दिङ्मुखानि यैस्तानि । राजकुलं, राजगृहम्।

दानैरिनि । उत्सवामोद उत्सवस्य हर्षो व्यज्नंभतावर्धत । कचिद्केन्न नृत्तस्य नर्तनस्यायोग्यश्चिरंतनः परंपरागतः शालीनो प्रष्टृष्टः कुलपुत्रकाणां लोकः समृह्स्तस्य लास्येन नृत्येन प्रथितः स्पष्टः पार्थिव्स्य पृथ्व्या ईश्वरस्य प्रतापवर्धनस्यानुरागः प्रेम यस्मिन्सः। त्रन्तः स्मितं हास्यं यस्य तेन चितिपालेन नृपेण उपेचितः श्रवज्ञां प्रापितः चीवया मत्त्या चुद्रदास्या समाकृष्यमाणो राजवञ्जभो राजियजनो यस्मिन्सः। नृपस्मितप्रेरिता चुद्रदासी राजवञ्जभं समाकृष्ट्यतीत्यर्थः। मत्तानां कटककृष्टिनीनां सेनावेश्यानां कंठेषु गलेषु लग्नानां समासक्तानां वृद्धानां जरठानामार्याणां श्रेष्टानां कंठेषु गलेषु लग्नानां समासक्तानां वृद्धानां जरठानामार्याणां श्रेष्टानां

कचिन्मत्तकटककुट्टनीकण्ठलप्रबृद्धायांसामन्तनृत्तनिर्भरहसितनरपितः, कचित्क्षितिपाक्षिसंक्षादिष्टदुष्टदासेरकगीतसूच्यमानसचिवचौर्यरतप्रथः, कचिन्मदोत्कटकुटहारिकापरिष्वज्यमानजरत्प्रवाजितजनितजनहासः, कचिद्नयोन्यनिर्भरस्पर्धोष्टुरचेटकपेटकारच्यावाच्यवचनयुद्धः, कचिन्नृपावलाबलात्कारनत्यमाननृत्यानभिक्षान्तः पुरपालभावितभुजिष्यः, सपर्वत इष
कुसुमराशिभिः, सवारागृह इव सीधुप्रपाभिः, सनन्दनवन इव
पारिजातकामोदैः, सनीहार इव कर्पूररेणुभिः, साट्टहास इव

सामन्तानां मंडलाधिपानां नृत्तेन निर्भरमतिरायितं हसितो नरपतिर्थ स्मिन्सः । चितिपातेन नृपेणाचिसं ज्ञया नेवसूचनया त्रादिष्ट त्राज्ञा-पितो दुष्टो दासेरको दास्याः पुत्रस्तेन गीतेन गानेन कर**गोन सृ**च्य-मानः कथ्यमानः, सचिबस्य, चौर्घरतस्य गुप्रक्रीडाया ऋर्थात्पर नारीगमनस्य, यम्मिन्सः, प्रपंची विस्तारो, उपरितनवर्णनेन तदानीं सचित्रादयो न शुद्धाचाराः सेनायां च वेश्यास्थापनपद्धति रासीदिति ज्ञायते । मदेनोत्कटया व्याप्तया कूटहारिकया कुंभदास्या परिष्वज्यमान श्रालिंग्यमानो जरन्बृद्धः प्रव्रजितःसन्यासी तेन जनित उत्पादितो जनहास्रो लोकहार्यं यरिमन्सः । श्रन्थोऽन्यस्य परस्परस्यनिर्भरयाऽतिशयया स्पर्धया उद्धराउल्लासिताश्चेटका गायक-वेश्यादीनांपरिचिताः जनास्तेषां पेटकेन समृहेनारव्धं प्रारधम् अवाच्य वचनैर्गालभिर्युद्धं बाकलहो यस्मिन्सः। पेटकः पुस्तकादीनांमंजूषायां कदंबक इति मेदनी । नृपावलाभिः नृपतिद्वासीभिः कामिश्चित् वलात्कारेषा हठेन नर्त्यमाना नृत्यानभिज्ञाः नृत्यापरिचिताः र्बन्तःपुरपाला श्रन्तःपुररक्तकाः तैः भाविताः शेखिताः भुजिष्या दास्यो यश्मिन्सः । सीधुप्रपाभिर्मचपानायशालाभिः सधारागृई इव,

पटहरवैः।,सामृतमथन इव कलकलैः, सावर्त इव रासकमण्डलैः सरोमाश्च इव भूषसामिशिकिरणैः, सपट्टवत्न्धन इव चन्दन-लहलाटिकाभिः, सप्रसव इव प्रक्षिशब्द्कैः; सप्ररोह इव प्रसा-ददानैरुत्सवामोदः।

स्कन्धावलम्बमानकेसरमालाः काम्बोजवाजिन इवास्क-न्दन्तः, तरलतारका हरिणा इवोङ्घीयमानाः, सगरसुतः इव खनित्रैर्निर्देयैश्चरणाभिघातेदारयन्तो भुवम्,अनेकसहस्रसंख्या-

धारागृ हैर्यंत्रगृहैः सहित इव कर्पूररेगुिभः कर्पूरपरागैः सनीहार इव हिममय इव। शेत्यशुम्र-युतत्वात्कपूरस्योभयधर्मत्वात । पटहानामानकानां रवैः, शद्वेः श्रष्टहासेनोचैहीस्येन सहित इव कलकलैः कोलाहलैरमृतः मथनेन सिहत इव । उच्चैः शद्ववत्वात । रासकं गोपानां वतुं लाकारां नृत्यविशेषः । श्रावर्तेर्भ्रीमिभः सिहत इव भूषणमणीनामलं काररत्नानां किरणेम्यूखेः सरोमाञ्च इव रोमांचै रोमोद्रमैः सिहत इव । दन्तुराकारत्वादिति भावः । चंदनस्य मलयजस्य ललाटिकाभिलेलाटालंकारेः पट्टबंधेन शिरोवेटनेन सिहत इव । चंदनेन शुभ्रत्वाह्मलाटस्य । प्रतिशद्भकैः प्रतिध्वनिभिः । प्रमाददानैरनुप्रहदानैः सप्ररोह इव सांकुर इव । श्रानुप्रहेण दत्ताः पदार्थो उत्सवामोदस्यांकुरा इति कल्पना ।

स्कन्धेति—युवानश्चिकी हिरित्यन्वयः । तान्यूनो विशिनष्टि । स्कन्धेष्ववलं वमानाः केसरमालाः, वकुलस्रज्ञः, स्कन्धस्थाः केशा वा येषां ते । श्चास्कन्दन्त, उद्घीयमानाः, कांबोजवाजिनः, कांबोजाख्यस्य हिमवदुत्तरस्य काशमीरात्प्राचीनस्य, देशस्याश्चा इव । 'श्चास्किन्दित-किमत्यि । उत्प्रुत्योत्प्लुत्य गमनं कोपादेवाखिलैः पदैः ' इति हैममाला । सगरपुत्राः खनित्रैरिव निद्धैयदेयारहितैश्च रणाभिघातैः,

श्चिक्रीडुयुवानः। कथमपि तालावचरचारणचरणक्षोभंचन्नमे क्ष-मा,िस्तिपाल कुमारकाणां खेलतामन्योन्यास्फालेराभरणेषु,मुक्ता-फलानि फेलुः। सिन्दूररेगुना पुनरूत्पन्नहिरगयगर्भगर्भशोणित शोणाशिमव ब्रह्मांडकपालमभवत्। पटवासपांयुपटलेन प्रकटित-मन्दाकिनीसेकत सहस्रभिव युशुभे नभस्तलम्। विप्रकीर्यमाण-पिष्टातकपरागपिञ्जरितातना भुवनक्षोभविशीर्णपितामहकमल-किञ्जलकरजोराजिरञ्जिता इव रेजुर्दिवसाः। संघट्टविघटिनहार-पतितमुक्ताफलपटलेषु चस्खाल लोकः।

स्थानस्थानेषु च मंद्मंद्मास्काल्यमानालिङ्गचकेन शिञ्जान-

पादताडनैर्भुवं वसुधां दारयन्त इव खतन्त इव । अनेकसहस्रसंख्या ध्यसंख्याता इत्यर्थः । त्रमा पृथ्वी तालैरवचरन्ति भ्रमन्ति ते च ते चारणा बंदिनम्तेषां चरणात्रोमं चत्रमे विषेहे । आमरेगोष्वलंकारेषु, अन्योन्यास्फालनेः परस्पर संघर्षणोः । पुनरुत्पन्नः पुनर्नाता हिरण्यन्त्रभी ब्रह्मा तस्य गर्भस्य भ्रूणस्य शोणिते रक्तेः शोणास्तान्ना आशा दिशा यस्य तत् पटवासस्य पिष्टातस्य पासून् रज्ञसां पटलेन समूहेन प्रकटितंत्र्यक्तत्यया दिशतं मन्दाकिन्याः स्वर्गगाया सैकत-सहस्रं पेन तदिव । विप्रकीर्यमाणस्य विष्यमाणस्य पिष्टातकस्य सुगन्वद्रव्यविशेषस्य "अर्गजा" इति भाषायां प्रसिद्धस्य परागेर्धू लिभिः पित्ररितः पीतवर्णीकृत आतपः प्रकाशो येषां ते दिवसा सुवनस्य नगतः चोभेन सञ्चलनेन विशीर्णस्य विदीर्णस्य पितामह-कमलस्य ब्रह्मक्रमलस्य किन्तरुत्व विष्टितेभ्यस्युटितेभ्यो हारेभ्यो सुक्तामालाभ्यः पतितेषु सुक्ताफलपटलेषु मौक्तिकसमृहेषु । स्थानस्थानेष्वेति । स्थानस्थानेष्वेतिचेनातोचेवाचेनानुगन्य-

मंजुवेगुना झगझणायमानझल्छरीकेगा ताड्यमानतंत्री परिहकेन, वाद्यमानानुत्तालालाबुवीगान कलकांस्यकोशीकणित काहलेन समकालदीयमानानुतालतान केनातोद्यवाद्यनानुगम्यमानाः, पदे पदे झणझणितभूषणरेयरपि सहदयैरिवानुवर्तमानताललयाः, कोकिला इव मदकलकाकबीकोमलालापित्यो. विट नां कर्णा-मृतान्यश्लीलरासक गदानि गायन्त्यः, समुग्रडमालिकाः, स-कर्ण पल्छवाः, सवन्दनतिलकाः, समुच्छिताभिर्वलयावली-वाचालाभिवांहुलतिकाभिः सवितारमिवालिङ्गयन्त्यः, मकुंकु-

मानाः परयविज्ञासिनयः प्रानृत्यित्रिति संबन्यः । मन्दं मन्दं शनैः शनैरास्फाल्यमानास्ताड्यमाना श्रालिंग्या लघुमृदङ्गाः (तवला) प्रसिद्धा यहिंगस्तेन । शिमाना मधुरं नद्दन्तः मनजवो मनाज्ञा वेगावो मुरल्यो यस्मिस्तेन । भागभागायमाना भागभागीति शद्धं विद्धत्यो भल्जयो (भांज) इति भाषायां प्रसिद्धा यध्मिस्तेन । ताड्यमाना-स्तंत्रयो बीरा!: पटहि हा लघ्या भेर्यो यहिंमस्तेन । बाद्यमाना अनु-त्ताला मधुरशद्रा अताबुबीए। यर्टिमस्तेत । कतं मबुरं कांस्वकोश्यां कांस्यमये वाद्यपृष्ठभागे किणितः सशद्रः काहतः 'कर्णा' इति भाषायां प्रसिद्धो यहिंमस्तेन । समकालं दीयमाना ऋतुत्ताला अनुत्कटा ताना यर्सिमतेन । आतो द्येवाद्येन चतुर्विधवाद्येनानुगम्य-मानाः । पदे पदे इति । भाषाभाषातानां तथः शब्दं विद्धतां भूषयानामलंकारायां रवैः शद्वैरपि सहृद्यैर्गानाभिज्ञेरनुवर्तमानौ ताललयो यासां ताः । मदेन कला मधुरा का कली कोमलध्वनिस्तया मधुरमाज्ञपन्ति गायन्ति ताः । त्रिटानां स्वाश्रितानां नीचानां कर्णा-मृतानि कर्णयोः श्रोत्रयोरमृतसदृशान्यश्लील।न्यवाच्यानि रास-कपदानि गोपनृत्यपदानि । समु एडमालिका मुख्डे शिरसि पुष्प-

प्रमृष्टिरु िरकायाः काश्मीरिकशोर्य इव वल्गन्त्यः, नितम्बविम्बलिम्बिकट हरण्टकेशंलराः प्रदीप्ता इव रागाग्निता सिंदृरच्छटाच्छुरितमुखमुद्राः शासनपट्टपङ्कय इवाप्रतिहत-शासनस्य कंदर्पस्य, मुण्डिकीर्यमाणकपूरपट्वासपांसुला मनो-रथसंचरणरथ्या इव यौवनस्य, उद्दामकुसुमदामताडिततरुण जनाः प्रतीहार्य इव तरणमहोत्सवस्य, प्रचलत्पत्रकुणडला

मालिकास्ताभिः सहिताः । समुद्धिताभिरूर्घ्वे विधृताभि-र्वेलयानां कंकगानामवलीभिः , पंक्तिभिर्वाचालाभिर्वाचा-टाभिवादिलतिकाभिर्हम्तैः । लतिकाशब्दीबादकोमलतां व्यं-जयित । कुङ्कमेन प्रमृष्टिः परिमः जेनं विलेपनिमिति यावत् तया रुचिरः सुन्दरः कायः, शरीरं यासां ताः। वल्गन्त्यो मनोहराः काश्मीरेषु बालिकाः कुद्कमस्थलीषु लुंठन त्सुन्दरकाया दश्यन्ते तद्वदिमा इति भावः । नितम्बर्षिवेषु लंबते ते तद्दशा विकटा कुरण्टकशेखरा श्रम्लातपुष्पगुच्छा यासां ताः । रागाग्निनाऽनुरागवन्दिना प्रदीप्ता इव । ऋम्लातपुष्पाणां रक्त-वर्णत्वान् । सिन्दूरछटाभी रक्तवर्णचूर्णसमृहैश्छुरिता व्याप्ता मुखमुद्रा यासां ताः । श्रतएव प्रतिहतमनिरोधं शासनमाज्ञा यस्य तस्य कन्दर्पस्य मदनस्य शासनपत्रस्याज्ञापत्रस्य पंकत्र इव । मुद्रितमुखत्वमुभयोः साधारण्यमिति भावः । अञ्जलिभिः-इस्तसंपुर्टैः प्रकीर्यमायोन जिप्यमायोन कर्पूरपटवासेन कर्पूरमिश्र-तेन सुनिन्धचूर्णेन पांसुला धृलिन्याप्ताः कर्पूगचूर्णपांसुयुक्ता इत्यर्थः, यौवनस्य तारुएयस्य मनोरथस्य स्पृहायाः अंचरणस्य गमनस्य <sup>प</sup> वीथ्यो मार्गा इव । मार्गा यथा वालुकाकण्**व्या**प्रास्तद्रदिमाः कर्पुरक्यान्याप्ता इत्यर्थः ! उद्दामं सातिशयं कुसुमदामभिः,

लसन्त्यो लता इव मदनचंद्नद्रमस्य.ललितपद्हंसकरवमुखराः समुछसन्त्यो वीचय इव श्टङ्गाररसस्य, वाच्यावाच्यविवेक-शृन्या बालकीडा इव सौभाग्यस्य, घनपटहरवोत्कण्टिकतगात्रय-केतक्य इव कुसुमधूलिमुद्गिरन्त्यः, कमिलन्य इव दिवसमुत्फुल्छाननाः, कुमुदिन्य इव रात्रावनुप-जातनिद्राः, भ्राविष्टा इव नरेन्द्रवृन्द्परिवृत्ताः प्रीतय इव हृद्यमपहरन्त्यः, गीतय इव रागमुद्दीपयन्त्यः , पुष्टय इवानन्दमुत्पादयन्त्यः , मदमपि मद्यन्त्य इव. रागमपि पुष्पस्रविभागाडितास्त हृणाजनः याभिस्त स्त हृणामहोत नवस्य । तहणा-स्य नूननस्य यूनां वा महोत्सव य प्रतोहार्य इत्र । प्रतीहार्यो-ऽपि स्वयष्टिभिर्जनांस्ताडयन्ति । प्रचलन्ति नृतय वशाच्य-चलान पत्राकाराणि कुण्डलानि कर्याभूषाणानि यासां ताः । (पन्ने) प्रचलन्ति पत्राएयेव कुएडलानि पल्लवरू गणि कर्णभूषणानि यासां ताः । ललितेषु रमगीयेषु पदेषु चरगोषु ये हंसकाः नृषुरास्तेषां रवेगा शद्वेन मुखराः सशब्दाः । यद्वा ललितानि पदाति यासां ताश्च ता हंसकरवमुखराश्च । (पद्मे) लिलतपदानां हसकानां हंसानां रवेगा मुखराः । सौभाग्यम्य सुभगताया व च्यावाच्य-यार्विकं धो विचारस्तेन शून्या बालकीडा इव । घनेन टढेन पटहरवेगा भेरीनिनादेन उत्कंटिकता समुद्ग तरोभांचो गात्रयष्टशो यासां ताः। दिवसम उत्फुल्लं प्रफुल्लमानन मुखं यासां ताः । कमलिनीनां कमलरूपाणि मुखानि दिवसं विकसितानि भवन्ति कुमुदिन्य इ≀ कैरविएय इव रात्रावनु√जाता व्यनागता निद्रा यासां ताः। कैरविष्य श्रासुर्योदयमसंकुचिता एत।सामपि क्री**डासक्ततया** निशायां निद्राभाव इति भावः। अ।विष्टा इव पिशाचग्रस्ता इव।

रञ्जयन्त्य इव, आनंदमिष आनंदयंत्य इव, नृत्यमिष नर्नयमाना इव, उत्सवमध्युत्सुक्तयंत्य इव, कटात्तितेषु पिवंत्य इवाषाङ्गशुक्तिभिः, तर्जमेषु संयमयंत्य इव नखमत्रूख-पारोः कोषाभिनयेषु ताष्ठयंत्य इव भूळताविभागैः, प्रणय-संभाषणेषु वर्षत्य इव सर्वरसान्, चतुरचङ्क्रमणेषु विकिरंत्य इव विकारान्, पग्यविद्यासिन्यः प्रानृत्यन् ।

श्चन्यत्र वेतिवेत्रवित्रासितजनदत्तान्तरालाः, ध्रियद्गाण-धवलातपत्रवना वनदेवता इव कल्पत्तरुतलवित्रारिएयः, काश्चि-त्स्कन्धोभयपालीलम्बमानलम्बोत्तरीयलग्ना लीलादोलाधिरूढा इव प्रेह्नन्त्यः, केश्चित्कनकंकपूरकोटिपाट्यमानपट्टांगुकोत्तरङ्गा-

नरेन्द्रवृन्देन भूपसमूहेन मांत्रिकसमूहेन वा परिवृता वेष्टिताः । मदमपि मदयन्त्य इव । मरेनान्या मत्तो भवति स तु इमा आश्रिः त्योनमत्तः । रागोऽतुरागो हिंगुलादिश्च । रोगाऽन्यान् रंजयति । इमास्तु तमपि रंजयन्ति । चतुरेषु मनोहरेषु चंक्रमसेषु वक्रगमनेषु ।

अन्यत्रेति प्रारब्धं समारब्धं नृत्यं नर्तनं याभिस्ता राजमहिष्यो विलेसुश्चिकीडुः । कथंभूता इत्याह । वित्रिभिः कञ्चुिकिभिः कर्तृभिवेत्रेहें स्तयिशिः करस्यैवित्रासिताः पोडिताजनास्तेर्दं त्तोऽन्तरालोऽवकाशो यासां ताः । त्रियमास्मुद्धमानं धवलानां सुश्रासामातः पत्रासां छत्रासां वनं समूद्दो यासां ताः ( वनशब्दो लत्तस्यया समूहवाची ) कल्पत्रक्रसां देववृत्तःसां तलेषु विचरन्ति तच्छीला वनदेवता इव । सुश्रपर्णत्वात्महरात् हस्सां छत्रसाम्यम् । स्कन्धानामुभयपालीषु क्रोटिइयेषु लम्बमानानि लम्बानि दीर्घारयुत्तरीयासि प्रभारकास्तेषु लग्नाः संसक्ताः । लीलायाः कीडायाः दोलायामधिक्ढा इव । प्रेसंत्य इतस्ततो गच्छंत्यः । कनकस्य सुवर्णस्य

स्तरङ्गिष्य इव तरचक्रवाकसीमन्त्यमानस्रोतसः,काश्चिदुध्दूय-मानधवलवामरसटालग्नविकण्टकवलितविकटकटाचाः सरस्य इव हंसाकृष्यमाणतीष्ठोत्परुवनाः काश्चिचष्ठचाणच्युनारुक्त-कारुणस्वेदशीकरसिच्यमानभवनहंसाः, संघ्यारागरज्यमाने-न्द्विम्बा इवकौमुदीरजन्यः काश्चित्कण्ठनिहिनकाञ्चनकाञ्चो-कोटिभिरमभागैः पाट्यमानाः केयुराणामङ्गदानां 📉 पट्टांशुकानि पट्टांशुकतरङ्गाः तरङ्ग सदृशानि श्रेष्टवस्त्रांगा यास्रां ताः । तरद्भिश्चकवार्केः सीमंत्यमानानि विभज्य-मानानि,स्रोतांसि यासां, तास्तरंगिएया नद्य इत्र । कनकांगदा ां चक्र पाट्यमानवस्त्राणां द्विचा क्रियमाण्यप्रवाहसाम्यम् । <mark>डध्दूयमानासु वार्</mark>यमागासु धवलासु <mark>शुश्रासु चामःसटासुचामरा</mark>षेषु लग्नेन संसक्तेन त्रिकंटकेन कर्गाभिग्णन वलिता वक्रीकृता विकटाः, विशालाः, कटाचाः, यासां ताः। 'त्रिकटकस्तु त्रयश्रः स्यात्त्रिभी रत्नेश्च भूषणम्'। हं मैराऋष्यमाणानि, नीकोत्पलवनानि, यासां ताः सरस्य इव । यथः सरसीपु इंसाः कमलान्याकर्पनिततद्वत्त सत्दृशीपु युवितपु इंसमदृशाश्चामरसटाः कमलसदृशानि नयनान्य।कपति । रत्नमयत्रिकटकपदोपादानेन इंसचं वुर्व्यज्यते रक्तवर्गात्वादिति दिक्। चलद्रवश्चरण्भवश्चयृतैगीलतैरलक्तरेनामग्रीस्तान्त्रै: स्वेदशी-करैंर्घर्भबिन्दुभिः सिच्यमाना भवनहंसाः, याभिस्ताः। संध्यारागेगा रज्यमानमिदुर्विवं याभिस्ता रजन्यो रात्रय इव । चन्द्रसहशान् श्वेतीन गृहह्सान् संध्यारक्तिमनेवारुणितघर्मविदुभिज्यौतस्न्य इवेमा रंजयन्तीत्यर्थः । कामत्रागुरा मदनजालानीव । प्रसारितबाहुपा*रा*स्य वागुरासाम्यम् । कंठेषु निहितैः स्थापितैः कांचनकांचीगुर्योः सुवर्णमेखतादामभिरंचितानां नम्राणां कंचुकिनां कंचुकानि चूलिका गु गाश्चितकञ्चुकिविकाराकुश्चितभुवः, कामवागुरा इव प्रसा-रितबाहुपाषा राजमहिष्यः प्रारब्धनृत्या विलेखः ।

सर्वतश्च नृत्यनः स्त्रणस्य गलद्भिः पादालक्तकेररुणिना रागमयीव गुवोणञ्जीणी।समुलुमङ्गिःस्तनमण्डलैमङ्गलकलशमय इव बभूव महोत्सवः । भुजलताविक्षेपेमृणालवलयमय इव रराजजीवहोकः।समुळुसद्भिविद्यासस्मितेस्तडिन्मय इवाकियत का**ळः । चञ्चळानां चत्तुषामंशुभिः** कृष्णशारम<mark>या इवासन्</mark>वा-सराः । समुछमद्भिः शिरीवकुसुमस्तवककर्णपूरैः शुकपिच्छमय इव हरितच्छायोऽभूदातपः । विस्नंसमार्तेर्धम्मिछतमालपछ्वैः कज्जलमयमिवालच्यनान्तरित्तम् । उन्तिप्तेर्हस्तकिशलयैः कमितनीमय्य इव बभासिरे सृष्ट्यः। माश्चिक्येन्द्रायुधाना-मर्चिषा चाषपत्रमया इव चकाशिरे रविमरीचयः । रणतामा-भरणगणानां प्रतिशब्द्कैः किङ्किणीमय्य इव शिशिक्षिर दिशः। जरत्योऽज्युन्मादिन्य इव रमगयो रेगुः । वर्षीयांसोऽपि ब्रह-गृहीता इव नापत्रेपिरे । विद्वांसोऽपि मत्ता इवात्मानं विद्यन्ते येषां तेषांस्तनानां विकारैराकुं चिताः संकुचिता अवो अकुट्यो यासां ताः । वस्त्रधारणवेलाशां कांचीगुर्णस्य कंठे धारणं स्त्रीसंप्र-दाय:। यद्वा कं वृकिनां प्रतिहारिग्णामित्यर्थो प्राह्यः।

मर्वतश्चिति । स्नेयास्य स्त्रीसमृह्स्य । स्त्रायाी, पृथ्वी, शुशोया, रक्तवर्णा वभूव । वित्तासिमतेर्लीलाहास्यैः कालः समयः कृष्ण-वर्णश्च । तिहन्मयइव विद्युन्मय इव । हास्यस्य शुश्चत्वं कविसमया-नृह्ण्पमतः शुश्चत्रहिन्मयत्वसुत्सवकालस्य विद्यातमनुचितिमवाव-भाति । सितायास्तिहितो दुर्भित्तत्वसूत्त्वकत्वात् । 'दुर्भित्ताय सिता भवेत् ' इत् महाभाष्यवचनात् । विस्रंसमानैर्गलद्भिनृत्यवेशादिति

विसस्मरः । निनर्तिषया मुनीनामि मनांसि विपुस्फुलुः। सर्वस्वं च ददौ नरपितः। दिशि दिशि कुवेरकोपा इवालुप्यन्त लोकेन द्रविणराशयः।

पवं च वृत्ते तस्मिन्महोत्सवे शनैःशनैः पुनरप्यतिक्रामित काले.
देवे चोत्तमाङ्गिनिहितरत्त्वासर्षपे, समुन्मिषत्व्रतापाग्निस्फुलिङ्ग इव,गोराचनापिञ्जरितवपुषिसम् भव्यज्यमानसहज्ञत्तात्रतेजसी-व,हाटकबद्धविकटव्याव्यनखपङ्किमण्डितव्रीवकेहद्दयोद्भिद्यमा नद्पाङ्कर इव, प्रथमाव्यकजल्पितेन सत्यस्य शनैरोंकारिभव कुवाण, मुग्धस्मितैः कुसुमैरिव मधुकरकुलानि बन्धुहृद्या-न्याकर्षति, जननीपयोधरकलशपयःशोकरसेकादिव जायमा-नैर्विलासहसिताङ्करर्द्शनकरेरलेक्त्यमाणमुखकमलके, चारि-

भावः । धम्मिलस्य संयतः शानाम् । माणिक्येन्द्रायुधानां शरीरे धृतरत्ने द्वृतेंद्रधनुषाम् श्राचिपा प्रभया । किकिशोमिय्यः चुद्रघंटाप्र-चुराः । शिशिजिरे मधुरं शब्दमकुर्वेन् । निनर्तिषया नृत्येच्छया । नृत्यतेः सनि ।

एविमिति । यशोवती राज्यिश्रयं नारायणमूर्तिवसुधामिव गर्भेण त्राधत्तेति संबंधः । देवे चेत्यादीनां हर्ष इत्यनेन संबंधः । उत्तमांगे मूर्धनि निहिता रचायेसर्पपायस्यतस्मिन् । त्राधुनापि शेत्यादि-वातविकारपरिहरणाय सर्पपोपयागः कियते । समुन्मिषतः प्रज्विति-ध्यतः प्रतापाग्ने येशोवन्हेर्विम्फुलिंगइव । सर्प पस्य विम्फुलिंगसाम्यम्। गोरोचनया, गोपित्तेन, पिजरितं, पिशंगीकृतं, वपुः, शरीरं, यस्य, तास्मन् गोरोचनायाः चात्रतेजःसाम्यम् । पीतवर्ण त्वात् । हाटके सुवर्णे,बद्धानां,खिचतानां,विकटानां वक्ताणां व्याघनस्वानां पंक्त्या रा-ज्या मंडिता,भूषिता, घीवा कंधरा यस्य तस्मन् । व्याघनस्वानां वक्त- त्र इवान्तःपुरस्यं कद्म्वकेन पाल्यमाने, मन्त्र इव स्वचिवमण्ड-लेन रक्ष्यमाणे, इत्त इव कुल्पुत्रकलोकेनामुच्यमाने, यदाभी-वात्मवंद्येन, संवर्ध्यमाने, सृगपतिपोत इव रक्षिपुरुषदास्त्रपञ्ज-रमध्यगते, धात्रीकराङ्गुलिलग्ने पञ्चषाणि पदानि प्रयच्छिति हर्षे, पष्ठं वर्षमवतरित च राज्यवर्धने देवी यद्योवती गर्भेणा-धत्त नारायणमूर्तिरिव वसुधां देवीं राज्यश्चियम् ।

पूणिं च प्रस्विद्यसेषु दीघरक्तनालनेत्रामुत्पालेनीमिव सरसी, हंसपधुरस्वरां शरदमिव प्रावृद्, कुसुमसुकुमारा-वयवां वनराजिमिव मधुश्रीः महाकनकावदानां वसुधारामिव द्यौः, प्रभाविषणीं रत्नजातिमिव वेला, सकत्रजननयनानन्दका त्वाद्दपीं कुरसाम्यं, युक्तमेव । सुग्धैः सुंदरैः स्मितेह्रांस्यः कुषुमैमेधुक-गक्कलानीव श्रग्रसमृहा इव बंधुहृद्यानि त्राप्तननांभ्याकपंति । जन-न्याः कलशाविव पयोधरौ,स्तनौ, तयोः,पयसो दुग्धस्य शीकरैः,कर्योः, सेकादिव सिचनादिव, उदकसेचनादंकुरोप्तत्तिः दंतानां शुश्रत्वाद्धांस तां क्रस्त्वसाम्यवयान युक्तमेवः चारित्र पातित्रत्य इव । सृगपतिपोत इव सिह्शिशाविव रिचपुरूपाणां शस्त्राण्येव पत्तरस्तम्य मध्यं गते । धात्रप्रमाता ।

पूर्गोषित्र नि देवो दुहितरं प्रसृतवतीति संबंधः । नालानि ना-ड्योनेत्रे च नालनेत्रं प्राण्यंगत्वादे कवद्भावः । दीर्घ महद् रक्तं ताम्रं नालनेत्रं यस्याः सा दुहिता ताम् (पत्ते) दीर्घाणि रक्तानि नालानि पद्मदंडा नेत्राणि मूलानि यस्यास्तामु न्पलिनीं कमलिनीम् । हंस इव हंसैर्ग मधुरः स्वरो यस्यास्ताम् । कुसुमानीव कुनुमान्येव षा गात्राणि यस्यास्तां वनराजि वनपंक्तिम् । महाकनकं तिल-सुवर्णमिति शंकरः तदिवावदाता शुभ्रा । (पत्ते) महाकनकेनावदाता रिणीं चन्द्रलेखामिव प्रोतपत्, सहस्रतेत्रदर्शनयोग्यां ज-यन्तीमिवशची, सर्वभूभृद्रभ्यर्थितां गौरीमिव मेना, प्रमृतवती दुहिरितम् यया द्वयोः सुतयोरुपरि स्तनयोरिवैकावलीलतया नितरामराजतः।

अस्मिन्नेय तु काले देव्या यशोवत्या भ्राता सुतमप्रवयंदेशीयमुद्ध्यमानकृटिलकाकपक्षकशिष्यउं सगडपरशुहुंकाराग्निधूयलेखानुवद्धमूर्यातं मकरध्वज्ञीमय पुनर्जातम्, एकेनेन्द्रनील
कुगडलांग्रियामलितेन गरीराधेनेतरण च त्रिकगटकमुक्ताफलालोकधवलितेन संपृक्तावतारामिव हार्रहरयोदंक्रीयन्तम, पीनप्रकोष्ठप्रतिद्धित पुष्पलोहवलयं, प्रश्रुरामिव च् त्रक्षपणर्क्षाण-

वसुधारा धनवृष्टिः । भाग्याधिक्यसृचनाय दिवः सुवर्णवृष्टिः, पततीति हि प्रसिद्धिः । वेला समुद्र विकृतिः । शची इंद्राणी । भूभुद्धी राजिभिः पर्वतैश्व । गोरीमित्र पावतीमित्र । एकावजीलता एकयष्टिका मौक्तिकमाला ।

अस्मिनिति । देव्या यशोतत्या भ्राता स्वतनयं भंडिनामानं कुमारयोगनुचरमिवितवानिति सबंधः । श्राष्ट्रवर्षदेशीयम् ईपन्त्य्यान्त्यण्टवर्षाणि यस्यतम् । उद्धू यमानः, कंपमानः, काकपत्तकः, शिखा एव शिखंडो बर्शे यस्य तम् । खण्डपरशोः शिवस्य हुंकाराग्नेधूम-लेख्या धूमराज्याऽनुबद्धाऽनुगतो मूर्धा मस्तकं यस्य ते पुनर्जातं पुनरुद्धृतं मकर्ष्य मिव मदनमिव । कुमारस्य मदनसाम्यं शिखाया धूमलेखासाम्यम् । इंद्रनील कुडलस्यांशुभिः किरणेः, श्यामिलतेन, कृष्णाभूतेन। त्रिकंटकस्य कर्माभूषणस्य मुक्ताभ नानामालोकेन कान्त्या धवलितं शुश्रीकृतं तेन, संपृक्तावतारमेकीभूतावतारम्, एतेन तन्दा हरिहरयारेकावतारकल्पनाऽऽसीदिति गम्यतं। पीने पुष्टे प्रकोष्टे

परग्रुपाद्याचिह्नितं वालतां गतम्, कगठसूत्रग्रयितसङ्घरप्रवाला-ङ्कुरं हिरगयकाशिपुमिवोरः काठिन्यखार्गडेतनरसिंहनखर-खंगडम् गृहीतजन्मान्तरं, देशवेंऽपि सावष्टम्भं वीजमिव वीर्यद्वमस्य, भण्डिनामानमनुवरं कुमारयोर्ग्यितवान् ।

श्रवनिपतेस्तु तस्योपरि पुत्रयोस्तृतीयस्य नेत्रयोरिवेश्व-रस्य तुरुयं दर्शनमासीत् । राजपुत्राविष सकलजीवलोक-हृद्यानन्द्दायिनौ तेन प्रकृतिदक्षिणेन मधुमाधवावित्र मलय-मारुतेनोपेतौ नितरारेजतुः। क्रमेण चापरेणेव भ्रात्रा प्रजानन्देन

कूपराद्धः प्रदेशे प्रतिष्ठितं पुष्पलोहस्य मिणावशेषस्य वलयं कटकं यस्य तम् । स्त्रस्य स्त्रियकातेः स्पण्न नाशेन स्रोगस्य परशोरायुधिवशेषस्य पाशो धारणाग्डस्तेन चिन्हितो युक्तस्तम् । पुष्पलोहवलयं परशुधारणपाशोनोत्प्रीस्ततम् । कण्ठसृत्रंप्रथितो मंगुरो वकः
प्रवालस्य रत्नावशेषस्यांकुरो यस्य तम् । उरःकाठिन्यन बन्नादाह्येन
स्वंडितं नरसिहस्य नखराणां नखानांखडंयन तम् । गृहीतं जनमान्तरमन्यज्जन्म यन तं हिर्ग्यकशिपुमित्र प्रत्हाद्पितरमित्र । वक्राणां
प्रवालांकुराणां नृसिहनखचिन्दसाम्यम् । शंशवेषि बाल्येषि सावष्टमं
सगर्वम् । श्रतप्रव वीर्यद्रमस्य पराक्रमवृत्तस्य बीजमित्र ।

अवनीति । श्रवनिपतेस्तु तस्योपरि पुत्रयोस्तुल्यं दशेनमालो-कनमासीदिति संवंदः । कथमिव । ईश्वरस्य शंकरस्य तृतोयस्याः परि भालस्थलोचनोपरि दशेनं दृष्टिरिव । ईश्वरस्यति नृपविशेषणं च । राजपुत्राविप राज्य वर्धन्हर्षाविप प्रकृतिदिक्तिणेन निसर्गश्चजुना तेन मंडिना रेजतुः शुशुभातं । सकलजीवलोकस्य हृदयस्यानंदं इत्तरतो प्रकृतिदिक्तिणेन स्वभावसर्छन निसर्गतो दाविणाःयेन च मलयमारुतेन वासंतानिलेनोपेनो मधुमाधवौ चेत्रवैशाखाविव । सह वर्धमानो यौवनमवतेरतुः । स्थिरोरुस्तम्मौ च पृथुवकोछौ दीर्घभुजार्गलौ विकटोरःकवाटौ प्रांशुसालामिरामौ महानगर-सनिवेशाविव सर्वलोकाश्रयक्षमौ बभूवतुः ।

अथ चन्द्रसूर्याविव स्फुरज्ज्योत्स्नायशः प्रतापाकान्तभुवन् नावभिरामदुर्निरीक्ष्यौ अग्निमारुताविव समभिव्यक्ततेजोवलान् वकीभूतौ, शिलाकठिनकायवन्त्यौ हिमवद्विन्ध्याविवाचलौ, महावृषाविव कृतयुगयोग्यौ, अरुणगरुडाविव हरिवाहनविन् भक्तशरीरौ, इन्द्रोपेन्द्राविव नामन्द्रगतौ, कर्णार्जुनाविव

महतार्नगरवाः सिन्नवेश।विव स्थाने इव सर्वलाकानामाश्रयस्याधार-स्य चमौ समर्थो । स्थिरो स्वस्भावित्रोम्च ययोस्तौ (पेच्चं ) स्थिरा उरवो महान्तः स्तंभा ययोस्तो । पृथू महान्तो प्रकोष्ठौ कूर्पूराधा-भागौ ययोस्तौ (पच्चे ) पृथवो महान्तः प्रकोष्ठः कच्या ययोस्तौ । विकटं विशालसुरःकवाटं वद्यःफलिका ययोस्तौ (पच्चे) विकटान्युर इव कवाटानि द्वाराणि ययोस्तौ । प्रांशु सालौ वृच्चविशेषाविवा-मिरामौ सुन्दरौ (पच्चे ) प्रांशुनोन्नतेन सालेन वप्रेणःभिरामो ।

श्रथेति । तो स्वल्भीयमापि कालेन द्वांपांतरेष्वध्यः यद्वीपेष्विपि रूपाति प्रसिद्धि जग्मनुरिति संबंधः। स्फुरन्ती अ्योत्स्तेव चित्रकेव, यशः, कीर्तः, प्रतापः, पराक्रमश्च ताभ्यामाकान्तं भुवनतलं याभ्यां तो । श्रतप्वाभिगमौ सुन्द्री दुर्निरीच्यी दुग्वलाकनीयो । यशसा सुन्द्रौ (प्रतापन दुर्निरीच्यावित्यर्थः) (पच्चे । स्फुरज्जोत्स्नैव यशः प्रताप श्रातपश्च ताभ्यामान्नान्तं भुवनतलं याभ्यां तो । चन्द्रमसो ज्योत्स्नयाभिरामत्वं सूर्यस्यातपन दुर्निरीच्त्रत्वं च । समिष्ट्यक्ते तेजस्तेच्ययं प्रकाशश्च वलं सामर्थ्यं च ययास्तो । श्रिममाक्ताविव बन्दिसमीरणाविवेकाभूतौ परस्परानुवर्तिनौ मिलि-

कुगडलिकरीटघरौ. पूर्वापरिदग्भागाविव सर्वतेजिम्बनामुद्यस्तमयसंपादनसमर्थों, ध्रमान्ताविवातिमानेनासञ्चलेलां लिनरोधसंकटे कुकुटीरके, तेजः पराङमुखीं लायामि जुगुप्समानौ, स्वात्मप्रतिबिम्बेनािष पादनखलग्नेन लज्जमानौ, शिरोकहाणामिष भङ्गेन दुःखमवितिष्ठमानौ, चूडामिणसंकान्तेनािष क्रितीयेनातपत्रेणापस्रपमाणौ, भगवित षणमुखेऽिष स्वामिश्वन्देनासुखायमानश्रवगाौ, द्पंणदृष्टेनािष प्रतिपुरुषेण दूयमाननयनौ, संध्याञ्चलिघटनेष्विप श्रलायमानोत्तमाङ्गौ,

तौ च । शिलोब शिलाभिनी कठिनः कायबधो देहबधो ययोस्तां। अचलौ रढा पर्वतौ वा । हिमवान् हिमानयो विध्याचलो विध्या-द्रिस्ताविव । महावृपाविव महान्तो बलोवर्दाविव कृतयुगस्य योग्यो . ( पत्ते ) कृता युगस्य धुरो योग्याऽब्ययनं याभ्यां तौ । ऋथवां चृषपचे कृते परिकल्पिते युगे धुरि योग्यावुं चताबित्यथः । हरिवाह-नेन श्वाराहणन विभक्तं सुबद्धं सुपारमाणं शरारं यथोस्तौ । (पद्मे) हरिश्च हरिश्च हरी कृष्णदिनकरी तयार्बाहन याने विभन्तं योजितं शरीर देहो ययोस्ता । 'हरिवातार्कचंद्रोद्रयमोपेंद्रमरीचिषु । सिंहाश्व-कांपभेकाहिशुकलोलांतरेषु च' इति विश्वः। बागेन्द्र इव गजराज इव गतं गमनं ययोस्तौ । (पत्ते ) नागेन्द्र ऐरावतः शेषराजश्च ता गता प्राप्तो । कर्णाय कुन्डले सूर्येण दत्त । अर्जुनस्य शिरसि ।करीटो वृत्रन्ना वद्धः । सर्वतेजस्विनां वीराश्वामादित्यादीनां चादयोऽभ्युदय उद्गमनं चास्तो नाशस्तिरोभवनं च तत्न समर्थौ। अतिमानेनात्यंताभिमानेन महाप्रमाणतया चासन्नयाः समीपस्थाया वैलायाः समुद्रभर्यादाया श्रर्गालरूपाया निरोधेन प्रतिबंधेन संकटे लहुन । कुरेवपृथ्वयंव कुटीरकं छरदुगृहंतस्मिन् श्रमान्ताविवावर्तमा-

जलधरधृतेनापि धनुषा दोदूयमानहृदयौ, ग्रालेख्य क्षि-तिपतिभिरप्यप्रणमद्भिः संतप्यमानचर्गाो, परिमि तमण्डलसंतुष्टं तेजः सवितुरप्यबहुमन्यमानी, तट्दमीकं सागरमप्युपहसन्तौ, बलवन्तमकृतविष्रहं निन्दन्तौ, हिमवतोऽपि चमरीबालव्यजन-वीजितेन दह्यमानौ, जलघीनामपि राङ्कीः खिद्यमानौ चतुः-समुद्राभिपतिमपरं प्रचेतसमप्यसहमानौ, ग्रनपहृतच्छत्रानिप बिच्छायानवनिपालान्कुर्वाणी, साधुप्वप्यसेवितप्रसन्नी मुखेन नाविव (समुद्रमर्यादितायां भुवि महामानदत्वेनातिष्ठन्ताविवेति तात्पर्यार्थः ) शिरोरुहाणां केशानामि भंगन (कर्तनादाविति भावः चूडामणी शिरोभूषणे संकाःतेनापि पिततेनापि श्रात-पत्रेग छत्रेग लज्जमानौ ( चूडामिणपु प्रतिविधितमपि द्विती-यमातपत्रमसह्मानावित्यर्थः ) षण्मुखेपि, कातिकेयेपि, स्वामिशद्भ-भाजमभ्वीकुर्वन्तावित्यर्थः । संध्यायां संध्योपासने । त्रांजलिघट-नेष्वपि, नमस्कारेष्वपि । दोद्यमानमतिशयेन पीड्यमानं हृद्यं ययोस्तौ । त्र्यालेख्यनृर्पातभिश्चित्रस्थराजभिरप्रग्रामद्भिरकृतनमस्कारैः संतप्यमानी कुप्यन्ती चरगाी पादी ययोस्ती, परिमितेन परिगणिः तेनाल्पेनेत्यर्थः, मंडलेन विषयेगा बिबेन च संतुष्टं सवितुः सूर्य-स्यापि तेजोऽबहुमन्यमानौ भूभृतामंरिणापहृता लद्दमीर्यस्य तं सागरमपि समुद्रमपि त्रकृतो विष्रहः तमरः । कायश्च यन तम् । मारुतस्य शरीराभावाद्रपरहितस्पर्शवत्वरूपतल्लच्यादशरीरत्वस्य प्रतीते: । अनपहतमगृगीतमातपत्रं छत्रं येषां तानपि विच्छाया-न्मलिन।न् । पराजयेनेति भावः । गृहीतातपत्रा श्रपि विच्छाया इति विरोधः । साधुष्वपि सदाचारेष्वप्यसेवितेन सेवया विना

मघु क्षरन्तौ दुष्टराजवंशानूष्मणा दूरस्थितानिष म्लानिमा नयन्तौ, अनुदिवसं शस्त्राभ्यासम्यामिकाकलङ्कित्तमशेषरा-जकप्रतापाग्निनिर्वपणमिलनिमिन करतलमुद्धहन्तौ, योग्या कालेषु धीरैधेनुध्वेनिभिरभ्यणोपभोगाद्दिग्वधूभिरिवालप-न्तौ, राज्यवर्धन इति हर्ष इति सर्वस्थामेव पृथिन्यामावि-भूतशन्दप्रादुभावौ, स्वल्पीयसेव कालेन द्वीपान्तरेष्विप प्रकाशनां जग्मतुः।

पकदा च नावाह्य भुक्तवानभ्यन्तरगतः पिता सस्तेहमवादीत्—'वत्सौ, प्रथमं राज्याङ्गं दुर्लभाः सङ्ग्रत्याः। प्रायेण
परमाणव इव समवायेष्वनुगुणीभूय द्रव्यं कुर्वन्ति पार्थिव
प्रसन्नौ मुखेन मधुत्तरन्तौ मधुरं भाषमायौ । साधुपूरसक्तालेप्वप्यसेविता प्रसन्ना मद्यं याभ्यां तथाभूतावपि मुखेन मधु
त्तरन्ताविति विरोधः । अथवा छाधुपु सतामुपि असेवितप्रस
न्नावपि अपीतमद्यावपि मुखेन मधु त्तरन्ताविति विरोधो ज्ञेयः,

दुष्टेति । ऊष्मणा दाहशक्त्या । तया समीपस्थो म्लानो भवति न तु दूगस्थ इति विरोधः । शस्त्राणाःमभ्यासस्य श्याम लक्ष्या कियोन प्रथितेन कलंकितं मिलनम् अशेषस्य सकलस्य राजकस्य राजसमूहस्य प्रतापाग्नेः शौर्वाग्रेनिर्वपयोन शमनेन मिलनिमव । वन्हेः शमनेन शांतांगारेण हस्तो मिलनो भवति योग्याया अध्ययनस्य कालेषु । धीरैगीभीरैर्धनुर्ध्वनिर्धनुःश्द्वे अभ्ययोपिभोगात्समीपागतो य उपभोगः सेवारूपस्तस्मात् । आवि भूतः शद्वाप्रदुर्भावो नामप्रसिद्धिर्ययोस्तौ ।

ं एकदेति । प्रायेगा जुद्रा नीचा समनायेषु समृहेषु श्रर्था-नमंत्रिसभायामनुगुग्गीभूय प्रविश्य पार्थिवं नृपं द्रव्यं स्व हरक्री तुदाः । क्रीडारसेन नर्तयन्तो मयूरतां नयन्ति बालिशाः । दर्पणिमवानुप्रविश्याद्भीयां प्रकृति संकामयन्ति पलिविकाः । स्वप्ना इव मिथ्याद्शीनरसदुद्धि जनयन्ति विप्रलम्भकाः । गीतनृत्यहसितैरुन्मत्ततामावहन्त्युपेक्षिता विकारा इव वाति-काः । चातका इव तृष्णावन्तो न शक्यन्ते प्रहोतुमकुलीनाः, मानसे मीनिमव स्पुरन्तमेवािमश्रयं गृह्णन्तिं जालिकाः । यमपिष्टका इवाम्बरे चित्रमालिखन्त्युद्गीतकाः । शल्यं हृद्ये निक्षिपन्त्येतिमार्भणाः । यतः सर्वद्गिंगभिषक्षेत्ररसंगतौ बहुधोप-धािभः परीक्षितौ शुची विनीतौ विकान्तविमक्षपौ मालवराजपुन्त्रोस्नारौ भुजाविव मे शरीराद्व्यतिरिक्तौ कुमारगुप्तमाधवगुप्ता-

दनकं कुर्वन्ति (तन्मंत्रिषु स्वप्रवेशं कृत्वा नृपाद्धनं हरन्तीत्यर्थः।
यथा परमाणवः सृद्धमाः श्रवयवाः समबायेषु तादृशसंबंधव्वनुगुणीभूय घटकीभूय पार्थिवं पृथ्वीसंबंधि द्रव्यं कुर्वन्ति तद्दत् ।
वालिशा धूर्ताः कुमाराश्च । क्रीद्धारसेन नर्तयन्त्री मयूरतां हास्यत्वम्,
कुमाराश्च क्रीडायां मयूरान्नर्तर्यान्त । पङ्कावका विटाः किसलयानि
च । श्रनुप्रविश्य चित्तं रजयित्वा श्राक्तम्य च । श्रात्मीयां प्रकृति
स्वीयं दौरात्म्यं शरीरं च,विप्रलंभका प्रतारका श्रसच्छाक्षनितारो
वा वातिका धूर्ता वातजा विकारा वा । तृष्णावतोऽकुलीना प्रहीतुं न
शक्यन्ते तेषां तृष्णायाः कदापि शमनासंभवात् । चातका श्रपि
को पृथ्व्यां लीना न भवन्ति खेचरत्वात्तेषाम् । जालिका मायाविनः
केवर्ताश्च । मानसेऽन्तःकरण सरोविशेषे च । स्फुरत्सुरपद्यमानमेवाभिप्रायं स्फुरन्तं चलन्तं मीनं मत्स्यमिव । यमपट्टो धर्मराजप्रकृतियुतः पट्टो विद्यते येषां ते । उद्गीतका इच्चीर्गीतं गानं येषां ते ।
श्चांवरं श्चाकाशे चित्रमालिखन्त्यसंभाव्यानर्थानारमंते । वस्ते च

वस्माभिर्भवतोरनु वरत्वार्थिमिमौनिर्दिष्टौ, अनयोरुपरि भवद्भया-मपि नान्यपरिजन समन्नत्तिभ्यां भवितष्यमः इत्युक्त्वा नयोराह्वानाय प्रतीहारमादिवेश ।

नविराद्द्वारदेशितिहितलोचनौ राज्यवर्धनहर्षौ प्रतीहा-रण सह प्रविद्यानम् अप्रतो ज्येष्ठमष्टाद्शवर्षवयस् नात्युश्चं नातिर्ख्यमितगुरुभिः पदन्यासरेनेकनरपितसंचरणचलां निश्च-ज्ञीकुर्वाणिमिवोर्वीम्, अनवरताभ्यस्तलङ्घनघनोपचयकिन मांसभेदुराद्रुरुद्धयान्निष्यतेवानुरुवणज्ञानुप्रंथिप्रसूतेनतनुतरज्ञ-ङ्घाकागड्युगलेन भासमानम्,उल्लिखितपार्श्वप्रकाशितकशिद्धाः मन्दरिमव सुरासुररभसभूमितवासुिककषणज्ञीयोन मध्येन लक्ष्यमाणम्, अतिविस्तीर्णेनोरसा स्वामिसंभावनानामपरि-मितानामवकाशिमव प्रयच्छन्तम्, अलस्वमानस्य सुजयुगलस्य

चित्रकर्मा वरन्ति । अतिमार्गणा अत्यन्तं याचकाः दृद्दाः शराश्च । शल्यं विषादं शंकुं च । सर्वेदीपाभिषंगेर्दीषसंपर्केः । उपधाभिर्भृत्य- ं परीच्चणोपायैः । अन्यपरिजनसमा इतरमेवकतुल्या वृत्तिवर्तं नंतया ।

न चिरादिति राज्यवर्धनहर्षौ प्रतिहारें ग्रा सह प्रविशंतममतो ज्येष्ठं कुमारगुप्त पृष्टतश्च तस्य कनीयां सं माधवगुप्तं दशतुरिति संबंधः। श्रष्टादश वर्षीणि वयां यस्य तं नातिम्वर्षं नातिवामनं पादन्यासेश्चरणसंक्र नणरने केषां नरपतीनां संचरणेन गमनेन चलामुर्वौ पृथ्वीं निश्चलीकुर्वाणं स्थिरोकुर्वाणमिव । श्रन्वरतं सततमभ्यस्तेन कृतेन लंघनेनोडुानेन गमनेन वा घनो हद उपचयो वृद्धियस्य तस्मादूरुद्वयाद्कद्वयाद् । श्रनुल्वणाया श्रनुद्धताया जानुप्रथः। प्रसृतेन जातेन । तनुतरेण सृद्धमेण जंवाकांडद्वयेन प्रसृतान्यां तन्भूताम्यां तन्भूताम्यां तन्भूताम्यां

निभृतलिलैर्विचेपैरितिदुस्तरं तरन्तिमम् यौवनोद्धिम, याम
करकटकमाणिक्यमरीचिमञ्जरीजालिन्या समुद्धिद्यमानप्रतापानलिशरवापल्लवयेव चापिकणलेखयाङ्किनपीवरप्रकोष्ठम, आलोहिनोमुच्चांसतटावलिक्वनीमस्त्रप्रहणवनिश्चृतां रौरवीमिव
त्वचं कर्णाभरणमणेः प्रमां विम्नाणम् उत्कोटिकेयूरपत्रमङ्गपुत्रिकापति म्वगर्भकपोलं मुखं चन्द्रमस्भिव इदयस्थितरोहिणीकमुद्रहन्तम्, ग्रचपलस्तिमिनतारकेणाधोमुखेन चक्षुषा
शिक्षयन्तिमिव लद्दगीलाभोतातित्रमुखानि पङ्कतवनानि
विनयम् स्वाम्यनुरागमिवामलातकमुत्तंसीकृतं सिरसाधारयन्तम्, निद्याकर्षणभङ्गभीततया सकलकार्मुकार्पितामिव
नम्रतां । प्रकाशयन्तम्, शैशव एव निर्जितैरिन्दियेररिभिरिव
सयतैः शोभमानम्, प्रणयिनीमिव विश्वासभूमि कुलपुत्रतामनु-

पार्श्वाभ्यां कन्नाषांभागाभ्यां प्रकाशितः प्रकटितः क्रांशमा क्राता यस्य तेन मध्यन किटना। सुरासुरैः, रभसेन वेगेन श्रवितो वासुकि शेषराजस्तेन कषणं घषण तेन न्तीयोन मध्येनोपलन्दयमाणं मेदार-मिव महार पर्वे तिभव। श्रवंकाश स्थलमित्र प्रयन्त्रःतं ददानम्। निभृतलालतेर्गंभीरमनाहरैः वामकरस्य सञ्यहस्तस्य माणिक्यकटकस्य माणिक्यवलयस्य मरोन्तिमंजरीणां किरणानां जालं समूहो विद्यते यस्यास्त्रया चापिकणलेख्या चापित्रणन्तिन्हराज्या समुद्धिद्यमान-स्योद्धन्छतः प्रतापानलस्य सिखापञ्चवया शिखाश्चत्रवेनेव । श्रव्स-प्रदेश श्वापानलस्य विद्यता शास्त्राध्ययन कालेंऽगीकृताम् रौरवीं मृगसंबंधिनीम्। दत्कोटिकस्योधवीमभागस्य केयूरस्यागद्यस्य पत्रभंगपुत्रिका रचनाविशेष उल्लिखता धालभंजिका तस्याः वितिवन्दंगर्भेमध्ये यस्य ताहशः कपोलो यस्य तन्मुखं हृद्यस्थात

वर्तमानम्, तेजस्विनमिव शीलेनाह्यादकेन सवितारिमव ग्रशि-नान्तर्गतेन विराजमानम् अचलानामिव कायकार्कश्येन गन्धन मिवचारन्तम्,दर्शनकीत मानन्दहस्त विक्रीणानिमव जनं सौभाग्येन, कुमारगुप्तम्,पृष्ठतस्तस्य कनीयांसमितिष्रांशुतया गौरतया च मनःशिलाग्रेलमिव सञ्चरंतम्, अनुल्वणमालतीकुसुमशेखर निभेननिर्जिगमिषता गुरुणा शिरिम चुम्बितमिव यशसा, पर-स्परिवरुद्धयोर्विन पर्योवनयोशिवरात्प्रथमसङ्गमिचह्नमिव भूस-इतकेन कथयन्तम्,अतिधीरतया हृदयनिहितां स्वामिमिक-मिव निश्चलां दृष्टि धारयन्तम् , अञ्छाञ्छचन्दनरसानु-

रोहिंगी यस्य तादृशं चंद्रममित्रोद्वह्ता । चत्तुषाजातञकचनम् लद्मय श्रियः लाभेनोत्तानितान्यपरि कृतानि मुखानि यैस्तानि । श्रम्ला-्तकं ताम्रकरंटक पुष्पम् । त्र्यतएव तस्थानुरागसादृश्यम् । उत्तं-सीकृतं शेखरतां नीतम् । निर्दयं दृढ यदाकर्षणां तन भङ्गो नाशस्तस्य भीतत्या भीत्या सक्तौः कामुकैधनुर्भिरर्पितां दत्तामिव। कायकार्कश्येन देहदार्ट्यानाचलानां पर्वतानां गन्धनं मर्दनमिव । दर्शनेनावलोकनेन क्रीतमाविततं जनं सौभाग्येन तद्रुपमृ्ल्येनानन्द्रहस्ते त्र्यानन्द्रूपकेतुईस्ते विक्रीगानिव श्रवलोकनेनेव वश्यतां नीतमतए अभीतं जनमानन्दभाजं विद-धात्यत त्र्यानन्द इस्ते विक्रीग्गीत इत्युक्तम् । विक्रीग्गान इति रूपं विपूर्व कात्क्रीगाःतेः " परिव्यवेभ्यः क्रियः" इत्यनेनात्मनेपदे शानचि निष्पन्नम् । तस्य कुमारगुप्तस्य । उन्नतत्वाद्गौरवर्णत्वाच्च मन शिलाशैल साम्यम् । श्रनुल्बग्गस्यान्यक्तस्य मालनी इसुम-शैखग्स्य निभेन मिषेग् निर्जिगमिषता बहिरागन्तुमिच्छुना गुरुणा महता यशसा शिरसि चुम्बितमिव । यशसः शुभ्रत्वा इंडे-

लपेशीतलं संनिहितहारोपधानं वक्षःस्थलमनन्तसामन्त-संकांतिश्रान्तायाः श्रियो विशालं शशिमणिशिलापदृशयनिव विश्राणम् , चश्चः कुरङ्गकैशोणावंशं वराहैः स्कन्धपीठं महिषेः प्रकोष्ठवन्धं व्यावैः पराक्षमं केस्निरिमर्गमनं मतङ्गर्जेमृगयाश्रपितशेषभीतिरुकोचिमव दत्तं दर्शयन्तं माधवन गुप्तं दहशतुः।

प्रविदय च दूरादेव चतुर्भिरङ्गेरुत्तमाङ्गेन च गां स्पृशन्तौ नमश्चकतुः । स्निग्यनरेन्द्रदृष्टिनिर्दिष्टामुचितां भूमिं भंजाते । मुहूर्ते च स्थित्वा भूपंतिरादिदेश तौ-—अद्ययभृति भवद्भ्यां कुमारायनुवर्तनीयौ ' 'यथाक्षापयित देवः ' इति मेदिनी-दोलायमानमौलिभ्यामुत्थाय राज्य प्रधेनहर्षा प्रणेमतुः ।

खर साम्यम् (शेखर चानुरुगग्विशेषणेन तस्य विनीतत्वं व्यज्यते)
अपङ्गतकेन विनयेन अवोरन्तराल धृतैः पेशैः । एतेन तदाना
भुकुष्ट्योरन्तरालवितिनां केशानामच्छेदनरीतिमन्यिजनेष्वासीदि
ज्ञायते । व्ह्याच्छस्यातिष्वच्छस्य चन्द्रनरसम्यानुलेपनेन शीतलं
हिमं सिर्वाहत स्थापितं हार एव मोक्तिकमालेबोपधानमुपवही
यस्य तत् । श्रानिन्तेष्वसन्ख्येषु; सामन्तेषु, प्रतिभूपेषु, सन्कन्या
सन्क्रमणेन श्रान्तायाः खिन्नायाः श्रिया राजलच्या विशालं
महत् शशिमणिशिलापट्टमेव चन्द्रकान्तशिलाखण्डमेव शयनम् ।
धाणा नासिकैव वंशो वेणु स्नतत्वात् । उत्कोचमिव गुप्तोपहारिमव ।

प्रिविद्यति । चतुर्भिरंगै जीतुभ्यां हस्ताभ्यांच । गां पृथ्वीम् । स्तिग्धेन प्रेमवता नरेन्द्रया नृषेगा दृष्ट्या निर्दिष्टा दर्शिता-मुचितां सेवकयोग्याम् । मेदिन्यां पृथ्ज्यां दोलायमानाभ्यां मस्तकाभ्याम् । निमेपोनमेषाविव संकोचविकासाविव । तौ च पितरम् । ततश्चारम्य क्षणमपि निमेषोन्मेषाविव चश्चर्गो वरादनपयान्ताबुच्छ्वासनिःश्वासाविव नंकदिवमभि-मुखस्थितौ भुजाविव सततपार्श्ववर्तिनौकुमारयोस्तौ बभूवतुः।

अथ राज्यश्रीरिं नृत्यगीतादिषु विदग्धासु सीखपु सकलासु कलासु च प्रतिदिवसमुपचीयमानपरिचया रानै: रानैरवर्धत । परिमितेरव दिवसैर्यीवनमारुरोह । निपेतु-रेकस्यां तस्यां रारा इव बक्ष्यभुवि भूभुजां सर्वेषां दृष्यः । दूतप्रेषणादिभिश्चातां ययाचिरे राजानः।

कदाचित्तु राज्ञान्तःपुरशासादस्थितो बाह्यकश्याव-स्थितेन पुरुषेण स्वप्रस्तावगतां गीयमानामार्यामश्टरणोत्।

'उद्वंगमहावर्ते पानयति पयोधरोन्नमनकाले ।

सरिदिव तटमनुवर्ष विवर्धमाना सुता पितरम्' ॥१॥ तां च श्रुत्वा पार्वस्थितां महादेवीमुःसारितपरिजनो

श्चिषेति--नृत्वं नर्तनं गीतं गान चादि प्रमुखं यासां तासु विदग्धासु पण्डितासु सखीपु मनोहरासु सकतासु कतासु च। उयचीयमानो वर्धमानः यरिचयो यस्याः सा ।

कदाचिदिति—वाह्य कद्यायां प्रासाद्स्य बहिःप्रकोष्ठे। उद्वेगेति । अनुवर्षं प्रतिहायनं प्रतिवर्षाकालं च । वर्धमाना सुता कन्या पयोधरयोः स्तनयोः पर्योधरायां मेघानां चोन्नमनस्यो-द्रमनस्य काले तारुण्ये वर्षाकाले च । पितरं जनकमुद्देगस्य मानसपीद्वाया महत्यावर्तं आवर्तने (पच्चे) दद्वेग इव महावर्ते महत्यं ससां भ्रमे पातयति । कथिमव सिस्त्रिदी तटं तीरिमव। 'आवर्तेरिंचतने वारिभ्रने चावर्तने पुमान्' इति मेदिनी॥५॥

कां चेति । इत्सारिता दूरीकृताः परिजना येन सः। पार्धे

जगाद-'देवि, तरुगीभूता वत्ता राज्यश्रीः । एतदीया गुण वत्तेव क्षणमपि हृदयान्नापयाति मे विन्ता । यौ वनारम्भ एव च कन्यकानामिन्धनीभवन्ति पितरः संतापानलस्य । हृद्य-मन्धकारयति मे दिवसमिव पयोधरोन्नतिरस्याः । केनापि कता धर्म्या नाभिमता में स्थितिरियं यदङ्गसंभूतान्यङ्कलालि-तान्यपरित्याज्यान्यपत्यकान्यकागडः पवागत्यासंस्तुतैर्नीयन्ते पतानि तानि खल्वङ्कानस्थानानि संसारस्य । सेयं सर्वाभि-भाविनी शोकाग्नेद्दिशक्तियद्यत्यत्वे समाने जानाय। दुहितरि दूयन्ते सन्तः। एतर्द्धं जन्मकाल एव कन्यकाभ्यः प्रयच्छन्ति सिललमश्रुभिः साधवः । एतद्भयादकृतदारपरिष्रहाः परिह-नगृहवसतयः शून्यान्यरगयान्यधिशेरते मुनयः। को हि नाम सहते विरहमपत्यानाम् । यथा यथा समापतन्ति दृता वराण वराकी लज्जमानेव चिन्ता तथा तथा नितरां प्रविशति मे द्दयम् । किं क्रियते । तथापि गृहगर्तरनुगन्तव्या एव लोक-वृत्तयः । प्रायेण च सत्स्यप्यन्येषु वरगुणेष्वभिजनमेवानुरुध्यन्ते धीमन्तःधरणीधराणां च मुर्क्षि स्थितो मादेश्वरः पादन्यासहव सकलभुवननमस्कृतो मौखरीवंशः। तत्रापि तिलकभूनस्याव-

सभीपे स्थिताम् । तरुगी मूता यौवनमा स्त्राः । एतदीयेति । हृद्यादनपगमतमेव गुणवत्तायाश्चिन्तापायाश्च साम्यम् । पयोधरयोः स्तनयोर्मेधःनां चोन्नतिः । धर्म्या धर्मणा प्राप्या ! इयं स्थितिराचारो नाभिमता, न मान्या, श्रकांड एवाति कतमेव । श्रसंस्कृतैरपरिचितैः । श्रंकनस्थानानि चिन्हस्थानानि । श्रून्यान्यरण्यानीति । वराकी दीना । गृह्गतैर्गृहस्थैः । श्रभिजनं कुलम् धरणीधर।णां नृपाणां पर्वतानां च । सकलेन भुवनेन नमस्कृतो वन्दितः । प्रह्मितिरव सूर्य

नित्रमणः सूनुरय्रजो ग्रहवर्मी नाम ग्रह्मपतिरिव गां गतः पितुरन्यूनो गुणैरेनां प्रार्थयते। यदि भवत्या अपि मतिरनुमन्यते तत्तरसमे दातुमिच्छामि' इत्युक्तवति भर्तरि दुहितृस्नेहका-तरतरहृद्या साश्रुलोचना महादेवी प्रत्युवाच—'आर्यपुत्र, संवर्धनमात्रोपयोगिन्यो धात्रीनिर्विशेषा भवन्ति खलु मातरः कन्यकानाम्। दाने तु प्रमाणमासां पितरः। केवलं कृपाकृत-विशेषः सुदूरेण तनयस्नेहाद्तिरिच्यते दुहितृस्नेहः। यथा यावज्जीवमावयोरार्तिता प्रतिपद्यते तथार्यपुत्र एव जानाति' इति।

राजा तु जातिनश्चयो दुहित्दानं प्रति समाहूय सुताविष विदितार्थावकार्षीत् । शोभने च दिवसे ग्रहवर्मणा कन्यां प्राथितुं प्रेषतस्य पूर्वागतस्यैव प्रधानदृतपुरुषस्य करे सर्वराजकुलसमक्षं दुहित्दानजलमपानयत् । जातमुदि

इत । दुहितृस्नेहेन कन्याप्रेम्या कातरं भीरु हृदयं यस्याः सा । धात्रीनिविशेषा धात्र्या निर्गतो विशेषो यस्याः सा । उपमातृसहश इयथेः । 'धात्री जनन्यामज्ञकी वसुमन्युपमातृषु' इति मेदिनी । श्रार्तिता मनःपीढात्वम् ।

राजेति। जातमुद्गिति । एव राजकुलमासीदिति संबंधः। उद्दामं सातिश्वयं दीयमानैस्तां यूलैः पटतानः सुगंधिचूर्यौः कसुमैः पुष्पेश्च प्रसाधिता त्र्रालंकताः सर्वेलाकाः यस्मिन् । सकल-देशेव्वादिश्यमानमाज्ञाप्यमानंशिलिपसार्थानां कारुसमूहानामागमनं यस्मिस्तत् व्यवनि गलपुरुषे राजसेवकेर्गृतैतः स्वीकृतः समग्रैः सक्लैण्मीर्षौ प्राम्यैः जनैरानीयमान उपकरणसंभारः साधनसमूहो यस्मिस्तत् । राज्ञां नृपाणां दौवारिक द्वरि-

कृतार्थं गते च तस्मिन्नासन्नेषु च विवाहदिवसेपृहाम्दीयमानताम्बूळपटवासकुसुमप्रसाधितसर्वळोकम,स कळदेशादिश्यमानशिल्पिसार्थागमन . अवनिपाळपुरुषगृहीतमसमग्रग्रामीणानीयमानोपकरणसम्भारम , राजदौवारिकोपनीयमानानेकनृपोपायनम्, उपनिमन्त्रितागतबन्धुवर्गसंवर्गणव्यप्रराजवळ्ळभम् , ळब्धमधुमद् म्चण्डचर्मकारकरपुटोळळाळितकोणपटुविघट्टनरणनमङ्गळपटहम् , पिष्टपञ्जांगुळमण्यमानोळूखळमुसळशिळाद्यपकरणम्, ग्रशेषाशाखामुखाविभूतचारणपरम्परापूर्यमाणप्रकोष्ठप्रतिष्ठाप्यमानेन्द्राणीदेवतम् . सित-

रचक रैपनीयमानान्यनेकानि नृपाणामुनायनान्युपहारा यहिंमस्तत् चपितमनित्रतस्याहूनस्यागतस्य बन्धुवर्गस्याप्तसमृहस्य संवर्गणे स्वागते व्यया राजवलां यहिमन , लब्धस्यायिन्यसस्य मधुनो मद्यस्य मदेन प्रचण्डा भयंकराश्चर्मकाराः पादूकृतस्तैः करपुटेक्टलालिताः किम्पताः कृतसंस्कारा वाः कोणा भरी रणडास्तैर्यः । विवट्टनं ताडन तेन रणनत शब्दं विद्धतो भरीसमृहाः यस्मिस्तत् । पिष्टस्य सुधाचूर्णस्य पञ्चांगुलं पिष्ट पञ्चांगुलम् (सुधालिप्तानामंगुलीनां पंचक-मित्यर्थः) तेनमण्ड्यमानम् उलूखलमुसलिशालादि उपकरणं साधनं यहिमस्तत् । श्रद्य यावद् उलूखलादिचित्रीकरण-पद्धितिर्ववाहे वर्तते । श्रद्याधालामुखभ्योऽलिलाभ्यो दिगम्य श्राविर्ववाहे वर्तते । श्रद्याधालामुखभ्योऽलिलाभ्यो दिगम्य श्राविर्ववाहे वर्तते । श्रद्याधानां बन्दिनां परंपरया पूर्यमाणे व्यापे प्रकोष्टेऽलिन्दे प्रतिष्ठाप्यमानः , इन्द्राणोदेवतं यहिमन् । विवाहे शच्याः पूजनमावस्यकम् । वितैः सुश्र्यः कुसुमैः पुष्पैवितेष्ते श्रद्याः श्रुजनमावस्यकम् । वितैः सुश्र्यः कुसुमैः

कुसुमिवळेपनवसनसन्छतेः सूत्रधारेरादीयमानविवाहवेदी-मूत्रपातम् , उत्कूर्वककरेश्च सुधाकपरस्कन्धेरिधरोहिग्री-समारूढेर्ववेधेवलीकियमाग्राशसाद्यतोलीप्राकारशिखरम् , शुण्णश्चाल्यमानकुसुम्मकसम्भाराम्मः प्रवरज्यमानजनपादपल्ल-वम्, निरूप्यमाणयौतकयोग्यमातङ्गतुरङ्गतरङ्गिताङ्गम्, गण् नाभियुक्तगणकगणगृद्यमाणलग्नगुगम् , गन्धोदकवाहिमकर-मुखप्रणालीपूर्यमाणकीडावापीसमूहम् , हेमकारचक्रप्रकान्त-हाटकघटनटाङ्कारवाचालितालिन्दकम् , उत्थापिताभिनवभि-निपात्यमानवदलवालुकाकण्ठकालेपाकुलालेपकलोकम्, चतुर-

म्थपतिभिरादीय ानो पच्यमानो विवाहवेद्याः सुत्रस्य परिमाण-रज्याः पातो र बनारम्मः यस्मिन् । उन्मुखा उर्ध्वमुखाः कूर्घकाः ें ' ' कु चला ' इति भाषायां प्रसिद्धाः करेषु येषां तैः सुधायाः कर्पराः कपालाः स्कन्धेपु येषां तैः । ऋधिरोहिर्यां सोपनमार्ग (शिढो) इति भाषायां प्रसिद्धामधिहृदैर्धवैः पुरुषैर्धेवलीकिय-माग्रानि प्रासादस्य राजगृहस्य प्रतोलीप्राकारस्य मार्गवप्रस्य शिखराणि यम्मिस्तत् , जुण्याश्चृर्णीकृतः चाल्यमानः स्वच्छी-ऋियमायाः कुसुभ्भसमभारः काश्मीरजसमृहस्तस्यांभःष्त्ववेनो**दक**-पूरेगा रज्यमाना रक्तीकियमागा जनानां पादपल्लवा यस्मिन् निरुप्यमाणा यौतकयोग्या दुहितृदानकाले जामात्रे दातुं योग्या मातङ्गा हस्तिनस्तुरङ्गा अश्वाश्च तैस्तरङ्गितमङ्गनं यस्य तत्। गयानायां सन्ख्यानेऽभियुक्तेन नियुक्तेन गयाकगरोन मौहूर्तिक-समृहेन गृह्मभागां लग्नस्य वेषादेर्गुगा यस्मिन् । गंधोदकं ेसुगन्धिर्वार वहन्ति ताभिर्मकरस्य मुखं यासां ताभिः प्रयालीभिर्जलनि:सरग्रमागै: पूयमाग्: क्रीडावापीसमृहः

चित्रकरचक्रवालिल्यमानमंगल्यालेल्यम् . लेप्यकारकदम्ब- कित्रयमाण् रृण्मयमोनकुर्ममकरनाग्किलकदलीपूगवृत्तकम् , चितिपालेश्च स्वयमावद्धकस्यैः स्वाम्यपितकर्मशोभासंपादनाकुलैः सिदृरकुट्टिमभूमीश्च मस्णयद्भिविनिहितसरसातर्पण- हस्तान्विन्यस्तालककप टलांश्च चूताशोकपलुवलांखित-शिखरानुद्वाहिवर्निकास्तम्भानुत्तम्भयद्भिः प्रारच्ध विविध- व्यापारम् , आस्याँद्याच प्रविष्धाभिः सतीभिः सुभगाभिः सुवेशाभिरविधवाभिः सिन्दूररजोराजिराजिनल टाटाभिवंधूवर- गोत्रप्रहणगर्माण श्रुति दुभगानि मंगलानि गायन्तीभिवद्द- विधवांकादिग्धांगुलीभिर्योवास्त्राणि च चित्रयन्तीभिश्च-

कीडाये निर्मितानां कूपानां समृही यस्तिन् । हेमकारचकेण सुवर्णकारसमृहेन प्रक्रान्तं प्रारब्धं हाट स्घटनं सौवणिलंकारनिर्माणं तस्य टांकारणा शह्नेन वाचालितोऽलिन्दः प्रकोष्ठो यस्मिन् । उत्थापिताः समुद्धिताः याः श्रमिनशः नृशनाः भित्तयः तासुपात्यमानः बहुलाः वालु हानां क्रणठकानां क्याः यस्मिन्, एताहशो, य, श्रालेपः, तस्मिन् श्राकुलाः व्यमः श्रानेपकलोकाः, कारवः, यस्मिन् । चतुराणां चित्रकाराणां चक्रशलेन समृहेन लिख्यमानानि मांगल्यानि मङ्गलसम्बन्धी-न्यालेख्यानि, चित्राणि, यस्मिन् । छेप्यकारकदम्बेनालेपकव-गेणा कियमाणा मृष्या मीना मत्स्याः कूर्मा नारिकेल-क्त्यीपृगवृत्ताः यस्मिन् , चितिपालान्विशिनष्टि । श्राबद्ध-कत्त्यीवृद्धपरिकरेः । म्वामिनाऽपितस्य नृपेणाञ्चापितस्य कर्मणः शोभायाः, सम्पादन श्राकुलैः, सिन्दूरकृदृमभूमीः सिन्दूर तस्तर-भुवो मस्यायद्भिः श्रक्ताः इतिहाः ।

त्रपत्रस्तालेख्यक्षरास्त्रामः कलशांश्च धवस्तित्र भागांश्च वेवाहिकश्रणाश्च मण्डयन्तीभिराभन्नपुटकर्पासतूलपल्लवांश्च वेवाहिककङ्कणोर्णासूत्रसंनाहांश्च रञ्जयन्तीभिर्वलाशाचृतनीकृतकुङ्कमकष्किमिश्चितांश्चाङ्गरागालावगयविद्यंषकृति च मुखालेपनानी कल्पन्तीभिः कक्कालिमश्चाः सजातीफलाः स्पुरर्का तस्फाटिक-कर्प्रशकलखाचितान्तराला लवङ्गमाला रचयन्तीभिः समन्तात्मामन्तसीमन्तिनीभिर्व्याप्तम् वहुविधभक्तिनिर्माणनिपुणपुराण-पौरपुरंधिबध्यमानवर्द्वश्चाचारचतुरान्तःपुरजरतीजनितपूजाराज-मानरजकरज्यमाने रक्षेश्चोभयपटान्तलग्नपरिजनप्रङ्वोलितद्वा-यासु शोष्यमाणैः शुष्केश्च कुटिलक्षमक्षपिकयमाणपल्लवपरभा-

विनिहिताः स्थापिताः सरसस्यार्द्रस्यातपंग्रस्य चूर्ण्विशेषस्य हस्ता
्येषु तान् । उद्घाहस्य विवाहस्य वेद्याः स्तंभान् उत्तंभयद्विरूष्वीकुवद्विः" उदःस्थास्तंभोः पूर्वस्य इत्यनेन पूर्वसवर्णः । प्रविष्टाभिरित्यादीनां वृतीयान्तानां व्याप्तमित्यने नान्वयः । सिंदूररजोराजिभिः कश्मीरजधूलिसमृहै राजितं शोभितं ललाट यासां ताभिः । श्रद्य यावद्विवाहादिमंगलेषु' लेपमुत्तमांगेषु नार्यो विद्धाति । बहुविधाभिर्वर्णकाभिर्वलेपनैदिंग्धाभिरुपिल्प्ताभिरंगुलीभिः करणैः । प्रीवासूत्राणि विवाह वध्यमानानि मंगलसूत्राणि चित्रयन्तीभिः । तदा शालाया श्राजरश्रेणीरंगपंक्तीरित्यर्थः । शालाजिराण (शरावानमृत्पावाणीत्यर्थः )
वैवाहिकस्य विवाहसंबंधिनः कंश्णस्योणीसृत्राणां मेषलोमसूत्राणां सनाहान रचनाः बलाशना पुष्पाख्योषधिवशेस्तत्पकं धृतं रचार्थं किः
यते । तेन घृतेन घनीकृतः कुंकुमकर्श्वनेन मिश्रितान् । स्फुरद्धिः प्रकाशमानैः स्फीतैर्बृहिद्धः स्फटिककपूरस्य कपूरिवशेषस्य शकलैःखंडैः खिचतमंतराल यासां ताः । सर्वतो वासोभिर्वसनैः संद्वादितमित सं-

गरपरेगरव्यकुडुमंपकस्थासकच्छुरशैरपरेरुद्धुजभुजिष्यभज्य -मानभङ्गरोत्तरीयः श्लौमंश्च बादरेश्चदुकुलैश्च लालातन्तुजेश्चांशु-केश्च नेतेश्च निर्मोकानभरेकठोररम्भागर्भकोमलैनिः श्वासहायः स्पर्शानुमयवासोभिः सर्वतः स्फुरद्धिरिन्द्रायुधसहस्रेरिय संला-दितम्,उज्जलिन्चोलकावगुग्रह्यमानोपधानैः हंसत्ल्हायनीय-स्तारामुक्तफलोपचीयमानेश्च कञ्चुकराकोपयोगपाट्यमानेश्चा-परिमितः पट्टपटीमहेस्नराभगवरागकोमलदुकुलराः मानेश्च पट-

वं यः । बहुविधानां भक्तीनां रचनानां निर्माणे निपुणाभिः कुशलाभिः पुरातनीभिः पौरपुरंश्रोमिर्नागरिकप्रमदाभिर्वध्यमानैः परागाभिः श्राचारं चतुराभिरन्तः पुरनरतीनिर्वृद्धाभिर्जनितया पूनवा राजमानैः शोभमानै रजकैनिर्णजकै रज्यमानै: । उभयपटांते पटान्तद्रये लग्नै: परिजनैः श्रेंखोलितै श्वालितैः । कुटिनः ऋमो येषां तै रूपैः क्रियमा-गाः, पल्लवानां परभागः शोभा येवां तैः । आरब्धं कुंकम<mark>पंक</mark>स्य स्था-सकानां रचनाविशेषायां छुरयां लपनं येपु तेः उद्भुजंरूर्ध्वहस्तर्भुजिष्ये-विटेभेज्यमानानि मुष्टिदानन समाक्रियमाणानि भंगुराणि वकाएयु-त्तरीयाश्चि येषु तै: । ज्ञानै: ज्जुम।विकीर: । बादरै: कार्पानै: । लाला-तंतुजैः कौशेयैः । नेत्रैर्वस्त्रविशेषेः । निर्मोकाभः सर्पकंचु ससदशैः । श्चकठोरः कोमलो रंभायाः कदल्या गर्भ इव मध्य इव कोमलानि तैः मृदुभिः । निश्वासेन इयं हरिण्येरितसूद्रमैरित्यर्थः ) उज्बलेः स्वच्छै-र्निचोलिकेरवगुंठयमानानि वष्टयमानान्युपधानान्युपबर्हागाि येषां तः हंसतृल यनीयैहें सपत्तशय्याभिः । श्रयंश उज्यलेनियोल कैरवगुंठय-मानानि पराजिताति हंसकलानि येस्तेः । ग्रुश्रत्वाद्धंसा येः पराजिता इत्यर्थः। ताराकारैर्मृक्ताफलैरुपचीयमानैःशोभमानैः कंचुकेश्चोलैः।' स्तवरकनिवह उपि स्थाप्यमानवस्त्रसमूहस्तेन निरंतरं दृढं छाद्यमा-

वितानेः स्तवरकितवहितरन्तरच्छाद्यमानसमस्तपटलेश्च मण्डपैनिवत्र नेत्रवटवेण्ट्यमानेश्च स्तम्भेनजञ्चलं रमग्गीयं चौत्मुक्यदं च मङ्गत्यः चासीद्राजकुलम् ।

देवी तु यशोवनी विवाहोत्सवपयोत्त लहृद्या हृद्येन भतेरि, कुन्हलेन जामातिरि, स्नेहेन दुहितरि, उपचारेगा निमन्त्रितस्त्रीषु, आदेशेन परिजने, शरीरेगा संचरगा, चजुषा कृताकृतप्रत्यवेच्नगाषु, आन्देन महोत्सवे, एकापि बहुधा विभक्तवाभवत । भूपतिर्प्युपर्युपरि विम् जिताष्ट्रवामीजनित जामातृजोषः सत्यप्याह्यासंपादनद्वे मुखेच्चगापं परिजने समं पुत्राभ्यां दुहितृस्त्रहविक्तवः सर्व स्वयमकरोत् ।

एवं च तस्मिन्नविधवामय इव भवित राजबुले, मङ्गलमय इव जायमाने जीवलोके, चारणामयेष्विव लच्यमागोषु दिइ मुखेषु, पटह-मय इव कृतंऽन्तरिचे, भूषणामय इव भ्रमित परिजने. बान्धवमय इव दृश्यमाने सर्गे. निर्वृतिमय इवोपलच्यमागो काले. लच्मीमय इद विजृम्भमाणा महोत्सवे, निधान इव सुखस्य. फल इव जन्मनः, पिर णाम इव पुण्यस्य, योवन इव विभृतः, योवराज्य इव प्रीतः, सिद्धि-काल इव मनोरथस्य वर्तमाने, गण्यमान इव जनाङ्गुलीभिः. आलो-क्यमान इव मार्गध्वजैः. प्रत्युद्रम्यमान इव मङ्गल्यवाद्यप्रतिशब्दकैः.

नानि समस्तपटलानि, सकलपरिच्छदा, गृहाच्छादनानि, थैस्तैर्मंडपै: । उच्चित्रैर-परिस्थितचित्रैनेत्रपटै: पटविशेषैदेष्ठमानै:, स्तेमैरुज्वलं, प्रकाशमानं राजकुलं राजप्रासाद: । 'नेत्रं मंथगुर्णो वस्त्रभेदं मूलं हुमस्य च' इति मेदिनी ।

देवीति—विवाहोत्सवेन पर्याकुलं व्याकुलं हृदयं यस्याः सा । बहुधाऽ नेकप्रकारेसा । उपर्यु परि वारंवारं, विसर्जिताभिः, प्रेषिताभिरुष्ट्वामीभिः कमेल-कवडवाभिजीनत उत्पादितो जामातुजींष त्रानंदो येन सः ।

एवं चेति-- ऋविधवामयेऽविधवाप्रचुरं । प्राचुर्ये मयट् ! निवृतिमय

श्वाहृयमान इत्र मोर्ह्निकैंः, श्वाकृष्यमागा इव मनोर्ग्यः, परिष्वज्यमान इव षश्रुमार्वोहद्ययेराजगाम विवाहद्विमः । प्रातरेव प्रतीहारैः समुत्मा-रितनियिलानिवहलोकं विविक्तमिकयत राजकुलम् ।

श्रथ प्रतीहारः प्रविश्य नृपसमीपम् 'देव, जामातुरन्तिकात्तास्य्-जदायकः पारिजातकनामा मंप्राप्तः' इत्यभिधाय स्वाकारं युवानमदर्श-यत् । राजा तु तं दृरादेव जामातृबहुमानाहर्शितादरः ' बालक, किन्न्द्वशालो प्रहवमा इति पप्रच्छ । श्रम्तो तु समाकर्गितनगिधिपध्वनिधी-वमानः कितिचित्पशन्युपमृत्य प्रसार्य च वाह् सेवाचतुरिश्चरं वसुंध-रायां निधाय मृथीनमुत्थाय 'देव, कुशाली यथाज्ञापयस्यर्चयित च देवं नमस्कारंगा' इति व्यज्ञापयत् । श्रागतज्ञामातृनिवदनागतं च तं ज्ञात्वा कृतसत्कारं राजा 'यामिन्याः प्रथमे यामे विवाहकालात्ययकृते। यथा न भवति देशः' इति संदिश्य प्रतीपं प्राहिगोत्।

त्र्रथः सकलकमलवनलच्चों वयुमुख इव भंचार्य समविसने वासरे. विवाहदिवसिश्रयः पःदपञ्चव इव रज्यमाने सवितरि, वधूवरानु-रागलघृक्रतप्रेमलज्जितेष्विव विघटमानेषु चक्रवाकमिथुनेषु. सोभाग्य-

इव ब्यानंदमय इव । सुखस्य निधान डॉक्यादीनां वर्तमान इत्यनेनान्वयः । यमुत्यारिता निःसारिता ब्यानियद्गले का ब्यानिमंत्रिता जना यस्मानत् ।

श्रश्रेति यथा न भवति दोष इत्युक्त्वेव विरमणं तृपस्य विनयाधिक्यं व्यंजयित । श्रन्यथा तथा क यैमित्युक्तों जामानाज्ञापितः स्याद् । प्रतीपं प्राहि-गोत्पुनरपि जामातुः मन्नियौ प्रेषयामास ।

श्रथंति— कमलानि सायं संकृत्यन्ति तेषां श्रीविधूमुखे निवेश्य बामरो गतीन्वित कल्पना । वधूवरयोरनुरागेण श्रेम्णा लघ्कृतं तिरस्कृतं यरप्रेम तेन लिजितेब्विव । सायं चकत्राकमिथुनानि वियुज्यन्ते वधूत्रप्रोमाधिक्येन, जाय-माना, लजा, कारणात्रेन प्रदर्शिता । क्योतस्य पारावतस्य कगट इव कर्बु रे चित्र- ध्वज इव रकांशुकसुकुमारवपुषि नभीम स्पुरिति संध्यार से, कपोतक-

गठकर्बुरं वरयात्रागमनरजसीव कलुषयति दिङ्गुखानि तिमिरं, लग्नसं-पाट्नसज्ज इवोज्जिहाने ज्योतिर्रागो, विवाहमङ्गलकलश इवोटयशिख-रिगा। समुत्चिप्यमागो वर्धमानधदलच्छाये ताराधिपमण्डले, वध्वदन-लावरयज्योतस्त्रापरिपीततमसि प्रदोषे, वृथोदितमुष्ट्सित्स्दव रजनिक-रमुत्तानितमुखेषु कुमुद्वनेष्वाजगाम मृहुर्मृहुरल्लासितस्फारस्फुरिनार-गाचामरैर्मनोरथेरिबोत्थितरागाव्रपल्लवः पुरो धावमानैः पादातेरुत्कर्गा-कटकहयप्रतिहेपितदीयमानस्वागनैरिव वाजिनां वृन्देश्चापुरितदिग्भागः, चलकर्गाचामग्रामां चामीक्रमयसर्वोपक्रग्गानां वर्गाकलम्बिनां बलिनां वर्गो तमसि वरथात्रागमनस्य रजसीव धूलाविव दिख्युखानि वस्तुपर्यति दिशा मंडलानि मलिनीकुर्यति । स्त्रत्र तमसः कर्व्यस्यं संध्यारागसंबंधेन । लग्नस्य महर्तस्य विवाहस्य च गंपाद्ने सज्ज इव बद्धपरिकर इव ज्योतिर्गगः नक्तृहसमह उजिहान, उद्गन्छति । वर्धमाना धवला, छ।या, कान्तिर्थस्य ( पर्च ) वर्धमःन इव. शराव इव. छाया यस्य. तेन च मंगलकलशसाम्यम् । स च मगमबघटः संघालिप्तः श्रम्नो सर्वात् । वश्वा वदनस्य सुखस्य लावरायेन कांत्या परिपीतं प्राशितं तमोंऽधकारो यस्य तादृशि प्रदोपं रजनीमुखे । वृथोदितं व्यर्भमृहतम् । उद्गमनकार्थस्य तमोनाशनस्य बधुमुखेनैव संपादितत्वात । उन्नासिकैरुपरि धृतैः, म्फारं विशालं महिंदत्यर्थः स्फुरितं कम्पनं येषां ते स्वतंश्वामरं रूपलिज्ञता अह-वर्मा त्राजगामेति संवैधः । कम्पितानां, ताम्रचामरागां, मनोरथस्य, नृतनपत्रसा-म्यम् । उत्कर्णानामध्वेकर्णानां कटकहयानां सेनाथानां प्रतिहेषितेन प्रतिशब्देन दीयमानं स्वागतं येषां तैर्वाजिनामधानां, वृन्देः, समूहैः । आपूरितो दिग्मागी यस्य सः । चलन्ति कर्णचामराणि कर्णे भूष्सार्थं स्थापितानि चामराणि येग्रहे ्वामीकरमयं सुवर्षामयं सर्वोपकरगां सकलसाहित्यमलंकारा वा येषाम् । वर्ण-कैंगच्छादनवसनैर्लंबन्ते भूमिं स्ष्टशन्ति ते वर्णकलम्बन इति यथाकर्यंचिल्लाप-

घण्टाटाङ्कारियां करियां घटाभिः घटयन्नित्र पुनरिन्दृद्यविलीनमन्ध-कारं, नचत्रमालामिण्डतमुखीं करिशों निशाकर इव पौरंदरीं शिशमा-मदः प्रमदिनविविधविहगविमनैस्तालावचरचारगाः पुरः सर्रेबालो वमन्त इवोपवनैः क्रियमाराकोकाहलो, गन्धनैलावसेकप्रुगन्धिना दीपिकाचक-वालस्यालोकेन कुंकुमपटवासव्लिपटानेनेव पिञ्जरीकुर्वनसकलं लोकम . उत्कृत्ममित्रकामुण्डमालामध्याध्यामितकुषुमरोखरेगा शिरसा हसन्निव सपरिवेश तपाकरं कौ मुद्दीप्रदोषम् , श्रात्मरूपनिर्जितमकरकेतुक-रापहतेन कार्मुकं लेव कौ पुमेन दान्ना विरचितवैकच्यकविलासः, कुसुमसौरभगर्वश्रात्तन्त्रमरकुत्तकलप्रलापसुभगः पारिजात इव जातः श्रिया सह पुनरवनारितो मेदिनी, नववयूवदनावलोकनकुनृहलेनेव नीयम् । घंटानां टांकारां विद्यते येषां तः । घटयन्निकेश्यादयन्निव । नज्जनमालया, मृषणविरोषेण, यस्याम्ताम् ( पत्ने ) नत्नत्राणां, तारकाणां, मालपा, पंकर्या, मंडितं,सुखं, यम्याः । पौरंदरां, पूर्वा, दिशाम् । प्रकटितानि, विविधानि, विह्शानां, विरुतानि, शब्दा:, यें म्तेंस्तालावचरें स्तालेप्ववचरनित, तृत्यन्ति, तैर्बान्द्रभिः । यथा विहराविरुतिभिरुपवनैर्बालो वसन्तो, वसन्तारंभः, कोलाहलं, जनयति, तद्वहसंत-मदशोयं पिद्मशब्दं विद्विद्धिर्बिन्दिभिरुत्पादितकोलाहल इत्वर्थः । गन्ध्युतस्य, सुगंधिनस्तैलस्यावशेकेन, सिंचनेन, सुगंधिना, सुरभिणा । चक्रवालं, समूडः । कुंकुमपटवास:, उत्फुक्कानां, विकसितानां मिक्किकानां, पूष्पवि रोषाणां, मुंडमालाया, भालस्रजो मध्यं मध्यभागमध्यामितोऽधिष्ठितः, कुसुमरोखरो, यस्य, तेन शिरसा सपरिवेश:. समंडलश्रंदो यस्मिस्तं कीमुदीप्रदोषं चंद्रिकायुतं प्रदोषकालं हसिन्निव मालायाः परिवेशसाम्यं चंद्रस्य च शेखरसाम्यम् । विरचितो वैकद्वपकस्य तिर्यगुरिम ज्ञिप्तस्योपवीतादेविलासः शोभा येन सः । कुसुमानां, सौरभस्य सुगं-धस्य गर्वेण श्रांतानां, मूहानां, श्रमराणां, कुलस्य, कलप्रनापेन, मधुरध्वनिना, समगो, मनोहर: । श्रिया सह जातो लदम्यासममुत्पन्नः पारिजातस्तत्संज्ञ-

कृष्यमागाइदयः पतन्निव मुखंन प्रत्यासन्नलग्नो प्रहवर्मा ।

राजा तु तमुपद्वारम गतं चरणाभ्यामेव राजचक्रानुगम्यमानः ससुतः प्रत्युज्ञगाम । श्रवनीर्गो च तं कृतनमस्कारं मस्मथमिव माधवः प्रमारितभुजो गाढमालिलिङ्ग । यथाक्रमं परिष्वक्तराज्यवर्थनहर्षे च हस्ते गृहोत्वाभ्यन्तरं निन्ये । व्वनिर्विशेषासनदानादिना चैनमुपचारे-ग्रोपचचार ।

न चिरा गम्भोरनामा नृपतः प्रगायी विद्वान्द्विजनमा प्रह्वमी-गामुवाच — नात, त्वां प्राप्य चिरात्खनु राज्यश्रिया घटिनौ तेजोमयौ सकलजगद्गीयमानबुधकर्णानन्दकारिगुर्णगर्णौ सोमसूर्यवंशाविव पुष्प-भूतिमुख्यवंशौ । प्रथममेव कौ नुभमिण्णिव गुणैः स्थितोऽसि हृदये देवस्य । इदानौ तु शशीव शिरमा परनेश्वरेगासि वोढ्यो जातः इति ।

एवं वर्त्येव तस्मिन्नृपमुपसृत्य मोर्झितकाः 'देव, समासीदिति लम्नवेला । त्रजतु जामाता कोतुकगृहम्' इत्यूचुः । श्रथ नरेन्द्रगः 'उतिष्ठ गच्छ' इति गदिनो प्रहवर्मा प्रविश्यान्तः पुरं जामानृदर्शनकूतू-हिलिनीनां स्रोगां पितनिति लोचनसहस्राणि विकचनीलकुवलयवना-नीव लङ्घयन्नास्साद कोतुकगृहद्वारम् । निवारिनपरिजनश्च प्रविवेश ।

ऋथ तत्र कतिपयाप्रप्रियसर्खास्वजनप्रमद्।प्रायपरिवाराम् , ऋरू-

कवृत्तः, श्रिया राज्यश्रिया, राज्यलद्तस्या पुनर्मेदिनी पृथ्वोमवतारित श्रानीतः ।

नातेनि न्यस्त जगता गीयमानो बुधानां विदुषां कर्णयोः श्रोत्रयोर्बु धर्थं-द्रपुत्रः कर्णः स्योत्मजस्तयोर्वा, श्रानंदकारी गुणगणो ययोस्तो । हदपे, मनसि, वक्तांस च । देवस्य उपतिर्विष्णोर्वा । परमेश्वरेण उपेश हरेण च । एतेन जामातुः पूजनीयत्वं व्यज्यते । एवमिति -- लं व्यज्ञाक्रममाणः । कातुकगृहद्वारमुत्यवगृहस्य विवाहात्मवगृहस्य द्वारम् ।

अथंति—तत्र वधूमपश्यदिति संबंधः । श्रहणांशुकेन लोहितवस्त्रेणाव-

णांसुकावगुण्ठतसुर्खी प्रभातसंध्यामिव स्वप्रभया निष्प्रभानप्रदीपकान्छवांणाम्, व्यतिसौकुमार्यशङ्कितेनेव यौवनेन नातिनिर्भरसुपगृहाम्, साध्वसितिरुध्यमानहृद्यदेशदुःखमुक्तिनिधृतायतैः श्वसितैरपयान्तं कुमारभाविमवानुशोचन्तीम्, व्यत्युत्किम्पनीं पतनभियेव व्रपया निष्पन्दं धार्यमाणाम्, हस्तं तामरसप्रतिपचमामत्रप्रह्मं शशिनिमिव रोहिगीं भयवेपमानमानसामवलोकयन्तीम् चन्दनधवलतनुलताच्योत्स्नादानसंचितलावण्यात्कुमुद्गिगभोदिव प्रसृताम् कुसुमामोदिनिह्गिग्गों वसन्तहृद्यादिव निर्गताम्, निःश्वासपिरमलाकृष्टमधुकरकुलां मलयमारुतादिवोत्पन्नाम्, कृतकंद्यीनुसरगां रितिमव पुनर्जाताम्, प्रभालावण्यमद्सौरभमाधुर्यैः कोस्तुभशिषामिद्रगपारिजातामृतप्रभवेः सर्वन

गुंठितमाच्छादितं सुखं यस्यास्ताम् । प्रभातसंत्र्या चारुणस्यान्सेरत्यं शुभिगंशुक्रेरवगुं ठितमुखां भवति । नातिनिर्भरं नातिदृहमुपगृहामालिगिताम । श्रप्राप्तपूर्णयोवनां वयः संधा वर्तमानामित्यर्यः । साध्वसन भयन कंपेन वा निरुत्यमानेन हृदयदेशेन दुःखान्मुक्तेर्निष्टतेषु प्तरायनेद्विष्टः । श्रपयान्तं नश्यन्तं कुमारभावं बाल्यम् । तामरसप्रतिपत्तं, कमलसदृशमासश्रं प्राप्तं प्रह्णां, स्वाकारो, यस्य
तं हस्तं करमवलोकयन्तिम् । भयन, वेपमानं, मानसं, मना, यस्यास्ताम् । श्राप्तन्वप्रहृणां प्राप्तोपरागं, शशिनं, चंद्रमसमवलोकयन्तं रोहिग्गीं चन्द्रभार्थामिव । भर्तप्रहृणां दृष्ट्वा रोहिग्गी वेपते । विवाहे च कुमार्यो भर्तृभीत्या लजाधिक्येन वा वेपन्त
इति हि प्रत्यत्तम् । वर्णितं चैतित् चन्द्रनेन धवला श्रुश्चा तनुलता, यस्या स्ताम् ।
ज्योतस्नायाश्चाद्रकाया, श्राद्यनेनं, प्रहृणोंनं, संचितं, वर्द्धिनं, लावग्यं, कान्तिर्थस्य
तस्मात्कुमुदिनीगभीत् । श्रुश्चा, तनुलता, कमलिन्याः, संजातान्वित्युत्येन्तां ।
कृतकंदर्णानुसरगामुद्भृतमद्मविकाराम् ( पत्ते ) मदनमनुयान्तीम् । प्रभादीनां
कौस्तुभादिभिर्याथासंख्येनान्वयः । सर्वरन्तगुणोः, कौस्तुभादीनां प्रभादिभिर्युगाः,
उपलितितं, सुरासुरस्या, द्वासुरयोह्यरि, कोपेन, लद्मीहर्रणाजेनेत्यर्थः, रत्नाकन

रत्रगुग्रारपरामित सुरासुरस्या रत्नाकरेगा कल्पितां श्रियं, स्निग्धेन वालिकालोकेन सितसिन्धुवारकुसुममञ्जरीभिरिव मुक्तादीधितिभिः कल्पितकगाविनंसाम , कर्गाभरगामरकतप्रभाहरितशाद्वलेन कपोलस्थ-लीतंत्रन विनोदयन्तीमिव हारिगीं लोचनच्छायाम , त्र्राधोमुखं वर-कौतुकालोकनाकुलं मुहुर्मुहुः कृतमुखोन्नमनप्रयत्नं सखीजनं हृद्यं च निर्भरस्यन्तीं वधूमपश्यन ।

प्रविशन्तमेव तं हृद्यचौरं वध्वा समर्पितं जन्नाह् कंद्र्पः। परिहासस्मेरमुग्वीभिश्च नारीभिः कौतुकगृष्टे यद्यत्कार्यते जामाता तत्तत्सवमितिपेशलं चकार। कृतपरिशायानुरूपवेशपरिप्रहां गृहीत्वा करे
वश्चं निर्जागम। जगाम च नवसुश्राध्वलां निमन्त्रितागतेस्तुपारशैलोपत्यकाभिव त्र्यम्बकाम्बिकाविवाहाहतैर्भृशृद्धिः परिवृत्ताम्, संकसुकुमारयवाङ्कुरदन्तुरेः पञ्चास्यैः कलशैः कोमलवर्शिकाविचित्रैरमित्र-

रेगा सागरेगा, कल्पितां, श्रियं लच्मामिव । स्निग्धेन वत्यतेन बालिकाजनेन कत्यकाजनेन । सिताभिः, सिंदुबारस्य, निर्णु ड्याः, कुसुममजरीभिः । हारिणीं मनोहरां हरिगासंबंधिनीं च । कीतृकालोकन त्याकुलमुत्मुकं हृद्यं सर्वाजनं च निर्मासीयन्तीं तज्यमानामिव । त्र्यथवा हेतुमएयंते हेतोरविवज्ञयेति बोध्यम ।

प्रविशन्तमिति हदयचारं हदयहारकम् कंदपं जयाह । यथा कंचि-त्स्तेनं कोपि राजपुरुषादेईस्ते ददाति तहिंदमं, वध्वापितं कंदपें जयाहेत्वर्थः । अतिपेशलमितमनोहरम् । कृतः परिणयस्य विवाहस्यानुरूपो योग्यो वेशपरिश्रंहो नेपथ्यस्वाकारो ग्रया ताम् वदां जगामिति-संबंधः, वदी विशिनष्टि।नवया नृतनया यु-ध्या धवलाम् । भूसद्वी राजिमः, पर्वतेश्व । तुपारशैलस्य हिमालयस्योपत्यकां समी पस्यभूमिम् । गुश्रवर्णत्वं भूसद्वेष्टित्त्वं च तत्साम्यम् । सेकेन, सुकुमाराः, कोमला, यवांकुरास्तेईत्रुरं रुचनीचैः, पंचास्यैः विस्तृतमुखैः कोमलयाव र्णिकया, शुश्ररं गेण विचित्रेरमि रमुवैः शत्रुवद्तेश्व, शत्रुमुखाकाराणि (पात्रारं यासिन्नत्यर्थः) मंगल्य- मुखेश्च मङ्गल्यफलहस्ताभिरञ्जलिकारिकाभिरद्रामितपर्यन्ताम् , उपा-ध्यायोपधीयमानन्धनध्मायमानाप्तिसंधुच्याच्याखिकोपद्रष्टृद्विज्ञाम् , उप-कृशानुनिहितानुपहतहरितकुशाम् , संनिहितदृषद्जिनाज्यस्रुक्समित्पृ-लीनिवहाम् , नूतनसूर्पापितश्यामलशमीपलाशमिश्रलाजहासिनीं वे-दोम् । श्रारुरोह् च तां दिवमिव सज्योतस्तः शशी । समुत्मपं च वेल्लिताकग्रशिखापल्लवस्य शिखिनः वृग्नुमायुध इव रिनिद्विनीयो रका-शोकस्य समीपम् । हुतं च हुतभुजि दिच्यावर्वप्रवृत्ताभिर्वध्वदनवि-लोकनकुतृह्लिनीभिरिव ज्वालाभिरेव सह प्रदृच्चिग् बश्राम । पात्य-माने च लाजाञ्जलो नखमयुद्धविलदहनुरहृदृष्वदध्वरुष्पवस्मय-स्मेर इवादृश्यत विभादमुः ।

पत्नं हस्ते यासां ताभिः । श्रंजांलकारिकार्भि मृगमयप्रतिमाभिः, उद्घासिः शोभितः, पर्यन्तो यस्यास्ताम् । उपाध्यायेन गुरुगोपधायमानैः, स्थाप्यमानेरिकेः समिद्धिर्भू मायमानस्यामेः, संधुत्तगे प्रज्वलनेऽत्तिणका व्यक्षा उपद्रष्टारः, सात्तिगः, छात्रा वा द्विजा बाद्धणाः यस्यां ताम् । उपष्टशानु, वन्हेः समीपे नाहताः स्थापिताः, श्रनुपद्रताः, श्रनुपद्रकाः, (प्रत्यका इत्यर्थः) हरितवुशाः, हरिद्धणां दभी यस्यास्ताम् । दशदश्मा, श्राजनं मृगचर्भ श्राज्यं, धृतं, सुकः, पात्रविशेषः, सिमत्पूली एकत्र बद्धाः, सिमधः । नृतनसूर्ये नवे प्रस्कोटनेऽपिताभिः श्यामलैः, कृष्णेः शर्मापलाशैः शर्मापणैर्मिश्रिताभित्तीज्ञाभिर्दस्ति ताम् । लाजानां शुश्रस्वाद-स्यसाम्यम् । वेक्किताश्रतिला-श्ररुणाः, ताम्राः, शिखापक्कवाः, ज्वालाधाणि, यग्य तस्य. शिखिनो, वन्हेः, (पत्ते ) वेक्किता-श्ररुणाः, शिखापक्कवाः, ज्वालाधाणि, यग्य तस्य. शिखिनो, वन्हेः, (पत्ते ) वेक्किता-श्ररुणाः, शिखापक्कवाः, श्रप्रपर्णान, यस्य तस्य रक्काशोकस्य शिखिनो वृत्तस्य । दिक्तिणावर्तेनापसस्यवर्त्तेलेन प्रवृत्ताभिः । नस्तमयूर्केनेखिकरणौर्धविलता तनुर्थस्य सः । श्रत्वष्टपूर्वेणानवले कित-पूर्वेणा बध्नवर्यो हपेणा जातो यो विस्मयः तेनाश्रयेण स्मेरश्रकित इत्र । विभावसुर्वेन्तः ।

श्रत्रान्तर स्वच्छकपोलोद्रसंकान्तमनलप्रतिविम्बमिव निर्वाप्यन्ती स्थूलमुक्ताफलविमलबाष्पविन्दुसंदोहद्शिंतदुर्दिना निर्वदन्विकारं रुगेद् वधूः। उद्धृविलोचनानां च बान्धववधूनामुद्पादि महानाकन्दः। परिसमापितवैवाहिकिकियाकलापस्तु जामाता बध्वा समं प्रगानाम श्रमुरो। प्रविवेश च द्वारपचलिखितरितप्रीतिदेवतं प्रगायिभिरिव प्रथमप्रविष्टेरितकुलैः कृतकोलाह्लम्, श्रालकुलपचप्यन्तेप्रक्षेक्षोलितैः कर्गोत्पलप्रहारभयप्रकिष्यितेष्व मङ्गलप्रदीपैः प्रकाशितम्, एकदेशिलिखितस्तविकतरकाशोकतरुतलभाजाधिज्यचापेन तिर्वक्रूणितनेवित्रभागेण शरमुजूक्वता कामदेवनाधिष्ठितम्, एकपार्थन्यस्तेन काञ्चनाचामनकनेतरपार्श्ववितन्या च दान्तशफरुकधारिण्या कनकपुत्रिकया साचाल्लच्य्येवोद्दण्डपुण्डरीकहस्तया सनाथेन सोपधान्त स्वास्तीर्गेन शयनेन शोभमानम्, शयनशिरोभागस्थितेन च कृतकुमुद्रशोभेन कुसुमायुधसाहायकायागतेन शशिनेव निद्राकलशेन राजतेन विराजमानं वासगृहम्।

श्रत्रान्तरे इति—स्वच्छकपोलोदरे स्वच्छे कपोलमध्ये, संक्रान्तं पितन्मनलस्याग्नेः प्रतिविवम् । स्वच्छेत्यनेन विवग्रह्णयोग्यत्वम् । निर्वापयन्ता शम्यन्ती । स्थ्लमुक्राफलानीव विमलाः स्वच्छा वाष्पविन्दवस्तेषां संदोहेन समृहेन दिशतं दुर्दिनं यया सा । निर्गता विकारा यस्मात्तादशं वदनं यस्मिन्यथा तथा । वदनविकारदर्शनाभावस्तु भर्तृसांनिध्यात् । प्रविवेशोति—जामाता वासगृहं प्रविवेशोति संवंधः । द्वारपच्चे द्वारपार्थे लिखितं रतेर्मदनभार्यायाः प्रीतिदेवतमर्था नमदनो यस्मिन् । एकदेशे, लिखितस्य, स्तबिकतस्य, गुच्छयुतस्य, रकताशोकस्य, तलं भ्रजति तेन ज्यामधिगतं चापं यस्यतेन । कृष्णितः, संकुचितो, नेत्रत्रिभागो, नेत्रापांगो यस्य तेन । एतेन लच्यबद्धदृष्टित्वं दिशतम् । कांचनाचामनकेन, सौवर्षाध्यीवनपारेण, दन्तशफरुकं, हिस्तदंतमयीं, पेटिकां, धारयित, तया ।

तव च होताया नववयूकायाः पराङ्मुखप्रसुप्ताया मिणिभित्ति-दर्पणेषु मुखप्रतिबिम्बानि प्रथमालापाकर्णनकौतुकागतगृहेदेवताऽऽनना-नोव मिणिगवात्तकेषु वोत्तमाणः त्तरण्हां निन्ये । स्थित्वा च श्रशुर-कृतं शोलेनामृतमिव श्रश्रुहृद्ये वर्षत्रभिनवाभिनवोपचारेरपुनरुका-न्यानन्दमयानि दशदिनानिस्थित्वा दत्वा राज दौवारिकमिव राजकुतं रणारणकं यौतुकनिवेदितानोव शम्बलान्यादाय हृद्यानि सर्वलोकस्य कथं कथमपि विसर्जितो नृषेण्यवध्वा सहस्वदेशमगमदिति ।

> इति श्रीबाणभृकृते हर्षचरितं चक्रवितं जनमवर्णनं नाम चतुर्थं उच्छ्वासः ।

तत्रेति — प्रथमालापस्य प्रथमभाषितस्याकर्णनस्य, श्रवणस्य, कौतुकादाग-तानां गृहदेवतानामानवानीव मुखानीव ( श्रधुनापि गर्भाधानसंस्कारवेलायां वयू-वरालापकुन्हिल्यः प्रमद्गः निगुद्यात्मानं तिष्टन्तीति प्रसिद्धमेव ) श्रपुनरुकानि निविद्यानि । रणरणकं, मनस्तापम् । यौतके, कन्यादानकाले, दोयमानधने निवेदि-तानाव, समर्पितानोव, सर्वलाकस्य, हदयानि, चेतांसि, कर्यक्यमपि, कप्रेन । श्रगमत्, गतवान् ।

> इति श्रीबाराभक्कतहर्षचरितव्याख्यायां ''त्र्राशुतीषिरयां'' चतुर्थ उच्छुवासः ।



## लान बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अवादमी, पुस्तकालय Lal Bahadar Shastri National Academy of Administration Libra

## म्मसूरी MUSSOORIE

अवाष्ति	मं •
Acc. No	)

कृपया इस पुस्तक को निम्न लिखित दिनांक या उससे पहले वाफ कर दें।

Please return this book on or before the date last stampe below.

दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या <sup>Borrower's</sup> No.	दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No
20 V (2000)			
		, , , , , , , , , ,_	
	_		
			gamentation that the last of the analysis before again.
110			
		The second secon	According to device the control

-t-my distance	Saun			
Marie and a	Sam OFFI-21			
		अदा.	िन मं ०	Treba
f .	वर्ग स. <sup>Class</sup> No	7100	े. No तक्त मं.	
	तेखक utbor - 1 %	$\cdots - B_{\mathcal{C}}$	ok No	······
ফা	पिक ६ с	·	• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •	
$\left\{egin{array}{c} T_i \ \cdots \end{array} ight.$	पिक tle	16.4	-14 2	
निर्ग	म दिनाँक ।		••••••	
Dat	म दिनाँक   उधार e of Issue   Bon	रवर्ता की स	ां.   हुग्ता	धर
<i>C</i>		and the second	Signat	ure
Jaw			1/00	

## 891.21 LIBRARY

বা। Lal Bahadur Shastri
National Academy of Administration
MUSSOORIE

## Accession No. 125555

- Books are issued for 15 days only but may have to be recalled earlier if urgently required.
- An over-due charge of 25 Paise per day per volume will be charged.
- Books may be renewed on request, at the discretion of the Librarian.
- Periodicals, Rare and Reference books may not be issued and may be consulted only in the Library.
- Books lost, defaced or injured in any way shall have to be replaced or its double price shall be paid by the borrower.

Help to keep this book fresh, clean & moving